CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2.

Kalguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran
RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

स्थवृत्तसमुच्चयः

(भाषाटीकासहितः)

वैद्य राजेश्वरदत्तशास्त्री

ru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-Mo

Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation,

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

SWASTHA VRITTA SAMUCHCHAYA

Approved in the Course of Banaras Hindu University
Board of Indian Medicine U. P. Government
All India Ayurveda Vidyapith Etc.

By

Vadiya Rajeshwar Dutt Shastri

D. Sc. (A), Ayurved Shastracharya (B. H. U.),
Pranacharya

Honorary consultant--Post Graduate. Institute of Indian medicine. (K. Chi. V.)

Ex : Principal--Ayurvedic College and Superintendent S. S. Hospital.

Retired Professor & Head-of the Department of Ayurved and Director of Ayurvedic Research. College of medical sciences.

Banaras Hindu University Varanasi-5

Ex : member-Board of Indian medicine Uttar Pradesh.

Member—of Ayurvedic & Tibbi Academy and Pharmacy Expert committe U. P.

Member—Central Ayurvedic & unani Drugs Technical Advisory Board Delhi.

President--of 10th U. P. Ayurvedic Conference.

Commentator

Pt. Tarashankar Mishra, Ayurvedacharya

Adhyksha, Arjun Ayurved Vidyalaya, Kashi.
Member of the Board of Indian Medicine
U. P. Government

6th Edition 1966
All Rights Reserved by the Author
Price 7/-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रकाशक :—
सञ्जीवन औषधालय
कमलावास
अस्सी, वाराणसी ५

पुस्तक मिलने का पता—
१—वैद्य राजेश्वरदत्त शास्त्री
सञ्जीवन औषधालय
कमलावास
अस्सी, वाराणसी ५
२—चौखम्भा विद्या-भवन,
चौक, वाराणसी ।

मुद्रक—
नया संसार प्रेस,
भदैनी, वाराणसी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६.२२

योगीन्द्र नाथ शर्मा

ॐ

स्वस्थवृत्तसमुच्चयः

भाषाटीकासहितः

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, उत्तरप्रदेशीयभारतीयचिकित्सा परिषत्, निखिलभारतीयायुर्वेदविद्यापीठादि परीक्षासु पाठ्यरूपेण स्वीकृतः, नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन महीशूरतः प्राप्त-स्वर्णपदकश्च ।

भू. पू. काशी हिन्दू विश्वविद्यालयीयायुर्वेद महाविद्यालयाध्यक्षेण एवम् आयुर्वेदीयगवेषणालयसञ्चालकेन तथा 'सर सुन्दरलाल' चिकित्सालय प्रधानचिकित्सकेन सम्प्रति स्नातकोत्तरायुर्वेदीय संस्थान कायचिकित्सा विभागीय परामर्शदात्रा आयुर्वेदशास्त्राचार्य पं० राजेश्वरदत्तमिश्र शास्त्रिणा विरचितः ।

—अस्य च—

आयुर्वेदाचार्य पं० ताराशंकरमिश्रेण काशीस्थार्जुनायुर्वेद विद्यालयाध्यक्षेण, उत्तरप्रदेशीय भारतीय-चिकित्सापरिषत्सदस्येन भाषाटीका कृता

सर्वाधिकारः लेखकेन स्वायत्तीकृतः ।

सं० २०२२ वि०] षष्ठं संस्करणम् [मू०सप्त रूप्यकाणि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निवेदनम्

माननीया वैद्यवर्याः ? इदानीं स्वस्थवृत्तसमुच्चयस्य भाषाटीकान्वितस्य षष्ठं संस्करणं तत्र भवतां भवतां सेवायां समुपस्थापयामीति मन्मानसे महान् प्रमोदः। भवद्भिरादृत उक्तग्रन्थो भारते बङ्गेषु राजकीयासु राजमान्यासु च परीक्षासु पाठ्यरूपेण स्वीकृत इति ज्ञात्वाऽऽत्मश्रमं सफलं मन्ये।

मत्पुत्रेण एम०बी०बी०एस० इत्युपाधिविभूषितेन श्री डाक्तर अखिलेश्वर दत्त मिश्रेणास्य ग्रन्थस्य सम्पादने साहाय्यमनुष्ठितमतस्तत्कृते साधुवादा;।

काशीस्थ नयासंसाराख्य मुद्रणयन्त्रालयाधिकारिभिः सत्वरमुद्रणार्थं महत्प्रयत्नं कृतमतस्तेऽपि धन्यवादार्हा इति।

महाशिवरात्रिः
सं० २०२२ वि०

विदुषां विधेयस्य—
राजेश्वरदत्तशास्त्रिणोवद्यस्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पं० राजेश्वरदत्तशास्त्री वैद्य
काशी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आद्य प्रस्तावना

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ ने वैद्य सम्मेलन के कलकत्ते के वार्षिक अधिवेशन के समय "आयुर्वेद की शिक्षा और परीक्षा ग्रन्थप्रधान न रहकर विषयप्रधान रहे" यह प्रस्ताव स्वीकार किया और तदनुसार एक पाठ्यक्रम भी तैयार किया। अनन्तर अन्य आयुर्वेदिक संस्थाओं ने भी इस विषयप्रधान पाठ्यक्रम का अनुकरण किया। इस पाठ्यक्रम को कार्य में परिणत करने के लिए आयुर्वेद के भिन्न-भिन्न पाठ्य विषयों पर स्वतंत्र पुस्तकें संगृहीत करने व लिखने की आवश्यकता थी। अन्यथा इस पाठ्यक्रमानुसार पढ़ाना अध्यापकों के लिये बड़ा कठिन कार्य था। वैद्य सम्मेलन ने यह प्रस्ताव तो पास कर दिया परन्तु अर्थाभाव के कारण वैद्य सम्मेलन की ओर से एक भी ग्रन्थ इस पाठ्यक्रमानुसार तैयार न हो सका। इस त्रुटि को दूर करने के लिये मैंने जब काशी हिन्दूविश्वविद्यालय के आयुर्वेदमहाविद्यालयके अध्यक्ष पद का भार ग्रहण किया तब विश्वविद्यालय के वाइसचान्सलर परम पूज्य पं० मदनमोहन मालवीय जी का ध्यान इस ओर आकर्षित किया और पाठ्यपुस्तक निर्माणार्थ विशेष प्रबन्ध करने के लिये आग्रह भी किया। दैववशात् अनारोग्यादि कारण से तीन मास के बाद ही मुझे वह स्थान छोड़ना पड़ा। मेरी वहाँ की उपस्थिति में ही मेरी प्रेरणा से श्रीयुत् पं० राजेश्वरदत्त जी शास्त्री आयुर्वेदशास्त्राचार्य (B. H. U.) ने इस ग्रन्थ को लिखने का कार्य प्रारम्भ कर दिया था।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

इस ग्रन्थ में स्वस्थवृत्तविषयक आयुर्वेद के चरक सुश्रुत वाग्भटादि ग्रन्थों के वचनों का तथा मनु आदि स्मृति ग्रन्थों के वचनों का भलीभाँति संग्रह कर दिया है और कुछ स्वयम् भी लिखा है। आवश्यक विषय कोई भी छोड़ा नहीं गया। साथ ही अवश्य ज्ञातव्य प्रतीच्य चिकित्सा शास्त्र से भी स्वस्थवृत्त के विषयों का संस्कृत में अनुवाद करके संग्रह कर दिया है। इसलिये यह पुस्तक आयुर्वेद विद्यार्थियों को पठन-पाठन के लिये अत्युपयुक्त सिद्ध हुई है।

चरक सुश्रुतादि ग्रन्थों में स्वस्थवृत्त विषयक वाक्य भिन्न-भिन्न कई स्थानों में आये हैं। इन सब वचनों का एकत्र संग्रह हो जाने से पठन-पाठन में बड़ी सुविधा होगी। कई वैद्य महोदय इस प्रकार के संग्रहग्रन्थ-निर्माण के विरुद्ध हैं। परन्तु यह प्रयत्न नया नहीं है। ऐसे प्रयत्न पहले भी हो चुके हैं। आयुर्वेद में माधव निदान और व्याकरण में सिद्धान्त-कौमुदी इसके अच्छे दृष्टान्त हैं।

अन्त में इस प्रयत्न के लिये पं० राजेश्वरदत्त जी को विशेष धन्यवाद देता हुआ आशा करता हूँ कि भविष्य में ऐसे अन्य ग्रन्थ भी तैयार करके आयुर्वेदीय ग्रन्थ भण्डार की वृद्धि करेंगे।

श्रावण शुक्ला १२
सं० १९८७ वि०

(स्व०) वैद्य यादवजी, त्रिक्रमजी आचार्य
(भूतपूर्व अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन सभापति)
बम्बई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय-सूची

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
मंगलाचरणम्	१	धूप पानम्	२१
स्वस्थवृत्त स्वरूपम्	१	सम्यक्पीतस्य लक्षणानि	२३
आरोग्यरोगयोः फलम्	१	अविधिपीतस्य धूमस्य लक्षणानि	२३
शरीरक्षण प्रयोजनम्	२	धूमपानायोग्यजनाः	२३
स्वस्थ लक्षणम्	२	धूमपानस्य विधानम्	२४
स्वस्थ रक्षणम्	३	व्यायामः	२६
स्वास्थ्य विधानम्	३	व्यायाम मात्रा	२७
दोष-चक्रः	६	बलार्ध लक्षणम्	२८
स्वस्थवृत्तानुष्ठानस्यावश्यकत्वम्	९	चङ्क्रमणम्	२८
दिनचर्या	९	व्यायाम दोषाः	२८
उत्थान समयः तदनुशौचाचारश्च	९	व्यायामायोग्याः	२९
आचमनम्	११	क्षौरकर्म	२९
दन्तधावनम्	११	अभ्यंगः	३०
निषिद्धदन्तकाष्ठानि	१४	शिरोऽभ्यंग गुणाः	३२
दन्तधावनानर्हाः	१५	कर्णाभ्यंग गुणाः	३२
जिह्वानिर्लेखनम्	१५	पादाभ्यंग गुणाः	३३
स्नेहगण्डूष धारणम्	१६	केश्या	३४
शीताम्बु गण्डूषः	१६	स्नेहसेक गुणाः	३४
मुख नेत्र प्रक्षालनम्	१७	स्नेहावगाहन गुणाः	३४
अञ्जनम्	१८	अभ्यंगानर्हाः	३५
अञ्जनानर्हाः	१९	शरीर परिमार्जनानि	३५
नस्यम्	१९	स्नानम्	३६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
स्नान भूमिः	३७	पादौ प्रक्षाल्य भोजनम्	६३
शीतोष्ण भेदेन स्नान गुणाः	३८	भोक्ता	६३
स्नान निषेधः	३९	आसनम्	६५
अशक्तौ स्नान विधिः	४०	महानसे राज्ञो वैद्यप्रयोजनम्	६६
वस्त्रेण तनुमर्दनम्	४०	महानसिक वैद्यः	६७
वस्त्रधारणम्	४०	राजयोग्यं महानसम्	७०
वस्त्रनिषेधः	४२	महानसोपयोग्युपकरणानि	७०
वस्त्राणां शुद्धचशुद्धिविवेकः	४२	सूदकारः	७२
उष्णाम्बारण गुणाः	४३	परिवेषकः	७३
अनुलेपनम्	४४	महानस कर्मचारिणः	७४
गन्धमाल्य निषेवणम्	४५	पाक पात्राणि	७५
निषिद्ध माल्यम्	४५	भोजनविशेषेण पात्रविशेषाः	७६
रत्नाभरणधारणम्	४५	विभिन्न पात्र गुणाः	७७
पुष्पादिधारण सामान्य गुणाः	४५	जलपात्रम्	७८
सन्ध्योपासनम्	४६	भोजनोपकल्पनम्	७८
पादुका धारणम्	४७	पात्रादीनां शुद्धिः	७९
पादत्रधारणम्	४७	प्रयोज्यमशनम्	८१
क्षत्रधारणम्	४७	सात्विकादीनामशनम्	८१
दण्डधारणम्	४८	आहारस्य षट्प्रकारत्वम्	८२
उपस्तम्भाः	४८	भोजनकाले भोक्तुः कर्त्तव्यम्	८३
आहारः	४८	आहारविधिविशेषायतनानि	८४
आहारस्य सामान्य गुणाः	५१	द्वादशाशन प्रविचाराः	९४
भोजन कालः	५५	दृष्टिदोषविनाशाय ब्रह्मादीनां स्मरणम्	९६
अशन स्थानम्	६०		

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
भोजनक्रमः	९६	कन्दम्	११४
भोजनस्यायोगहीनयोगातियोग मिथ्यायोगे दोषाः	९९	आहारयोगि द्रव्याणि	११४
प्रशस्यं भोजनम्	१००	इक्षुविकारः	११४
भोजनस्य सुस्वादुत्वे मुखप्रक्षालनम्	१०१	मधु	११५
सञ्जातबुभुक्षायामनशने हानिः	१०२	मद्यम्	११५
निषिद्धं भोजनम्	१०२	अनुपानम्	११६
निषिद्धान्ना जनाः	१०४	अनुपानावश्यकम्	१२२
श्रमादिव्याप्तानां भोजने हानिः	१०४	निषिद्धानुपानारोगिणः	१२२
अन्नपानयोः संरक्षणम्	१०५	अनुपानादनुवर्जनीयं कर्म	१२२
कतिपयखाद्यानां भक्षणविधि विशेषः	१०५	भोजनोत्तरं कर्म	१२३
धान्यम्	१०५	भोजनोत्तरं वर्जनीयं कर्म	१२६
मांसम्	१०६	शय्या	१२७
क्षीरम्	१०८	संवाहनम्	१२७
दूषितक्षीरजारोगाः	१०९	वायु सेवनम्	१२७
आरोग्यकर क्षीरप्राप्त्युपायाः	१०९	आतप वर्जनम्	१२९
दधि	१११	दिवास्वाप विवेकः	१२९
तक्रम्	११२	दिवा मैथुन निषेधः	१३२
नवनीतम्	११२	माध्यन्दिनीयं कर्म	१३२
घृतम्	११३	रात्रिचर्या	१३२
शाकम्	११३	सन्ध्यायां निषिद्ध कर्माणि	१३२
फलम्	११३	ज्योत्स्नादीनां गुणाः	१३३
		पृथक्पृथक् सर्वयामकर्त्तव्यम्	१३३
		रात्रिभोजनम्	१३३
		शयनासनम्	१३४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
व्यबायः	१३४	ब्रह्मचर्यम्	१६१
विवाहवयः	१३५	वीर्यरक्षोपायः	१६२
गर्भाधान कालः	१३५	ब्रह्मचर्यफलम्	१६२
अन्यथागमने दोषाः	१४८	ऋतुचर्या	१६३
निषिद्धव्यवायाः	१४८	ऋतुदोष परक चक्रम्	१७१
अतिव्यवाये हानिः	१४९	हिमर्तुचर्या	१७४
स्त्रीषु संयमे लाभाः	१४९	शिशिरर्तुचर्या	१७७
सुरतान्तेसेवनीयम्	१४९	वसन्तर्तु चर्या	१७७
रजस्वलाचर्या	१५०	ग्रीष्मर्तु चर्या	१७९
गर्भाधान विधिः	१५२	वर्षर्तु चर्या	१८२
स्वप्नः	१५४	शरदृतुचर्या	१८३
निद्राहेतुः	१५४	हंसोदकम्	१८४
निद्राप्रकारः	१५५	ऋतुपरत्वेन पाननियमः	१८५
निद्राशक्तिः	१५५	ऋतुभेदेनभिन्न-भिन्नरससेवनम्	१८६
युक्तनिद्रागुणाः	१५६	ऋतुसन्धिः	१८७
अयुक्त निद्रा दोषाः	१५७	यमदंष्ट्रा	१८७
मितस्वप्नेलाभाः	१५७	ऋतुपरत्वेन हरीकीसेवनन्	१८८
निद्राविशेषाः	१५८	सद्वृत्तम्	१८९
निद्रानाशाद्रोगोत्पत्तिः	१५९	हिताहित विवेकः	२०३
निद्रानयनोपायाः	१५९	आधारणीया वेगाः	२०३
अहितनिद्रावारणोपायाः (निद्रानाश हेतवो वा)	१६०	धारणीया वेगाः	२०४
नियतसमये निद्रागमनोपायाः	१६०	रोगानुत्पत्तिकरा भावाः२	२०६
निशान्ते जलपाने गुणाः	१६१	रसायन गुणाः	२०९
		आचार रसायनम्	२०९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयः	पृष्ठम्
आयुः परीणम्	२११
तौलानुसारेणस्वास्थ्यपरीक्षणम्	२१७
नेत्रसंरक्षण परायणत्वम्	२१९
प्रकृतिपरिचयपूर्वकमाहारादि सेवनम्	२२५
हिताहित सेवन-वर्जन क्रमः	२३३
अहितवर्जने हितसेवने च विशेषः	२३४
निन्दितानिन्दित पुरुषविवेचन पूर्वकमाचरणम्	२३६
हिताहितद्रव्यविवेकः	२४२
अहितकरं विरुद्धमशनम	२५०
विरुद्धाशनस्य वितथत्वे कारणं	२५८
विरुद्धाशनजा रोगाः	२५८
वैरोधिकानिमित्तानां व्याधीनां प्रतिघातकरोपायाः	२५८
उपवासः	२५९
उपवासफलम्	२५९
सर्वव्रतेषु पालनीयाः—	
सामान्यधर्माः	२६०
एकादशी व्रतम्	२६०
उपवासस्य भेदा विधिश्च	२६०
अनुपवास्याः	२६१

विषयः	पृष्ठम्
केचिदातुरा अप्युपवासार्हाः	२६१
प्राणाविरोधिलंघनोपदेशः	२६२
सुलंघित लक्षणम्	२६२
अतिकृतलंघने दोषाः	२६३
मादकद्रव्याणामुपयोगनिषेधः	२६३
देशः	२६६
जलम्	२६८
दिव्य जल गुणाः	२६९
एकविधस्याऽपि जलस्य बहु प्रकारत्वम्	२७०
जलस्योपयोगः	२७१
आन्तरीक्षाम्भु भेदाः	२७२
गांगसामुद्रयोः परीक्षणम्	२७२
आन्तरिक्षाम्बुग्रहणरीतिः	२७३
ऐन्द्राख्यं पानीयं जलम्	२७३
भौमाम्बुभेदास्तद्वर्णनच	२७४
ऋतुपरत्वेन भौमाम्बु सेवनम्	२७४
उत्तमपानीय लक्षणम्	२७४
ऋतुभेदेनाम्भसो गुणाः	२७५
कौपं जलम्	२७६
स्वास्थ्यकरकूपनिर्माणम्	२७६
नलिका कूपः	२७८
नादेयं जलम्	२७९
शुद्ध नादेयजलग्रहणरीतिः	२८०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विषयः	पृष्ठम्
जांगलपश्चिमादिदेशस्थानां नदीनां गुणाः	२८१
लघुगुरूदकयोर्विवरणम्	२८१
शैलादिभेदेन नदीजल गुणः	२८१
सारसं जलम्	२८२
ताड़ागं जलम्	२८३
प्रास्रवणं जलम्	२८४
औदिभदं जलम्	२८४
चौण्ड्यं जलम्	२८६
वैंकिरादि जल गुणाः	२८६
आनूपादि देशभेदेन जल गुणाः	२८७
भौमाम्बु ग्रहणकाला	२८८
जलस्य निक्षेपणम्	२८८
पंच निक्षेपणानि	२८९
जलदूषणहेतवः तज्जाः रोगाश्च	२८९
दूषितजलशोधनरीतयः	२९२
प्रसादनम्	२९३
परिस्रावणम्	२९५
वृहद्राशिक जलस्य प्रसादनम्	२९६
जलगन्धनाशनोपायाः	२९७
नगरेषु शुद्धजलप्रापणम्	२९८
उष्णोदकम्	३००
शृतशीतं जलम्	३०२

विषयः	पृष्ठम्
शृतोदकस्य शीतीकरणोपायाः	३०३
पानीये विशेषविचारः	३०३
पानीये विशेषविचारः	३०५
जलस्य बाह्योपयोगः	३०७
विषदुष्टमार्गोदकादिज्ञानपूर्वक-मात्मरक्षणम्	३०८
वायुः	३११
वायुसंचार प्रयोजनम्	३११
दिशाभेदेन वातगुणाः	३१४
वायुप्रवाहः	३१६
वातप्रविचारः	३१८
आवश्यकवातप्रविचरणार्थं प्रति व्यक्त्यभीष्टस्थानम्	३२२
वायुशुद्धिः	३२५
समास्थानादिकप्रमाणम्	३२५
वासस्थानम्	३२६
वास्तुशास्त्रोक्ता ग्राह्यभूमिः	३२७
अग्राह्यभूमिः	३२८
भित्तिमूलम् (नींव)	३३२
भित्तिः	३३३
द्वारवातायनानि	३३३
तलम् (फर्श)	३३४
गृहवितानम् (छत)	३३४
महानसम्	३३६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
वर्चोगृह प्रस्रावगृहं च	३३६	वस्तूनि	३६०
सूतिकागारम्	३३७	शय्या	३६०
कुमारागारम्	३३७	विशेषः	३६०
गृहभूशुद्धिः	३३८	संक्रामक रोगिगृह सम्बन्धि	
गोशालाश्वशाले	३३८	नियमाः	३६१
जात्याद्यनुसारेणग्रामादौ		मलसंकरादिदूरीकरण विधयः	३६२
वासस्थान निर्माणम्	३४०	संकर मलस्य दूरीकरणम्	३६६
नगरम्	३४२	किट्ट मलस्य दूरीकरम्	३६६
दुर्गाणि	३४३	संचयविधिः	३६६
पण्यवीथिका	३४५	किट्टमलस्यान्तिमोनिक्षेपः	३७०
मयमुनिलिखितं नगरा-		खातपूरण प्रकाराः	३७१
पणक विधानम्	३४५	गर्तापूरणम्	३७५
विद्यालयः	३४८	प्रज्वालनम्	३७६
छात्रावासः	३५०	मूत्रालयः	३७६
विद्यार्थिनां स्वास्थ्योपदेशः	३५१	प्रणाल्यः	३७७
चिकित्सालयः	३५२	जलवाहनविधिः	३७८
शासक खण्डः	३५२	साधनानि	३७९
वाह्यरोगिखण्डः	३५३	जलसंवाहक मल पात्रम्	३७९
आन्तरिकरोगिखण्डः	३५५	किट्टनलः	३८२
परिचारिकागृहम्	३५७	गृहमलपथः	३८२
शवगहं शवपरीक्षा भवनं च	३५८	किट्टवाहः	३८३
संक्रामक रोगिगृहम्	३५८	किट्टस्यान्तिमो निक्षेपः	३८७
विशिष्ट गृहाणि	२५८	संक्रामकरोगाः	३९२
अधिष्ठानादीनि	३५९	संक्रमण प्रकाराः	३९८
		संक्रमण प्रतिषेधोपायाः	३९९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विषयः	पृष्ठम्	विषयः	पृष्ठम्
घोषणा	४००	श्वास द्वारा कीटाणु प्रवेशः	४२१
रोगिणां पृथग्रक्षणम् (एकान्तवासः)	४००	कासनम्	४२५
उपदेशः	४०२	माक्षिका दमनावश्यकता	४२५
जीवाणु विनाशनम्	४०२	अशनद्वारा कीटाणु प्रवेशः	४२६
निर्जन्तुकीकरण विधिः	४०५	चुम्बन निषेधः	४२८
रोगप्रतिरोध क्षमता	४०७	धार्मिकगोष्ठी द्वारा प्रचारः	४२८
कतिपय विशिष्ट संक्रामक रोगाणां वर्णनम्	४०९	व्रणद्वारा रुधिरे कीटाणु-प्रवेशः	४२९
कुष्ठरोगः	४०९	अन्ये क्षयरोगप्रचारहेतवः	४३०
विषमज्वरः	४११	हितोपदेशः	४३३
कालज्वरः	४१४	विसूचिका	५३६
वातालिका (ग्रन्थिक ज्वरः)	४१४	मसूरिका (शीतला)	४३८
आन्त्रिक ज्वरः	४१७	जनपदोद्ध्वंसने कारणानि	४४०
श्लेष्मकसन्निपातः	४१८	रोगारम्भक्षणे जनानां-कर्तव्यम्	४५७
शोषः	४२०	अन्त्येष्टि कर्म	४५९
क्षयरोगाक्रमणे मुख्यतः कारण त्रयम्	४२०	स्वस्थवृत्तानुष्ठानस्य फलम्	४६१
शरीरे क्षयात्मक जीवाणूनां प्रवेश प्रकाराः	४२१	ग्रन्थसमाप्ति कालः	४६२
		ग्रन्थकर्तुः परिचयः	४६३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

स्वस्थवृत्तसमुच्चयः

विश्वेश्वरं सगिरिजं हृदये निधाय—
नत्वा गुरोर्दुरितहारिपदारविन्दम् ।
धर्मार्थकाममुतमोक्षकमूलमूलम्-
स्वस्थस्य वृत्तमखिलं खलु सञ्चिनोमि ॥

भगवती गिरिजा सहित विश्वनाथजी को हृदय में स्मरण कर एवं पापों को हरण करने वाले गुरुदेव के चरणकमलों में प्रणाम कर धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के कारण आरोग्य तथा उसके भी कारण समस्त स्वस्थवृत्तों (स्वास्थ्यरक्षा-नियमों) का संग्रह कर रहा हूँ ।

स्वस्थवृत्तस्वरूपम्

उत्थायोत्थाय सततं स्वस्थेनारोग्यमिच्छता ।
धीमता यदनुष्ठेयं तदस्मिन् सम्प्रवक्ष्यते ॥

बुद्धिमान् आरोग्य चाहनेवाले स्वस्थ पुरुष को नित्य सोकर उठने के बाद जो कर्म करना चाहिये वह सब इस ग्रन्थ में कहा जायगा ।

आरोग्यरोगयोः फलम्

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ।
रोगास्तस्यापहर्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ॥ (चरक)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का प्रधान कारण आरोग्य है। किन्तु रोग, आरोग्य और सुखपूर्वक जीवन (दोनों) को हरण करनेवाले होते हैं।

शरीररक्षणप्रयोजनम्

अतो रुग्भ्यस्तनुं रक्षेन्नरः कर्मविपाकवित्।
धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं यतः॥

चूँकि शरीर धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष का साधन है। इसलिए कर्मफल जानने वाले मनुष्य को रोगों से उसकी रक्षा करनी चाहिये।

न जन्तुः कश्चिदमरः पृथिव्यां जायते क्वचित्।
अतो मृत्युरवार्यः स्यात्किन्तु रोगान्निवारयेत्॥ (शार्ङ्गधरः)

भूतल पर कोई प्राणी अमर होकर नहीं उत्पन्न होता इसलिये मृत्यु नहीं हटायी जा सकती किन्तु रोग दूर किये जा सकते हैं, अतः उन्हें हटाने का यत्न करे।

सर्वमन्यत्परित्यज्य शरीरमनुपालयेत्।
तदभावे हि भावानां सर्वाभावः शरीरिणाम्॥
नगरी नगरस्येव रथस्येव रथी यथा।
स्वशरीरस्य मेधावी कृत्येष्ववहितो भवेत्॥

[च० सू० अ० ५]

सब कुछ छोड़ कर पहले शरीर का पालन करना चाहिए क्योंकि शरीर सुरक्षित न रहने पर प्राणियों को शरीर सम्बन्धी सभी विषयों का उपभोग नहीं प्राप्त हो सकता।

जिस प्रकार नगराध्यक्ष नगर एवं सारथी रथ की रक्षा में सावधान रहता है उसी प्रकार बुद्धिमान् अपने शरीर की रक्षा में सावधान रहे।

स्वस्थलक्षणम्

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥ [सुश्रुत]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसके वात, पित्त और कफ समानरूप से कार्य कर रहे हों, पाचन-शक्ति ठीक हो; रसरक्तादि धातु एवं मलों की क्रिया समान हो (रसरक्तादि स्नच्छ रूप से बन रहे हों और मल निर्बाध निकल जाता हो) और आत्मा-इन्द्रियाँ तथा मन प्रसन्न हों उसी को स्वस्थ कहते हैं :

स्वस्थरक्षणम्

स्वस्थस्य रक्षणं कार्यं भिषजा यत्नतः सदा ।
आयुर्वेदोदितं तस्मात्स्वस्थवृत्तं प्रचक्ष्यते ॥

वैद्य को सर्वदा यत्नपूर्वक स्वस्थ पुरुष की रक्षा करनी चाहिए। इसलिए आयुर्वेद में वर्णित स्वस्थ के आचरणों का वर्णन करेंगे।

स्वास्थ्यविधानम्

मानवो येन विधिना स्वस्थस्तिष्ठति सर्वदा ।
तमेव कारयेद्वैद्यो यतः स्वास्थ्यं सदेप्सितम् ॥
दिनचर्यां निशाचर्यामृतुचर्यां यथोदिताम् ।
आचरन् पुरुषः स्वस्थः सदा तिष्ठति नान्यथा ॥

[भा० प्र०]

चूँकि स्वास्थ्य सर्वदा इच्छित है इसलिए जिस उपाय से मनुष्य सदा स्वस्थ रहे वैद्य को वही उपाय करना चाहिए।

आयुर्वेदशास्त्रोक्त दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्या का आचरण करता हुआ ही मनुष्य सर्वदा स्वस्थ रह सकता है। इसके विपरीत उपायों से नहीं।

सत्त्वमात्मा शरीरं च त्रयमेतत्त्रिदण्डवत् ।
लोकस्तिष्ठति संयोगात्तत्र सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ [च]

मन, आत्मा और शरीर ये तीनों त्रिदण्ड के समान हैं। इन्हीं के संयोग से प्राणिजगत् विद्यमान रहता है और उसी पर सब कुछ आश्रित है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कालार्थकर्मणां योगो हीनमिथ्यातिमात्रकः ।
सम्यग्योगश्च विज्ञेयो रोगारोग्यैककारणम् ॥
रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता ।
निजागंतुविभागेन तत्र रोगा द्विधा स्मृताः ।
तेषां कायमनोभेदादधिष्ठानमपि द्विधा ॥ [वा०]

काल, इन्द्रियों के विषय और कर्मों का हीन, मिथ्या एवं अतियोग रोग का तथा सम्यक्योग आरोग्य का कारण जानना चाहिए। दोषों की विषमता रोग एवं दोषों की समता आरोग्य है। रोग निज (दोषज) और आगन्तु (बाह्य कारणों से उत्पन्न होनेवाले) भेद से दो प्रकार के होते हैं। उन रोगों के दो अधिष्ठान शरीर और मन भेद से हैं।

निर्विकारः परस्त्वात्मा सत्त्वभूतगुणेन्द्रियैः ।
चैतन्ये कारणं नित्यो द्रष्टा पश्यति हि क्रियाः ॥ [च०]

परमात्मा तो निर्विकार है परन्तु वह मन-पञ्चमहाभूत-गुण और इन्द्रियों से युक्त होनेपर चैतन्य में कारण होता है। वह नित्य (अविनाशी) और द्रष्टा है क्योंकि वह सब कर्मों को देखता है।

वायुः पित्तं कफश्चेति त्रयोदोषाः समासतः ।
विकृताऽविकृता देहं घ्नंति ते वर्तयंति च ॥
ते व्यापिनोऽपि हृन्नाभ्योरधोमध्योर्ध्वसंश्रयाः ।
वयोऽहोरात्रिभुक्तानां तेऽन्तमध्यादिगाःक्रमात् ॥
तैर्भवेद्विषमस्तीक्ष्णो मंदश्चाग्निः समैः समः ।
कोष्ठः क्रूरो मृदुर्मध्यो मध्यः स्यात्तैः समैरपि ॥
शुक्रार्तवस्थैर्जन्मादौ विषेणेव विषक्रियेः ।
तैश्च तिस्रः प्रकृतयो हीनमध्योत्तमाः पृथक् ॥
समधातुः समस्तासु श्रेष्ठा निंद्या द्विदोषजाः । [वा०सू०]

वात, पित्त और कफ ये ही तीन दोष हैं। ये ही विकृत होकर शरीर को नष्ट करते तथा अविकृत होकर शरीर धारण करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे तीनों दोष सारे शरीर में व्याप्त रहने पर भी क्रमशः नाभि के नीचे, हृदय-नाभि के मध्य और हृदय के ऊपरी भाग में विशेषतः रहते हैं। एवं आयु, दिन, रात, भोजन-पाक के आदि मध्य-अन्त में भी क्रमशः बलवान् होते हैं। उनसे क्रमशः विषम, तीक्ष्ण और मन्द अग्नि होती है। उनके समान रहने पर अग्नि भी समान होती है। उनसे कोष्ठ क्रमशः कड़ा, कोमल एवं मध्य (औसत) होता है। उनके समान रहने पर भी कोष्ठ मध्य रहता है।

विषकृमि के विष के समान जन्म के आदि में ही माता-पिता के रज और शुक्र की संयोगावस्था में विशेष रूप से स्थित उन तीनों दोषों से क्रमशः हीन, मध्य और उत्तम नामक तीन प्रकृतियाँ अलग-अलग होती हैं। इनमें सम दोष होने से समधातुवाली प्रकृति बनती है जो सब में श्रेष्ठ है, दो दोषों से होने वाली प्रकृतियाँ निन्दित हैं।

(पृष्ठ ६ पर दोष-चक्र देखिये)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दोष-चक्र

दोष	स्थान	विशेषता का फल						
		आयु	दिन	रात	भोजन	अग्नि	कोष्ठ	प्रकृति
		वृद्धावस्था / बाल्यावस्था	सायंकाल २ बजेसे६बजे तक / प्रातःकाल ६ बजे से १० तक	अन्तिम प्रहर लगभग २ बजे से ६ बजे तक / पहला प्रहर ६ बजे से १० तक	पाक हो जाने पर / भोजन करते समय			
वात	नाभि के नीचे					विषम	क्रूर	हीन
पित्त	हृदय नाभि के मध्य में	युवावस्था	दोपहर १० बजे से २ बजे तक	मध्यरात्रि १० बजे से २ बजे तक	पचते समय	तीक्ष्ण	मृदु	मध्य
कफ	हृदय के ऊपर	बाल्यावस्था	प्रातःकाल ६ बजे से १० तक	पहला प्रहर ६ बजे से १० तक	भोजन करते समय	मन्द	मध्य	उत्तम
समदोष (तीनों दोषों की समता)	×	×	×	×	×	सम	मध्य	सम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूक्षः शीतो लघुः सूक्ष्मश्चलोऽथ विशदः खरः ।
विपरीतगुणैर्द्रव्यैर्मारुतः संप्रशाम्यति ॥
सस्नेहमुष्णं तीक्ष्णं च द्रवमम्लं सरं कटु ।
विपरीतगुणैः पित्तं द्रव्यैराशु प्रशाम्यति ॥
गुरुशीतमृदुस्निग्धमधुरस्थिरपिच्छलाः ।
श्लेष्मणः प्रशमं यान्ति विपरीतगुणैर्गुणाः ॥ [च०]

वायुः—रूक्ष, शीतल, हलका, सूक्ष्म, चञ्चल, विशद, खर होता है। वह इनके विपरीत गुणोंवाले द्रव्यों से शान्त होता है।

पित्तः—स्नेहयुक्त, गरम, तीक्ष्ण, द्रव, खट्टा, सर (सरकने वाला), कटु होता है और, इनके विपरीत गुणवाले द्रव्यों से शान्त होता है।

कफः—भारी, ठण्डा, कोमल, चिकना, मधुर, स्थिर, लसीला होता है और इनके विपरीत गुणोंवाले द्रव्योंसे शान्त होता है।

रजस्तमश्च मनसो द्वौ च दोषावुदाहृतौ । [वा०]

मन के दो दोष कहे गये हैं—एक रज दूसरा तम।

प्रशाम्यत्यौषधैः पूर्वो दैवयुक्तिव्यपाश्रयैः ।
मानसो ज्ञानविज्ञानधैर्यस्मृतिसमाधिभिः ॥ [च०]

पहले प्रकार का (दोषज) रोग दैवव्यपाश्रय एवं युक्तिव्यपाश्रय चिकित्सा से तथा मानसिक रोग ज्ञान-विज्ञान धैर्य, स्मृति और समाधि (मन की एकाग्रता) से शान्त होता है।

रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः ।
सप्त दूष्याः मला मूत्रशकृत्स्वेदादयोऽपि च ॥
वृद्धिः समानैः सर्वेषां विपरीतैर्विपर्ययः ।
पूर्वो धातुः परं कुर्याद् वृद्धः क्षीणश्च तद्विधम् ।
दोषा दुष्टा रसैर्धातून् दूषयंत्युभये मलान् ॥
द्वे अधः सप्त शिरसि खानि स्वेदमुखानि च ।
मलायतनानि बाध्यन्ते दुष्टैर्मात्राधिकैर्मलैः ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रस, रक्त, मांस, मेद (चर्बी), अस्थि, मज्जा एवं वीर्य ये सात धातुएँ दूष्य (दूषित होनेवाली) और मूत्र पुरीष तथा पसीना आदि मल है।

सामान गुणों से सभी की वृद्धि और विरोधी गुणों से सभी का ह्रास होता है। पहले की बढ़ी हुई धातु बादवाली धातु को बढ़ाती है, उसी प्रकार पहले की क्षीण-धातु बादवाली धातु को क्षीण (कम) करती है।

(इसको यों समझिये:—रसधातु मधुर होती है इसलिये अपने समान गुणवाले मधुर फलों के रस से बढ़ी हुई यह धातु अपने बादवाली रक्तधातु को बढ़ाती है, और रस-धातु के विपरीत गुणवाले अम्ल आदि फलों के रस से घटी हुई रस-धातु अपने बादवाली धातु रक्त को भी घटाती है।)

रसों द्वारा दूषित दोष धातुओं को, तथा दूषित दोष एवं धातु दोनों मिलकर मलों को दूषित करते हैं।

नीचे दो अर्थात् गुदा एवं मूत्र-मार्ग, शिर में ७ (दो कान, दो नाक के छिद्र दो आँखें और एक मुँह) तथा पसीना निकालने वाले त्वचा के असंख्य छिद्र ये मलायन (शरीर से मल निकलने के मार्ग) हैं। ये मात्रा से अधिक दूषित मल से बाधित (विकृत) होते हैं।

रसाः स्वाद्वम्ललवणतिक्तोषणकषायकाः।
षड् द्रव्यमाश्रितास्ते तु यथापूर्वं बलावहाः॥
तत्राद्या मारुतं घ्नंति त्रयस्तिक्तादयः कफम्।
कषायतिक्तमधुराः पित्तमन्ये तु कुर्वते॥ [वा०]

द्रव्यों में आश्रित मधुर, अम्ल, लवण, तिक्त, कटु और कषाय नामक छ रस होते हैं, वे अन्त से आदि की ओर (कषाय, कटु, तिक्त, लवण, अम्ल और मधुर) क्रमशः अपेक्षाकृत बल बढ़ाने वाले होते हैं। जिनमें आदि के तीन (मधुर अम्ल लवण) वायु, तिक्त आदि तीन (तिक्त कटु कषाय) कफ, एवं कषाय-तिक्त-मधुर रस पित्त का नाश करते हैं। दूसरे अर्थात् नाशक रसों के अतिरिक्त बचे हुए तीन रस उसी दोषको बढ़ाते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्रयोदोषा धातवश्च पुरीषं मूत्रमेव च ।
देहं संधारयन्त्येते ह्यव्यापन्ना रसैर्हितैः ॥

हित (उपयोगी) रसों के सेवन के कारण अव्यापन्न (अविकृत) तीनों (वात पित्त कफ) दोष, धातुयें पुरीष एवं मूत्र ये सभी शरीर को धारण करते हैं ।

तस्मादात्मवतानित्यमाहाराचारभेषजम् ।
धीमता तदनुष्ठेयं स्वास्थ्यं येनानुवर्तते ॥
[वृन्दमाधवः]

इसलिये आत्मवान् तथा बुद्धिमान् मनुष्य को सर्वदा ऐसे आहार, विहार एवं औषधियों का सेवन करना चाहिये जिनसे स्वास्थ्य बना रहे ।

स्वस्थवृत्तानुष्ठानस्यावश्यकत्वम्

एवं विज्ञाय मतिमान् स्वस्थवृत्तपरो भवेत् ।
आयुरारोग्यधर्मादि स्वास्थ्यादेव हि जायते ॥

क्योंकि स्वास्थ्य से ही आयु, आरोग्य और धर्म आदि प्राप्त होते हैं इसलिये ऐसा जानकर बुद्धिमान् सर्वदा स्वस्थवृत्त का पालन करनेवाला हो ।

(दिनचर्या)

उत्थान समय :—तदनु शौचाचारश्च ।

ब्राह्मे मुहुर्ते ह्युत्तिष्ठेज्जीर्णाऽजीर्णं निरूपयन् ।
रक्षार्थमायुषः स्वस्थो दर्पणेन विचक्षणः ।
मुखस्यालोकनं कुर्याज्जातवेगः समुत्सृजेत् ॥
उदङ्मुखो मूत्रꣳ शकृद् दक्षिणाभिमुखो निशि ।

ꣳ तिष्ठन्नमूत्रपुरीषे कुर्यात् (पा० गृ० सू०)
उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने ।
श्राद्धे भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत् ॥ [हारीतः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वाचं नियम्य प्रयतः संवीताङ्गोऽवगुण्ठितः ॥
प्रवर्तयेत्प्रचलितं नतु यत्नादुदीरयेत् ।
नाऽमेध्यमार्गमृद्भस्मगोस्थानाकीर्णगोमये ॥
पुरान्तिकाग्निवल्मीकरम्योत्कृष्टचितिद्रुमे ।
न नारीपूज्यगोऽर्केन्दुवाय्वन्नाग्निजलंप्रति ।
न चातिरस्कृत्य महीं भयाशक्त्योस्तु कामतः ॥
निःशल्यादुष्टमृत्पिण्डीपरिमृष्टमलायनः ॥
अभ्युद्धृताभिः शुचिभिरद्भिर्मृद्भिश्च योजयेत् ।
लेपगन्धावहं शौचमनुत्पाततबिन्दुभिः ॥

[अष्टांगसङ्ग्रह सू० अ० ३]

चतुर स्वस्थ मनुष्य आयु की रक्षा के लिये रात के भोजन के पचने न पचने का विचार करता हुआ ब्राह्म-मुहूर्त (ऊषःकाल) में उठे और दर्पण में मुख देखे । वेग लगने पर मल-त्याग करे ।

मूत्र और मल को दिन में उत्तर मुंह तथा रात्रि में दक्षिण मुँह होकर यत्नपूर्वक बोलना बन्द कर, अंगों को ठीक संकुचित कर निकाले । अपने स्थान से चले हुए मल को निकाल दे, बलपूर्वक (या काँख-काँख कर) न निकालें ।

बहुत गन्दे स्थान, रास्ता, मिट्टी के ढेर, राख, गायों के बैठने की जगह और गोबर पर, बस्ती के समीप, अग्नि, बांबी, रमणीय स्थान, जोता हुआ खेत (अथवा उत्तम छायादार वृक्ष) तथा चैत्य वृक्ष (गाँव के बाहर या श्मशान में जो पिप्पल आदि का बड़ा वृक्ष पूजा व विश्राम निमित्त लगाया जाता है) स्त्री, पूजनीय, गाय, सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अन्न, अग्नि और जल के सामने तथा पृथ्वी को बिना ढके मलत्याग नहीं करना चाहिये । भय एवं असमर्थता में कहीं भी मलत्याग किया जा सकता है । मलत्याग के बाद कांटा रहित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साफ मिट्टी के ढेले से मलमार्ग को पोंछ कर लाये हुये पवित्र जल और मिट्टी से मलकर धो लेना चाहिये। सफाई इतनी करे कि मल लिप्त न रहे और बदबू दूर हो जाय तथा आबदस्त लेते समय पानी का बूँद इधर-उधर उछल कर न गिरे।

गुदादिमलमार्गाणांशौचंकान्तिबलप्रदम्।
पावित्र्यकरमायुष्यमलक्ष्मीकलिपापहृत्॥
प्रक्षालनं हि पाण्योश्च पादयोः शुद्धिकारणम्॥
मलश्रमहरं वृष्यं चक्षुष्यं रक्षसापहम्॥❀

[योगरत्नाकरः]

गुदा आदि मलमार्गों की पवित्रता कान्ति-बल को बढ़ानेवाली, पवित्र करनेवाली, आयु को बढ़ानेवाली, दरिद्रता-मलिनता एवं पाप का नाश करनेवाली है। हाथ-पैर का धोना शुद्धि का कारण, मल और थकावट को नाश करने वाला, वृष्य (वीर्यवर्धक) नेत्रों के लिये हितकारी तथा राक्षसों (क्रिमियों) का नाश करनेवाला है।

आचमनम्

स्पृष्ट्वा धातून् मलानश्रुवसाकेशनखांश्च्युतान्।
स्नात्वा भोक्तुमना भुक्त्वा सुप्त्वा क्षुत्वा सुरार्चने।
रथ्यामाक्रम्य† चाचामेदुपविष्ट उदङ्मुखः।
प्राङ्मुखो वा विविक्तस्थो न बर्हिर्जानु नान्यदृक्।
अजल्पन्नुत्तरासङ्गी स्वच्छैरंगुष्ठमूलगैः॥
नोद्धृतै र्नानतो नोर्ध्वं नाग्निपक्वैर्न पूतिभिः॥

❀ मेध्यं पवित्रमायुष्यमलक्ष्मीकलिनाशनम्।
पादयोर्मलमार्गाणां शौचाधानममीक्ष्णशः॥ [चरक]

† त्रिःप्राश्यापो द्विरुन्मृज्य खान्यद्भिः समुपस्पृशेत्।
अद्भिस्तु प्रकृतिस्थाभिर्हीनाभिः फेनबुद्बुदैः॥

(याज्ञवल्क्यस्मृतिः)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

न फेनबुद्बुदैर्नैकहस्तार्पितैर्जलैः ।
नार्द्रैकपाणिर्नामेध्यहस्तपादो न शब्दवत् ॥
(अ० स०)

रक्तादि धातुओं, मल, आँसू, चर्बी, कटे हुए बाल और नख को छूकर, स्नान करके, भोजन के प्रारम्भ में, भोजन और सोने के बाद उठकर, छींक के बाद, देव-पूजन में और रास्ता चलने के बाद उत्तर मुख या पूर्व मुँह होकर, एकान्त में स्थित होकर आचमन करना चाहिये। उस समय घुटना बाहर न फैलाते हुये दूसरी ओर न देखते हुये, बकवाद न करते हुये चादर या गमछा कन्धे पर रखकर अंगुष्ठ के मूल के पास हथेली में रक्खे हुए, न उठाकर, न झुककर, न ऊपर मुँह करके, न अग्नि पर पके हुए, न दुर्गन्धित, न फेन बुलबुला क्षार युक्त, न केवल एक हाथ से छोड़े हुए जल से (एक हाथ से दूसरे हाथ पर जल लेकर) आचमन करना चाहिये। उस समय केवल एक हाथ गीला न हो (दोनों हाथ गीला हो) हाथ-पैर अपवित्र न हों तथा शब्द न होना चाहिये।

दन्तधावनम्

तत्रादौ दन्तपवनं द्वादशांगुलमायतम् ।
कनिष्ठिकापरीणाहमृज्वग्रन्थितमव्रणम् ।
अयुग्मग्रन्थि यच्चापि प्रत्यग्रं शस्तभूमिजम् ॥
आपोत्थिताग्रं द्वौ कालौ सायंप्रातश्च बुद्धिमान् ।
भक्षयेद्दन्तपवनं दन्तमांसान्यबाधयन् ॥
[च० सू० अ० ५]

प्रातः शौचाचमन के बाद १२ अंगुल लम्बी, कानी अंगुली के बराबर मोटी, सीधी, गांठ, और व्रण से रहित, दो ग्रन्थि से रहित (यदि हो तो एक ही गांठ हो) ताजी और अच्छी भूमि में उत्पन्न लकड़ी की दतुवन करनी चाहिये। बुद्धिमान सायं और प्रातः दोनों समय मसूढ़ों को बिना बाधा पहुँचाये दतुअन करे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवेक्ष्यर्तुं च दोषं च रसं वीर्यं च सर्वदा ।
कषायं मधुरं तिक्तं कटुकं योजयेन्नरः ॥
निम्बश्च तिक्तके श्रेष्ठः कषाये* बब्बुलस्तथा ।
मधूको मधुरे श्रेष्ठः करञ्जः कटुके तथा ॥

[सु० चि० अ० २४]

सर्वदा ऋतु, दोष, रस और वीर्य को देखकर कसैली, मीठी, तीती, कड़वी यथोचित दतुवन करनी चाहिये । तीती में नीम, कसैली में बबूल, मधुर में महुआ और कड़वी में करंज की दतुवन श्रेष्ठ है ।

करञ्जकरवीरार्कमालतीककुभासनाः ।
शस्यन्ते दन्तपवने ये चाप्येवंविधा द्रुमाः† ॥

[च० सु० अ० ५]

करंज, कनेर, मदार, चमेली, अर्जुन और असना एवं इसी प्रकार के अन्यान्य वृक्ष दतुअन के योग्य होते है ।

क्षौद्रव्योपत्रिवर्गोक्त† सतैलसैन्धवेन च ।
चूर्णेन तेजोवत्याश्च दन्तान्नित्यं विशोधयेत् ॥
रास्नातेजोवतीधान्यशटीकुष्ठवचान्वितैः ।
रोचनाचन्द्रकंकोलैश्चूर्णं दन्तविशोधनम् ॥
एकैकं घर्षयेद्दन्तं* मृदुना कूर्चकेन वा ।
दन्तशोधनचूर्णेन दन्तमांसान्यबाधयन् ॥

---

* खदिर इति पाठान्तरम् ।

† बटासनार्कखदिरकरवीरजं,
सर्जारिमेदापामार्गमालतीककुभौद्भवम् । इत्यन्येद्रुमाः ।

† वाप्यत्रिवर्गत्रितयक्षौद्राक्तेन च घर्षयेत् । इतिवृद्धवाग्भटः ।

* दन्तान् पूर्वमधोघर्षेत् प्रातः सिञ्चेच्च लोचने ।
तीयपूर्णमुखो ग्रीष्मशरदोः शीतवारिणा । [वृद्धवाग्भटः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तद्दौर्गन्ध्योपदेहौ तु श्लेष्माणं चापकर्षति ।
वैशद्यमन्नाभिरुचिं सौमनस्यं करोति च ॥
[सु० चि० अ० २४]

मधु, व्योष (सोंठ, मरिच, पीपर), त्रिवर्ग (त्रिकुट--सोंठ, मरिच, पीपर, त्रिफला--हर्रा, बहेर्रा, आँवला, त्रिमद--विडंग, नागकेशर, चित्ता), तेल, सेंधा नमक और तेजबल के चूर्ण से दाँतों को हमेशा शुद्ध करना चाहिये। रास्ना, तेजबल, धनियाँ, कचूर, कूठ, वच, गोरोचन, कपूर और शीतलचीनी के चूर्ण से दातों को शुद्ध करना चाहिये। अथवा कोमल कूँची और दन्तशोधक चूर्ण से मसूड़ों को बिना बाधा पहुँचाये एक-एक दाँत का घर्षण करे। यह मुँह की दुर्गन्ध, लवाब, और कफ को निकालता है। मुँह में स्वच्छता, अन्न में रुचि एवं मन को प्रसन्न करता है।

अलाभे दन्तकाष्ठस्य निषिद्धदिवसेषु च ।
अपांद्वादशगण्डूषैर्मुखशुद्धि र्विधीयते ॥
[क्षेमकुतूहलः]

दतुअन न मिलने पर और दातौन के लिए निषिद्ध दिनों में जल के बारह कुल्लों से मुँह शुद्ध हो जाता है।

निषिद्धदन्तकाष्ठानि

नैवश्लेष्मातकारिष्ठविभीतधवधन्वजान् ।
विल्ववञ्जुलनिर्गुण्डी शिग्रुतिल्वकतिन्दुकान् ॥
कोविदारशमीपीलुपिप्पलेङ्गुदगुग्गुलून् ।
पारिभद्रकमम्लीकामोचक्यौशाल्मलीशणम् ॥
स्वाद्वम्ललवणं शुष्कं सुषिरं पूति पिच्छिलम् ।
पालाशमासनं दन्तधावनं पादुकं त्यजेत् ॥
[वृद्धवाग्भटः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिसोड़ा, रीठा, बहेड़ा धव, जंगली वृक्ष, बेल, जलवेत, संभालू, सहिजन, लोध, तेंदु, कचनार, शमी, पीलू, पीपल, हिंगोट, गुग्गुल, फरहद, (नीम का भेद) इमली, केला, सेमर, सनई की और मधुर अम्ल तथा नमकीन (मोखा आदि क्षार वृक्ष की) सूखी, पोली, दुर्गन्धित, लसीली दातौन नहीं करनी चाहिये। एवं पलास की दातौन तथा आसन और खड़ाऊँ त्याग दें।

दन्तधावनानर्हाः

न खादेद्गलतालोष्ठजिह्वारोगसमुद्भवे।
श्वासे च कासहिक्कावमीषु च॥
दुर्बलोऽजीर्णभक्तश्च मूर्च्छार्तो मदपीडितः।
शिरोरुगार्तस्तृषितः श्रान्तः पाकक्लमान्वितः॥
अर्दितो कर्णशूली च दन्तरोगी च मानवः।

[सू० चि० अ० २४]

गला, तालु, ओठ और जिह्वा रोग के उत्पन्नहोने पर, मुखपाक; श्वासकष्ट, खाँसी, हिचकी और वमन में तथा दुर्बल, अजीर्ण, मूर्छा, नशा एवं शिरोरोग से पीड़ित, प्यासा, थका, मुखपाक और सुस्ती से युक्त, अर्दित, कर्णशूल एवं दन्तरोग वाला मनुष्य दातौन न करे।

✓ जिह्वानिर्लेखनम्

जिह्वानिर्लेखनं रौप्यं सौवर्णं वार्क्षमेव व।
तन्मलापहरं वक्रं मृदुश्लक्ष्णं दशाङ्गुलम्॥

[सू० चि० अ० २४]

जीभ के मैल को दूर करनेवाली जीभ-छोलनी चाँदी, सोना या लकड़ी की टेढ़ी, मुलायम, चिकनी और दस अँगुल लम्बी होनी चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

जिह्वामूलगतं यच्च मलमुच्छ्वासरोधि च।
दौर्गन्ध्यं भजते तेन तस्माज्जिह्वां विनिर्लिखेत्॥
[च० सू० अ० ५]

जीभ की जड़ में जमा मैल उच्छ्वास को रोकनेवाला होता है। उससे दुर्गन्ध होती है। इसलिए जीभ को छीलना चाहिए।

स्नेहगण्डूषधारणम्

हन्वोर्बलं स्वरबलं वदनोपचयः परः।
स्यात्परञ्च रसज्ञानमन्ने च रुचिरुत्तमा॥
न चास्य कण्ठशोषः स्यान्नौष्ठयोः स्फुटनाद्भयम्।
न च दन्ताःक्षयं यान्ति दृढमूला भवन्ति च॥
न शूल्यन्ते न चाम्लेन हृष्यन्ते भक्षयन्ति च।
परानपि खरान् भक्ष्यान् स्नेहगण्डूषधारणात्॥
[च० सू० अ० ५]

मुँह में स्नेह (तेल आदि) का गण्डूष (कुल्ला) धारण करने से जबड़ों में बल, स्वर में बल, वदन की पुष्टि, रस का अच्छा ज्ञान और अन्न में अच्छी रुचि होती है। स्नेहगण्डूष धारण करनेवाले को कंठ-शोष (गला सूखना और ओठ फटने) का डर नहीं रहता। दांत नष्ट नहीं होते; उनकी जड़ मजबूत होती है। उनमें पीड़ा और खटाई से हर्ष (गोंठिल) नहीं होता, बल्कि अत्यन्त कठिन पदार्थ भी चबा सकते हैं।

शीताम्बुगण्डूषः

गण्डूषमथ कुर्वीत शीतेन पयसा मुहुः।
कफतृष्णामलहरं मुखान्तःशुद्धिकारकम्॥

ठण्डे जल से बारम्बार कुल्ला करना चाहिए। यह कफ, कास और मल को नाश करनेवाला तथा मुँह को भीतर से शुद्ध करनेवाला है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुखनेत्रप्रक्षालनम्

क्षीरवृक्षकषायैर्वा क्षारेण च विमिश्रितैः ।
भिल्लोदककषायेण तथैवामलकस्य वा ॥
प्रक्षालयेन्मुखं नेत्रे स्वस्थः शीतोदकेन वा ।
नीलिकां मुखशोषं च पिडकां व्यङ्गमेव च ॥
रक्तपित्तकृतान् रोगान् सद्य एव विनाशयेत् ।
कुर्याद्वापि कदुष्णेन पयसाऽऽस्य विशोधनम् ॥
कफवातहरं स्निग्धं मुखदोषविनाशनम् ।

[चे० कु०]

स्वस्थ पुरुष क्षीरि वृक्ष (वरगद, गूलर, पीपल, पकड़ी और पारसीक पीपल) के काढ़े में दूध मिलाकर या लोध के काढ़े से अथवा आँवले के काढ़े से या ठण्डे पानी से मुँह और आँखों को धोये। यह कार्य मुँह की नीलिका (काली छाँह), मुखशोष, मुहांसा, झांई एवं रक्त तथा पित्त से होनेवाले रोगों को तुरन्त नाश करता है अथवा कुछ गरम पानी से भी मुँह धोना चाहिए। यह कफ और वायु को हरनेवाला चिकना और मुँह के दोषों को नाश करनेवाला है।

अरोचकास्यवैरस्यमलप्रतिप्रसेकजित् ।
सुखोष्णोदकगण्डूषैर्जायते वक्त्रलाघवम् ॥

[अ० सं०]

कुछ गरम पानी का गन्डूष अरुचि, मुँह का फीकापन, मल और मुँह से लार गिरने को जीतता है। इससे मुँह हलका प्रतीत होता है।

सुखं लघु निरीक्षेत नेत्रप्रक्षालनान्नरः ।

[सु० चि० अ० १४]

मनुष्य नेत्र धोने से सुखपूर्वक सरलता से देखता है।

शीताम्बुपूरितमुखः प्रतिवासरं यः—
कालत्रयेऽपि नयनद्वितयं जलेन ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आसिञ्चति ध्रुवमसौ न कदाचिदक्षि—
रोगव्यथाविधुरतां भजते मनुष्यः ॥
[राजमार्तण्डः]

जो मनुष्य ठन्ढे पानी से मुँह को भरकर दोनों नेत्रों की जल से प्रातः, दोपहर और शाम को सिंचित करता है. निश्चय वह नेत्र के रोग और पीड़ा की विकलता को प्राप्त नहीं करता है।

अञ्जनम्

मतं स्रोतोऽञ्जनं श्रेष्ठं विशुद्धं सिन्धुसम्भवम्।
दाहकण्डूमलघ्नं च दृष्टिक्लेदरुजापहम् ॥
अक्ष्णो रूपावहं चैव सहते मारुतातपौ ॥
पक्ष्मलं विशदं कान्तममलोज्वलमण्डलम्।
नेत्रमञ्जनसंयोगाद्भवेच्चामलतारकम् ॥
नेत्ररोगहरं तस्माद्रात्रावञ्जनमाचरेत्।
ततः श्लेष्महरं कर्म्म हितं दृष्टेः प्रसादनम् ॥
[सु० चि० अ० २]

सिन्धु देश का श्रेष्ठ और शुद्ध सुरमा नेत्रों की जलन, खुजली और मल को नाश करनेवाला तथा दृष्टि की क्लिन्नता और पीड़ा को दूर करनेवाला है। यह आँखों को रूपदर्शक बनाकर वायु और घाम सहने योग्य बनाता है। इससे बरौनियाँ विशद और मण्डल (श्वेतभाग) चमकदार निर्मल तथा स्वच्छ होता है। सुरमा लगाने से नेत्र का तारा निर्मल होता है। इसलिए नेत्ररोग को नाश करनेवाले सुरमे को रात में लगाना चाहिए। उसके बाद कफ को नाश करनेवाला एवं नेत्र को स्वच्छ करनेवाला कार्य करना चाहिए।

यथाहि कनकादीनां मणीनां विविधात्मनाम्।
धौतानां निर्मला शुद्धिः तैलचैलकचादिभिः ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं नेत्रेषु मर्त्यानामञ्जानाश्च्योतनादिभिः ।
दृष्टिर्निराकुलाभाति निर्मले नभसीन्दुवत् ॥

[च० सू० अ० ५]

जिस प्रकार नाना प्रकार के सोना एवं मणि आदि की निर्मल शुद्धि तैल, कपड़ा और बाल आदि से साफ करने पर होती है उसी प्रकार सुरमा एवं आश्च्योतन (गुलाबजल आदि छोड़ना) आदि से निर्मल आकाश में चन्द्रमा के समान, मनुष्यों के नेत्रों में निरापद दृष्टि सुशोभित होती है।

अञ्जनानर्हाः

भुक्तवान् शिरसा स्नातः श्रान्तश्छर्दननावनैः ।
रात्रौ जागरितश्चापि नाञ्ज्याज्ज्वरित एवच ॥

[सु० चि० अ० २४]

भोजन किया हुआ, शिर से स्नान किया हुआ, कै और नस्य से थका हुआ, रात में जगा हुआ एवं ज्वर का रोगी अंजन न करे।

नस्यम्

प्रतिमर्शश्च नस्यार्थं करोति न च दोषवान् ।
नस्तः स्नेहाङ्गुलिं दद्यात्प्रातर्निशि च सर्वदा ॥
नचोत्सिङ्घेद्रोगाणां प्रतिमर्शः स दार्ढ्यकृत् ।

[च० सि०]

प्रतिमर्श नस्य के प्रयोजन को करता है। उससे कोई उपद्रव नहीं होता है। सर्वदा प्रातः और रात में नासिका गुहा में स्नेह से डूबी हुई अँगुली से स्नेह लगाना चाहिए। उसे छिरकना नहीं चाहिए। वह निरोगों को दृढ़ करनेवाला है।

आजन्ममरणं शस्तः प्रतिमर्शस्तु वस्तिवत् ।
तैलमेव च नस्यार्थं नित्याभ्यासेन शस्यते ॥
शिरसः श्लेष्मधामत्वात्स्नेहाः स्वस्थस्य नेतरे ।

[वा० सू० अ० २०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

वस्तिकर्म के समान प्रतिमर्श नस्य जन्म से मृत्यु तक हितकारी है। नस्य के लिए नित्य सेवन करने में तेल ही हितकारी है। शिर के कफ का स्थान होने के कारण स्वस्थ मनुष्य के लिए घृतादि अन्य स्नेह हितकर नहीं।

नस्यकर्म यथाकालं यो यथोक्तं निषेवते।
न तस्य चक्षुर्न घ्राणं न श्रोत्रमुपहन्यते॥
न स्युः श्वेता न कपिलाः केशाः श्मश्रूणि वा पुनः।
न च केशाः प्रलुप्यन्ते वर्धन्ते च विशेषतः॥
मन्यास्तम्भः शिरःशूलमर्दितं हनुसंग्रहः।
पीनसार्धावभेदौच शिरःकम्पश्च शाम्यति॥
सिराः शिरः कपालानां सन्धयः स्नायुकण्डराः।
नावनप्रीणिताश्चास्य लभन्तेऽभ्यधिकं बलम्॥
मुखं प्रसन्नोपचितं स्वरः स्निग्धः स्थिरो महान्।
सर्वेन्द्रियाणां वैमल्यं बलं भवति चाधिकम्॥
न चास्य रोगाः सहसा प्रभवन्त्यूर्ध्वजत्रुजाः।
जीर्यतश्चोत्तमाङ्गे च जरा न लभते बलम्॥

[च० सू० अ० ५]

जो मनुष्य यथासमय एवं शास्त्रोक्त विधान के अनुसार नस्य कर्म का सेवन करता है उसकी आँख, नाक और कान नहीं उपहत होते। उसके सिर के बाल और दाढ़ी के बाल सफेद और भूरे नहीं होते। उसके बाल झरते नहीं बल्कि विशेष बढ़ते है। मन्यास्तम्भ, शिर की पीड़ा, अर्दित, जबड़ों का जकड़ जाना, पीनस, अधकपारी और शिर का काँपना शान्त हो जाता है। नस्य द्वारा तृप्त सिर के कपाल और शिर की सिराएँ सन्धियाँ, स्नायु और कण्डराएँ अधिक बल प्राप्त करती हैं। मुँह प्रसन्न तथा पुष्ट, स्वर स्निग्ध महान् और स्थिर, सभी इन्द्रियों में स्वच्छता एवं बल अधिक होता है। उसकी हँसली के ऊपर उत्पन्न होनेवाले रोग एकाएक नहीं होते। वृद्ध होने पर भी उत्तमाँग (मुँह) में बुढ़ापा का चिह्न बल नहीं प्राप्त करता हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धूमपानम्

हरेणुकां प्रियङ्गुं च पृथ्वीकां केशरं नखम् ।
ह्रीबेरं चन्दनं पत्रं त्वगेलोशीरपद्मकम् ॥
ध्यामकं मधुकं मांसीगुग्गुल्वगुरुशर्करम् ।
न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षलोध्रत्वचः शुभाः ॥
वन्यं सर्जरसं मुस्तं शैलेयं कमलोत्पले ।
श्रीवेष्टकं शल्लकीं च शुक्लवर्हमथापि च ॥
पिष्ट्वालिम्पेच्छरेषीकांतां वर्तिं यवसन्निभाम् ।
अङ्गुष्ठसम्मितां कुर्यादष्टाङ्गुलसमां भिषक् ॥
शुष्कां विगर्भां तां वर्तिं धूमनेत्रार्पितां नरः ।
स्नेहाक्तामग्निसम्प्लुष्टां पिबेत्प्रायोगिकीं सुखाम् ॥

म्यौड़ी के बीज, प्रियंगु, बड़ी इलायची, नागकेशर, नखी, सुगन्धवाला, सफेद चन्दन, तेजपत्ता, दालचीनी, छोटी इलायची, खस, पद्मकाठ, ध्यामक (गन्धतृण), मुलहठी, जटामासी, गुग्गुल, अगर, शक्कर बरगद-गूलर-पीपल-पकड़ी और लोध की बढ़िया छाल, जंगली मोथा, राल, नागरमोथा, छड़ीला, कमल, नीलोफर, गन्धाविरोजा, सलई और गठिवन (ग्रन्थिपर्ण) इन द्रव्यों को पीसकर वैद्य सरपत की सींक पर यवाकार (बीच में मोटा कोरों पर पतला) लेप करे। अंगुष्ठ के समान मोटी आठ अंगुल लम्बी बत्ती बनाये। सूख जाने पर इसमें से सींक निकाल ले। इस बत्ती को स्नेह (तैल या घृत) लगाकर धूमनेत्र (निगाली) पर रख कर आग से जलाकर पीना चाहिये। यह प्रायोगिकी (नित्य प्रयोग किये जाने योग्य) धूमवर्ती सुखदायी है।

गौरवं शिरसः शूलं पीनसाधोवभेदकौ ।
कर्णाक्षिशूलं कासश्च हिक्काश्वासौ गलग्रहः ॥
दन्तदौर्बल्यमास्रावः श्रोत्रघ्राणाक्षिदोषजः ।
पूतिघ्राणास्यगन्धश्च दन्तशूलमरोचकः ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हनुमन्याग्रहः कण्डूः क्रिमयः पाण्डुता मुखे ।
श्लेष्मप्रसेको वैस्वर्यं गलशुण्ड्युपजिह्विका ॥
खालित्यं पिञ्जरत्वं च केशानां पतनं तथा ।
क्षवथुश्चातितन्द्रा च बुद्धेर्मोहोऽतिनिद्रता ॥
धूमपानात्प्रशाम्यन्ति बलं भवति चाधिकम् ।
शिरोरुहकपालानामिन्द्रियाणां स्वरस्य च ॥
न च वातकफात्मानो बलिनोप्यूर्ध्वजत्रुजाः ।
धूमवक्त्रकपानस्य व्याधयः स्युः शिरोगताः ।

धूमपान से शिर का भारीपन और दर्द, पीनस, (प्रतिश्याय) अधकपारी, कान-आँख का दर्द, खाँसी, हिचकी, श्वास-कष्ट, गले की जकड़न, दाँत की दुर्बलता, कान-नासिका और आँख का दोषजन्य स्राव, नाक और मुँह से दुर्गन्ध आना, दाँत की पीड़ा, अरुचि, हनु और मन्या की जकड़न, खुजली, क्रिमि, मुँह का पीलापन, कफ का गिरना, स्वरभेद, गले के कौवा का सूजन, उपजिह्विका, खालित्य (सर पर बाल न होना), पिंजरत्व (बालों का विरल होना) बालों का झड़ना, अधिक छींक और तन्द्रा, बुद्धि का मोह, और अधिक नींद का लगना धूमपान से शान्त होते हैं। बाल, सिर की अस्थियों, इन्द्रियों एवं स्वर का बल बढ़ता है। मुँह से धूम के पान से जत्रु के ऊपर होने वाले और शिर के वातकफ जन्य बलवान रोग भी नहीं होते।

प्रयोगपाने तस्याष्टौ कालाः सम्परिकीर्तिताः ।
वातश्लेष्मसमुत्क्लेशः कालेष्वेषुहि लक्ष्यते ॥
स्नात्वा भुक्त्वा समुल्लिख्य क्षुत्वा दन्तान् विघृष्य च ।
नावनाञ्जननिद्रान्ते चात्मवान् धूमपो भवेत् ॥
तथा वातकफात्मानो न भवन्त्यूर्ध्वजत्रुजाः ।
रोगास्तस्य तु पेयाः स्युरापानाच्छिरसश्चयः ॥
परं द्विकालपायी स्यादहः कालेषुबुद्धिमान् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उसके नित्य पीने के ये ८ समय कहे गये हैं क्योंकि इन्हीं समयों में वायु और कफ का प्रकोप देखा जाता है। स्नान, भोजन और वमन के बाद, छींकने, दाँत मलने, नस्य, सुरमा लगाने और नींद के बाद आत्मवान मनुष्य धूम पिये। ऐसा करने से जत्रु के ऊपर होनेवाले वात-कफ जन्य रोग नहीं होते। उसे प्रतिबार में तीन-तीन फूँक लगातार खींच कर तीन बार पीना चाहिये। बुद्धिमान को प्रतिदिन दो समय ही पीना चाहिये।

सम्यक्पीत के लक्षण

हृत्कण्ठेन्द्रियसंशुद्धिर्लघुत्वं शिरसः शमः।
यथेरितानां दीषाणां सम्यक्पीतस्य लक्षणम्॥

अच्छी तरह किये हुए धूमपान के ये लक्षण हैं:—हृदय कण्ठ और इन्द्रियों की शुद्धि, शिर का हलकापन, और पूर्वोक्त धूमपान से शान्त होनेवाले रोगों का शमन।

अविधि से पीत धूम का लक्षण

वाधिर्यमान्ध्यमूकत्वं रक्तपित्तं शिरोभ्रमम्।
अकाले चातिपीतश्च धूमः कुर्याद्दुपद्रवान्॥
तत्रेष्टं सर्पिषः पानं नावनाञ्जनतर्पणम्।
स्नैहिकं धूमजे दोषे वायुः पित्तानुगो यदि॥
शीतं तु रक्तिपित्ते स्याच्छ्लेष्मपित्ते विरूक्षणम्।

असमय और अधिक मात्रा में पिया हुआ धूम ये उपद्रव करता है—बहिरापन, अन्धता, गूँगापन, रक्तपित्त एवं शिर में चक्कर का आना। ये उपद्रव होने पर घृत-पान, नस्य, अञ्जन और संतर्पण कर्म हितकारी हैं। यदि धूमपान से उत्पन्न हुए दोष में वायु पित्त का अनुबन्धी हो तो स्नेह कर्म, यदि रक्तपित्त प्रधान हो तो शीत और यदि कफपित्त प्रधान हो तो रूक्ष कर्म करना चाहिये।

धूमपान के अयोग्य जन

परन्त्वतः प्रवक्ष्यामि धूमो येषां विगर्हितः।
न विरिक्तः पिवेद्धूमं न कृते बस्तिकर्मणि॥
न रक्ती न विषेणार्तो न शोची न च गर्भिणी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

न श्रमे न मदे नाऽमे न पित्ते न प्रजागरे।
न मूर्च्छाभ्रमतृष्णासु न क्षीणे नापि च क्षते॥
न मद्यदुग्धे पीत्वा च न स्नेहं न च माक्षिकम्।
धूमं न भुक्त्वा दध्ना च न रूक्षः क्रुद्ध एवच॥
न तालुशोषे तिमिरे शिरस्यभिहते न च।
न शङ्खके न रोहिण्यां न मेहे न मदात्यये॥
एषु धूममकालेषु मोहात्पिबति यो नरः।
रोगास्तस्य प्रवर्धन्ते दारुणा धूमविभ्रमात्॥

महर्षि आत्रेय पुनर्वसु ने अग्निवेश से कहा कि इसके बाद जिनको धूमपान निन्दित है उनको कहूँगा:—विरेचन किया हुआ, वस्ति कर्म करने के बाद, रक्तदोषी, विष-पीड़ित, चिन्तित मानव और गर्भिणी स्त्री धूमपान न करे। थकावट, नशा, आमदोष, पित्त, जागरण, मूर्छा, चक्कर, प्यास, क्षीण और क्षत (उरक्षत) होने पर, तथा शराब, दुग्ध, स्नेह, शहद, एवं दधियुक्त भोजन सेवन के बाद धूम न पिये। रूक्ष और क्रुद्ध मनुष्य को भी धूम न पीना चाहिये। तालुशोष, तिमिररोग, शिर पर चोट लगने पर, शंखक, रोहिणी, प्रमेह एवं मदात्यय में धूम न पिये। इन अवस्थाओं में और अकाल में जो मनुष्य प्रमाद से धूम पीता है उसे धूम की गड़बड़ी से कठिन रोग होते हैं।

धूमपान का विधान

धूमयोग्यः पिबेद्दोषे शिरोघ्राणाक्षिसंश्रये।
घ्राणेनास्येन कण्ठस्थे मुखेन घ्राणपो वमेत्॥
आस्येन धूमकवलान् पिबन् घ्राणेन नोद्वमेत्।
प्रतिलोमंगतो ह्याशु धूमो हिंस्याद्धि चक्षुषी॥
ऋज्वङ्गचक्षुस्तच्चेताः सूपविष्टस्त्रिपर्ययम्।
पिबेच्छिद्रं पिधायैकं नासया धूममात्मवान्॥
ऋजुत्रिकोषफलितं कोलास्थ्यग्रप्रमाणितम्।
वस्तिनेत्रसमद्रव्यं धूमनेत्रं प्रशस्यते॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दूराद्विनिर्गतः पर्वच्छिन्नो नाडीतनूकृतः ।
नेन्द्रियं बाधते धूमो मात्राकालनिषेवितः ॥

धूमपान के योग्य मनुष्य शिर नासिका और आँख में दोष स्थित होने पर नासिका से, एवं कण्ठ में दोष-स्थित होने पर मुँह से धूमपान करे। नासिका से धूमपान करने वाला मुँह से धुँआ निकाले परन्तु मुँह से धूमपान करता हुआ नासिका से धुँआ न निकाले क्योंकि उलटा (ऊपर) गया हुआ धुँआ चक्षु को नष्ट करता है।

आत्मवान् अच्छी तरह बैठा हुआ सीधा अंग और सीधी आँख कर तल्लीन होकर एक साँस में तीन वार खींचकर आये हुए धूम को नासिका का एक छेद बन्द कर नाक से पीये।

सीधा तीन कोप (गाँठ) से युक्त भरबैर की गुठली के समान मोटे अगले हिस्से वाले वस्ति नेत्र के ही द्रव्यों (सोना, चाँदी, लकड़ी सींग आदि) से बना हुआ धूमनेत्र (धूमपान करने की नलिका अर्थात् नैचा सटक या निगाली) अच्छा होता है। दूर से आकर निकला हुआ, मोड़ों के कारण टूटे हुए वेग वाला, नलिका द्वारा पतला हुआ मात्रा-समयानुसार पिया हुआ धूम इन्द्रियों को पीड़ित नहीं करता।

यदा चोरश्च कण्ठश्च शिरश्च लघुतां व्रजेत् ।
कफश्च तनुतां प्राप्तः सुपीतं धूममादिशेत् ॥
अविशुद्धः स्वरो यस्य कण्ठश्च सकफो भवेत् ।
स्तिमितो मस्तकश्चैवमपीतं धूममादिशेत् ॥
तालु मूर्धाच कण्ठश्च शुष्यते परितप्यते ।
तृष्यते मुह्यते जन्तू रक्तं च स्रवतेऽधिकम् ॥
शिरश्च भ्रमतेऽत्यर्थं मूर्च्छा चास्योपजायते ।
इन्द्रियाण्युपतप्यन्ते धूमेऽत्यर्थं निषेविते ॥

[च० सू० अ० ५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जब उर (फेफड़ा और हृदय) कंठ एवं शिर हलका हो जाय एवं कफ कम और पतला पड़ जाय तो कहना चाहिए कि धूमपान उचित रूप से हुआ।

जिसका स्वर अशुद्ध हो, कण्ठ कफ युक्त हो और मस्तक स्तिमित (गीले कपड़े से ढका हुआ सा) प्रतीत हो तो उसे कहना चाहिए कि धूमपान ठीक नहीं हुआ।

अधिक धूम सेवन करने से तालु, सिर और कण्ठ सूखता तथा दाहयुक्त हो जाता है। प्राणी प्यासा और बदहोश होता है। रक्त का अधिक स्राव करता है। उसका सिर बहुत चकराता है उसे बेहोशी आती एवं उसकी इन्द्रियों में दाह हो जाता है।

✓ व्यायाम

शरीरचेष्टा या चेष्टा स्थैर्यार्था बलवर्धिनी !
देहव्यायामसंख्याता मात्रया तां समाचरेत् ॥
[चरकः]

शरीर की जो चेष्टा देह को स्थिर करने एवं उसका बल बढ़ाने वाली हो उसे व्यायाम कहते हैं। उसे उचित मात्रा में करना चाहिए।

शरीरायासजनकं कर्म व्यायामसंज्ञितम्।
तत् कृत्वा तु सुखं देहं विमृद्नीयात् समन्ततः ॥
शरीरोपचयः कान्तिर्गात्राणां सुविभक्तता।
दीप्ताग्नित्वमनालस्यं स्थिरत्वं लाघवं मृजा ॥
श्रमक्लमपिपासोष्णशीतादीना सहिष्णुता।
आरोग्यञ्चापि परमं व्यायामादुपजायते ॥
न चास्ति सदृशं तेन किंचित् स्थौल्यापकर्षणम्।
न च व्यायामिनं मर्त्यं मर्दयन्त्यरयो भयात् ॥
न चैवं सहसाक्रम्य जरा समधिरोहति।
स्थिरीभवति मांसञ्च व्यायामाभिरतस्य च ॥

शरीरमें श्रम (थकावट) उत्पन्न करने वाले कार्य की व्यायाम कहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

व्यायाम करने के बाद सुख पूर्वक सारे शरीर का मर्दन करे। व्यायाम करने से शरीर की पुष्टि, कान्ति, शरीर के अवयवों की मांसपेशियों के उभार का ठीक विभाग, दीप्ताग्नि, आलस्यहीनता (फुर्ती), स्थिरता, हलकापन, शुद्धि, थकावट-सुस्ती प्यास गर्मी एवं ठण्ढ आदि सहने की शक्ति और श्रेष्ठ आरोग्य प्राप्त होता है। मोटापा को कम करने वाला कोई उपाय इसके समान नहीं है। व्यायाम करने वालों को दुश्मन भय के कारण पीड़ित नहीं कर सकते। उनके ऊपर बुढ़ापा सहसा आक्रमण नहीं करती। व्यायाम के अभ्यासी का मांस स्थिर होता है।

व्यायामक्षुण्णगात्रस्य पद्भ्यामुद्वर्तितस्य च।
व्याधयो नोपसर्पन्ति सिंहं क्षुद्रमृगा इव॥
वयोरूपगुणैर्हीनमपि कुर्यात्सुदर्शनम्।
व्यायामं कुर्वतो नित्यं विरुद्धमपिभोजनम्॥
विदग्धमविदग्धं वा निर्दोषं परिपच्यते।
व्यायामो हि सदा पथ्यो बलिनांस्निग्धभोजिनाम्॥
सच शीते वसन्ते च तेषां पथ्यतमः स्मृतः॥

व्यायाम द्वारा क्षुण्ण (कूटा हुआ या मर्दित) शरीर वाले एवं पैरों से जिनका शरीर उद्वर्तित (मीजा गया) है उन लोगों के पास जैसे सिंह के पास छोटे जानवर नहीं आते हैं वैसे व्याधियाँ नहीं आती हैं।

व्यायाम करने से वय रूप और गुण से हीन मनुष्य भी देखने में सुन्दर मालूम होता है। विरुद्ध, कच्चा, जला हुआ भोजन भी अच्छी तरह पच जाता है।

नित्य स्निग्ध भोजन करने वाले बलवान लोगों को व्यायाम सर्वदा हितकर है। शीत एवं वसन्त काल में तो वह विशेष लाभप्रद होता है।

व्यायाम की मात्रा

सर्वेष्वृतुष्वहरहः पुम्भिरात्महितैषिभिः।
बलस्यार्द्धेन कर्त्तव्यो व्यायामो हन्त्यतोऽन्यथा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अपना कल्याण चाहने वाले पुरुष को सभी ऋतु में प्रत्येक दिन अपने बल की आधी शक्ति से व्यायाम करना चाहिए। इसके विपरीत (अधिक) व्यायाम करना घातक है।

बलार्ध के लक्षण

हृदिस्थानस्थितो वायुर्यदा वक्त्रं प्रपद्यते।
व्यायामं कुर्वतो जन्तोः तद्बलार्धस्य लक्षणम्॥
कक्षाललाटनासासु हस्तपादादिसन्धिषु।
प्रस्वेदान्मुखशोषाच्च बलार्धं तद्धि निर्दिशेत्॥

व्यायाम करते हुए प्राणी के हृदय की वायु जब मुँह में प्राप्त होने लगे (हाँफने लगे) तो यह उसके बलार्ध का लक्षण है। काँख, ललाट, नाक और हाथ पैर आदि की सन्धियों में पसीना आये एवं मुँह सूखने लगे तो इसे बलार्ध कहना चाहिये।

चङ्क्रमणम्

यत्तु चङ्क्रमणं नातिदेहपीड़ाकरं भवेत्।
तदायुर्बलमेधाग्निप्रदमिन्द्रियबोधनम्॥
अत्यध्वाविपरीतोऽस्माज्जरादौर्बल्यकृच्च सः।

[सु० चि० अ०]

जो टहलना देह को अधिक पीड़ित करने वाला नहीं होता वह आयु बल, मेधा (धारणा शक्ति) और अग्नि को बढ़ाने वाला एवं इन्द्रियों को जागृत (चैतन्य) करने वाला होता है। अधिक रास्ता चलना इसके विपरीत होता है, वह बुढ़ापा एवं दुर्बलता करने वाला होता है।

व्यायाम के दोष

वयोबलशरीराणि देशकालाशनानिच।
समीक्ष्य कुर्याद् व्यायाममन्यथा रोगमाप्नुयात्॥
व्यायामहास्यभाष्याध्वग्राम्यधर्मप्रजागरान्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

नोचितानानि सेवेत बुद्धिमानतिमात्रया ॥
एतानेवं विधांश्चान्यान् योऽतिमात्रं निषेवते ।
गजः सिंहमिवाकर्षन् सहसा स विनश्यति ॥

[च० सू० अ० ७]

उम्र, बल, शरीर, देश, काल एवं भोजन को अच्छी तरह विचार कर व्यायाम करना चाहिये नहीं तो रोग होता है।

व्यायाम, हँसना, भाषण, रास्ता चलना, मैथुन, और जागरण को उचित होने पर भी बुद्धिमान अधिक मात्रा में न करे।

इनको एवं इनके समान अन्यान्य कार्य को जो अधिक मात्रा में करता है वह एकाएक उसी प्रकार नष्ट होता है जिस प्रकार सिंह को अपनी ओर खींचता हुआ हाथी नष्ट होता है।

क्षयतृष्णाऽरुचिश्छर्दिरक्तपित्तभ्रमक्लमाः ।
कासशोषज्वरश्वासा अति व्यायामसम्भवाः ॥

अधिक व्यायाम से ये रोग उत्पन्न होते हैं—क्षय, अधिक प्यास, अरुचि, वमन, रक्तपित्त, चक्कर, सुस्ती, खांसी, शोष, ज्वर और श्वासकष्ट।

व्यायाम के अयोग्य

रक्तपित्ती कृशः शोषी श्वासकासक्षतातुरः ।
भुक्तवान् स्त्रीषुच क्षीणो भ्रमार्तश्च विवर्जयेत् ॥

[सु० चि० अ० २४]

रक्तपित्त का रोगी, कृश, शोष, श्वास-कृच्छ्र, खांसी और उरः क्षत से पीड़ित, तुरन्त भोजन किया हुआ, स्त्रीप्रसंग से क्षीण, तथा चक्कर से पीड़ित मनुष्य व्यायाम का परित्याग कर दे।

क्षौर कर्म

पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचि रूपविराजनम् ।
केशश्मश्रुनखादीनां कर्तनं सम्प्रसाधनम् ॥

[च० सू० अ० ५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बाल, दाढ़ी, एवं नख आदि का कटाना पुष्टिकारक, मैथुन में शक्ति उत्पन्न करने वाला, आयु बढ़ाने वाला, स्वच्छता एवं रूप को सुशोभित करने वाला है।

त्रिःपक्षस्य कचश्मश्रुनखरोमाणि वर्धयेत्।
न स्वहस्तेन दन्तैर्वा स्नानं चानु समाचरेत्॥
[वृद्धवाग्भटः]

एक पक्ष में तीन बार बाल, दाढ़ी, नख और रोम बनवाये। अपने हाथ और दाँत से उन्हें नहीं नोचना चाहिए, क्षौर के बाद स्नान करना चाहिए।

पापोपशमनं केशनखरोमापमार्जनम्।
हर्षलाघवसौभाग्यकरमुत्साहवर्धनम्॥
[सु० चि० अ० २४]

बढ़े हुए केश, नख एवं रोमों को दूर करना पाप (मालिन्य) को शमन करने वाला, प्रसन्नता, हलकापन, सौभाग्य और उत्साह को बढ़ाने वाला है।

अभ्यंग

अथ जातान्नपानेच्छो मारुतघ्नैः सुगन्धिभिः।
यथर्तु संस्पर्शसुखैस्तैलैरभ्यङ्गमाचरेत्॥ [वृद्धवाग्भटः]

अन्न पान ग्रहण करने की इच्छा करने वाला पुरुष (जो मन्दाग्नि और अजीर्णी न हो) ऋतु के अनुसार स्पर्श सुख देने वाले शीतकाल में उष्ण और उष्ण काल में शीत, वायुनाशक सुगन्धित तेलों से मालिश करे।

अभ्यङ्गमाचरेन्नित्यं स जराश्रमवातहा।
दृष्टिप्रसादपुष्ट्यायुः स्वप्नसुत्वक्त्वदार्ढ्यकृत्॥
शिरःश्रवणपादेषु तं विशेषेण शीलयेत्।
[वा० सू० अ० २]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रतिदिन तेल की मालिश करनी चाहिये। वह बुढ़ापा, थकावट एवं वायु विकार का नाश करने वाला, दृष्टि की स्वच्छता पुष्टि आयु नींद सुन्दर त्वचा और दृढ़ता करने वाला है। सिर कान तथा पैरों में विशेष कर मालिश करनी चाहिये।

सार्षपं गन्धतैलञ्च यत्तैलं पुष्पवासितम्।
अन्यद्रव्ययुतं तैलं न दुष्यति कदाचन॥

[स्मृतिचन्द्रिका]

सरसों का तेल, सुगन्धित तैल, पुष्पवासित और अन्यान्य (सुगन्धित) द्रव्यों से युक्त तैल कभी वर्जित नहीं होता।

स्नेहाभ्यङ्गाद्यथा कुम्भश्चर्म स्नेहविमर्दनात्।
भवत्युपाङ्गादचश्च दृढ़ः क्लेशसहो यथा॥
तथा शरीरमभ्यङ्गाद् दृढ़ं सुत्वक् प्रजायते।
प्रशान्तमारुताबाधं क्लेशव्यायामसंसहम्॥
स्पर्शने चाधिको वायुः स्पर्शनंच त्वगाश्रितम्।
त्वच्यश्च परमोऽभ्यङ्गस्तस्मात्तं शीलयेन्नरः॥
न चाभिघाताभिहतं गात्रमभ्यङ्गसेविनः।
विकारं भजतेऽत्यर्थं वलकर्मणि वा क्वचित्॥
सुस्पर्शोपचिताङ्गश्च बलवान् प्रियदर्शनः।
भवत्यभ्यङ्गनित्यत्वान्नरोऽल्पजर एव च॥

[च. सू. अ. ५]

जिस प्रकार स्नेह की मालिश से घड़ा, स्नेह मर्दनसे चमड़ा, उपाङ्गों (तौलियों) से पहिया, मजबूत और आपत्ति सहनेवाला होता है।

उसी प्रकार मालिश करने से शरीर मजबूत तथा सुन्दर चमड़ेवाला होता है। उसके वायु विकार अच्छी तरह शान्त होते हैं। वह व्यक्ति क्लेश एवं श्रम को सहने योग्य होता है।

स्पर्शन कर्म में वायु प्रधान है, वह स्पर्शन त्वचा में आश्रित है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

और मालिश त्वचा के लिए श्रेष्ठ हितकारी है इसलिये उसे हमेशा सेवन करना चाहिये।

मालिश कराने वाले मनुष्य का शरीर चोट लगने पर या किसी बलकारक काम में विकृति को नहीं प्राप्त होता।

नित्य मालिश करने से मनुष्य कोमलस्पर्श और पुष्ट अंग वाला, प्रिय दर्शन, कम बुढ़ापा (बुढ़ापा में उसके लक्षणों में न्यूनता) वाला होता है।

शिरोऽभ्यंगगुणाः

नित्यं स्नेहार्द्रशिरसः शिरःशूलं न जायते।
न खालित्यं न पालित्यं न केशाः प्रपतन्ति च॥
बलं शिरःकपालानां विशेषेणाभिवर्धते।
दृढ़मूलाश्च दीर्घाश्च कृष्णाः केशा भवन्ति च॥
इन्द्रियाणि प्रसीदन्ति सुत्वग्भवति चाननम्।
निद्रालाभः सुखं च स्यान्मूर्ध्नितैल*निषेवणात्॥

प्रति दिन स्नेह (तेल) से गीले शिर वाले के सिर में शूल नहीं होता। उसका बाल न झड़ता है न पकता है और न गिरता ही है। शिर की अस्थियों का बल विशेषतया बढ़ता है। बाल मजबूत जड़ वाले, लम्बे और काले होते हैं। सिर पर तेल सेवन करने से इन्द्रियाँ स्वच्छ होती हैं, मुँह सुन्दर चमड़े वाला होता है, सुख पूर्वक नींद आती है।

कर्णाभ्यंगगुणाः

न कर्णरोगा वातोत्था नं मन्याहनुसङ्ग्रहः।
नोच्चैः श्रुतिर्न वाधिर्यं स्यान्नित्यं कर्णतर्पणात्॥

[च० सू० अ० ५]

टि० *—शिरोऽभ्यंगार्थं तैलम्—
मधुकं क्षीरशुक्ला च सरलं देवदारु च।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सर्वदा कान को तेल से तृप्त रखने से वातजन्य कर्ण रोग, मन्यास्तम्भ, हनुग्रह, ऊँचे सुनना और बहिरापन नहीं होता।

पादाभ्यंगगुणाः

खरत्वं शुष्कता रौक्ष्यं श्रमः सुप्तिश्चपादयोः।
सद्य एवोपशाम्यन्ति पादाभ्यङ्गनिषेवणात् ॥
जायते सौकुमार्यं च बलं स्थैर्यं च पादयोः।
दृष्टिः प्रसादं लभते भारुतश्चोपशाम्यति ॥
न स्युर्गृध्रसीवाताः पादयोः स्फुटनं न च।
न शिरास्नायुसङ्कोचः पादाभ्यङ्गेन पादयोः ॥
निद्राकरो देहसुखः पादाभ्यङ्गः सदाहितः।

(च० सू० अ० ५)

पैर में तैल मालिश करने से पैरों की कठिनता, सूखापन, रूक्षता, थकावट और सुप्ति (त्वचा में स्पर्शज्ञान न होना) ये सब तुरन्त शान्त होते हैं।

पैरों में सुकुमारता, बल और स्थिरता उत्पन्न होती है। दृष्टि स्वच्छ होती है और वायु शान्त होती है।

पैरों में मालिश करने से उनमें गृध्रसी वायु, फटना और शिरा स्नायु का सिकुड़ना नहीं होता तथा पैर में मालिश निद्राकारक और देह को सुख देने वाली और सर्वदा हितकारी होती है।

क्षुद्रकं पञ्चनामानं समभागानि संहरेत् ॥
तेषां कल्ककषायाभ्यां चक्रतैलं विपाचयेत्।
सदैव शीतलं जन्तोर्मूर्ध्नि तैलं प्रदापयेत् ॥
यथालाभं गन्धद्रव्यकल्के भृङ्गरसे तथा।
धात्रीरसे च संसिद्धं तैलं केशहितं परम् ॥

(सु० चि० अ० २४)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayū Trust. Funding IKS-MoE-Gran

केश्या

केशप्रसाधिनी केश्या रजोजन्तुमलापहा ।

कंघी बालों को सँवारने वाली तथा उनकी धूलि और क्रिमियों को नष्ट करने वाली है ।

स्नेहसेकगुणाः

सेकः श्रमघ्नोऽनिलहृद् भग्नसन्धिप्रसाधकः ।
क्षताग्निदग्धाभिहतविघृष्टानां रुजापहः ॥
जलसिक्तस्य वर्धन्ते यथा मूलेऽङ्कुरास्तरोः ।
तथा धातुविवृद्धि र्हि स्नेहसिक्तस्य जायते ॥

स्नेह से सिंचन करना थकावट को नाश करने वाला, वायुनाशक और टूटी हुई सन्धियों को जोड़ने वाला है। घायल, आग से जले, चोटीले एवं घिसे अंग वालों की पीड़ा नाश करता है ।

जिस प्रकार जड़ में जल द्वारा सिञ्चित वृक्ष के अंकुर बढ़ते है उसी प्रकार स्नेहसिक्त मनुष्य की धातुयें बढ़ती हैं ।

स्नेहावगाहनगुणाः

शिरामुखे रोमकूपै र्धमनीभिश्च तर्पयन् ।
शरीरबलमाधत्ते युक्तः स्नेहोऽवगाहने ॥
तत्र प्रकृतिसाम्यर्तुदेशदोषविकारवित् ।
तैलं घृतं वा मतिमान् युञ्ज्यादभ्यङ्गसेकयोः ॥
केवलं सामदोषेषु न कथंचन योजयेत् ।

अवगाहन द्वारा (टब में भरकर उसमें बैठकर) प्रयुक्त स्नेह शिरामुखों, रोमकूपों एवं धमनियों द्वारा शरीर को तृप्त करता हुआ उसे बल देता है ।

प्रकृति, सात्म्य ऋतु-देश-दोष और विकार को जान कर बुद्धिमान मालिश और सिंचन में तेल या घृत का प्रयोग करे। केवल आमदोष में कभी भी स्नेह का प्रयोग न करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अभ्यंगानर्हाः

तरुणज्वर्यजीर्णीच नाभ्यक्तव्यौ कथञ्चन ।
तथा विरिक्तो वान्तश्च निरूढो यश्च मानवः ॥
पूर्वयोः कृच्छ्रता व्याधेरसाध्यत्वमथापि वा ।
शेषाणां तदहः प्रोक्ता अग्निमान्द्यादयो गदाः ॥
सन्तर्पणसमुत्थानां रोगाणां नैव कारयेत् ।

नव ज्वर एवं अजीर्णवाले, विरेचन-वमन और निरूहण किये हुए मनुष्य को मालिश नहीं करनी चाहिये। पहले दोनों (नवज्वर और अजीर्ण) में मालिश करने से वे कष्टसाध्य या असाध्य हो जाते हैं। शेष (विरिक्तादि) में उसी दिन (जिस दिन विरेचनादि कराया गया हो) मालिश करने से अग्निमान्द्य आदि रोग हो जाते हैं। सन्तर्पणजन्य रोगों में भी मालिश नहीं करनी चाहिये।

शरीर परिमार्जनानि*

दौर्गन्ध्यं गौरवं तन्द्रां कण्डूं मलमरोचकम् ।
स्वेदं बीभत्सतां हन्ति शरीरपरिमार्जनम् ॥
उद्वर्तनं वातहरं कफमेदोविलापनम् ।
स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम् ॥
शिरामुखविविक्तत्वं त्वक्स्थस्याग्नेश्च तेजनम् ।
उद्धर्षणोत्सादनाभ्यां जायेयातामसंशयम् ॥
उत्सादनाद् भवेत्स्त्रीणां विशेषात्कान्तिमद्वपुः ।
प्रहर्षसौभाग्यमृजालाघवादिगुणान्वितम् ॥
उद्धर्षणन्तु विज्ञेयं कण्डूकोठानिलापहम् ।
देहस्य जनयत्याशु फेनकः स्थैर्यलाघवे ॥

---

* शरीरपरिमार्जकत्वादुद्वर्तनादीनि शरीरपरिमार्जनशब्देनैव गृहीतानि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कण्डूकोठानिलस्तम्भमलरोगापहश्च सः।
तेजनं त्वग्गतस्याग्नेः शिरामुखविवेचनम्॥
[सु० चि० अ० २४]

शरीर की स्वच्छता-दुर्गन्धि, भारीपन, ऊँहाई, खुजली, मल, अरुचि, पसीना और बीभत्सता को नष्ट करती है। उबटन (गोला कल्क) वायु को नाश करने वाला, कफ और चर्बी को विलीन करने वाला, अंगों को स्थिर तथा त्वचा को खूब स्वच्छ करने वाला है। शरीर को शुद्धचर्थ ईंट आदि से घिसने या चूर्ण रगड़कर मलने से और उत्सादन (सूखे चूर्ण को उबटन की तरह बिना घिसकर) लगाने से निस्सन्देह शिराओं के संकुचित मुख खुल जाते हैं तथा त्वचा में स्थित अग्नि दीप्त होती है। उत्सादन से स्त्रियों का शरीर विशेष कान्तिमान होता है। प्रसन्नता, सौभाग्य, शुद्धि, लघुता आदि गुणों से युक्त होता है एवं खुजली, चकत्ता ददोड़ा तथा वायु को नाश करने वाला उद्घर्षण होता है।

फेनक (साबुन या रीठा) प्राचीन काल में साबुन के स्थान में रीठे के झाग का प्रयोग होता था) शरीर में शीघ्र ही मजबूती और हलकापन उत्पन्न करता है। वह खुजली, चकत्ता, वायुप्रकोप, स्तब्धता, मैल एवं त्वचा के रोगों को नाश करने वाला होता है। त्वचा की अग्नि को दीप्त करने वाला तथा शिराओं के मुँह को खोलने वाला होता है।

स्नानम्

स्नानं दाहश्रमहरं स्वेदकण्डूतृषापहम्।
हृद्यं मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रियविशोधनम्॥
तन्द्रापापोपशमनं तुष्टिदं पुंस्त्ववर्धनम्।
रक्तप्रसादनं चापि मतमग्नेश्च दीपनम्॥
[सु० चि० अ० २४]

स्नान दाह, थकावट, पसीना, खुजली और प्यास को नाश करने वाला, हृदय को प्रसन्न करने वाला, मैल नाशक तथा श्रेष्ठ इंद्रिय-शोधक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

है। वह जँहाई और पाप को नाश करने वाला, सन्तोषदायक, पौरुष-वर्धक, रक्त को स्वच्छ करने वाला एवं अग्नि को दीप्त करने वाला कहा गया है।

बाह्यैश्च सेकैः शीताद्यैरूष्मान्तर्यातिपीडितः।
नरस्य स्नातमात्रस्य दीप्यते तेन पावकः॥

[भा० प्र०]

शीत जल आदि से स्नान करने से मनुष्य की अग्नि पीड़ित होकर शरीर के भीतर चली जाती है। अतः वह स्नान करते ही दीप्त हो जाती है। यही कारण है कि उस समय प्यास लग जाती है।

प्रातः स्नान गुणाः

प्रातः स्नानमलंच पापहरणं दुःस्वप्नविध्वंसनम्।
शौचस्यायतनं मलापहरणं संवर्धनं तेजसाम्॥
रूपद्योतकरं शरीरसुखदं कामाग्निसंदीपनम्।
स्त्रीणां मन्मथगाहनं श्रमहरं स्नाने दशैते गुणाः॥

[यो० र०]

प्रातः काल का स्नान पापनाशक, बुरे स्वप्नों को नष्ट करने वाला, पवित्रता का कारण, मलनाशक, तेजवर्धक, रूप को निखारने वाला, शारीरिक सुख को देने वाला, कामाग्निदीपक, स्त्रियों में काम को उद्दीपित करने वाला तथा थकावट दूर करने वाला, इस प्रकार वह दशगुण वाला है।

स्नानभूमिः

नदीषु देवखातेषु तडागेषु सरस्सु च।
स्नानं समाचरेन्नित्यं गर्तप्रस्रवणेषु च॥ [मनुः]

---

* अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति॥ [मनुः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नदियों, देवकुण्डों, बड़े तालाबों, झीलों, पोखरों, कुवों या झरनों में नित्य स्नान करना चाहिये।

शीतोष्णभेदेन स्नानगुणाः

शीतेन पयसा स्नानं रक्तपित्तप्रशान्तिकृत्।
अशिरस्कं तदुष्णेनश्वल्यं वातकफापहम्॥

[यो० र०]

ठण्डे जल से स्नान करना रक्त पित्त को शान्त करता है। तथा शिर पर बिना पड़े गर्म जल से स्नान करना बलकारक एवं वात कफ को नाश करने वाला है।

उष्णेन शिरसः स्नानमहितं चक्षुषः सदा।
शीतेन शिरसःस्नानं चक्षुष्यमिति निर्दिशेत्॥
श्लेष्ममारुतकोपे तु ज्ञात्वा व्याधिबलाबलम्।
काममुष्णं शिरःस्नानं भैषज्यार्थं समाचरेत्॥
अतिशीताम्बु† शीते च श्लेष्ममारुतकोपनम्।
अत्युष्णमुष्णकाले च पित्तशोणितवर्धनम्॥

[सु० चि० अ० २४]

---

*—६५ शतांशतोऽधिकोष्णता न स्यात्।

†—शिरसि तथाऽङ्गेषु तैलमभ्यज्य शीतोदकस्नानेन शैत्याधिक्यं हानिकरं न भवति। तथा स्पर्शजा रोगा न जायन्ते। वल वत्स्वस्थेभ्यः समुद्रोदकस्नानं विशेषहितकरं नतु दुर्वलेभ्यो रोगिभ्यश्च। सलवणंसमुद्रोदकं स्वस्थाङ्गेषु बलमादधाति। भोजनात्प्राक् पश्चाच्चसमुद्रजलस्नानमहितकरम्। शिशुभ्यः प्रतिदिनं स्नानार्थं शीतोदकमहितकरं किन्तुत्रिवर्षवयस्कतः स्नापयितुंशक्यते। शिशुभ्यस्तु आर्द्रवस्त्रेणाङ्गपरिमार्जनमेव कार्यम्। अत्युष्णप्रदेशे तु स्नानं कार्यत एव।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

गरम पानी को सिर पर डाल कर स्नान करने से आँख के लिये सर्वदा अहितकर है। ठण्डे पानी को सिर पर डाल कर स्नान करना सर्वदा नेत्र के लिये हितकर जानना चाहिये।

कफ और वायु के प्रकोप में रोग के बलाबल को जानकर औषधि के दृष्टिकोण से आवश्यक हो तो उष्ण जल को सिर पर डाल कर स्नान कर सकते हैं। अत्यन्त ठण्डा जल विशेषतः शीतकाल में कफ और वायु को कुपित करता है। एवम् अत्यन्त उष्ण जल विशेषतः उष्ण काल में पित्त एवं रक्त को बढ़ाता है।

स्ननिषेधः

तच्चातिसारज्वरितकर्णशूलानिलार्तिषु।
आध्मानारोचकाजीर्णभुक्तवत्सु च गर्हितम्। [सु०]

अतिसार, ज्वर, कर्णमूल, वायु रोग, अफरा, अरुचि और अजीर्ण में तथा भोजन के बाद स्नान करना निन्दित है।

"स्नानमर्दितनेत्रास्यरोगे वर्ज्यं हि पीनसे"
नाऽनाप्लुत्य सिरः स्नायान्न जलेऽल्पे न शीतले।
स्नानोदकावतरणस्वप्नान् नग्नो न चाचरेत्॥
नात्मानमीक्षेत जले न तटस्थो जलाशयम।
न प्रतिस्फालयेदम्बु पाणिना चरणेन वा॥
स्नात्वा न मृज्याद्गात्राणि धुनुयान्नशिरोरुहान्।
निवसीतार्द्र एवाशु सोष्णीषे धौतवाससी॥
[अ० सं०]

अर्दित, नेत्ररोग, मुखरोग, एवं जुकाम में स्नान करना मना है। पहिले सिर बिना तर किये, थोड़े तथा अत्यन्त ठण्ढे जल में स्नान न करे। नग्न होकर स्नान, जलावतरण (जलाशय में उतरना) और शयन नहीं करना चाहिये। जल में अपना स्वरूप न देखे, किनारे खड़ा होकर जलाशय में न झाँके, हाथ या पैर से पानी न उछाले।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

स्नान करने के बाद अंगों का मर्दन तथा बालों को झटकना नहीं चाहिये। गीले शरीर से ही शीघ्र ही पगड़ी (या टोपी) सहित धोती (आदि धुला वस्त्र) पहन ले।

न त्वम्बरं पूर्वधृतं न च तैलवसे स्पृशेत्।
न स्नानमाचरेद् भुक्त्वा नातुरो न महानिशि।
न वासोभिः सहाजस्रं नाऽविज्ञाते जलाशये॥

[मनु० अ० ४]

स्नान करने के पहले का धारण किया हुआ वस्त्र, तैल और चरबी स्नान करने के बाद नहीं छूना चाहिये। भोजन करने के बाद, आतुरावस्था में और अर्धरात्रि में स्नान नहीं करना चाहिए। बहुत कपड़ा पहने हुए एवं अज्ञात जलाशय में स्नान न करे।

अशक्तौ स्नानविधिः

अशिरस्कं भवेत्स्नानं स्नानाशक्तौ तु कर्मिणाम्।
आर्द्रेण वाससा वा स्यान्मार्जनं दैहिकं विदुः॥

[जाबालस्मृतिः]

अशक्त होनें पर बिना सर पर पानी डाले स्नान कर लेना चाहिये या गीला कपड़ा से शरीर पोंछ लेना भी दैहिक मार्जन जानना चाहिये।

वस्त्रेण तनुमर्दनम्

स्नानस्यानन्तरं सम्यग्वस्त्रेण तनुमर्दनम्।
कान्तिप्रदं शरीरस्य कण्डूत्वगदोषनाशनम्॥

स्नान के बाद शरीर को कपड़े से अच्छी तरह मलना कान्ति-दाता है और शरीर की खुजली एवं त्वचा-दोष नाश करने वाला है।

वस्त्रधारणम्

काम्यं यशस्यमायुष्यमलदमीघ्नं प्रहर्षणम्॥
श्रीमत्पारिषदं शस्तं निर्मलाम्बरधारणम्॥

[च० सू० अ० ५]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

निर्मल कपड़ा पहनना वांछनीय है, वह आयु को बढ़ाने वाला, दरिद्रता-नाशक, प्रसन्न करने वाला और श्रीमानों की सभा में बैठने के योग्य बनाता है।

वासोऽन्यदन्यच्छयने निर्गमे देवतार्चने।

[वृद्धवाग्भटः]

सोने, बाहर निकलने एवं देवता के पूजन के लिए भिन्न-भिन्न कपड़ा होना चाहिये।

शीतकालेतु कौषेयं कापायं घर्मवासरे।
वर्षासु श्वेतवस्त्रं स्यादेवं वस्त्राणि धारयेत्॥
वस्त्रं कौषेयमौर्णं वा रक्तं चित्रं तथैव च।
वातश्लेष्महरं नृणां शीतकाले प्रधारयेत्॥
मेध्यं सुशीतं पित्तघ्नं कापायं*वस्त्रमुच्यते।
तद्धारयेद्धर्मकाले कापायं वस्त्रमुत्तमम्॥
शुभ्रञ्च सुखदं वस्त्रं शीतातपनिवारणम्।
न चोष्णं न च वा शीतं शुक्लं वस्त्रं च धारयेत्॥

[क्षेमकुतूहलः]

शीत काल में रेशमी, गर्मी के दिनों में कापाय (रङ्गीन) और वर्षा में श्वेत वस्त्र पहनना चाहिये।

शीत काल में मनुष्यों को वायु और कफ हरने वाला रेशमी, ऊनी, लाल और चित्र (कई रंगों वाला) कपड़ा पहनना चाहिये। काषाय वस्त्र मेधा के लिये हितकारी, शीतल और पित्त नाशक होता है। अतः उत्तम काषाय वस्त्र को गर्मी के दिनों में पहनना चाहिये!

---

* कुसुम्भपुष्पादिकषायेण रक्तं वस्त्रं कापायमुच्यते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सफेद कपड़ा सुखदायी, शीत और घाम को रोकने वाला, न अधिक उष्ण न अधिक शीतल होता है। उसे वर्षा में धारण करना चाहिये।

वस्त्रनिषेधः

कदापि न जनैः सद्भिर्धार्यं मलिनमम्बरम्।
तत्तु कण्डूकृमिकरं ग्लान्यलक्ष्मीकरं परम्॥

[भावमिश्रः]

सज्जनों को कभी भी मैला कपड़ा नहीं पहनना चाहिये। क्योंकि वह तो अत्यन्त खुजली, क्रिमि, ग्लानि करने वाला और दरिद्रता-सूचक होता है।

वासो न धारयेज्जीर्णं मलिनं रक्तमुल्वणम्।
नैव चान्येन विधृतं वस्त्रं पुष्पमुपानहौ॥

[अ० सं०]

पुराना, मैला और अत्यन्त लाल (तूल आदि) कपड़ा नहीं पहनना चाहिये। दूसरे का धारण किया हुआ कपड़ा, फूल और जूता नहीं पहनना चाहिये।

उपवीतमलङ्कारं स्रजं करकमेवच।

तथा दूसरे का धारण किया हुआ जनेऊ, गहना, गले की माला और हाथ की माला भी नहीं पहनना चाहिये।

वस्त्राणां शुद्धयशुद्धिविवेकः

सौखैरुदकगोमूत्रैः शुद्ध्यत्याविककौशिकम्।
सश्रीफलैरंशुपट्टं सारिष्टैः कुतपं तथा॥

[या० व०]

ऊनी और रेशमी कपड़ा क्षारयुक्त जल और गोमूत्र से शुद्ध हो जाता है। उक्त वस्तुओं में श्रीफल मिला देने से अंशुपट्ट (चीन देश का रेशमी कपड़ा या पटूट्ट) और रीठा मिला देने से कुतप (पशमीना घूसा) शुद्ध होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ऊर्णकौशेयकुतपपट्टक्षौमदुकूलजाः ।
अल्पाशौचा भवन्त्येते शोषणप्रोक्षणादिभिः ॥
तान्येवामेध्ययुक्तानि क्षालयेच्छोधनैः स्वकैः ।
तूलिकामुपधानञ्च पुष्परक्ताम्बरं तथा ॥
शोषयित्वाऽऽतपे किञ्चित्करैः सम्मार्जयेन्मुहुः ।
पश्चाच्च वारिणा प्रोक्ष्य विनियुञ्जीत कर्मणि ॥
तान्यप्यतिमलिष्ठानि यथावत्परिशोधयेत् ।

[देवलः]

ऊनी, रेशमी, कुतप (पश्मीना), पट्ट (चीनी सिल्क या पट्टू), तीसी निर्मित (अंडी) और दुकूल (दुशाला) ये वस्त्र कम अपवित्र होते हैं। अतः घाम में सुखाने और जल छिड़कने पोंछने आदि से ये शुद्ध होते हैं, वे ही यदि अपवित्रता (पुरोष आदि) से युक्त हों तो उनके धोने की वस्तुओं से उन्हें धो लेना चाहिये।

रजाई, गद्दा, तकिया और फूल के रंग से रंगे कपड़ों को घाम में सुखा कर हाथ से बारम्बार फटक कर तथा पोंछकर शुद्ध करना चाहिये। उसके बाद जल छिड़क कर काम में लेना चाहिये। वे यदि अधिक मैले हो जाँय तो यथारीति शुद्ध करना चाहिये।

उष्णीषधारणगुणाः

वाणवारमृजावर्णतेजोबलविवर्धनम् ।
पवित्रं केश्यमुष्णीषं वातातपरजोपहम् ॥

[सु० चि० अ० २४]

पगड़ी बाणों से रक्षा करने वाली, स्वच्छता, वर्ण, तेज और बल को बढ़ाने वाली पवित्र, केशों के लिए हितकारी, एवं वायु-घाम और धूल से रक्षा करने वाली होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अनुलेपनम्

स्वेददौर्गन्ध्यवैवर्ण्यश्रमघ्नमनुलेपनम् ।
स्नानं येषां निषिद्धं तु तेषामप्यनुलेपनम् ॥

[सु० चि० अ० २४]

चन्दनादि का लेप करना पसीने की दुर्गन्धि, बदरङ्गी और थकावट को दूर करता है जिनके लिए स्नान निषिद्ध है, उन्हीं के लिए अनुलेपन भी निषिद्ध है ।

मुखालेपाद् दृढं चक्षुः पीनगण्डं तथाननम् ।
अव्यङ्गपिड़कं कान्तं भवत्यम्बुजसन्निभम् ॥
कुङ्कुमं चन्दनं चैव कृष्णागुरुविमिश्रितम् ।
उष्णभावमिदंश्रेष्ठं शीतकाले तु शोभनम् ॥
चन्दनं चाम्बुना युक्तं कर्पूरेण विमिश्रितम् ।
सुगन्धञ्च सुशीतञ्च धर्मकाले सुशोभनम् ॥
चन्दनं घुसृणोपेतं मृगनाभिसमायुतम् ।
न चोष्णं न च वा शीतं वर्षाकाले प्रशस्यते ॥

मुख पर लेप करने से आँखें दृढ़, गाल पुष्ट तथा मुंह झाईं मुहासा से रहित होकर कमल के समान सुन्दर होता है । केशर, चन्दन और काला अगर मिला हुआ लेप उष्ण लेपों में श्रेष्ठ होने के कारण जाड़े के लिये उत्तम है ।

चन्दन, सुगन्धबाला और कपूर का सुगन्धित व शीतल लेप ग्रीष्म काल के लिए श्रेष्ठ है ।

केशर और कस्तूरी से युक्त चन्दन का लेप न उष्ण और न शीत (अर्थात् मातदिल) है, यह वर्षा काल में प्रशस्त है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

गन्धमाल्यनिषेवणम्

वृष्यं सौगन्ध्यमायुष्यं काम्यं पुष्टिबलप्रदम् ।
सौमनस्यमलक्ष्मीघ्नं गन्धमाल्यनिषेवणम् ॥

सुगन्धित इत्र एवं माला का धारण करना वृष्य, सुगन्धित करने वाला, आयुवर्धक, कमनीय, पुष्टि और बल देने वाला, मनोहर और अशोभानाशक है ।

निषिद्धमाल्यम्

माल्यं न लम्बं न बहिर्न रक्तं जलजादृते ।
नैवचान्येन विधृतं म्लानं वा धारयेद्बुधः ॥

[अ० सं०]

अधिक लम्बी, बाहर (ग्रीवा के बाहर पीठ आदि पर) लटकती हुई, कमल के अतिरिक्त अन्य लाल फूल की तथा दूसरे द्वारा धारण की हुई या मुरझाई माला बुद्धिमान न पहने ।

रत्नाभरणधारणम्

धन्यं मङ्गल्यमायुष्यं श्रीमद्व्यसनसूदनम् ।
हर्षणं काम्यमौजस्यं रत्नाभरणधारणम् ॥

रत्न और गहना पहनना धन्य, मंगलात्मक, आयुवर्धक, शोभाप्रद, दुःख को घटाने वाला, प्रसन्नताकारक, कमनीय और ओज को बढ़ाने वाला होता है ।

पुष्पादिधारणसामान्यगुणाः

रक्षोघ्नमथ चौजस्यं सौभाग्यकरमुत्तमम् ।
सुमनोम्बररत्नानां धारणं प्रीतिवर्धनम् ॥

[सु० चि० अ० २४]

फूल, वस्त्र और रत्नों का धारण करना रक्षोघ्न (भूतादि या क्रिमि-नाशक), ओजवर्धक, उत्तम सौभाग्यकारक और प्रीतिवर्धक है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सन्ध्योपासनम्

प्राणायामं प्रकुर्वीत सूर्योपासनमेवच ।
गायत्रीं च जपेत्पश्चादिष्टदेवस्य चार्चनम् ॥
"न जातु रोगा जायन्ते फौप्फुसा भीमसम्मताः
दीर्घञ्चायुर्भवत्येव प्राणायामश्च परस्य वै ।"
पूर्वां संध्यांजपंस्तिष्ठेत्स्वकाले चापरां चिरम् ।
देवगोब्राह्मणाचार्यगुरुवृद्धान् सदार्चयेत् ॥ [वृन्दमाधवः]

प्रतिदिन प्राणायाम, सूर्योपासन करे और गायत्री का जप करे। इसके बाद अपने इष्ट देव की पूजा करे।

प्राणायामपरायण मनुष्य को फुफ्फुस के भयानक रोग नहीं होते। वह निश्चय ही दीर्घायु होता है।

मनुष्य प्रातःकाल की सन्ध्या एवं अन्यान्य सन्ध्याओं को यथा समय करते हुए (सूर्य के सम्मुख) देर तक ठहरे। देवता, गाय, ब्राह्मण, आचार्य, गुरु एवं वृद्ध की सर्वदा पूजा (सम्मान) करे।

ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद् दीर्घमायुरवाप्नुयुः ।
प्रज्ञा यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च ॥
[मनुस्मृतिः]

ऋषियों ने दीर्घ काल तक सन्ध्या करने के कारण दीर्घ आयु, बुद्धि, यश, कीर्त्ति और ब्रह्म तेज प्राप्त किया।

प्रच्छन्नपापा जप्येन तपसा वेदवित्तमाः ।
क्षान्त्या शुध्यन्ति विद्वांसो दानेनाकार्यकारिणः ॥
[मनुः अ० ५]

गुप्त पाप वाले जप से, वेदों का ज्ञाता तप से, विद्वान् क्षान्ति (क्षमा) एवं अकर्म करने वाले दान से शुद्ध होते हैं।

❀ योग्यगुरूपदिष्टः प्राणायामो ज्ञातव्यः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding: IKS-MoE-Grant-

पादुकाधारणम्

पादुकाधारणं कुर्यात्पूर्वं भोजनतः परम्।
पादरोगहरं वृष्यं चक्षुष्यं चायुषो हितम्।

भोजन के पहले व बाद खड़ाऊँ पहने, यह पैर के रोगों को नाश करने वाला वृष्य, नेत्र और आयु के लिये हितकर है।

पादत्रधारणम्

पादरोगहरं वृष्यं रजोघ्नं प्रीतिवर्धनम्।
सुखप्रचारमौजस्यं सदा पादत्रधारणम्॥
अनारोग्यमनायुष्यं चक्षुषोरुपघातकृत्।
पादाभ्यामनुपानद्भ्यां सदा चङ्क्रमणंनृणाम्॥

[सु० चि० अ० २४]

सर्वदा जूता पहनना पैर के रोगों को नाश करने वाला, वृष्य, धूलिनाशक, प्रसन्नतावर्धक चलने में सुखदायी एवं बलकारक है।

पैरों में बिना जूता पहने हुए घूमना मनुष्यों के लिये सर्वदा रोग-कारक, आयु को हीन करने वाला एवं नेत्रों को हानि पहुंचाने वाला है।

छत्रधारणम्

ईतेः प्रशमनं वल्यं गुप्त्यावरणशङ्करम्।
घर्मानिलरजोऽम्बुघ्नं छत्रधारणमुच्यते॥

[च० सू० अ० ५]

छाता धारण करना ईतियों (टिड्डी, सुग्गा आदि के भय) को शमन करने वाला, बलकारक, रक्षक, आच्छादक, कल्याणकारक, घाम, वायु और धूलि तथा वर्षा से बचाने वाला कहा गया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

दण्डधारणम्

स्खलतः सम्प्रतिष्ठानं शत्रूणां च निषूदनम् ।
अवष्टम्भनमायुष्यं भयघ्नं दण्डधारणम् ॥

[च० सू० अ० ५]

डण्डा धारण करना गिरते हुए का आधार, शत्रुओं को मारने वाला, अवष्टम्भन (शरीर को सहारा देने वाला) आयुवर्धक एवं भयनाशक है ।

उपस्तम्भाः

त्रय उपस्तम्भा आहारः, स्वप्नो, ब्रह्मचर्यमिति । एभिस्त्रिभिर्युक्तियुक्तैरुपस्तब्धमुपस्तम्भैः शरीरं बलवर्णोपचयोपचितमनुवर्तते यावदायुः संस्कारात्, संस्कारमहितमनुपसेवमानस्य । [च० सू० अ० ११]

आहार, नींद और ब्रह्मचर्य ये तीन उपस्तम्भ हैं । युक्तिपूर्वक सेवन किए गये इन उपस्तम्भों से उपस्तब्ध (स्थिर) शरीर आयु के संस्कार तक बल, वर्ण और पुष्टि से युक्त होकर विद्यमान रहता है । यदि अहित संस्कार न सेवन करता हुआ मनुष्य रहे ।

तत्र आहारः*

आहारो नाम यदन्नमार्गद्वारा शरीरस्यान्तराह्रियते । तत्र च स परिवर्तितः शरीरावयवान् परिपोषयति सुरक्षति तत्क्षतीः प्रपूरयति शरीरशक्तिं परिवर्धयति जीवयति च ।

---

* खाद्यद्रव्याणां रासायनिक विश्लेषणम्—

खाद्यपदार्थानां त्रयो विभागाः सन्ति (१) सेन्द्रियम् (२) निरिन्द्रियम् (३) उपसेचनञ्चेति । तेषु सेन्द्रियस्य द्वौभेदौ स्तः (१) सनत्रजनम् (२) अनत्र†जनञ्चेति । सनत्र-

---

† नत्रजनम् Nitrogen.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अन्न मार्ग से जो कुछ शरीर के भीतर ले जाया जाता है उसे आहार कहते हैं। वह शरीर में रसादि धातुओं के रूप में परिणत होकर शारीरिक अंगों का पोषण करता है, रक्षा करता है। उनकी क्षति को पूरा करता है। शारीरिक शक्ति को बढ़ाता है और जीवित रखता है।

भोज्यद्रव्यविषये नास्ति कश्चिन्नियतो नियमः यतः प्रत्येकेषां मनुष्याणां भोजनं देशजातिवयःप्रकृत्यनुसारेण विविधं भवति। यथा योरोपीया मांसाहारिणो भवन्ति। भारतीयाः प्रायोऽन्नशाकाहारिणश्च। परन्तु शीतदेशवासिना भोजने स्निग्ध वस्तून्याधिक्येनावश्यकानि भवन्ति। प्रायः कतिपयजना एवं शङ्कन्ते यन्मांसाहारिणःशाकाद्याहारिजनापेक्षया बलवत्तरा दृढ़-तराश्च भवन्ति। एतत्कारणाच्चैव तदुपरि विजयिनो भवन्ति। परन्त्वेतन्निर्मूलं, नास्त्यत्रमांसभक्षणं हेतुः। यत इति सिद्धमेव यदेकजातिर्विद्याबुद्धिसाहाय्येनैव द्वितीयजात्युपरि विजयं प्राप्नोति केवलेन शारीरबलेनैव नालं भवति।

भोजन के द्रव्यों के विषय में कोई निश्चित नियम नहीं हो सकता। क्योंकि प्रत्येक मनुष्य का भोजन देश, जाति, आयु और प्रकृति के

टिप्पणी

जने यथा प्रतनकः[1] (प्रोटीन), अनत्रजने यथा (क) वसा[2] (ख) कर्बोज[3] (श्वेतसारः[4] शर्करा च) (ग) जीवनीयम् Vitamin (विटामिन) (घ) वानस्पतिकाम्लम् इति।

निरिन्द्रिये तु खनिजलवणानां जलस्य च गणना क्रियते। उपसेचने तु वेसवारावलेहमद्यचायादीनां ग्रहणं भवति। तदेवम्भूतेषु खाद्यद्रव्येषु मुख्यतः पञ्चैव वस्तूनि भवन्ति प्रतनक

---

1 Proteins 2 Phats 3 Carbohydrates 4 Starch

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। जैसे योरोप निवासी मांसाहारी होते हैं और भारतीय प्रायः अन्नशाकाहारी होते हैं। लेकिन शीतदेश के निवासियों के भोजन में स्निग्ध वस्तुयें अधिकता से आवश्यक होती हैं। प्रायः कुछ लोग इस प्रकार शंका करते हैं कि मांसाहारी शाकादि आहार खाने वाले मनुष्यों की अपेक्षा अधिक बलवान और दृढ़ होते हैं, इसी कारण उनके ऊपर विजयी होते हैं। परन्तु यह शंका निर्मूल है क्योंकि इसमें मांस भक्षण कारण नहीं है। यह सिद्ध है कि विद्या और बुद्धि की सहायता से ही एक जाति दूसरी जाति पर विजय प्राप्त करती है। केवल शारीरिक बल ही पर्याप्त नहीं होता।

विद्याबुद्धितीव्रता तु मस्तिष्ककार्यस्य शुद्धरीत्या भवनेन, शुद्धरीत्या मस्तिष्ककार्यभवनञ्च स्वास्थ्योपरिनिर्भरम्। स्वास्थ्यञ्च तदाऽनुवर्तते यदा श्रेष्ठभोजनं यथोचितमात्रं मांसादिकं शाकादिकं वा स्वदेशजात्यादिरीत्यनुसारं लभ्येत। कतिपयदिवसपर्यन्तं यथोचितपरिमाणं भोजनं न प्राप्येत चेद् यथा दुर्भिक्षे दृश्यते, तर्हि तदानीं पाचनशक्तियन्त्राणां कार्यराहित्येन तद्दौर्बल्यादग्रे भोजनलाभेऽपि तन्न पक्तुं शक्यते। तथा शनैः शनैर्मृत्युरपि प्राप्यते। अतो भोजनविषये सर्वेषां सर्वदा ध्यानरक्षणमत्यावश्यकम्।

टिप्पणी

वसाकर्बोजलवणजलानीति। जीवनीयन्त्वत्यल्पमात्रं भवति। क्वचिद्द्रव्ये विशेषेणोपलभ्यते। एवं वानस्पतिकाम्लमपि न सर्वत्र किन्तु क्वचित्फलेषूपलभ्यते।

कस्मिंश्चित्खाद्यद्रव्ये प्रतनकः, कस्मिंश्चिद्वसा, कस्मिंश्चित्कर्बोजः क्वचिज्जलं, क्वचिल्लवणञ्चाधिक्येन भवति। यद्यपि प्रत्येकभोजने न्यूनाधिकतया सम्पूर्णभागा भवन्ति। तथापि योऽधिको भवति तन्नाम्ना तद्द्रव्यं निर्दिश्यते। एत एव सर्वे पदार्थाः शरीरनिर्मापकाः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

मस्तिष्क कार्य के शुद्ध रीति से होने के कारण विद्या और बुद्धि की तीव्रता होती है। शुद्ध रीति से मस्तिष्क कार्य का होना स्वास्थ्य के ऊपर निर्भर है और स्वास्थ्य तभी रह सकता है जब कि यथोचित मात्रा में अपने देश, जाति एवं प्रकृति आदि के अनुसार श्रेष्ठ भोजन सर्वदा मिले। चाहे वह मांसादिक हो अथवा शाकादिक हो। कुछ दिनों तक उचित मात्रा में यदि भोजन न प्राप्त हो जैसा कि अकाल में देखा जाता है तो उस समय पाचन शक्ति के यन्त्रों की क्रियाहीनता से उनकी दुर्बलता के कारण आगे भोजन मिल जाने पर मनुष्य उसे पचाने में समर्थ नहीं होता और धीरे-धीरे मृत्यु को भी प्राप्त करता है। इसलिये भोजन के विषय में सबको सर्वदा ध्यान रखना अत्यावश्यक है।

आहारस्य सामान्यगुणाः

आहारः प्रीणनः सद्यो बलकृद् देहधारकः।
आयुस्तेजः समुत्साहस्मृत्योजोऽग्निविवर्धनः॥

[सु० चि० अ० २४]

टिप्पणी

अत एवम्भूतखाद्येन शरीरस्य वृद्धिः पोषणञ्च भवति। तदेव श्रेष्ठभोजनं मन्यते यच्छरीररक्षति प्रपूरयेत्। प्रतनकः—प्रतनके नञ्जनः १६, कर्वनः ५४, ओषजनः, २२, उदजनः ७, गन्धकः १ इति भागाः भवन्ति। स्फुरोऽपि लेशमात्रो भवति। क्वचित्स्फुरस्यांशोऽधिकोऽपि भवति।

अयं वानस्पतिकजान्तवेषूभयप्रकारखाद्येषूपलभ्यते। जान्तवप्रतनकस्यात्मीकरणं सत्वरं भवति। परन्त्वेतद्विपरिणामेन ये पदार्था उत्पद्यन्ते ते शरीरात्सरलतया वहिर्न निर्गच्छन्ति किन्तु शरीरे एकत्रीभूय नानाप्रकारविषात्मिकाः धातुदोषजन्याश्चावस्था उत्पादयन्ति। यथा आमवातोयकृद्वृक्कविकाराश्चेति। परन्तु वानस्पतिकप्रतनके नैवं भवति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

आहार पुष्ट करने वाला, तुरन्त बलकारक, देह को धारण करने वाला एवं आयु-तेज-उत्साह-स्मृति (स्मरण शक्ति) ओज और अग्नि को बढ़ाने वाला है।

प्राणाः प्राणभृतामन्नमन्नं लोकोऽभिधावति।
वर्णप्रसादः सौस्वर्यं जीवितं प्रतिभा सुखम्॥
तुष्टिः पुष्टिर्बलं मेधा सर्वमन्ने प्रतिष्ठितम्।
लौकिकं कर्म यद्वृत्तौ स्वर्गतौ यच्च वैदिकम्॥
कर्मापवर्गे यच्चोक्तं तच्चाप्यन्ने प्रतिष्ठितम्।
हिताभिर्जुहुयान्नित्यमन्तरग्निं समाहितः॥
अन्नपानसमिद्धिर्नो मात्राकालौविचारयन्।
आहिताग्निःसदा पथ्यान्यन्तरग्नौ जुहोति यः॥
दिवसे दिवसे ब्रह्म जपत्यथ ददाति च।
नरंनिःश्रेयसे युक्तं सात्म्यज्ञं पानभोजने॥
भजन्ते नामयाः केचिद् भाविनोऽप्यन्तराहृते।
षटत्रिंशत् सहस्राणि रात्रीणां हितभोजनः॥
जीवत्यनातुरो जन्तुर्जितात्मा सम्मतः सताम्।

[च० सू० अ २७]

टिप्पणी

प्रतनकः शरीरावयवनिर्माणेऽत्यावश्यकः। मांसं प्रतनकेनैव निर्मीयते। यस्मिन्नाहारे प्रतनको न्यूनो भवति तद्भोजिनो निर्बला एव सदा भवन्ति। तेषां पेश्यः तनूव्यो निर्बलाश्च भवन्ति। अयं शक्तिं वर्धयति। मस्तिष्कवैभवजीविनामव्यापकवैद्यादीनां विद्यार्थिनाञ्चत्युपयोगी। अनेनैव-शारीराः पाचकरसाः निर्मीयन्ते। कार्याधिक्योत्पन्नं हासं प्रपूरयति। सम्यग्पोषजनं सङ्गृह्य शरीरकार्ये प्रवर्तयति। अतः प्रतनको भोजनेऽवश्यं भवेत् विशेषतः वर्धनकाले (पञ्चविंशतिवर्षवयःपर्यन्तम्)। अन्यथा सम्यग्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्राणियों का प्राण अन्न है। इसलिये सारा लोक अन्न की ओर दौड़ता है। वर्ण की प्रसन्नता (रंग का निखार), अच्छास्वर, जीवन प्रतिभा; सुख, तुष्टि, पुष्टि, बल और मेधा ये सब अन्न में प्रतिष्ठित हैं।

जीविका के लिये व्यापार आदि लौकिक कर्म, स्वर्ग गमन के लिये यज्ञादि वैदिक कर्म और अपवर्ग (मुक्ति) के लिये जो ब्रह्मचर्यादि कर्म हैं वे सब अन्न में प्रतिष्ठित हैं। इसलिये सावधान होकर हितकर अन्न पान रूपी लकड़ी से मात्रा, काल का विचार करता हुआ नित्य अन्तरग्नि में हवन करे।

जो आहिताग्नि मनुष्य सर्वदा, पथ्य अन्नपान अन्तरग्नि में हवन करता है प्रतिदिन गायत्री को जपता है, दान देता है।

टिप्पणी

र्धनं न भवति। गर्भवती प्रसूताभ्य : क्षयरोगिभ्योऽन्यकृच्छ्ररोगिभ्यश्च साधारणपरिमाणतोऽधिकः प्रतनको देयः। युवकानां भोजने ४५-५० माषकेभ्यो न्यूनः प्रतनको न भवेत्। प्रतनकस्य कार्यं वसा कर्वोजश्च न कर्तुं शक्नुतः। किन्तु तयोरभावे प्रतनकः कार्यं करोति कदाचित्। या जातयः प्रतनकमपर्याप्तं सेवन्ते ताः दुर्बला भवन्ति। स च विशेषेण मांसे कुक्कुटाण्डे क्षीरे सूपे गोधूमवातामाक्षोटकादौ चोपलभ्यते।

वसाकर्वोजौ—इमावपि प्रतनकवदावश्यकौ। शरीरशक्तिवृद्ध्यर्थमुष्णतावृद्ध्यर्थञ्च परमोपयोगिनौ। यद्यपि प्रतनकोऽपि शक्तिमुत्पादयदि परन्तु यथेमौ न तथा स गृह्यते शरीरावयवैः (सेलैः)। मानसिकपरिश्रमकर्त्रपेक्षया शारीरपरिश्रमकर्तृभ्य (सैनिकमल्लश्रमजीविभ्यः) अतिहितकरौ। शीततौ शरीरतापरक्षार्थमेतयोरुष्णतोत्पादकपदार्थयोः ग्रीष्मकालापेक्षयाऽधिकावश्यकता भवति। वसाकर्वोजावन्योन्ययोरभावे मिथः प्रयोक्तुंशक्येते। यदि भोजने वसा न्यूना स्यात्कर्वोजश्चधिकः स्यात्तर्हि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ऐसे कल्याणकारी कार्य में लगे हुये अन्नपान में सात्म्य को जानने वाले मनुष्य को दैववश बीच में होने वाले रोगों के अतिरिक्त अन्य कोई रोग नहीं होते।

हितभोजी जितेन्द्रिय, निरोग सज्जनों द्वारा मान्य मनुष्य ३६००० रातें अर्थात् १०० वर्ष तक जी सकता है।

टिप्पणी

शरीरे काचिद्धानिर्न भविष्यति। एवं कर्बोजन्यूनतायां वसाधिक्येऽपि न काचिद्धानिः, शरीरञ्च स्वास्थ्यमनुवर्तते। वसा कर्बोजापेक्षया विलम्बेन पच्यते। तथा न तावद्भोक्तुं शक्यते यावच्छर्करादि कर्बोजम्। वसा [घृततैलादिस्नेहः] दीनजनैर्न प्रायः प्राप्यते, तेषां कार्यममहर्घस्य कर्बोजस्यैव भक्षणेन चलति। वसा तथा कर्बोजः कर्बनाभिद्रवजनौषजनैर्निर्मीयते। घृते वसाऽऽधिक्येनास्ति किन्तु भ्रक्षणे प्रतनकः। कर्बोजस्तु तण्डुलगोधूमयवालुकादौ विशेषेणोपलभ्यते।

जीवनीयम्—द्रव्येषु प्राकृत एकः पदार्थः। यः पुष्ट्यर्थमत्यावश्यकः। किन्तु स उष्णीकरणे विनष्टो भवत्यतो यावच्छक्यं नित्यं किञ्चिद् द्रव्यम् (फलादिकम्) अपक्वमेव भक्षणीयम्। अतएव धारोष्णक्षीरस्य महागुणवत्त्वं प्रतिपादितमायुर्वेदे, तथा मद्यपि न कदाचिदुष्णीकृत्य संसेव्यत इति।

वानस्पतिकाम्लम्—तत्क्षणाकृष्टशाकादिषु नागरङ्गनिम्बुद्राक्षाचिञ्चाफलादौ च प्राप्यते। इदं द्रव्येषु स्वातन्त्र्येण क्षारेण साकं वा भवति। इदं पाचनक्रियाकाले कर्बनितं निर्मापयति यच्च रक्तस्यान्येषां वा शारीरद्रवाणां क्षारतास्थितयेऽतिसाहाय्यं करोति। यदीदं खाद्येभ्यः पृथक्कृतं स्यात्तर्हि रुधिरन्यूनता शीतांगरोगश्च प्रायः सम्भवेत्।

लवणम्—अस्य शरीरे महत्यावश्यकता। एतद्विनाऽपि स्वास्थ्यमसमीचीनं तिष्ठति। साधारणं लवणानि रक्ताणूम् तथाऽन्यशारीरद्रवाम् द्रवावस्थायामवस्थापयन्ति। खटिकपोटाशियममग्नेशियादीनां प्रस्फुरिताः (लवणरूपाः) अस्थिनिर्माणायोपयुज्यन्ते। लोहक्षारो रक्ताणुरञ्जकद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

भोजनकालः

सायं प्रातर्मनुष्याणामशनं श्रुतिचोदितम् ।
नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमो विधिः ॥
विसृष्टे विण्मूत्रे विशदकरणे देहे च सुलघौ ।
विशुद्धे चोद्गारे हृदि सुविमले वाते च सरति ॥
तथान्नश्रद्धायां क्षुदुपगमने कुक्षौ च शिथिले ।
प्रदेयस्त्वाहारो भवति भिषजां कालःस तु मतः॥

[सु० उ० अ० ६४]

टिप्पणी

व्यनिर्माणस्य प्रधानहेतुः । खनिजलवणासेवनादस्थीनि दुर्बलानि जायन्ते । सजीवपदार्थेष्वपि क्वचिल्लवणं प्राप्यते तदप्यत्युपयोगि भवति ।

जलम्—इदमेकं माध्यमं येन शरीरस्यनिखिलावयवपुष्टिसम्बन्धि-रासायनिकपरिवर्तनं भवति । शरीरतापरक्षार्थं घनपदार्थानां द्रवीकरणार्थं मलपदार्थानां वहिष्करणार्थञ्च परमोपयोगि । जीवनं तर्पणं स्वास्थ्या-यानिवार्यञ्चेति ।

बेसवारादिभोजनद्रव्याणि—बेसवार (मसाला) चायकहवाकोका-प्रभृतीनि जीवनार्थं नात्यावश्यकानि । एतानि न शक्तिमुत्पादयन्ति नच मांसादिकं पोषयन्ति । बेसवारेण भोजनं सुस्वादु जायते यच्च शीघ्रं पच्यते । किन्त्वधिकबेसवारविशिष्टं न जीर्णं भवति ।

भारते चायस्य सेवनं प्रत्यहं वर्धत एव, श्रान्तिमीषदपनयति किन्तु स उत्तेजकः । अनावश्यकतायामुत्तेजकद्रव्यस्य सेवनं हानिकरम् । जले समुत्क्वाथ्य चायो न पेयः अन्यथा तस्य हानिकारकांशा जले समा-विशन्ति । अतः चायस्य फाण्टं कृत्वा सेवनं कार्यं, किन्तु मिनटचतुष्ट-यादधिकमुष्णोदके न प्रक्षेप्यम् । अस्मिन्नेवेषत्काले तस्योत्तेजकांशाः क्वाथे सम्मिलिता भवन्ति परन्तु हानिकारकांशःस्वल्पतम एव आयाति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मनुष्यों के लिये शास्त्र द्वारा कहा हुआ भोजन के लिए दो ही काल हैं सायं (रात्रि का प्रथम याम) और प्रातः (पूर्वाह्ण)। इनके बीच में भोजन नहीं करना चाहिये। यह विधि अग्निहोत्र के समान है। (जैसे अग्निहोत्र प्रातः सायं किया जाता है वैसे ही भोजन भी प्रातः और सायं करना चाहिये)।

मलमूत्र का त्याग कर लेने, इन्द्रियों के स्वच्छ होने और देह के अत्यन्त हलका होने, डकार के शुद्ध होने, हृदय के निर्मल होने तथा वायु के अनुलोम होने, अन्न खाने की श्रद्धा होने, भूख लगने तथा कुक्षि (पेट) के ढीला होने पर आहार लेना चाहिये। वही आहार का समय वैद्यों द्वारा कहा गया है।

टिप्पणी

काफीचायादीनि जठरानलं मन्दीकुर्वन्ति। अतो भोजनकाले तत्पानमनुचितम्। क्षीरेण साकमीषद्दोषकराणि भवन्ति। अधिककहवासेवनादनिद्राशिरः शूलापस्मारहृदयकम्पादयो रोगा जायन्ते।

प्रामाणिकभोजनम्—यद्यपि भोजनमात्रा प्रत्येकमनुष्याणां पृथक्पृथग्भवति तथापि विशेषतो यस्य शारीरभारः पादोनद्विमणपरिमितिः स्यात्तेन नत्रजनीयांशः ऽ⁄॥ पादोनत्रिकलाः, वसांशः ऽ⁄॥ सार्द्धैककला, कर्बोजीयांशः ऽ॥॥ सार्द्ध सप्तकलाः, खनिजपदार्थांशः किञ्चिन्मात्रम् (षण्मापकादन्यूनम्) अर्थात् सर्वं सम्मेल्य ऽ॥ द्वादशकलामानमहोरात्रे भोक्तव्यम्। दशैकादश वा कला जलमात्रा दृढ़पदार्थे भवति, ततोतिरिक्तं सपादसेटकं पञ्चात्पेयमहोरात्र इति।

केषाञ्चिद्वैज्ञानिकानां मते ऽ⁄ कलाद्वयादधिकः प्रतनकांशो न भवेदिति। 'किलोरी' इत्युष्णताया एकं मानं वर्त्तते। साधारणपरिश्रमकर्तृणां २५०० किलोर्युष्णतायाः, अधिकपरश्रमिणां ३६०० कि० उष्णताया आवश्यकता भवति।

माषकमितेन प्रतनकेन ४०१ कि० उष्णता लभ्यते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

क्षुत्सम्भवति पक्वेषु रसदोषमलेषु च।
काले वा यदि वाऽकाले सोऽन्नकाल उदाहृतः॥
उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम्॥

[यो० र०]

रस दोष एवं मल के पक जाने पर समय या असमय में जब भूख उत्पन्न होती है, वही अन्नग्रहण करने का समय वस्तुतः कहा गया है।

भोजन पच जाने के ये लक्षण हैं:—शुद्ध डकार का आना, उत्साह होना, मल-मूत्र का त्याग यथोचित होना, शरीर का हलकापन, भूख और प्यास का लगना।

अर्धरात्रेपि भुञ्जानः परमार्थं बुभुक्षितः।
क्षुधी वैद्यपरित्यागी व्याधिभिर्नाभिभूयते॥

[वृन्दमाधवः]

अत्यन्त भूख लगने पर आधीरात में भी भोजन करने वाला बुद्धिमान, वैद्य के निषेध कर देने पर भी रोगों द्वारा आक्रान्त नहीं होता।

टिप्पणी

१ माषकवसया ९०१ कि० तथैकमाषककर्बोजिन ४०१ कि० उष्णता समुपलभ्यते।

साधारणकार्यकर्तृभ्यः प्रतनकस्य माषकशतम्, वसायाः षष्टिमाषकाणि कर्बोजस्य च चतुःशतमाषकाणि स्युः। विशिष्टकार्यकर्तृभ्यः १६० मा० प्रतनकस्य, ९८ मा० वसायाः, ५२० मा० कर्बोजस्य च भवेयुः। इत्येकपाश्चात्यवैद्यस्य मतम्, परन्तु वस्तुतः एतावद्वसाकर्बोजीयांशा न ग्राह्याः।

केचित्तु सार्धैकमणभारवत्पुरुषार्थं ७०—८५ मा० प्रतनकस्य, ८५ मा० वसायाः, २२०—२५० मा० कर्बोजस्य देयानि, लवणजलयो विशेषपरिमाणस्यावश्यकता नास्तीति मन्यन्ते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

याममध्ये न भोक्तव्यं यामयुग्मं न लङ्घयेत् ।
याममध्येऽपि रसोद्वेगो युग्मेऽतीते बलक्षयः ॥
(क्षे० कु०)

न्यूनतम एक पहर (तीन घण्टा) के भीतर भोजन नहीं करना चाहिये और न तो अधिकतम दो पहर तक लंघन करना चाहिये क्योंकि एक पहर के अन्दर पूर्व भोजन के रस का उद्वेग रहता है और दो पहर बिना भोजन बीतने पर बल क्षीण होता है। अर्थात् प्रातः ९ बजे के बाद मध्यान्ह १२ बजे के बीच भोजन कर लेना चाहिये।

अतीवायतयामास्तु क्षपा येष्वृतुषु स्मृताः ।
तेषुतत्प्रत्यनीकाख्यं भुञ्जीत प्रातरेव तु ॥
येषु चापि भवेयुश्च दिवसा भृशमायताः ।
तेषु तत्कालविहितमपराह्णे प्रशस्यते ॥
रजन्योदिवसाश्चैव येषु चापि समाः स्मृताः ।
कृत्वा सममहोरात्रं तेषु भुञ्जीत भोजनम् ॥

जिन ऋतुओं (यथा जाड़े) में अत्यन्त लम्बे पहरों वाली रातें होती हैं उनमें उसके वैपरीत्य से युक्त प्रातःकाल ही भोजन कर लेना चाहिये। इसी प्रकार जिन ऋतुओं (जैसे ग्रीष्म) में दिन बहुत लम्बे हों उनमें उस समय के अनुकूल रात्रि के प्रथम पहर में कहा हुआ भोजन अपराह्न में ही कर लेना चाहिये।

जिन ऋतुओं में रात-दिन बराबर होते हैं उनमें दिन-रात का बराबर हिसाब लगाकर साधारण काल में भोजन करे।

नाप्राप्तातीतकालं वा हीनाधिकमथापि वा ।
अप्राप्तकालं भुञ्जानः शरीरे ह्यलघौनरः ॥
तांस्तान् व्याधीनवाप्नोति मरणंवा नियच्छति ।

---

† अरसोत्पत्तिरिति भावप्रकाशे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अतीतकालं भुञ्जानो वायुनोपहतेऽन्नले ।
कृच्छाद्विपच्यते भुक्तं द्वितीयं च न काङ्क्षति ॥
प्रातराशोत्वजीर्णेऽपि सायमाशो न दुष्यति ।

[सु० सू० अ० ४६]

समय के पहले अथवा समय बीत जाने पर अथवा कम या अधिक मात्रा में भोजन नहीं करना चाहिये ।

शरीर के बिना हलका हुए समय के पूर्व भोजन करने वाला मनुष्य उन-उन अग्निमान्द्य, अजीर्णजन्य-व्यधियों को प्राप्त करता है अथवा मृत्यु को प्राप्त होता है ।

समय बीत जाने पर भोजन करने वाले मनुष्य की उदराग्नि के वायु द्वारा उपहत (विकृत) हो जाने पर खाया हुआ अन्न कष्ट से पचता है और दूसरे भोजन की इच्छा नहीं होती । प्रातःकालीन भोजन के न पचने पर भी सायंकालीन भोजन दूषित नहीं होता ।

दिवा प्रबुध्यतेऽर्केण हृदयं पुण्डरीकवत् ॥
तस्मिन् विबुद्धे स्रोतांसि स्फुटत्वं यान्ति सर्वशः ।
व्यायामाच्च विचाराच्च विक्षिप्तत्वाच्च चेतसः ॥
नक्तेदमुपगच्छन्ति दिवा तेनाऽस्य धातवः ।
अक्लिन्नेष्वन्नमासिक्तमन्यत्तेषु त दुष्यति ॥
अविदग्ध इव क्षीरे क्षीरमन्यद्विमिश्रितम् ।
नैवदुष्यति तेनैव समं सम्पद्यते यथा ॥
रात्रौ तु हृदये माल्ने संवृतेष्वयनेषु च ।
यान्ति कोष्ठे च विक्लेदं संवृते देहधातवः ॥
क्लिन्नेष्वन्यदपक्वेषु तेष्वासिक्तं प्रदुष्यति ।
विदग्धेषु पयःस्वन्यत्पयस्तप्तेष्विवार्पितम् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नैशेष्वाहारजातेषु नाविपक्वेषु बुद्धिमान्।
तस्मादन्यत्समश्नीयात् पालयिष्यन् वलायुषी ॥

[च० चि० अ० १५]

दिन में हृदय सूर्य से कमल के समान खिल जाता है और उसके खिल जाने पर शरीर के सभी स्रोत खिल जाते हैं। चूँकि दिन में श्रम करने, सोचने, विचारने, चित्त के चलायमान होने के कारण रसादि धातुयें क्लेद को नहीं प्राप्त होतीं। अतः उन अल्किन्न धातुओं में पड़ा हुआ सायंकाल का अन्न दूषित नहीं होता। उसी प्रकार जिस प्रकार कि अविदग्ध दूध में दूसरा दूध मिला देने पर दूषित नहीं होता बल्कि उसी के साथ समान रूप से सम्पन्न होता है।

किन्तु रात में हृदय के म्लान (संकुचित) होने एवं स्रोतों के संकुचित होने के कारण संवृत कोष्ठ में शरीर की धातुयें क्लेद को प्राप्त हो जाती हैं। जिस प्रकार तप्त हुए विदग्ध दूध में दूसरा छोड़ा हुआ दूध बिगड़ जाता है उसी प्रकार रात के खाये गये उन अपक्व क्लिन्न आहार में प्रातः छोड़ा हुआ आहार दूषित हो जाता है।

बल और आयु को पालन करने की इच्छा वाला मनुष्य रात्रि के आहार के पक जाने पर ही प्रातः दूसरा भोजन करे।

अशनस्थानम्

आहारन्तु रहः कुर्यान्निर्हारमपि सर्वदा।
उभाभ्यां लक्ष्म्युपेतः स्यात्प्रकाशो हीयते श्रियः ॥

[भावमिश्रः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सर्वदा आहार और मलत्याग एकान्त में करना चाहिये। इन दोनों को एकान्त में करने से श्री प्राप्त होती है और प्रकाश में करने से श्री हीन होती है।

गौरीमतादिलिखिताखिलपाकसम्पद्,
व्यापारितौदनिकसंभ्रमदर्शनीयम्।
स्वप्नेऽपिवैरिजनगोचरतामयातं,
चन्द्रद्रवैः†सुरभितं भुजिकर्मधाम॥

[चे० कु०]

गौरीमतादि ग्रन्थों में लिखित सभी पाक के लक्षणों से युक्त तेजी के साथ काम करते हुये दिखाई पड़ रहे हैं रसोईया जिसमें ऐसा, स्वप्न में भी दुश्मनों की दृष्टि से रहित एवं कपूर के पानी के छिड़काव से सुगन्धित भोजनालय होना चाहिये।

आप्तान्वितमसङ्कीर्णं शुचि कार्यं महानसम्।
तत्राप्तैर्गुणसम्पन्नमन्नं भक्ष्यं सुसंस्कृतम्॥
भोक्तारं विजने रम्ये निःसम्बाधे समे शुचौ।
सुगन्धिपुष्पर्चिते समे देशेऽथ भोजयेत्॥

[सु० सू० अ० ४६]

† चन्द्रः कर्पूरः तद्द्रवसिक्ते महानसे मक्षिका रोगोत्पादककीटाण वश्च न आयान्ति विनष्टा वा भवन्ति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

आप्त (सच्चे और ईमानदार) लोगों से युक्त असंकुचित और स्वच्छ रसोईघर बनाना चाहिये। यहाँ पर विश्वास पात्र परिवेषक द्वारा परसा हुआ गुणसम्पन्न सुसंस्कृत अन्न खाना चाहिये।

भोक्ता को एकान्त में, सुन्दर, बाधारहित, समतल पवित्र और सुगन्धित फूलों से सजे हुए स्थल पर भोजन करना चाहिये।

टिप्पणी

खाद्यद्रव्याणि

नाम	प्रतनकः	वसा	कर्बोजः	खनिज पदार्थः	जलम्
गोधूमः	११·४७	२.०४	७०.९०	३.१४	११.८३
गोधूमपिष्टम् (पूतम्)	१०.७	१.१	७५.४	१.५	
गोधूममर्दितम् (मैदा)	७.९	१.४	७६.४	०.५	
गोधूमत्वक् (चोकर)	१६,४	३.५	४३.६	६.०	१२.५
यवः	८.९२	१.९०	७६.१०	२—३	१२.३
जूर्णा	९.९२	४.४४	६८.९	३.७५	११.५०
गवेधुका	७.६७	२.७७	६७.२६		
लघुगवेधुका	८.७२	४.७६	७३.४०	१.५–२.०	११—२
तण्डुलम्	६.६२	०.५०	८१.०७	१.०४	११.०४

अन्नवर्गेषु कर्बोजःश्वेतसाररूपेणोपलभ्यते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पादौप्रक्षाल्यभोजनम्

आर्द्रपादस्तु भुञ्जीत नार्द्रपादस्तु संविशेत् ।
आर्द्रपादस्तु भुञ्जानो दीर्घमायुरवाप्नुयात् ॥

[मनु० अ० ४]

भींगे पैर भोजन करे और सूखे पैर सोये । गीला पैर करके भोजन करने वाला दीर्घायु प्राप्त करता है ।

भोक्ता

स्नातः सुधौतमृदुसुन्दरशुक्लवासा—
स्तत्कालधौतचरणः प्रियपुत्रमित्रैः ।

टिप्पणी

सूपवर्गः

नाम	प्रतनकः	वसा	कर्बोजः	
आढ़की	२१.७०	२.५०	५४.०६	
मुद्गः	२३.६२	२.६९	५३.४५	एषु १०—११ % जलम्
मसूरः	२५.४७	३.००	५५.०३	३—४ % खनिजपदार्थो
चणकः	१९.९१	४.३४	५४.२२	भवति । निस्तुषसूपानि
कलायः	२२.०१	१.९६	५३.९७	सतुषसूपापेक्षया शीघ्रं
माषः	२२.३३	१.९५	५५.२२	पच्यन्ते ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्रग्वी प्रसन्नहृदयो रसपाकवेद्यां ।
भोक्ता प्रविश्य हितसात्म्यसमानवेद्यैः ॥

[चे० कु०]

भोक्ता स्नान कर अच्छी तरह से धुला हुआ सुन्दर कोमल श्वेत वस्त्र पहने हुए, तत्क्षण पैर धोकर माला धारण कर, प्रसन्नहृदय अपने प्रियपुत्र और मित्रों के साथ रसोई घर में बैठ कर, हितकर, सात्म्य भोजन करे ।

टिप्पणी

शाकवर्गः

नाम	प्रतनकः	वसा	कर्बोजः	खनिज पदार्थः	जलम्
कर्मकला	१.८	०.४	५.८	१.३	८९.६
पुष्पकोबी	२.२	०.४	४.७	०.८	९०.७
रक्तवृंताकम् (टोमाटो)	१.३	०.२	४.०	०.७	९१.९
त्रपुसः	०.८	०.१	२.१	०.४	९५.९
आलुकम्	२.२	०.१	१५.७-२०.६	१.०	७८.३
हरितकलायः	४.०	०.५	१६.०	०.९	७८.१
मूलकम्	१.३	०.७	१४.५	१.०	८२.५
कदली	१.३	०.६	२२.०	०.८	७५.३
वृन्ताकम्	०.८९	०.९४	३.४८	०.२६	९०.९८
भिण्डी	१.९६	१.१	५.७२	०.८	९०.४
अलाबू	०.९०	१.०	३.९६	०.७	९३.४०
पलाण्डुः	१.६	१.३	१०.१	०.६	८७.६
गर्जरः	०.५	०.३	१०.१	०.९	८६.५

CC-0. RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaigaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आसनम्*

मृदुतूलमये स्थूले चारुवस्त्रावगुण्ठिते ।
आसने प्राङ्मुखो भोक्तोपविशेद्वाप्युदङ्मुखः ॥
(वै० कु०)

भोक्ता कोमल रूई से भरे हुए मोटे-सुन्दर वस्त्र से ढके हुए आसन पर पूर्व मुँह या उत्तर मुँह होकर बैठे ।

टिप्पणी
मांसवर्गः

नाम	प्रनतकः	वसा	कर्बोजः	लवणम्	जलम्
आजं मांसम्	१८·०	५·०		१·०	७६·०
सौकरम् ,,	१९·९	६·२	०·६	१·१	७२·६
हारिणम् ,,	१९·७	१·९		१·१	७५·७
शाशम् ,,	२२·३	१·१		१·१	७४·०
कौक्कुटम् ,,	२२·७	४·१	१·३	१·१	७०·४
कुक्कुट्यंडःसावरणः	१३·५०	११·६०		१·२०	७३·४०
तस्य श्वेतभागः	१२·८९	०·२५		०·६३	८५·५०
पीतभागः	१६·१२	३१·३९		१·०१	५१·०
मत्स्यमांसम्	१८·३	०·७	०·९	०·८	७९·३

* सुखमुच्चैः समासीनः समदेहोन्नतत्परः । बुभुक्षितोन्नमश्नीयादिति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

महानसे राज्ञो वैद्यप्रयोजनम्

राजा राजगृहासन्ने प्राणाचार्यं निवेशयेत् ।
सर्वदा स भवत्येवं सर्वत्रैवाऽप्रमादवान् ॥
अन्नपानं विषाद्रक्षेद्विशेषेण महीपतेः ।
न विश्वसेदतो राजा कदाचिदपि कस्यचित् ॥

(क्षे० कु०)

राजा को चाहिये कि वह राजगृह के समीप ही प्राणाचार्य (वैद्य-हेल्थ आगिसर) को रक्खे । इस प्रकार वह सर्वदा प्रमाद रहित रहता है । वैद्य

टिप्पणी

क्षीरवर्गः

नाम	प्रतनकः (प्रोटीन)	वसा	कर्बोजः (शर्करा)	लवणम्	जलम्
स्त्रीक्षीरम्	१·२	५·२०	५·९०	०·२४	८९·८
गव्यम्	३·५	४·०	३·५	०·७५	८७·२
आजम्	४·३	४·७८	४·४६	०·७५	८५·७
माहिषम्	६·११	७·४५	४·१७	०·८७	८१·४

वक्ष्यमाणसुश्रुतोक्तपाठेनाधुनिकमञ्चटेबुलोपर्युपविश्य भोजनकरणं सिद्धं भवति ।

CC-0. RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

विशेषतः विष से राजा के अन्नपान की रक्षा करे। चूँकि मनुष्यों का चित्त घोड़े के समान चञ्चल है इसलिये राजा कभी भी किसी का विश्वास न करे।

महानसिकवैद्यः

आयुर्वेदकृताभ्यासः सर्वत्र प्रियदर्शनः।
युक्तिहेतुसमायुक्त एष वैद्योऽभिधीयते॥

(क्षे० कु०)

आयुर्वेद में अभ्यास कर चुकने वाला, प्रिय-दर्शन, युक्ति और कारणों का जानकार वैद्य होना चाहिये।

टिप्पणी

क्षीरविकारवर्गः

नाम	प्रतनकः (प्रोटीन)	वसा	कर्बोजः (शर्करा)	लव णम्	जलम्
अक्षणम्	२·००	८५·००		१·००	१२·९५
घृतम		१००·००			
दधि	२४·०६	२·४			अवशिष्टांशः
मस्तु	७·८२	०·२४	४·६५	०·६५	९३–६४
सन्तानिका	२·५	२०—६५ सामान्यतः ४५	४·५	०·५	अवशिष्टांशः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कुलीनं धार्मिकं स्निग्धं सुभृतं सततोत्थितम् ।
अलुब्धमशठं भक्तं कृतज्ञं प्रियदर्शनम् ॥
क्रोधपारुष्यमात्सर्य्यमदालस्यविवर्जितम् ।
जितेन्द्रियं क्षमावन्तं शुचिं शीलदयान्वितम् ॥

टिप्पणी — आर्द्रफलवर्गः

नाम	प्रतनकः (प्रेटीन)	स्नेहः (वसा)	कर्बोजः	लवणाम्ले	जलम्
सेव्यम्	०·५	०·५	१२·५	१.४	८२·५
नासपाती	०·५	०·६	११·५	१·४	८३·९
आरुकम्	०.५	०·२	५·८	१.३	८८·८
वदरीफलम्	१.०		१४·८।	१·५	७८·४
सतूदम्	०·३		११·४	२·४	८४·७
द्राक्षा (अंगूर)	१·०	१·०	१५·५	१·०	७९·०
नारिकेलमज्जा	५·२	३५·१	८·४	१·०	४६·६
नारिकेलजलम्	०·५		९·०		९०·३
खर्जूम्	०·७	०·३	७·६	०·६	९८·८
कालिङ्गम्	७·३	०·१	६·५	०·२	९२·९
नागरङ्गकम्	·०९	०·६	८·७	२.०	८६ ७
निम्बुकम्	१·०	०·९	८·३	०·५	८९·३
वहुचक्षुः	०·४	०·३	९·७	०·३	८९·३
दाडिमम्	१·५	१·६	१६·७	०·६	७६·८
अक्षीरम् (फल्गु)	१·५		१८·८	०·६	७९·१

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

मेधाविनमसंश्रान्तमनुरक्तं हितैषिणम्।
पटुं प्रगल्भं निपुणं दक्षं मायाविवर्जितम्॥
पूर्वोक्तैश्च गुणैर्युक्तं नित्यं सन्निहितागदम्।
महानसे प्रयुञ्जीत वैद्यं तद्विद्यपूजितम्॥

[सु० क० अ० १]

कुलीन, धार्मिक, स्निग्ध (कोमल स्वभाव वाला), सुरक्षित, सर्वदा सावधान, निर्लोभ, सज्जन, भक्त, कृतज्ञ, प्रिय-दर्शन, क्रोधरूक्षस्वभाव-ईर्ष्या मद-आलस्य आदि दोषों से रहित, जितेन्द्रिय, क्षमावान्, स्वच्छ, शील और दया से युक्त, मेधावी, न थकने वाला, अनुरक्त, हितैषी, चतुर,

टिप्पणी

शुष्कफलवर्गः

नाम	प्रतनकः (प्रोटीन)	स्नेहः वसा	कर्बोजः	खनिज पदार्थः	जलम्
मृद्वीका	१·२	३·४	६४·०	२·२	२७·९
लघुद्राक्षा	२·५	४·७	७४·७	४·१	१४·०
आक्षोटकः	१५·६	६२·६	७·४	२·७	४·६
वाताम:	२४·०	५४·०	१०·०	३·०	६·०
प्रभिषुकः (पिस्ता)	२१·७	५१·०	१४·०	३·३	७·४
नारिकेलगिरिगोलकः	६·०	५७·४	३१·८	१·३	३·५
मुद्गफली	२७·५	४४·५	१५·७	२·५	७·५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ढीठ, शास्त्र में निपुण, क्रियाभिज्ञ माया-छल-रहित, पूर्वोक्त वैद्य के गुणों से युक्त, सर्वदा विषनाशक औषधियों को पास रखने वाले एवं आयुर्वेद के जानकारों से पूजित वैद्य को रसोई घर में नियुक्त करना चाहिये।

राजयोग्यं महानसम्

प्रशस्तदिग्देशकृतं शुचिभाण्डं महच्छुचि।
सजालकं गवाक्षाढ्यमात्मवर्गनिषेवितम्॥
विकक्षसृष्टसंसृष्टं* सवितानं कृतार्च्चनम्।
परीक्षितस्त्रीपुरुषं भवेच्चापि महानसम्॥
तत्राध्यक्षं नियुञ्जीत प्रायोवैद्यगुणान्वितम्।

[सु० क० अ० १]

उत्तम दिशा एवं स्थान में निर्मित, स्वच्छ बर्तनों से युक्त, बड़ा स्वच्छ; जालियों और झरोखों से युक्त, आत्मीयजनों से सेवित, तृण स्थान के संपर्क से रहित, छत युक्त, पूजित और परीक्षित स्त्री-पुरुषों से युक्त रसोई घर होना चाहिये। वहाँ प्रायः वैद्य के गुणों से युक्त पुरुष को ही अध्यक्ष बनाना चाहिये।

महानसोपयोग्युपकरणानि

बस्तूनि भोजनार्हाणि विविच्यानि पुनः पुनः।
सर्वाणि गुणयुक्तानि स्थापितानि महानसे॥
दास्याप्ना मार्जनी वाटी पूतहण्डी सुकूर्चिका।
घर्षणी वैणवं पात्रं जलपूर्णस्त्वलिञ्जरः॥
शलाका† वह्निजननी कुद्दालं सुकुठारकः।
दारुखण्डानि शुष्काणि हस्तमात्रकृतानिच॥

---

* विगततृणस्थानसम्पर्कमित्यर्थः।

† वह्निसञ्जननग्राव इति मूलपाठः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अजीर्णान्यनतिस्थूलान्यजन्तून्यमलानि च ।
ततश्चालनी पीठो मुसलं चाप्युलूखलम् ॥
सूर्पं लोष्टं शिला दर्वी चतुरस्रा च पट्टिका ।
सन्दंशकं तु युगलं वस्त्रखण्डचतुष्टयम् ॥
नालिका छुरिका चैव सुशूल्यं सुकटाहकम् ।
वन्हिसञ्चालनार्थाय दर्वी दीर्घा सुलोहजा ॥
इत्यादि वस्तुजातं हि युज्यते च महानसे ।

[क्षे० कु०]

भोजन के योग्य सभी वस्तुयें गुणयुक्त हों और वे रसोई घर में देख भालकर अलग-अलग रक्खी गई हों ।

भक्तदासी, झाड़ू, वाटी (पतीली), स्वच्छ हण्डिका, कूँची, घर्षणी (खरल), बाँस की टोकरी, जल से भरा हुआ घड़ा, अग्नि जलाने के लिये सलाई, कुदार, कुठार (कुल्हाड़ी), सूखे, न बहुत पुराने, अधिक

टिप्पणी

उदाहरणार्थं—

कतिपयखाद्यद्रव्यसंयोगः

(१)

भोजनम् (अहोरात्रे)

मूलावयवा—

तण्डुलम् १० कलाः (छटाँक)
सूपम् २ कले
घृतं तैलं वा ½ कला
शाकम् ईषत्

प्रतनकः ५० माषकाणि
कर्बोजः ५०० मा०
वसा ३३ मा०

अस्मिन्नाहारे प्रतनकस्य वसायाश्च भागौ न्यूनतरौ, वसायास्तु कार्यं कर्बोजेन सम्पत्स्यते । भोजनमिदं श्रमजीविभ्यः श्रेष्ठम् । मानसिककार्यकर्तृभ्योऽवरम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मोटाई से रहित, क्रिमिरहित, मलरहित और एक हाथ लम्बे-लम्बे लकड़ी के सूखे चैले, चलनी, पीढ़ा, मूसल, ओखरी, सूप, लोढ़ा, सिल, करछुल, चौकोर पटरी, दो सँड़सी, कपड़े के चार टुकड़े, नलिका, छूरी, शूल (लोह की शलाका जिसमें मांस का टुकड़ा लगाकर भूजा जाता है) कड़ाही और आग चलाने के लिये लोहे की लम्बी करछुल इत्यादि वस्तुयें रसोई घर में उपयोगी हैं।

सूदकारः

पितृपैतामहो दक्षः शास्त्रज्ञः स्वादुपाचकः।
शौचयुक्तोऽथ भक्तश्च सूदकारः प्रशस्यते ॥
भवेयुर्धार्मिकाः स्निग्धाः सूदकाराः* क्रमागताः।
कृतोष्णीषाश्च शुचयस्तथा वैद्यवशेस्थिताः ॥

टिप्पणी

(२)

भोजनम् (अहोरात्रे)

तण्डुलम्	३ कलाः		
गोधूमपिष्टम्	३ कलाः		
सूपम्	१ कला	प्रतनकः	६१ मा०
क्षीरम्	८ कलाः	वसा	५० मा०
घृतम्	½ कला	कर्वोजः	३३० मा०
शर्करा	१ कला		
शाकम्	ईषत्		

मूलावयवाः—

साधारणमानसिकशारीरिकपरिश्रमिभ्यो हितम्। प्रतनकवसयोर्भागावस्मिन्नपि न्यूनौ स्तः।

---

* सूदकारपतिस्तत्र प्रायो वैद्यगुणान्वितः।
तत्रत्यजनतत्वज्ञस्तत्प्रशासनतत्परः ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पिता और पितामह से रसोई व्यवसाय वाला, चतुर, पाकशास्त्रज्ञ, स्वादिष्ट स्वच्छ पाक करने वाला, और स्वामिभक्त रसोईदार श्रेष्ठ है।

सभी रसोई करनेवाले धार्मिक, कोमलस्वभाव, पीढ़ी दरपीढ़ी आने वाले, सिरपर पगड़ी या अंगोछा धारण किये हुए, सफाई के साथ रहने वाले और वैद्य के वशीभूत हों।

परिवेषकः

स्नातश्चन्दनचर्चितः सुवसनः स्रग्वी प्रसन्नाननः।
स्पष्टात्मा सुभगः प्रसन्नहृदयः श्रीकान्तपूजारतः॥

टिप्पणी

(३)

भोजनम् (अहोरात्रे)		मूलावयवाः—	
गोधूमपिष्टम्	७ कलाः		
तण्डुलम्	२ क०	प्रतनकः	१०५ मा०
सूपम्	२ क०	वसा	९६ मा०
घृतम्	१ क०	कर्बोजः	५१४ मा०
क्षीरम्	१२ क०		
शर्करा	१ क०		
शाकम्	ईषत्		

भोजनमिदं १८ तः २५ वर्षवयोऽभ्यन्तरीययुवकेभ्यो येषां शरीरभारः १॥ मणमितः स्याद् दीयते। किन्त्वत्रकर्बोजस्य मात्रा किञ्चिदधिका वर्त्ततेऽतः पिष्टतण्डुलयोः ९ कलास्थाने ७ कलाः, तथा घृतस्य च १ कलास्थाने १। कला इति प्रदानेन श्रेष्ठतमं सम्पद्यते।

(पा० स्वस्थवृत्त०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्वामिस्नेहपरः सुपाकनिपुणः प्रौढ़ो वदान्यः शुचिः ।
विप्रो वा परिवेषकः सुकुलजश्चान्योऽपि वा भूपतेः ।।

राजा के यहाँ रसोई परसनेवाले स्नान किए हुए, चन्दन लगाये, स्वच्छ वस्त्र पहने, माला पहने, प्रसन्नमुख, साफ दिल वाले, सुन्दर, प्रसन्न हृदय, भगवान् विष्णु की पूजा में लीन, स्वामी के स्नेह में परायण, अच्छा पाक करने में चतुर, प्रौढ़वय वाला, दाता, स्वच्छ, जाति में ब्राह्मण या अन्य जाति का श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न व्यक्ति हो ।

स्नाता विशुद्धवसना नवधूपिताङ्गी ।
कर्पूरसौरभमुखी नयनाभिरामा ।
बिम्बाधरा शिरसि बद्धसुगन्धिपुष्पा ।।
मन्दस्मिता क्षितिभृतां परिवेषिका स्यात् ।

[क्षे० क्षु०]

राजाओं के यहाँ रसोई परसने वाली स्त्री स्नान किये, शुद्ध स्वच्छ वस्त्र पहने, नवीन धूप से सुगन्धित अंगों वाली, कर्पूर से सुगन्धित मुखवाली, सुन्दर नेत्रों वाली, देखने में सुन्दर, पके कुन्दरू के समान लाल ओंठ वाली, शिर के जूड़े में सुगन्धिस फूल बाँधने वाली और मन्दमुसकान वाली हो ।

महानसकर्मचारिणः

शुचयो दक्षिणा दक्षा विनीताः प्रियदर्शनाः ।
संविभक्ताः सुमनसो नीचकेशनखाः स्थिराः ।।
स्नाता दृढं संयमिनः कृतोष्णीषः सुसंयताः ।
तस्य चाज्ञाविधेयाः स्युर्विविधाः परिकर्म्मिणः।।
आहारस्थितयश्चापि भवन्ति प्राणिनो यतः :
तस्मान्महानसे वैद्यः प्रमादरहितो भवेत् ।।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माहानसिकवोढारः सौपौदनिकपौपिकाः ।
भवेयुर्वैद्यवशगा ये चाप्यन्ये तु केचन ॥

[सु० क० अ० १]

रसोईघर के विभिन्न कर्मचारी स्वच्छ, अनुकूल, सरल, क्रियाकुशल, नम्र, प्रियदर्शन, ठीक यथावत् विभक्त अँग वाले पृथक्-पृथक् कार्यमें लगाये गये हुये, प्रसन्न मन, केश-नख कटे हुए, स्थिर स्वभाववाले (चंचलता रहित या स्थिर सर्विसवाले) स्नान किये हुए, दृढ़संयमी, पगड़ी या अंगौछा या रूमाल सिर पर बांधे हुए और सावधान हों। उनकी आज्ञा में रहने वाले अन्य विविध कर्मचारी हों।

चूँकि सभी प्राणी आहारके ही कारण स्थित हैं, इसलिये रसोईघर में वैद्य को आहार के सम्बन्ध में प्रमाद रहित होना चाहिये।

रसोईघर में माल ढोनेवाले तथा दाल पकाने वाले, मालपूवा पूड़ी आदि बनाने वाले और अन्याय सभी कर्मचारी वैद्य के वशीभूत रहें।

पाकपात्राणि

मृन्मयादीनि भाण्डानि क्षालितानि च वारिणा ।
तेषु तत्पच्यते द्रव्यं गुणवत्सर्वसम्मतम् ॥
मृदभावे पचेल्लौहे चक्षुरर्शो विकारनुत् ।
कांस्यजे पाचितं यद्धि तद्धितं मतिदं शुचि ॥
यच्च ताम्रमये सिद्धं न रुच्यं त्वम्लपित्तकृत् ।
सौवर्णे राजते पाच्यमाढ्यभूमिभृतां गृहे ॥
तत्पात्रं सर्वदोषघ्नं धिषणोत्सवदायकम् ।

[क्षे० कु०]

मिट्टी आदि के बर्त्तन जल से धोये हुए हों। उनमें भोजन का पाक सबके लिये रुचिकारक और गुणयुक्त होता है।

मिट्टी के अभाव में लोह पात्र में पकाना चाहिये। वह नेत्र विकार और बवासीर के रोग को नाश करता है। कांसे के बर्त्तन में पकाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हुआ भोजन हितकारी, बुद्धिदाता और पवित्र होता है। जो ताम्बे के बर्त्तन में पकता है वह अरुचिवर्धक और अम्लपित्त कारक होता है।

धनियों और राजाओं के घर में सोने और चाँदी के पात्र में पकाना चाहिये। वह पात्र सब दोषों को नाश करनेवाला और बुद्धि को उत्साहित करने वाला है।

भोजनविशेषेण पात्रविशेषाः

घृतं काष्णायसे देयं पेया देया तु राजते।
फलानि सर्वभक्ष्यांश्च प्रदद्याद्दैदलेषुच॥
परिशुष्कप्रदिग्धानि सौवर्णेषु प्रकल्पयेत्।
प्रद्रवाणि रसांश्चैव राजतेषूपहारयेत्॥
कट्टराणि खडांश्चैव सर्वान् शैलेषु दापयेत्।
दद्यात् ताम्रमये पात्रे सुशीतं सुश्रृतं पयः॥
पानीयं पानकं मद्यं मृन्मयेषु प्रदापयेत्।
काचस्फटिकपात्रेषु शीतलेषु शुभेषु च॥
दद्याद्वैडूर्यपात्रेषु रागषाडवसट्टकान्।

[सु० सू० अ० ४६]

काले लोहे के बर्त्तन में घी और चाँदी के बर्त्तन में पेया देनी चाहिये। फल और सभी भक्ष्य (पकवान) पत्तलों पर देना चाहिये। सूखे और चिपकने वाले (प्रदिग्ध) पदार्थ सोने के बर्तनों में देना चाहिये, द्रव और रसदार पदार्थ चाँदी के बर्तनों में परोसना चाहिये। कट्टर (खट्टा मट्ठा) और खड़ (पाचन दीपन अम्ल द्रव्य) आदि सभी खट्टी वस्तुओं को पथरी में देना चाहिये।

खौलाकर ठण्डा किया हुआ पानी ताम्बे के पात्र में रक्खे। पानी, शर्बत और शराब विविध प्रकार के मिट्टी के बर्तनों में देवें। तथा इन्हीं वस्तुओं को और राग (विविध आचार) पाडव (मधुराम्ल युक्त द्रव्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रुरब्बा आदि) सट्टक (सिरका) को काच स्फटिक, वैदूर्य (लहसुनिया) के शीतल और रम्य बर्त्तनों में देना चाहिये ।

विभिन्नपात्रगुणाः

दोषहृद् दृष्टिदं पथ्यं हैमं भोजनभाजनम् ।
रौप्यं भवति चक्षुष्यं पित्तहृत्कफवातकृत् ॥
कांस्यं बुद्धिप्रदं रुच्यं रक्तपित्तप्रसादनम् ।
पैत्तलं वातकृद्रूक्षमुष्णं कृमिकफप्रणुत् ॥
आयसे काचपात्रे च भोजनं सिद्धिकारकम् ॥
शोथपाण्डुहरं बल्यं कामलापहमुत्तमम् ।
शैलेये मृन्मये पात्रे भोजनं श्रीनिवारणम् ।
दारूद्भवे विशेषेणारुच्यं सुश्लेष्मकारि च ॥
पात्रं पत्रमयं रुच्यं दीपनं विषपापनुत् ।

[भा० प्र०]

स्वर्ण का भोजनपात्र दोषनाशक, दृष्टि प्रदान करने वाला एवं पथ्य है । चाँदी का पात्र चक्षु के लिये हितकारी, पित्तनाशक एवं कफ और वायु करने वाला है । कांसे का पात्र बुद्धिप्रद, रुचिकारक और रक्त तथा पित्त को प्रसादन करने वाला है । पीतल का पात्र वातकारक रूक्ष उष्ण एवं कृमि और कफ को नाश करने वाला है । लोहे एवं काँच के बर्तन में किया हुआ भोजन स्वास्थ्यप्रद, शोथपाण्डु को नाश करने वाला, बलकारक और कामला को नाश करने में श्रेष्ठ है । पत्थर और मिट्टी के बर्तन में भोजन करना लक्ष्मी को दूर करना है । लकड़ी के बर्तन में किया हुआ भोजन विशेषतः अरुचि और कफकारक हैं । पत्तों से बना हुआ पात्र (पत्तल) रुचिकारक अग्निदीपक तथा विष और पाप को नाश करता है अर्थात् निर्दोष होता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जलपात्रम्

जलपात्रन्तु ताम्रस्य तदभावे मृदो हितम् ।
पवित्रं शीतलं पात्रं रचितं स्फटिकेन यत् ॥
काचेन रचितं तद्वत्तथा वैडूर्यसम्भवम् ।
[भा० प्र०]

जलपात्र ताम्र का और उसके अभाव में मिट्टी का हितकारी है। स्फटिक का बना हुआ पात्र पवित्र और शीतल होता है। काँच एवं वैदूर्य का बना हुआ जलपात्र भी स्फटिक के समान ही होता है।

भोजनोपकल्पनम्

पुरस्ताद्विमले पात्रे सुविस्तीर्णे मनोरमे ।
सूदः सूपौदनं दद्यात् प्रदेहश्च सुसंस्कृतान् ॥
फलानि सर्वभक्ष्यांश्च परिशुष्काणि यानि च ।
तानि दक्षिणपार्श्वेतु भुञ्जानस्योपकल्पयेत् ॥
प्रद्रवाणि रसांश्चैव पानीयं पानकं पयः ।
खडान् यूषांश्च पेयांश्च सव्ये पार्श्वे प्रदापयेत् ॥
सर्वान् गुडविकारांश्च रागषाडवसट्टकान् ।
पुरस्तात्स्थापयेत् प्राज्ञो द्वयोरपि च मध्यतः ॥
एवं विद्याद्धि मतिमान् भोजनस्योपकल्पनम् ।
[सु० सू० अ० ४६]

रसोईदार भोक्ता के आगे निर्मल-विस्तृत और सुन्दर पात्र में दाल-भात और सुसंस्कृत लेह्य पदार्थ रक्खे। फल और सूखे भक्ष्यों को भोक्ता के दक्षिण पार्श्व में रक्खे। द्रव, रस, पानी, शर्बत, दूध, खड (खटाई), यूष और पेया बायीं ओर रक्खे। गुड़ के सभी विकार, (मिठाई) राग, षाडव, सट्टक को भोक्ता के आगे वाम और दक्षिण पार्श्व के बीच में रक्खे। इस प्रकार बुद्धिमान भोजन का उपकल्पन (समीप में परोस कर रखना) जाने।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पात्रादीनां शुद्धिः

अमेध्याक्तस्य मृत्तोयैः शुद्धिर्गन्धादिकर्षणात् ।
वाक्शस्तमम्बुनिर्णिक्तमज्ञातं च सदा शुचि ॥
[या० व०]

अमेध्य (घृणित) पदार्थों से युक्त पात्र की शुद्धि मिट्टी और जल से उसकी गन्ध नष्ट हो जाने पर होती है । वाणी द्वारा प्रमाणित, जल में डूब कर पड़ा हुआ एवं अज्ञात पात्र सर्वदा पवित्र होता है ।

तैजसानां मणीनांच सर्वस्याश्ममयस्य च ।
भस्मनाद्भिर्मृदा चैव शुद्धिरुक्ता मनीषिभिः ॥
निर्लेपं काञ्चनं भाण्डमद्भिरेव विशुध्यति ।
अब्जमश्ममयं चैव राजतं चानुपस्कृतम् ॥
अपामग्नेश्च संयोगाद्धैमं रौप्यं च निर्बभौ ।
तस्मात्तयोः स्वयोन्यैव निर्णेको गुणवत्तरः ॥
ताम्रायःकांस्यरैत्यानां त्रपुणः सीसकस्य च ।
शौचं यथार्हं कर्तव्यं क्षाराम्लोदकवारिभिः ॥
द्रवाणां चैव सर्वेषां शुद्धिराप्लवनं स्मृतम् ।
प्रोक्षणं संहतानां च दारवाणां च तक्षणम् ॥

चमकीले काचआदि तथा मणियों के एवं सभी, पत्थर के बर्तनों की शुद्धि बुद्धिमानों ने राख जल और मिट्टी से कही है । सोने का पात्र जिसमें कोई चीज सटी न हो जल से ही शुद्ध हो जाता है । जलोत्पन्न सीप आदि, पत्थर (संग दुग्ध पाषाण आदि) और चाँदी का लेप रहित पात्र भी जल से शुद्ध होता है । जल और अग्नि के संयोग से सोना, चाँदी उत्पन्न होती है इसलिये उन दोनों को उनके उत्पादक द्रव्यों से शुद्ध करना चाहिये ।

ताम्र, लोह, काँसा, पीतल, राँगा, सीसे (नाग) के पात्र की सफाई यथायोग्य क्षार तथा अम्ल के धोल और पानी से करनी चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सभी द्रवों की शुद्धि उनके ऊपरी भाग को उछाल कर निकाल देने से होती है। चिपकी अशुद्धि को पोंछने से तथा लकड़ी के पात्र की अशुद्धि थोड़ा छीलने से दूर होती है।

मार्जनं यज्ञपात्राणां पाणिना यज्ञकर्मणि।
चमसानां ग्रहाणां च शुद्धिः प्रक्षालनेन तु॥
चरूणां स्रुक्स्रुवाणां च शुद्धिरुष्णेन वारिणा।
सूर्पस्यशकटानांच मुसललोलूखलस्य च॥
अद्भिस्तु प्रोक्षणं शौचं बहूनां धान्यवाससाम्।
प्रक्षालनेन त्वल्पानामद्भिः शौचं विधीयते॥
चलवच्चर्मणां शुद्धिर्वैदलानाँ तथैव च।
शाकमूलफलानांच धान्यवच्छुद्धिरिष्यते॥
क्षौमवच्छङ्खशृङ्गाणामस्थिदन्तमयस्य च।
शुद्धिर्विजानता कार्या गोमूत्रेणोदकेन वा॥
प्रोक्षणात्तृणकाष्ठं च पलालं चैव शुध्यति।
मार्जनोपाञ्जनै र्वेश्म पुनःपाकेन मृन्मयम्॥
मद्यै र्मूत्रैः पुरीषैर्वा ष्ठीवनैः पूयशोणितैः।
संस्पृष्टं नैव शुध्येत पुनःपाकेन मृन्मयम्॥

[मनुः अ० ५]

यज्ञ कर्म में प्रयुक्त यज्ञपात्र की शुद्धि हाथ से पोंछ देने से होती है। चमस और प्रोक्षणी (एक यज्ञपात्र) की शुद्धि जल से धोने से होती है। चरू स्रुक और स्रुवा पात्र की शुद्धि उष्ण जल से होती है। सूप, छकड़ा मूसल ओखरी एवं बहुत प्रमाण के अन्न-वस्त्रों की शुद्धि जल छिड़क देने से तथा थोड़े छोटे प्रमाण के अन्न-वस्त्रों की शुद्धि पानी से धोने से होती है। चमड़ों की तथा पत्तल, बाँस की टोकरी आदि की शुद्धि वस्त्र के समान तथा शाक मूल फल की शुद्धि धान्य (अन्न) की शुद्धि के समान होती है। शंख और शृंगनिर्मित पदार्थ तथा अस्थि और दाँत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(हाथी दाँत आदि) से बनी वस्तुओं को शुद्धि क्षौम (क्षुमा अर्थात् तीसी से बने वस्त्र अंडी या नकली रेशम आदि) के समान या गोमूत्र अथवा जलसे करनी चाहिये। जल छिड़क देने से तृण, काष्ठ और पुवाल शुद्ध होता है। झाड़ने और पोतने से घर तथा दोबारा पाक कर देनेसे मिट्टीकी चीजें शुद्ध हो जाती हैं। परन्तु मद्य, मूत्र, पुरीष, थूक, पूय और रक्तसे स्पर्श की हुई मिट्टी की वस्तुएँ दुबारा पाक से भी शुद्ध नहीं होतीं।

प्रयोज्यमशनम्

विषघ्नैरगदैः स्पृष्टं प्रोक्षितं व्यजनोदकैः।
सिद्धै र्मन्त्रै र्हतविषं सिद्धमन्नं निवेदयेत्॥
विशिष्टमिष्टसंस्कारैः पथ्यैरिष्टै रसादिभिः।
मनोज्ञं शुचि नात्युष्णं प्रत्यग्रमशनं हितम्॥

(सुश्रुतः)

विषनाशक अगदों द्वारा स्पर्श कराया हुआ, पंखाका जल छिड़का हुआ, सिद्ध मन्त्रों द्वारा विष नष्ट किया गया हुआ सिद्ध अन्न खाने को देना चाहिये। मनोवांछित संस्कारों द्वारा संस्कृत, इष्ट और पथ्य रसादि से युक्त, मनःप्रिय, पवित्र, साधारण उष्ण तथा ताजा भोजन हितकारी होता है।

सात्विकादीनामशनम्

आयुःसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः॥
कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥
यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्॥

[भगवद्गीता]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आयु सत्व बल आरोग्य सुख और प्रीतिको बढ़ाने वाले (अर्थात् जिनके खानेकी सदा इच्छा बनी रहे) रसयुक्त, स्निग्ध, स्थिर, हृदय को प्रसन्न करने वाले आहार सात्विकजनों को प्रिय होते हैं। कटु, अम्ल, नमकीन, अधिक उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, विदाह-कारक आहार राजसजनों को प्रिय होते हैं। ये आहार दुःख शोक और रोग करने वाले हैं। तैयार होने के एक पहर बाद, विगत रस, दुर्गन्धित, बासी, जूठा और अपवित्र भोजन तामसजनों को प्रिय होते हैं।

मिताः स्युः सात्विकाहारा राजसाः पूर्णभोजनाः।
तामसास्त्वधिकाहारा विज्ञेयाः सात्विकादयः॥

सात्विकजन मित (नपा तुला) आहार करने वाले, राजसजन भर पेट भोजन करने वाले एवं तामसी पुरुष अधिक आहार करने वाले होते हैं।

आहारस्य षट्प्रकारत्वम्

आहारं षड्विधंश्चूष्यं पेयं लेह्यं तथैव च।
भोज्यं भक्ष्यं तथा चर्व्यं गुरु विद्याद् यथोत्तरम्॥
[भा० प्र०]

आहार छ प्रकार का होता है:—१ चूष्य, २ पेय, ३ लेह्य, ४ भोज्य, ५ भक्ष्य तथा ६ चर्व्य। ये क्रमशः उत्तरोत्तर गुरु होते हैं।

भोजनकाले भोक्तुः कर्तव्यम्

सदैवाशनवेलायां कुर्यान्माङ्गल्यदर्शनम्।
चित्तप्रमोदनं नित्यमायुर्धर्म्मविवर्धनम्॥

---

* भक्ष्यं भोज्यं लेह्यं पेयमित्याहारचतुष्टयम्। [सु]
चतुर्विधेष्वेवाहारेषु षट्प्रकरत्वसम्भवा—
द्विशेषज्ञानार्थं भावमिश्रस्यैव वचो लिखितम्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लोकेऽस्मिन् मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः ।
पुष्पस्रक् सर्पिरादित्य आपो राजा तथाष्टमः ॥

[भावमिश्रः]

सर्वदा भोजन काल में मांगलिक वस्तुओं का दर्शन करे। यह सर्वदा चित्त प्रसन्न करने वाला, आयु और धर्म को बढ़ाने वाला है।

इस लोक में आठ मंगल हैं :-१ ब्राह्मण, २ गाय, ३ अग्नि, ४ फूल की माला, ५ घी, ६ सूर्य, ७ जल और ८ राजा।

पूजयेदशनं नित्यमद्याच्चैतदकुत्सयन् ।
दृष्ट्वा हृष्येत्प्रसीदेच्च प्रतिनन्देच्च सर्वशः ॥
पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति ।
अपूजितं तु तद्भुक्तमुभयं नाशयेदिदम् ॥

[मनुः]

सर्वदा भोजन की पूजा (आदर) करनी चाहिये और बिना निन्दा किये उसे खाना चाहिये। भोजन देखकर मन में हर्षित हो, बाहर से भी प्रसन्न हो तथा उसका सब प्रकारसे अभिनन्दन करे। पूजित भोजन नित्य बल और स्फूर्ति प्रदान करता है। अपूजित भोजन बल और स्फूर्ति दोनों का नाश करता है।

आहार निर्णय विधानम्

नारत्नपाणिर्नास्नातो नोपहृतवासा नाजपित्वा नाहुत्वा देवताभ्यो नानिरूप्य पितृभ्यो नादत्वा गुरुभ्यो नातिथिभ्यो नोपाश्रितेभ्यो नापुण्यगन्धो नामाली नाप्रक्षालितपाणिपादवदनो नाशुद्धमुखो नोदङ्मुखो न विमना नाभक्ताशिष्टाशुचित्वधितपरिचरो न पात्रीष्वमेध्यासु नादेशे नाकाले नाकीर्णे नाऽदत्वाऽग्रमग्नये नाप्रोक्षितं प्रोक्षणोदकैर्न मन्त्रैरनभिमन्त्रितं न कुत्सयन्न कुत्सितं न प्रतिकूलोपहितमन्नमाददीत। न पर्युषितमन्यत्र मांसहरितशुष्क-

† भुञ्जानो न बहु ब्रूयान्ननिन्देदपि कञ्चन ।
जुगुप्सितां कथां नैव शृणुयादपि वा वदेत् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शाकफलभक्ष्येभ्यः। नाशेषभुक्स्यादन्यत्र दधिमधुलवणसलिल-सक्तुसर्पिर्भ्यः। [च० सू० अ० ८]

हाथ में बिना रत्न धारण किये, बिना स्नान किये, फटे वस्त्र पहने हुये, बिना जप किये, देवताओं के लिये बिना हवन किये, पितरों को बिना अर्पितकिये, गुरु अतिथि और आश्रितों को बिना दिये, बिना पवित्र गन्ध (इतर आदि) के, बिना माला पहने, हाथ-पैर मुँह बिना धोये, अशुद्ध मुंह, ऊपर मुंह कर, बेमन होकर, द्वेषकारी अशिष्ट, अपवित्र और भूखे परिचर के साथ न बैठकर, अपवित्र बर्त्तन में, बुरे स्थान में, असमय में, न बहुतजनोंसे भरे स्थान में, अग्नि को पहले बिना दिये, प्रोक्षण जल से बिना सींचे, मंत्रों से अभिमन्त्रित बिना किये निन्दा करते हुए, निन्दित और विरोधी द्वारा अर्पित या प्रतिकूल स्थापित अन्न नहीं खाना चाहिये। मांस, हरे सूखे, शाक फल और भक्ष्य के अतिरिक्त अन्य वस्तु बासी नहीं खानी चाहिये। दही, मधु, नमक, जल, सत्तू और घी के अतिरिक्त अन्य वस्तुओं को बिना कुछ छोड़े नहीं खाना चाहिये।

आहारविधिशेषायतनानि

तत्र खल्विमान्यष्टावाहारविधिविशेषायतनानि भवन्ति। तद्यथा प्रकृतिकरणसंयोगराशिदेशकालोपयोगसंस्थोपयोक्त्रष्टमानिभवन्ति। [च० वि० अ० १]

आहार विधि के आठ विशेष आयतन हैं :—

१—प्रकृति, २—करण, ३—संयोग, ४—राशि, ५—देश, ६—काल, ७—उपयोग संस्था और ८—उपयोक्ता (भोक्ता)।

तत्र प्रकृतिरुच्यते—स्वभावो यः, स पुनराहारौषधद्रव्याणां स्वाभाविको गुर्वादिगुणयोगः तद्यथा—माषमुद्गयोः, शूकरैणयोश्च

प्रकृति—अर्थात् स्वभाव, वह आहार और औषधि द्रव्यों का स्नाभाविक गुरु आदि गुणों का योग है। जैसे—स्वभावतः उर्द गुरु और मूंग लघु है। शूकर का मांस गुरु और हरिण का लघु है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

करणं पुनः—स्वाभाविकानां द्रव्याणामभिसंस्कारः, संस्कारो हि गुणान्तराधानमुच्यते। ते गुणाश्च तोयाग्निसन्निकर्षशौचमन्थनदेशकालवशेन भावनादिभिः कालप्रकर्षभाजनादिभिश्चाधीयन्ते।

करण—स्वाभाविक द्रव्यों के संस्कार को कहते हैं। दूसरे गुणों के आधान को संस्कार कहते है। वे गुण जल अग्नि के संयोग, सफाई, मन्थन, देश, काल के कारण, भावना आदि से तथा अधिक समय तक पात्र विशेष आदि में रक्खे रहने से होते हैं।

संयोगस्तु—द्वयोर्बहूनां वा द्रव्याणां संहतीभावः, स विशेषमारभते यन्नैकशो द्रव्याण्यारभन्ते, तद्यथा—मधुसर्पिषोः, मधुमत्स्यपयसां च संयोगः।

संयोग—दो अथवा बहुत से द्रव्यों के एकत्रीकरण को कहते हैं। वह (संयोग) विशेष कार्य करता है जो अकेले द्रव्य नहीं करते। जैसे—मधु, घी एवं मधु, मछली और दूध का संयोग विरुद्ध है।

राशिस्तु—सर्वग्रहपरिग्रहौ। मात्रामात्राफलविनिश्चयार्थः प्रकृतः। तत्र सर्वस्याहारस्य प्रमाणग्रहणमेकपिण्डेन, सर्वग्रहः, परिग्रहश्च पुनः प्रमाणग्रहणमेकैकत्वेनाहारद्रव्याणां, सर्वस्य हि ग्रहः सर्वग्रहः, सर्वतश्च ग्रहः परिग्रह उच्यते।

राशि—सर्व ग्रह और परिग्रह को कहते हैं। जो मात्रा और अमात्रा के फल का निश्चय करने के लिये बनायी गयी है। सभी आहार को मिला कर एक पिण्ड बना कर प्रमाण ग्रहण करना सर्वग्रह कहलाता है और अलग-अलग एक-एक द्रव्य का प्रमाण-ग्रहण परिग्रह कहलाता है। अर्थात् सबका एक रूप में ग्रहण सर्वग्रह और सब द्रव्यों में से अलग-अलग एक-एक का प्रमाण ग्रहण करने का नाम परिग्रह है।

देशः पुनः—स्थानं, द्रव्याणामुत्पत्तिप्रचारौ देशसात्म्यं चाचष्टे।

देश—स्थल को कहते हैं। उस स्थल से द्रव्य की उत्पत्ति और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

उसका प्रचार तथा वहाँ क्या सात्म्य है ? यह जाना जाता है ।

कालो हि—नित्यगश्चावस्थिकश्च तत्रावस्थिको विकारमपेक्षते नित्यगस्तु खल्वृतुसात्म्यापेक्षः ।

काल—यह नित्यग और आवस्थिक दो भेदों वाला होता है। आवस्थिककाल रोग की अपेक्षा करता है और नित्यग ऋतु सात्म्य की अपेक्षा करता है ।

उपयोगसंस्था—तु उपयोगनियमः, स जीर्णलक्षणापेक्षः ।

उपयोग संस्था— उपयोग के नियम को कहते हैं । जो भोजन पच-जाने के लक्षणों की अपेक्षा करता है ।

उपयोक्ता पुनः–यस्तमाहारमुपयुङ्क्ते, यदायत्तमोकसात्म्यम् ।

उपयोक्ता—जो उस आहार का उपयोग करता है । ओकसात्म्य (अभ्यास वशात् हितकर भोजन) जिसके अधीन है ।

इत्यष्टावाहारविधिविशेषायतनानि भवन्ति; एषां विशेषाः शुभाशुभफलप्रदाः परस्परोपकारका भवन्ति; तान् बुभुत्सेत, बुद्ध्वा च हितेष्सुरेव स्यात्, न च मोहात्प्रमादाद्वा प्रियमहित-मसुखोदर्कमुपसेव्यं किञ्चिदाहारजातमन्यद्वा ।

ये आठ आहारविधि के विशेष आयतन हैं । इनकी विशेषतायें शुभाशुभ फल देनेवाली और परस्पर एक-दूसरे पर उपकार करने वाली होती हैं, इन्हें समझे और समझ कर हित भोजन ही करे । मोह अथवा प्रमाद से प्रिय होने पर भी अहित और भविष्य में दुखदायी कोई आहार वा दूसरी किसी वस्तु का सेवन नहीं करना चाहिये ।

तत्रेदमाहारविधिविधानमरोगाणामातुराणां च केषांचित्काले प्रकृत्यैव हिततमं भुञ्जानानां भवति—उष्णं स्निग्धं मात्रावज्जीर्णे वीर्याविरुद्धमिष्टे देशे इष्टसर्वोपकरणं नातिद्रुतं नातिविलम्बितं न जल्पन्नहसंस्तन्मना भुञ्जीतात्मानमभिसमीक्ष्य सम्यक् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यह आहार विधि विधान समय पर प्रकृत्यैव हिततम भोजन करने वाले स्वस्थ या रोगी कोई हों, दोनों के लिये है। वह यह कि उष्ण, स्निग्ध, मात्रा युक्त, पच जाने पर, अविरुद्ध वीर्य वाला, प्रिय स्थल में, अभीष्ट साधनों से युक्त भोजन करना चाहिए। अधिक तेजी से, अधिक देर से, बकवाद करते हुए और अधिक हँसते हुए भोजन नहीं करना चाहिये। अपनी प्रकृति आदि को अच्छी तरह देखकर तल्लीन होकर भोजन करे।

तस्य सद्गुण्यमुपदेक्ष्यामः—उष्णमश्नीयात्; उष्णं हि भुज्यमानं स्वदते, भुक्तं चाग्निमौदर्यमुदीरयति, क्षिप्रं च जरां गच्छति, वातं चानुलोमयति, श्लेष्माणं च परिशोषयति, तस्मादुष्णमश्नीयात्।

उसका सद्गुण कह रहे हैं:—उष्ण भोजन करना चाहिये क्योंकि उष्ण भोजन स्वादिष्ट लगता है, वह भोजन पेट की अग्नि को तेज करता है। शीघ्र पच जाता है वायु को अनुलोम करता है और कफ को सुखाता (क्षीण करता) है। अतः उष्ण भोजन करना चाहिये।

स्निग्धमश्नीयात्—स्निग्धं हि भुज्यमानं स्वदते, भुक्तमौदर्यमग्निमुदीरयति, क्षिप्रं जरां गच्छति, वातमनुलोमयति, दृढीकरोति शरीरोपचयं, बलाभिवृद्धिं चाभिजनयति, वर्णप्रसादमपि चाभिनिर्वर्तयति, तस्मात्स्निग्धमश्नीयात्।

स्निग्ध भोजन करना चाहिए। क्योंकि वह स्वादिष्ट होता है। जाठराग्नि को तेज करता है। जल्दी पच जाता है वायु को अनुलोम करता है। शरीर की पुष्टि को दृढ़ करता है, बल बढ़ाता है और रंग को निखार देता है। इसलिये स्निग्ध भोजन खाना चाहिये।

मात्रावदश्नीयात्—मात्रावद्धि भुक्तं वातपित्तकफानप्रपीडयदायुरेव विवर्धयति केवलं, सुखं गुदमनुपर्येति, न चोष्माणमुपहन्ति, अव्यथं च परिपाकमेति, तस्मान्मात्रावदश्नीयात्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मात्रायुक्त भोजन करना चाहिये। क्योंकि मात्रापूर्वक किया हुआ भोजन वात पित्त कफ को दूषित न करते हुए पूर्ण आयु को बढ़ाता है। पच कर मलद्वार में सुख पूर्वक चला आता है। अग्नि को नष्ट नहीं करता। निरापद पच जाता है। इसलिये मात्रा पूर्वक भोजन करना चाहिये।

मात्राशीꣳस्यात्। आहारमात्रा पुनरग्निबलापेक्षिणी। यावद्धयस्याशनमशितमनुपहत्य प्रकृतिं यथाकालं जरां गच्छति तावदस्य मात्राप्रमाणं वेदितव्यं भवति।

तत्र शालिषष्टिकमुद्गलावकपिञ्जलैणशशशरभशम्बरादीन्याहारद्रव्याणि प्रकृतिलघून्यपि मात्रापेक्षीणि भवन्तिः, तथा पिष्टेक्षुक्षीरविकृतिमाषानूपौदकपिशितादीन्याहारद्रव्याणि प्रकृतिगुरूण्यपि मात्रामेवापेक्षन्ते।

मात्रा पूर्वक भोजन करना चाहिये। आहार मात्रा अग्नि बल के अनुसार होती है। पुरुष का जितना खाया हुआ अन्न प्रकृति को बिना बाधा पहुँचाये यथासमय पच जाय उतना अन्न उस मनुष्य की आहारमात्रा का प्रमाण जानना चाहिये। शालि-साठी, मूँग, लवापक्षी, तीतर, मृग, खरगोश, सावर मृग, बारहसिंगा आदि का मांस स्वभावतः लघु आहार द्रव्य होते हुये भी मात्रा पर निर्भर रहते हैं और पिट्ठी, ईख के रस (चीनी गुड़ आदि), दूध के विकार (रावड़ी मलाई खोवा दही आदि) उरद, आनूप और जलीय मांस इत्यादि स्वभावतः गुरु आहार द्रव्य भी मात्रा पर निर्भर हैं।

ꣳ मात्राशी सर्वकालं स्यान्मात्रा ह्यग्नेः प्रवर्तिका।
मात्रा द्रव्याण्यपेक्षन्ते गुरूण्यपि लघूनि च॥
गुरूणामर्धसौहित्यं लघूनां नातितृप्तिता।
मात्राप्रमाणंनिर्दिष्टं सुखं यावद्विजीर्यति॥ (वा०)
यच्छक्यं ग्रसितुं ग्रस्यं ग्रस्तं परिणमेच्च यत्।
हितंच परिणामे यत्तदाद्यं भूतिमिच्छता॥ (महाभारतः)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

न चैवमुक्ते द्रव्ये गुरुलाघवमकारणं मन्येत। लघूनि हि द्रव्याणि वाय्वग्निगुणबहुलानि भवन्ति, पृथ्वीसोमगुणबहुलानीतराणि; तस्मात्स्वगुणादपि लघून्यग्निसंधुक्षणस्वभावान्यल्पदोषाणि चोच्यन्तेऽपि सौहित्योपयुक्तानि, गुरूणि* पुनर्नाग्निसंधुक्षणस्वभावान्यसामान्यादतश्चातिमात्रं दोषवन्ति सौहित्योपयुक्तान्यन्यत्र व्यायामाग्निबलात्; सैषा भवत्यग्निबलापेक्षिणी मात्रा।

इस प्रकार आहार को मात्रा पर ही निर्भर कर देने से गुरुता लघुता का विचार व्यर्थ नहीं मानना चाहिये। क्योंकि लघु द्रव्य वात अग्नि गुण बहुल होते हैं और गुरु द्रव्य पृथ्वी-जल प्रधान होते हैं। इसलिये अपने गुण से भी लघु अन्न भरपेट खाये जाने पर भी अग्नि को दीप्त करने वाले होने से अल्प दोष वाले ही होते हैं। परन्तु गुरु अन्न स्वभावतः अग्नि तेज करने वाला न होने से तथा असमान गुण वाला होने से भर पेट खाये जाने पर बिना व्यायाम तथा अग्नि बल के अत्यन्त दोष वाले होते हैं। अतः आहार मात्रा अग्नि बल पर ही निर्भर है। †

न च नापेक्षते द्रव्यम्। द्रव्यापेक्षया च त्रिभागसौहित्यमर्धसौहित्यं वा गुरूणामुपदिश्यते। लघूनामपि च नातिसौहित्यमग्नेर्युक्त्यर्थम्। मात्रावद्भ्यशनमशितमनुपहत्य प्रकृतिं बलवर्णसुखायुषा योजयत्युपयोक्तारमवश्यमिति।

मात्रा द्रव्य पर निर्भर नहीं है, ऐसा नहीं समझना चाहिये। द्रव्य के अनुसार गुरु अन्न का भी त्रिभाग सौहित्य (पूर्ण मात्रा का $\frac{1}{3}$) अथवा अर्ध सौहित्य (पूर्ण मात्रा का $\frac{1}{2}$) ही खाना चाहिये। अग्नि को ठीक

---

* मन्दानलो नरो द्रव्यमात्रागुरु विवर्जयत्।
स्वभावतश्च गुरु यत्तथा संस्कारतो गुरु॥
मात्रागुरुस्तु मुद्गादिः माषादिः प्रकृतेर्गुरुः।
संस्कारगुरु पिष्टान्नं प्रोक्तमित्युपलक्षणम्॥

† दोषाग्नयः खराहाराः कर्मनित्या महोदराः।
ये नराः प्रति तांश्चिन्त्यं नावश्यं गुरु लाघवम्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

रखने के लिये लघु द्रव्यों को भी अधिक भर पेट नहीं खाना चाहिये। क्योंकि मात्रा पूर्वक किया हुआ भोजन प्रकृति को बिना बाधा पहुँचाये भोक्ता को बलवर्ण और सुखद आयु से अवश्य युक्त करता है।

त्रिविधंॐकुक्षौ स्थापयेदवकाशांशमाहारस्याहारमुपयुञ्जानः तद्यथा—एकमवकाशांशं मूर्तानामाहारविकाराणां, एकं द्रवाणां, एकं पुनर्वातपित्तश्लेष्मणाम्। एतावतीं ह्याहारमात्रामुपयुञ्जानो नामात्राहारजं किंचिदशुभं प्राप्नोति।

न च केवलं मात्रावत्त्वादेवाहारस्य कृत्स्नमाहारफलसौष्ठवमवाप्तुं शक्यं, प्रकृत्यादीनामष्टानामाहारविधिविशेषायतनानां प्रविभक्तफलत्वात्।

भोक्ता आहार के लिये पेट में तीन हिस्से की कल्पना करे। एक हिस्सा ठोस आहार द्रव्यों के भरने के लिये, दूसरा हिस्सा द्रव द्रव्यों के भरने के लिये और तीसरा हिस्सा वात पित्त कफ के संचार के लिये खाली रक्खे। इस प्रकार आहार मात्रा उपयोग करने वाला, अमात्रा जनित विकार नहीं प्राप्त करता। केवल मात्रायुक्त आहार करने से ही समस्त आहारफल नहीं प्राप्त कर सकते। क्योंकि प्रकृति आदि आहार विधि के आठ विशेषायतनों के अलग-अलग प्रयोजन बताये गये हैं।

तत्र तावदाहारराशिमधिकृत्य मात्रामात्राफलविनिश्चयार्थः प्रकृतः, एतावानेव ह्याहारराशिविधिविकल्पो; यावन्मात्रावत्त्वममात्रावत्त्वं च।

आहार राशि के आधार पर मात्रा और अमात्रा जनित फल का निश्चय किया गया है। जहाँ तक मात्रा और अमात्रा का प्रश्न है यही आहार राशिविधि की कल्पना है।

ॐ अन्नेन कुक्षे द्वविंशौ पानेनैकम् प्रपूरयेत्।
आश्रयं पवनादीनां चतुर्थमवशेषयेत्॥
(वाग्भटः)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तत्र मात्रावत्त्वं पूर्वमुपदिष्टं कुक्ष्यंशविभागेन, तद्भूय, विस्तरेणानुव्याख्यास्यामः, तद्यथा कुक्षेरप्रपीड़नमाहारेण हृदयस्यानवरोधः, पार्श्वयोरविपाटनं, अनतिगौरवमुदरस्य, प्रीणनमिन्द्रियाणां, क्षुत्पिपासोपरमः, स्थानासनशयनगमन-प्रश्वासोच्छ्वासहास्यसंकथासु च सुखानुवृत्तिः, सायं प्रातश्च-सुखेन परिणमनं, बलवर्णोपचयकरत्वं चेति मात्रावतो लक्षण-माहारस्य भवति ।

कुक्षि के तीन विभागोंसे आहारकी मात्रा पहले कही जा चुकी है। उसे पुनः विस्तार से कह रहे हैं—आहार के कारण पेट पर दबाव न होना, हृद्गति में रुकावट न पड़ना, पसली में फटने जैसी पीड़ा न होना, उदर का अधिक भारी न होना, इन्द्रियों का तृप्त होना, भूख प्यास की शान्ति, खड़े होने, बैठने, लेटने, गमन, प्रश्वास उच्छ्वास, हँसी और बोलने चालने में बाधा न होना, सायं प्रातः सुख पूर्वक पच जाना, और बल वर्ण उपचय की वृद्धि करना, मात्रायुक्त खाये गये आहार का लक्षण है।

अमात्रावत्त्वं पुनर्द्विविधमाचक्षते—हीनमधिकं चेति, तत्र हीनमात्रमाहारराशिं बलवर्णोपचयक्षयकरमतृप्तिकरमुदावर्तकर-मवृष्यमनायुष्यमनोजस्यं शरीरमनोबुद्धीन्द्रियोपघातकरं सार-विधमनमलक्ष्म्यावहमशीतेश्च वातविकाराणामायतनमाचक्षते ।

अमात्रा युक्त भोजन दो प्रकार के होते हैं:—कम और अधिक। कम मात्रा में किया गया आहार बल-वर्ण और उपचय का क्षय करने वाला, तृप्ति न करने वाला; उदावर्त करने वाला, अवृष्य, आयु एवं ओज के लिये हितकारी नहीं होता। शरीर मन और ज्ञानेन्द्रियों को उपहत करने वाला, सार को नष्ट करने वाला, कान्ति क्षीण करने वाला एवं अस्सी प्रकार के वातविकारों को उत्पन्न करने वाला होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अतिमात्रं† पुनः सर्वदोषप्रकोपणमिच्छन्ति सर्वकुशलाः।
[च०]

सभी चतुर-जन अति मात्रा में प्रयुक्त आहार को सभी दोषों को कुपित करने वाला कहते हैं।

जीर्णेऽश्नीयात्-अजीर्णे* हि भुञ्जानस्याभ्यवहृतमाहारजातं पूर्वस्याहारस्य रसमपरिणतमुत्तरेणाहाररसेनोपसृजन्सर्वान् दोषान् प्रकोपयत्याशु, जीर्णे तु भुञ्जानस्य स्वस्थानस्थेषु दोषेष्वग्नौ चोदीर्णे जातायां च बुभुक्षायां विवृतेषु च स्रोतसां मुखेषूद्गारे विशुद्धे च हृदये वातानुलोम्ये विसृष्टेषु च वातमूत्रपुरीषवेगेष्वभ्यवहृतमाहारजातं सर्वशरीरधातूनप्रदूषयदायुरेवाभिवर्धयति केवलं तस्माज्जीर्णेऽश्नीयात्।

भोजन के पच जाने पर खाना चाहिये। क्योंकि अजीर्ण में खाया हुआ समस्त अन्नका रस—पूर्व आहार के अपरिपक्व आहाररस से मिलकर शीघ्र ही सभी दोषों को कुपित करता है। अन्न पच जाने पर भोजन करने से दोषों के अपने स्थान में रहने, अग्नि तेज होने, भूख लगने, स्रोतोमुख खुले रहने, उद्गार शुद्ध आने, हृदय शुद्ध होने; वातानु-लोमन होने से और वात-मूत्र-पुरीष के निकल जाने पर खाया हुआ अन्न शरीर की सभी धातुओं में किसी प्रकार की बाधा पहुँचाये विना सम्पूर्ण आयु को बढ़ाता है। इसलिये पचजाने पर ही भोजन करना चाहिए।

---

† अनात्मवन्तः पशुवद् भुञ्जते येऽप्रमाणतः।
रोगानीकस्य ते मूलमजीर्णं प्राप्नुवन्ति हि॥
(माधवकरः)

* ग्लानिर्गौरवविष्टम्भभ्रममारुतमूढ़ताः।
विबन्धो वा प्रवृत्तिर्वा समान्याजीर्णलक्षणम्॥
(मा० नि०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वीर्याविरुद्धमश्नीयात्—अविरुद्धवीर्यमश्नन् हि न विरुद्धवीर्याहारजैर्विकारैरयमुपसृज्यते, तस्माद्वीर्याविरुद्धमश्नीयात्।

अविरुद्ध वीर्य वाले आहारद्रव्य का उपयोग करना चाहिये। मनुष्य उस प्रकार आहार द्रव्य का उपयोग करने से विरुद्ध वीर्य युक्त आहार जन्य विकार से ग्रसित नहीं होता। इसलिये अविरुद्ध वीर्य वाले आहार का उपयोग करना चाहिये।

इष्टे देशेऽश्नीयात्—इष्टे हि देशे भुञ्जानो नानिष्टदेशजैर्मनोविघातकरैर्भावैर्मनोविघातं प्राप्नोति, तथेष्टैः सर्वोपकरणैः, तस्मादिष्टे देशे तथेष्टसर्वोपकरणं चाश्नीयात्।

मनोनुकूल स्थानमें भोजन करना चाहिये। क्योंकि वहाँ भोजन करने से अनिष्ट स्थल में उत्पन्न मन को अप्रसन्न करने वाले भावों से मन में विघात नहीं होता। और इसी प्रकार मनोनुकूल सभी सामग्री होने से मन में ग्लानि नहीं होती। इसलिये मनोनुकूल स्थान में और मनोनुकूल सामग्री के साथ भोजन करना चाहिये।

नातिद्रुतमश्नीयात्—अतिद्रुतं हि भुञ्जानस्योत्स्नेहनं, अवसदनं, भोजनस्याप्रतिष्ठानं, भोज्यदोषसाद्गुण्योपलब्धिश्च न नियता, तस्मान्नातिद्रुतमश्नीयात्।

अत्यन्त शीघ्र भोजन नहीं करना चाहिये। क्योंकि बहुत शीघ्र भोजन करने से आहारस्नेह का प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता। सुस्ती होती है। पेट में उसकी ठीक स्थिति नहीं रहती। और भोजन के दोष और गुण का प्रभाव भी निश्चय नहीं होता। इसलिये अत्यन्त जल्दी नहीं खाना चाहिये।

नातिविलम्बितमश्नीयात्—अतिविलम्बितं हि भुञ्जानो न तृप्तिमधिगच्छति, बहु भुंक्ते, शीतीभवति चाहारजातं विषमपाकं च भवति, तस्मान्नातिविलम्बितमश्नीयात्।

अधिक देर तक भोजन नहीं करना चाहिये। क्योंकि बहुत देर तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भोजन करने वाला सन्तुष्ट नहीं होता। बहुत खा जाता है। समस्त आहार ठण्डा हो जाता है। आहार पाक विषम हो जाता है। इसलिये अधिक देर तक भोजन नहीं करना चाहिये।

अजल्पन्नहसंस्तन्मना भुञ्जीत—जल्पतो हसतोऽन्यमनसो वा भुञ्जानस्य त एव हि दोषा भवन्ति य एवातिद्रुतमश्नतः, तस्मादजल्पन्नहसंस्तन्मना भुञ्जीत।

बिना बकवाद और बिना हँसे तल्लीन होकर भोजन करना चाहिये। क्योंकि बकवाद करते, हँसते एवं अन्यमनस्क होकर भोजन करने वालों को वे ही दोष होते हैं जो अत्यन्त शीघ्रता से खाने से होते हैं। इसलिये बिना बकवाद, बिना हँसे, तल्लीन मन हो भोजन करना चाहिये।

आत्मानमभिसमीक्ष्य भुञ्जीत सम्यक्—इदं ममोपशेते, इदं नोपशेते इति, विदितं ह्यस्य आत्मन आत्मसात्म्यं भवति, तस्मादात्मानमभिसमीक्ष्य भुञ्जीत सम्यगिति।

[च० वि० अ० १]

अपनी प्रकृति आदि को अच्छी तरह देख करके भोजन करना चाहिये कि यह हमें स्वास्थ्यकर है या हानिकर है। इससे अपने लिये क्या सात्म्य है? इसका ज्ञान हो जाता है। इसलिये अपने को अच्छी तरह देखकर भलीभाँति भोजन करे।

द्वादशाशनप्रविचाराः

तत्र शीतोष्णस्निग्धरूक्षद्रवशुष्कैककालिकद्विकालिकौषधयुक्तमात्राहीनदोषप्रशमनवृत्त्यर्थाः।

भोजन करने के बारह प्रविचार होते हैं :—शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, द्रव, शुष्क, एककालिक, द्विकालिक, औषधि-युक्त, मात्राहीन, दोष शामक और वृत्त्यर्थ (जीवन धारण के लिये)।

तृष्णोष्णमददाहार्तान् रक्तपित्तविषातुरान्।
मूर्च्छार्तान् क्षीपु च क्षीणान् शीतैरन्नैरुपाचरेत्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्यास, उष्णता, मद (नशा), दाह, रक्तपित्त, विष और मूर्छा से पीड़ित एवं स्त्री प्रसंग से क्षीण लोगों का उपचार शीतल अन्न से करे।

कफवातामयाविष्टान् विरिक्तान् स्नेहपायिनः।
प्रक्लिन्नदेहांश्च नरानुष्णैरन्नैरुपाचरेत्॥

कफ और वायुके रोगों से युक्त, विरेचन किये हुए, स्नेहपान करने वाले एवं क्लिन्न देहवाले लोगों का उपचार उष्ण अन्न से करे।

वातिकान् रूक्षदेहांश्च व्यायामोपहतांस्तथा।
व्यायामिनश्चापि नरान् स्निग्धैरन्नैरुपाचरेत्॥

वात प्रधान, रूक्ष देह वाले व्यायाम (श्रम) से पीड़ित और नित्य व्यायाम करने वाले मनुष्यों का उपचार स्निग्ध भोजन से करे।

मेदसाभिपरीतांस्तु स्निग्धान् मेहातुरानपि।
कफाभिपन्नदेहांश्च रूक्षैरन्नै रुपाचरेत्॥

चर्बी से भरे हुए, स्निग्ध, प्रमेह से पीड़ित और कफयुक्त देह वाले पुरुषों का उपचार रूक्ष भोजन से करे।

शुष्कदेहान् पिपासार्तान् दुर्बलानपि च द्रवैः।
प्रक्लिन्नकायान् व्रणिनः शुष्कैर्मेहिनमेवच॥

सूखी देह वाले, प्यासे और दुर्बलों का द्रव भोजन से उपचार करे। क्लिन्न देह वाले, व्रण और प्रमेह के रोगियों का उपचार सूखे भोजन से करे।

एककालं भवेत् देयो दुर्बलाग्निविवृद्धये।
समाग्नये तथाऽऽहारोदेयः कालमथोभयम्॥

दुर्बल अग्नि को बढ़ाने के लिये एक समय भोजन देना चाहिये। सम अग्नि वाले पुरुष को दोनों समय भोजन देना चाहिये।

औषधद्वेषिणे देयस्तथौषधसमायुतः।
मन्दाग्नये रोगिणे च मात्राहीनः प्रशस्यते॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

औषधि से द्वेष करने वाले को औषधि मिलाकर भोजन देना चाहिये। मन्दाग्नि वाले और रोगी पुरुष को मात्रा में कम भोजन देना चाहिये।

यथुर्तुदत्तश्चाहारो दोषप्रशमनः स्मृतः।
अतः परन्तु स्वस्थानां वृत्त्यर्थं सर्वमेव च॥
प्रविचारानिमानेवं द्वादशात्र प्रयोजयेत्।
[सु० उ० अ० ६४]

ऋतु के अनुसार दिया हुआ आहार दोषशामक कहा गया है। इसके अतिरिक्त स्वस्थ पुरुषों को जीवन धारण करने के लिये सब प्रकार का भोजन दिया जा सकता है।

इस प्रकार भोजन के बाहर प्रविचारों का प्रयोग करे।

दृष्टिदोषविनाशाय ब्रह्मादीनांस्मरणम्

अन्नं ब्रह्मा रसो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः।
इति सञ्चिन्त्य भुञ्जानं दृष्टिदोषो न बाधते॥
अञ्जनीगर्भसम्भूतं कुमारं ब्रह्मचारिणम्।
दृष्टिदोषविनाशाय हनुमन्तं नमाम्यहम्॥

अन्न ब्रह्मा है, रस विष्णु है, भोक्ता शंकर भगवान हैं। ऐसा सोच कर भोजन करने वाले को दृष्टिदोष (नजर) पीड़ित नहीं करता।

दृष्टिदोष नाश करने के लिये अञ्जनी के गर्भ से उत्पन्न ब्रह्मचारी कुमार श्री हनुमानजी को हम नमस्कार करते हैं। इस मन्त्र को भोजन के समय पहिले पढ़ लेना चाहिये।

भोजनक्रमः†

पूर्वं मधुरमश्नीयान्मध्येऽम्ललवणौ रसौ।
पश्चाच्छेषान् रसान् वैद्यो भोजनेष्ववचारयेत्॥

† मधुरमधुरमादौ मध्यतोऽम्लैकभावः,
कटुकटुकमथान्ते तिक्ततिक्तं तथैव।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भोजन में पहले मधुर, मध्य में अम्ल और लवण-रस, उसके बाद शेष (कटुतिक्त कषाय) रसों का प्रयोग करे।

आदौ फलानि भुञ्जीत दाडिमादीनि बुद्धिमान्।
ततः पेयांस्ततो भोज्यान् भक्ष्यांश्चित्रांस्ततः परम्॥

बुद्धिमान पहले अनार आदि फलों को, उसके बाद पेय पदार्थों को तत्पश्चात् भाँति-भाँति के भोज्य और भक्ष्य पदार्थ खाये।

घनं पूर्वं समश्नीयात् केचिदाहुर्विपर्ययम्।

पहले घन (ठोस) पदार्थ खाना चाहिये। कुछ लोग इसके विपरीत अर्थात् पहले द्रव खाना चाहिये, कहते हैं।

आदावन्ते च मध्ये च भोजनस्य तु शस्यते॥
निरत्ययं दोषहरं फलेष्वामलकं नृणाम्।
मृणालबिसशालूककन्देक्षुप्रभृतीनि च॥
पूर्वं योज्यानि भिषजा नतु भुंक्ते कदाचन। [सु०]

फलों में आँवला निरापद और दोषरहित है। वह भोजन के आदि अन्त और मध्य में हितकारी है।

वैद्य को चाहिये कि वह कमल का डण्ठल, कमल की जड़, कन्द और ईख (मिठाई) आदि को भोजन में पहले ही सेवन करावे। भोजन कर लेने पर कभी नहीं।

गुरु पिष्टमयं द्रव्यं तण्डुलान् पृथुकानपि।
न जातु भुक्तवान् खादेन्मात्रां खादेद्बुभुक्षितः॥

[चरकः]

गुरु, पिट्ठी के पदार्थ, चूड़ा कभी भी भोजन के बाद नहीं खाना चाहिये। भूख लगने पर भी इन्हें अल्प मात्रा में ही खाना चाहिये।

घृतपूर्वं समश्नीयात्कठिनं प्राक् ततो मृदु।
अन्ते पुनर्द्रवाशी तु बलाद्रोगैः प्रमुच्यते॥

[भावमिश्रः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

घृत लगाकर कठिन द्रव्य (रोटी आदि) पहले तत्पश्चात् मृदु द्रव्य (भात आदि) सेवन करे। अन्त में द्रव भोजन करने वाला बलपूर्वक रोग से मुक्त होता है। यह आचार्य भाव मिश्र का मत है।

भोजनाग्रे सदा पथ्यं लवणार्द्रकभक्षणम्।
अग्निसन्दीपनं रुच्यं जिह्वाकण्ठविशोधनम्॥
कुर्यात् क्षीरान्तकंमाहारं न दध्यन्तं कदाचन।
लवणाम्लकटूष्णानि विदाहीन्यत्ति यानि तु॥
तद्दोषहर्तुमाहारं मधुरेण समापयेत्।

[भावमिश्रः]

भोजन के पहले आदी नमक खाना सर्वदा हितकर है। यह अग्नि-दीपक, रुचिकारक तथा जीभ, कण्ठ को शुद्ध करने वाला है।

आहार के अन्त में दूध पीना चाहिये। अन्त में दही कभी नहीं खाना चाहिये। क्योंकि लवण, अम्ल, कटु, उष्ण और जो कुछ विदाही पदार्थ खाया जाता है उसके दोष का निवारण करने के लिये आहार को मधुर पदार्थ खाकर समाप्त करना चाहिये।

यद्यत्स्वादुतरं तत्तद्विद्ध्यादुत्तरोत्तरम्।

[सु० सू० अ० ४६]

जो जो अधिक स्वादिष्ट हो उसे उत्तरोत्तर खाना चाहिये।

यदि सुखपरिणामं वांच्छसि त्वं हि राजन्।
त्यज खलजनसङ्गं भोजनं मा कदाचित्॥

[क्षे० कु०]

॥भोजनान्ते पिवेत्तक्रं वासरान्ते पयः पिवेत्।
निशान्ते च पिवेद्वारि त्रिभी रोगो न जायते॥

[भा० प्र०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भोजनस्यायोगहीनयोगातियोगमिथ्यायोगे दोषाः

नाभोजनेन कायाग्निर्दीप्यते नातिभोजनात् ।
यथानिरिन्धनो वह्निरल्पो वातीन्धनावृतः ॥

[चरकः]

बिलकुल न भोजन करने अथवा अधिक भोजन करने से कायाग्नि दीप्त नहीं होती । जिस प्रकार कि थोड़ी अग्नि बिना ईंधन के अथवा अधिक ईंधन छोड़ देने से दीप्त नहीं होती ।

हीनमात्रमसन्तोषं करोति च बलक्षयम् ।
आलस्यगौरवाटोपसादांश्च कुरुतेऽधिकम् ॥

[सुश्रुतः]

कम मात्रा में किया हुआ भोजन असन्तोष और बलक्षीणता करता है तथा अधिक मात्रा वाला भोजन आलस्य, भारोपन, गुड़गुड़ाहट और सुस्ती करता है ।

भोजनं हीनमात्रन्तु न बलोपचयौजसे ।
सर्वेषां वातरोगाणां हेतुतां च प्रपद्यते ॥
अतिमात्रं पुनः सर्वमाशु दोषं प्रकोपयेत् ।

[चे० कु०]

हीनमात्रावाला भोजन बल, पुष्टि और ओज के लिए नहीं होता, वह सभी वात रोगों का कारण बनता है एवं अधिक मात्रा में किया हुआ आहार शीघ्र सब दोषों को कुपित करता है ।

अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्यं चातिभोजनम् ।
अपुण्यं लोकविद्विष्टं तस्मात्तत्परिवर्जयेत् ॥

[मनुः]

अति भोजन अस्वास्थ्यकर, आयुहीन करने वाला, स्वर्ग (सुख) के लिये अहित, पापमय और संसार द्वारा निन्दित है । इसलिये उसे त्याग

CC-0. RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

देना चाहिये ।

पथ्यापथ्यमिहैकत्र भुक्तं समशनं मतम् ।
विषमं बहु वाऽल्पं वाप्यप्राप्तातीतकालयोः ॥
भुक्तं पूर्वान्नशेषे तु पुनरध्यशनं मतम् ।
त्रीण्यप्येतानि मृत्युं वा घोरान् व्याधीन् सृजन्ति वा

[च० वि० अ० १५

पथ्य और अपथ्य दोनों एकत्र कर भोजन करना समशन कहलाता है । बहुत या कम, समय के पूर्व या समय बीत जाने पर भोजन करना विषमाशन कहलाता है । पहले वाले भोजन के न पचने पर भी किया हुआ भोजन अध्यशन कहा गया है । ये तीनों मृत्यु या घोर व्याधियाँ उत्पन्न करते हैं ।

प्रायेणाहारवैषम्यादजीर्णं जायते नृणाम् ।
तन्मूलो रोगसङ्घातस्तद्विनाशाद्विनश्यति ॥

[यो० र०

प्रायः आहार की विषमता से मनुष्यों को अजीर्ण होता है । वह रोगों का मूल है । अतः उसके नष्ट होने से रोगों का समूह नष्ट होता है ।

प्रशस्यं भोजनम्

तस्मात् सुसंस्कृतं युक्त्या दोषैरेतैर्विवर्जितम् ।
यथोक्तगुणसम्पन्नमुपसेवेत भोजनम् ॥
विभज्य दोषकालादीन् कालयोरुभयोरपि ।
सुखमुच्चैः समासीनः समदेहोऽन्नतत्परः ॥

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः ।
नचातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥
युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥

[भगवद्गीता

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

काले सात्म्यं लघु स्निग्धं क्षिप्रमुष्णं द्रवोत्तरम् ।
बुभुक्षितोऽन्नमश्नीयात् मात्रावद्विदितागमः ॥
काले भुक्तं प्रीणयति सात्म्यमन्नं न बाधते ।
लघु शीघ्रं व्रजेत् पाकं स्निग्धोष्णं बलवह्निदम् ।
क्षिप्रं भुक्तं समंपाकं यात्यदोषं द्रवोत्तरम् ॥
सुखं जीर्यति मात्रावद्धातुसाम्यं करोति च ॥

[सु०]

इसलिए युक्तिपूर्वक संस्कार किया हुआ, इन उपर्युक्त दोषों से रहित, यथोक्त गुण युक्त, भोजन सेवन करना चाहिये। दोषों और समय आदि का विभाग कर दोनों समय उच्चासन पर सुखपूर्वक बैठकर समदेह, अन्न में तल्लीन होकर भूंख लगने पर यथासमय शास्त्रानुसार मात्रापूर्वक अपने अनुकूल, हलका, चिकना, ताजा, गरम, द्रवप्रधान भोजन करे। यथासमय खाया हुआ अन्न तृप्त करता है, अपने अनुकूल अन्न पीड़ित नहीं करता। हलका शीघ्र पच जाता है, स्निग्ध और उष्ण-अन्न बल एवं वह्नि को बढ़ाता है। ताजा भोजन शीघ्र पचता है, द्रवप्रधान दोष रहित होता है और मात्रायुक्त अन्न सुखपूर्वक पचता है एवं धातुओं को सम करता है।

भोजनस्य सुस्वादुत्वे मुखप्रक्षालनम्

प्रक्षालयेदद्भिरास्यं भुञ्जानस्य मुहुर्मुहुः ।
विशुद्धरसने तस्मै रोचतेऽन्नमपूर्ववत् ॥
स्वादुना तस्य रसनं प्रथमेनातितर्पितम् ।
न तथा स्वादयेदन्यत् तस्मात् प्रक्षाल्यमन्तरा ॥
सौमनस्यं बलं पुष्टिमुत्साहं हर्षणं सुखम् ।
स्वादु सञ्जनयत्यन्नमस्वादु च विपर्ययम् ॥
भुक्त्वाऽपि यत्प्रार्थयते भूयस्तत् स्वादु भोजनम् ॥

[सु० सू० अ० ४६]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भोजन करते समय भोक्ता एक प्रकार का पदार्थ खा लेने पर दू
प्रकार का खाते वक्त मुँह को बारम्बार पानी से धोये अर्थात् पानी
घूंट पी लेवे। इससे जिह्वा शुद्ध हो जाने पर अन्न अपूर्व की भाँति रु
कारक हो जाता है। पहले के स्वाद से अत्यन्त तृप्त जिह्वा दूसरे
का स्वाद पूर्ववत् नहीं ग्रहण करती। इसलिये बीच-बीच में
धोना चाहिये। स्वादिष्ट आहार मन की प्रसन्नता, बल, पुष्टि, उत्सा
हर्ष और सुख उत्पन्न करता है। अस्वादिष्ट अन्न इनके विपरीत कर
है। खाने के बाद भी जिसके पुनः खाने की इच्छा बनी रहे
स्वादिष्ट भोजन कहा जाता है।

सञ्जातबुभुक्षायामनशने हानिः

बुभुक्षितो न योऽश्नाति तस्याहारेन्धनक्षयात्।
मन्दो भवति कायाग्निर्यथा चाग्निर्निरिन्धनः॥
आहारं पचति शिखी दोषानाहारवर्जितः पचति।
दोषक्षयेऽपि धातून् पचति च धातुक्षये प्राणान्॥

[क्षे० कु०]

भूखा रहने पर भी जो भोजन नहीं करता उसकी कायाग्नि आहा
रूपी इन्धन का क्षय हो जाने से इन्धनरहित अग्नि की भाँति मन्द प
जाती है। कायाग्नि आहार पचाती हैं। उसके समाप्त हो जाने पर दो
को पचाती है। दोष-क्षय होने पर धातुओं को एवं धातु-क्षय होने प
प्राणों को पचाती है।

भोजनेच्छाविघातात्स्यादङ्गमर्दोऽरुचिर्भ्रमः।
तन्द्रा लोचनदौर्बल्यं धातुदाहो बलक्षयः॥

[भा० प्र०]

भोजन की इच्छा मारने से अंगमर्द, अरुचि, चक्कर, उहांई,
दौर्बल्य, रसादि धातु में दाह एवं बलक्षय होता है।

निषिद्धं भोजनम्

अचोक्षं दुष्टमुत्सृष्टं पाषाणतृणलोष्टवत्।
द्विष्टं व्युषितमस्वादु पूति चान्नं विवर्जयेत्॥

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चिरसिद्धं स्थिरं शीतमन्नमुष्णीकृतं पुनः ।
अशान्तमुपदिग्धं च तथा स्वादु न लक्ष्यते ॥

[सु० सू० अ० ४६]

अपवित्र, दूषित, जूठा, पत्थर-तृण-मिट्टी से युक्त, मन को अप्रिय, बासी, अस्वादिष्ट और दुर्गंधित अन्न त्याग देना चाहिये ।

देर से पका हुआ, स्थिर (अधिक ठोस) ठण्ढा हो जाने पर पुनः गरम किया हुआ और अशान्त (जिससे शान्ति न मिले) और उपदिग्ध (परस्परलिप्त) इस प्रकार का भोजन स्वादिष्ट नहीं होता ।

विरुद्धमपि चाहारं विद्याद्विषगरोपमम् ।
शाकावरान्नभूयिष्ठमत्युष्णलवणं त्यजेत ॥

[वा० सू० अ० ८]

विरुद्ध भोजन को विष और गर के समान जानना चहिए । शाक बहुल, निन्दितअन्नबहुल, अत्यन्त उष्ण और अत्यन्त नमकीन भोजन भी त्याग देना चाहिये ।

न चैकरससेवायां प्रसज्येत कदाचन ।
अत्युष्णान्नं बलं हन्ति शीतं शुष्कं च दुर्जरम् ॥

[सु०]

कभी भी केवल एक रस के सेवन में तत्पर नहीं होना चाहिये । अत्यन्त उष्ण अन्न बल नष्ट करता एवं ठण्डा और सूखा भोजन दुष्पाच्य होता है ।

अतिक्लिन्नं ग्लानिकरं युक्तियुक्तं बलप्रदम्

[क्षे० कु०]

अत्यन्त गीला ग्लानिकारक और युक्तिपूर्वक निर्मित अथच सेवित अन्न बलदायक होता है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

निषिद्धान्ना जनाः

नान्नमद्यान्मुषूर्णां मृतानां दुःखजीविनाम् ।
स्त्रीजितक्लीबपतितक्रूरदुष्कृतकारिणाम् ॥
गणारिगणिकासत्रधूर्तान्नापणिकञ्च न ।

[अ० सं०]

मुमूर्षु, मृत, दुखी जीवनवाले, स्त्री के गुलाम, नपुंसक, पतित, कठोर, पापी, समूह, दुश्मन, वेश्या, सत्र (छेत्र) और धूर्त का अन्न तथा दूकान में बिकनेवाला (जैसे होटल आदि का) भोजन नहीं खाना चाहिए ।

श्रमादिव्याप्तानां भोजने हानिः

श्रमात्तु भोजनं यो हि पानं वा कुरुते नरः ।
ज्वरः सञ्जायते तस्य छर्दिर्वा तत्क्षणाद्भवेत् ॥
नश्रान्तो भोजनं कुर्यान्न व्यायामसमाकुलः ।
विषमासने न भोक्तव्यं करोतिविविधान् गदान् ॥

[आत्रेयसंहिता]

थका हुआ जो मनुष्य तुरन्त अन्न पान करता है उसको ज्वर होता है अथवा तत्क्षण वमन हो जाता है । अतः थका हुआ और व्यायाम से पीड़ित मनुष्य तत्काल भोजन न करे तथा विषम आसन पर भी बैठकर भोजन नहीं करना चाहिए । क्योंकि इनसे भाँति-भाँति के रोग उत्पन्न होते हैं ।

अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाच्च सन्धारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ।
कालेऽपि सात्म्यं लघु चापि भुक्तमन्नं न पाकं भजते नरस्य ॥
ईर्ष्याभयक्रोधपरिप्लुतेन लुब्धेन रुग्दैन्यनिपीड़ितेन ।
प्रद्वेषयुक्तेन च सेव्यमानमन्नं न सम्यक् परिपाकमेति ॥

अधिक जलपीने, विषम भोजन, वेगों को रोकने और नींद में गड़-बड़ी होने से यथासमय खाया हुआ, अपने अनुकूल और लघु आहार

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भी नहीं पचता। डाह, भय और क्रोध से व्याप्त, लोभी, रोग और दीनता से पीड़ित एवं द्वेष युक्त मनुष्य द्वारा भी सेवित अन्न अच्छी तरह पाक को प्राप्त नहीं होता।

अन्नपानयोः संरक्षणम्

सिद्धभोजनं तथा पानार्थं जलादिकं न कदापि विवृतं स्थाप्यं किन्त्वावृतपात्र एव सदा रक्षणीयम्। यतस्तत्र सूक्ष्मकीटाणवस्तथा रोगोत्पादकपदार्थवाहिकामक्षिकादयो नाऽऽविशेयुर्धूल्यादयश्च नाऽऽपतेयुः। यद्यधिष्ठानाद्धस्तद्वयोच्चाधारे स्थापयेत्तर्हि अधिकवरं स्याद् भूमिष्ठजीवाणूनामप्रवेश्यत्वात्।

पका अन्न और पीने का जल आदि कभी भी खुला नहीं रखना चाहिये। ढके हुए बर्तन में ही सदा सुरक्षित रखना चाहिए। जिससे उसमें सूक्ष्म कीटाणु एवं रोगकारक द्रव्यों को वहन करने वाली मक्खियाँ न घुसें और धूल आदि न गिर जाय। यदि जमीन से दो हाथ ऊपर किसी आधार पर रक्खें तो अधिक अच्छा हो क्योंकि इससे पृथ्वी के जीवाणु उसमें नहीं घुस सकेंगे।

कतिपयखाद्यानां भक्षणविधिविशेषः

धान्यम्

शूकधान्यं शमीधान्यं समातीतं प्रशस्यते।
पुराणं प्रायशो रूक्षं प्रायेणाभिनवं गुरु॥
यद्यदागच्छति क्षिप्रं तत्तल्लघुतरं स्मृतम्।
[च० सू० अ० २७]

शूक और शमी धान्य एक वर्ष के पुराने अच्छे होते हैं। पुराना प्रायः रूक्ष और नया प्रायः गुरु होता है। जो धान्य जितना शीघ्र उत्पन्न होता है वह उतना ही अधिक हलका होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सुधौतः प्रस्रुतः स्विन्नोऽत्यक्तोष्मा चोदनो लघुः।
विपरीतो गुरुः क्षीरमांसाद्यैर्यश्च साधितः॥

[वा० सू० अ० १६]

अच्छी तरह धोये हुए चावलों से बना, मण्ड पसाया हुआ, ठीक उबला और कुछ गरम भात हलका होता है। इसके विपरीत और दूध एवं मांस आदि से सिद्ध भात, खीर, पोलाव आदि गुरु होता है।

निस्तुषं युक्तिभ्रष्टं तु सूप्यं लघु विपच्यते।

[च०]

भूसी रहित, युक्तिपूर्वक भूनकर पकाई हुई दाल हलकी तथा सुपच होती है।

कुकूलकर्परभ्राष्ट्रकन्द्वङ्गारविपाचितान्।
एकयोनीन्लघून् विद्यादपूपानुत्तरोत्तरम्॥

[वा०]

गोहरी का अहरा, खपरी, भाड़ और कन्दू (तन्दूरा इसमें उल्टी नाद के नीचे अग्नि रहेगी ऊपर रोटी आदि रखकर सेंकी जाती है) और अंगार (कोयला) पर पके हुए एक ही धान्य से बने हुए पुवा आदि पदार्थ क्रमशः उत्तरोत्तर लघु होते हैं।

न सक्तूनेकानश्नीयान्न निशि न भुक्त्वा न बहून्—
द्विर्नोदकान्तरितान्न छित्वा द्विर्जैर्भक्षयेत्॥

[च० सू० अ० ८]

केवल सत्तू न खाये। उसे रात में, भोजन करने के बाद, अधिक, दो बार, जल रहित और पिण्डी बनाकर दातों द्वारा काटकर नहीं खाना चाहिये॥

मांसम्

मांसं सद्योहतं शुद्धं वयःस्थं च भजेन्नरः।
मृतं कृशातिमेद्यं च वृद्धं बालं विषैर्हतम्॥

[वा०]

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अगोचरभृतं व्यालसूदितं मांसमुत्सृजेत् ।
अतोऽन्यथा हितं मांसंञ्च बृंहणं बलवर्द्धनम् ॥
प्रीणनः सर्वधातूनां हृद्यो मांसरसः परम् ।
व्यायामनित्याः स्त्रीनित्या मद्यनित्याश्च ये नरा ।
नित्यं मांसरसाहारा नातुराः स्युर्न दुर्बलाः ।
शरीरबृंहणे नान्यत् खाद्यं मांसाद्विशिष्यते ॥
[च० सू० अ० २७]

तुरन्त मारे गये वयस्थ (युवावस्था वाले) पशु का शुद्ध मांस खाना चाहिये । स्वयं मृत, कृश, अति चर्बीयुक्त, वृद्ध, बाल, विष द्वारा मरा हुआ, न चरने योग्य स्थल में पला हुआ, सर्प अथवा बाघ द्वारा काटा हुआ मांस त्याग देना चाहिये । इसके विपरीत मांस हितकारी, धातुवर्धक और बलवर्धक होता है । मांसरस (शोर्वा, अखनी) सब धातुओं को तृप्त करने वाला एवं परम हृद्य है ।

सर्वदा व्यायाम करने वाले, सर्वदा स्त्री और मद्य सेवन करने वाले लोग यदि नित्य मांस-रस का आहार करने वाले हों तो न रोगी होते हैं और न दुर्बल । मांस से बढ़कर शरीर बढ़ाने के लिये अन्य कोई खाद्य नहीं ।

ॐनातिशीतगुरुस्निग्धं मांसमाजमदोषलम् ।
शरीरधातुसामान्यादनभिष्यन्दि बृंहणम् ॥
धार्तराष्ट्रचकोराणां दक्षाणां शिखिनामपि ।
चटकानां च यानि स्युरण्डानि च हितानि च ॥
रेतःक्षीणेषु कासेषु हृद्रोगेषु क्षतेषु च ।
मधुराण्यविपाकीनि सद्यो बलकराणि च ॥
गुरुष्णमधुरा वल्या बृंहणाः पवनापहाः ।
मत्स्याः स्निग्धाश्च वृष्याश्च बहुदोषाः प्रकीर्तिताः ॥
शैवलाहारभोजित्वात्स्वप्नस्य च विवर्जनात् ।
रोहितो दीपनीयश्च लघुपाको, महाबलः ॥ [चरकः]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

क्षीरम्*

पयोऽभिष्यन्दि गुर्वामं युक्त्या†श्रृतमतोऽन्यथा ।
"वर्जयित्वा स्त्रियाः स्तन्यमाममेव च तद्धितम् ॥
[सू०]

कच्चा दूध अभिष्यन्दी-गुरु होता है किन्तु ठीक से गर्म किया हुआ इसके विपरीत होता है, लेकिन स्त्री के दूध को छोड़कर, क्योंकि वह कच्चा ही हितकर है ।

भवेद् गरीयोऽतिश्रृतं धारोष्ण†ममृतोपमम् ॥
[वा० सू० अ० ५]

अत्यन्त औटाया हुआ दूध भारी होता है और धारोष्ण कच्चा दूध अमृत के समान गुणकारी होता है ।

---

* स्वादु शीतं मृदु स्निग्धं बहलं श्लक्ष्णपिच्छलम् ।
गुरु मन्दं प्रसन्नं च गव्यं दशगुणं पयः ॥
तदेवं गुणमेवौजः सामान्यादभिवर्धयेत् ।
प्रवरं जीवनीयानां क्षीरमुक्तं रसायनम् ॥
[च० सू०]

वल्याः किलाटपीयूषकूर्चिकामोरटादयः ।
सुखनिद्राकफकरा विष्टम्भिगुरुदोषलाः ॥ [वा०]

† यादृशक्षीरमद्यत्वे समुपलभ्यते तादृक् विना क्वथनेन न कदापि पेयम् । तत्रानेके जीवाणवो भवन्ति, त एकदा क्वथनेन नश्यन्ति । परन्त्वधिकं न क्वथनीयं यतस्तत्रस्थाः सप्तफर्मेन्टाःपाचनहितकारका नष्टा भवन्ति । ८० शतांशतो न्यूनोष्णतायां क्वथनेन जीवाणवोऽपि विनश्यन्ति फर्मेन्टा अपि न नष्टा भवन्ति । प्रायः १२० शतांशोष्णतायां जनाः क्वाथयन्ति तन्न श्रेष्ठम् । जलोष्णयन्त्रेक्वथने न फर्मेन्टा नश्यन्ति, जीवाणवोऽपि म्रियन्ते ।

+ धारोष्णक्षीरे जीवनीयांशः अधिको भवति ।

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

व्याध्यौषधाध्वभाष्यस्त्रीलङ्घनातपकर्मभिः ।
क्षीणे वृद्धे च बाले च पयः पथ्यं यथामृतम् ॥

व्याधि-औषधि-मार्ग-भाषण-स्त्री-उपवास-घाम और श्रम द्वारा क्षीण मनुष्य तथा वृद्ध एवं बालक के लिए दूध अमृत के समान पथ्य है।

अनिष्टगन्धमम्लं च विवर्णं विरसं च यत् ।
वर्ज्यं सलवणं क्षीरं यच्च विग्रथितं भवेत् ॥

[सु०]

अप्रियगन्धयुक्त, अम्ल, बदरंग, नीरस, नमकीन, और गांठ युक्त (फटा हुआ) दूध त्याग देना चाहिये।

दूषितक्षीरजा रोगाः

क्षुब्धक्षीरादग्निमान्द्यातिसारवमनाध्मानपिटिकामुखपाकादिरोगा उत्पद्यन्ते। तथा च प्रायेण दूषितक्षीरादेव विसूचिका यक्ष्ममन्थ-रज्वरादिसंक्रामकरोगा जायन्ते।

दूषित दूध से अग्निमान्द्य, अतिसार, वमन, आध्मान (अफरा), फोड़ा फुन्सियां और मुखपाक इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं। प्रायः दूषित दूध से ही हैजा, यक्ष्मा और मन्थरक (मोतीझरा) ज्वर आदि संक्रामक रोग होते हैं।

आरोग्यकरक्षीरप्राप्त्युपायाः

(१) क्षतस्तनानां रुग्णगवां क्षीरं न ग्राह्यं तथा सद्यः प्रसू-ताया अपि। अत्यावश्यकतायां द्वादशदिवसानन्तरं प्रसूतागोः क्षीरं ग्रहीतुं शक्यते।

क्षतयुक्त स्तन वाली, रोगिणी और तुरन्त व्यायी हुई गाय का दूध नहीं लेना चाहिये। अत्यन्त आवश्यकता पड़ने पर व्यायी हुई गाय का दूध व्याने के बारह दिन बाद ग्रहण किया जा सकता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

(२) विशुद्धीकृतपात्रे क्षीरं दोहनीयम् ।

भूमावनावृतपात्रे न कदापि स्थाप्यं जीवाणुधूल्यादिपतन-भयात् । दध्यादिकमप्येवं रक्षणीयम् ।

अच्छी तरह से साफ किये हुए बर्तन में दूध दुहना चाहिये । भूमि पर बिना ढके हुए बर्तन में दूध कभी नहीं रखना चाहिए । क्योंकि इससे जीवाणु और धूलि आदि गिरने का भय रहता है । दही, मट्ठा आदि भी इसी प्रकार सुरक्षित कर रखना चाहिये ।

ताम्रयशदनागपात्रेषु यत्र च रासायनिकपरिवर्तनस्य सम्भावना स्यात् क्षीरं न स्थाप्यम् ।

ताम्र, जस्ता और सीसा (नाग) के बर्त्तनों में जिनमें रासायनिक परिवर्त्तनों की सम्भावना हो, दूध नहीं रखना चाहिये ।

(३) स्तनं प्रक्षाल्य दोहनीयम् ।

स्तन धोकर दुहना चाहिए ।

(४) दोग्धाऽरोगसमाक्रान्तो निर्मलाम्बरः दोहनकाले सम्मार्जितहस्तश्च स्यात् ।

दुहने वाला रोगरहित और निर्मल वस्त्र पहने हो, दुहते समय हाथ धो लिया हो ।

(५) पशव आरोग्यकरशालायां रक्षणीयाः, तेभ्यः आरोग्य-करखाद्यपानप्रदानस्य पूर्णप्रबन्धः कार्यः ।

पशुओं को आरोग्यदायक घर में रखना चाहिए । उनके लिए आरोग्यदायक खाना (कोयर) पानी देने का पूरा प्रबन्ध करना चाहिए ।

(६) वस्त्रपूतं युक्तिपूर्वकं परिक्वाथ्य क्षीरं पेयम् । यतः कथनं जन्तुनाशनस्य श्रेष्ठ उपायः ।

कपड़े से छाने हुए दूध को अच्छी तरह खौलाकर पीना चाहिये । क्योंकि खौलाना जीवाणुनाशन का श्रेष्ठ उपाय है ।

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

(७) अस्वस्थपशूनां क्षीरस्य तथाऽन्यप्रकारेण दूषितस्य-क्षीरस्य विक्रयार्थं नगरसभाधिकारिभिर्नाऽऽज्ञा देया। तद्विक्रेतारश्च दण्डनीयाः स्युः।

अस्वस्थ पशुओं का दूध तथा अन्य प्रकार से दूषित दूध को बेचने की आज्ञा म्युनिस्पल बोर्ड के अधिकारियों द्वारा नहीं देनी चाहिये, उसको बेचने वाले को दण्ड देना चाहिये।

दधि

न नक्तं दधि भुञ्जीत न चाप्यघृतशर्करम्।
नाऽमुद्गसूपं नाऽक्षौद्रं नोष्णं नामलकैर्विना॥

[च०]

रात्रि में दही नहीं खाना चाहिए। बिना घी और शक्कर, बिना मूंग की दाल के, बिना शहद के, उष्ण, (गर्मागर्म) तथा आंवले के बिना दही नहीं खाना चाहिये। अर्थात् दालों में मूंग और फलों में आंवला दही के साथ श्रेष्ठ है।

न नित्यं नैव चामन्दं वसन्तोष्णशरत्सु न।

[व०]

नित्य, बिना जमा हुआ, वसन्त, ग्रीष्म और शरद ऋतु में दही (जमाया हुआ गाढ़ा बिना मथा हुआ) नहीं खाना चाहिए।

हेमन्ते शिशिरे चैव वर्षासु दधि*शस्यते॥

[सु०]

हेमन्त, शिशिर और वर्षा ऋतु में दही हितकारी है।

ज्वरासृक्पित्तवीसर्पकुष्ठपाण्ड्वामयभ्रमान्।
प्राप्नुयात् कामलां चोग्रां विधिं हित्वा दधिप्रियः।

[च० सू० अ० २७]

---

* त्रिदोषं मन्दकं जातं, वातघ्नं दधि शुक्लम्।
सरः श्लेष्मानिलघ्नस्तु मण्डः स्रोतोविशोधनः†॥ [च०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विधि त्याग सर दही खानेवाला ज्वर, रक्तपित्त, वीसर्प, कुष्ठ, पाण्डु, चक्कर और भयंकर कामला को प्राप्त करता है।

तक्रम्

न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्नतक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः।
यथा सुराणाममृतं हिताय तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः॥

[निघण्टु]

मट्ठा सेवन करने वाला कभी पीड़ित नहीं होता, मट्ठे द्वारा जले हुए (शान्त किये गये) रोग पुनः नहीं उत्पन्न होते। जिस प्रकार स्वर्ग में देवताओं को अमृत हितकर है उसी प्रकार पृथ्वी पर मनुष्यों को मट्ठा हितकारी है।

वातेऽम्लं सैन्धवोपेतं स्वादु पित्ते सशर्करम्।
पिवेत्तक्रं कफे चापि व्योषक्षारसमायुतम्॥

[सु० सू० अ० ४५]

वायु में—खट्टा मट्ठा सेंधा नमक मिला कर, पित्त में—शक्कर मिला कर मधुर (अनम्ल) मट्ठा और कफ में—सोंठ-मिर्च-पीपर और क्षार मिला कर मट्ठा पीना चाहिए।

नवनीतम्

संग्राहि दीपनं हृद्यं नवनीतं नवोद्धृतम्।

[च०

ताजा निकाला हुआ मक्खन (नैनू) ग्राही, अग्निदीपक और हृदय को बल देने वाला है।

ससरं निर्जलं घोलं, मथितं त्वसरोदकम्।
तक्रं पादजलं प्रोक्तमुदश्विदर्धवारिकम्॥
छछिका सारहीना स्यात् स्वच्छा प्रचुरवारिका।

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तद्धितं बालके वृद्धे विशेषादमृतं शिशोः ॥

[यो० र०]

वह बालक वृद्ध के लिये हितकर है विशेषतः बच्चों के लिये अमृत है।

घृतम्

स्नेहानामुत्तमं शीतं वयसः स्थापनं परम्।
सहस्रवीर्यं विधिभिर्घृतं कर्मसहस्रकृत् ॥

[वा]

घी स्नेहों में उत्तम, शीत, आयु को स्थापित करने वाला विधि-पूर्वक सेवन करने से हजार गुना वीर्य वाला और हजारों काम करने वाला होता है।

भोजने तच्च योक्तव्यं सद्यस्तप्तं सदा जनैः।

मनुष्यों को भोजन में सर्वदा तप्त घी का प्रयोग करना चाहिये।

शाकम्

क्रिमिवातातपहतं शुष्कं जीर्णमनार्तवम्।
शाकं निःस्नेहसिद्धं च वर्ज्यं यच्चापरिस्रुतम् ॥

[च०]

क्रिमि-वायु-घाम से पीड़ित, सूखा, पुराना, अपनी ऋतु से भिन्न ऋतु में उत्पन्न, बिना स्नेह के पकाया हुआ एवं बिना पानी निकाला हुआ शाक त्याग देना चाहिये।

फलम्

पुराणमामं संक्लिष्टं क्रिमिव्यालहिमातपैः।
अदेशकालजं क्लिन्नं यत्स्यात्फलमसाधु तत् ॥

[च०]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पुराना, क्रिमि, सर्प, पाला और घाम से दूषित, अदेश एवं अकाल में उत्पन्न सड़ा गला तथा खराब फल नहीं खाना चाहिये।

कन्दम्

वालं ह्यनार्तवं जीर्णं व्याधितं क्रिमिभक्षितम्।
कन्दं विवर्जयेत्सर्वं यो वा सम्यङ् न रोहति॥

छोटा (कम समय का, अपरिपक्व), अनार्त्तव (अपनी ऋतु में न उत्पन्न), पुराना, रोग युक्त, क्रिमि द्वारा खाया हुआ या जो अच्छी तरह नहीं उगा है वह सभी कन्द त्याग देना चाहिये।

आहारयोगिद्रव्याणि

मरिचाजाजिहिङ्गादि सार्षपादिकतैलकम्।
अन्यत्संस्कारकं द्रव्यं रुच्यं शुक्तादिकं तथा॥
अल्पमात्रं प्रयोक्तव्यं यावत्स्वास्थ्यस्यरक्षणम्।

मिर्च, जीरा, हींग, सरसों आदि का तेल, अन्यान्य संस्कार करने वाले द्रव्य तथा रुचिकारक सिरका आदि अल्पमात्रा ही में प्रयोग करना चाहिये जितने से स्वास्थ्यरक्षा हो सके।

इक्षुविकारः

नातिश्लेष्मकरो धौतः सृष्टमूत्रशकृद् गुडः।
प्रभूतक्रिमिमज्जासृङ्मेदोमाँसकफोऽपरः।
हृद्यं पुराणः पथ्यञ्च नवः श्लेष्माग्निसादकृत्।

साफ किया हुआ गुड़ न अधिक श्लेष्मा करने वाला, मूत्र पुरीष को निकालने वाला एवं विना साफ किया हुआ बहुत क्रिमि, मज्जा, रक्त मेद, मांस और कफ को करने वाला है। पुराना गुड़ हृदय के लिये हितकारी और पथ्य है। नया गुड़ कफ एवं अग्निमान्द्य करने वाला है

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वृष्याः क्षतक्षीणहिताः रक्तपित्तानिलापहाः ।
मत्स्यण्डिकाखण्डसिताः क्रमेण गुणवत्तमाः ॥

[वा० सू०]

राब, खाँड़ और चीनी ये क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक गुणकारी वृष्य, क्षत-क्षीण लोगों के लिये हितकर, रक्तपित्त, वायु को नाश करने वाले हैं।

मधु

गुरुरूक्षकषायत्वाच्छैत्याच्चाल्पं हितं मधु । [च०]

गुरु, रूक्ष, कसैली और शीत होने के कारण थोड़ी मात्रा में खायी हुई मधु हितकारी है।

उष्णमुष्णार्तमुष्णे च युक्तं चोष्णैर्निहन्तितत् ॥ [वा०]

उष्ण, उष्णता से पीड़ित द्वारा प्रयुक्त, उष्णकाल एवं उष्ण पदार्थों के साथ सेवन की गई मधु हानिकारक है।

मद्यम्

मद्यं स्यादमृतं युक्त्या* पीतं† विषवदन्यथा ।
गुरु त्रिदोषजननं नवं जीर्णमतोऽन्यथा ॥
पेयं नोष्णोपचारेण न विरिक्तक्षुधातुरैः ।
नात्यर्थतीक्ष्णमृद्वल्पसम्भारं कलुषं न च ॥

[अ० हृ०]

विधानपूर्वक पी गई शराब अमृत है। विधान से विपरीत पीने से वही विषतुल्य हो जाती है। नई शराब गुरु, त्रिदोष करने वाली और पुरानी इसके विपरीत है। गरम वस्तु के साथ शराब नहीं पीनी चाहिये।

---

* विधिना मात्रया काले हितैरन्नैर्यथाबलम् ।
प्रहृष्टो यः पिबेन्मद्यं तस्य स्यादमृतोपमम् ॥

[मा० नि०]

† सात्विकैरिति चरकः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विरेचन किये हुए और भूखे को भी नहीं पीनी चाहिये। बहुत अधिक तीक्ष्ण या मृदु और थोड़े साधन के साथ एवं मलिन शराब नहीं पीनी चाहिये।

अनुपानम्

अशितश्चोदकं युक्तया भुञ्जानश्चान्तरा पिबेत्।

[सु० सू० अ० ४६]

भोक्ता भोजन के बीच-बीच में तथा भोजन के बाद भी युक्तिपूर्वक (थोड़ा-थोड़ा) जल पिये।

जीवनं जीविनां जीवो जगत्सर्वं तु तन्मयम्।
नाऽतोऽत्यन्तनिषेधेऽपि कदाचिद्वारि वार्यते॥
तृष्णा गरीयसी. घोरा सद्यः प्राणविनाशिनी।
तस्माद्देयं तृषार्ताय पानीयं प्राणधारणम्॥

[भा० प्र०]

पानी प्राणियों का जीवन है। सारा संसार ही तन्मय है। इसलिये अत्यन्त निषेध होने पर भी कभी पानी नहीं रोकना चाहिए। प्यास बड़ी भयङ्कर एवं तुरन्त प्राणनाश करने वाली है। अतः जीवन धारण करने के लिये आवश्यक जल प्यासे को अवश्य देना चाहिये।

भक्तादौ सलिलं पीतं कार्श्यमन्दाग्निदोषकृत्।
मध्येऽग्निदीपनं श्रेष्ठमन्ते स्थौल्यकफप्रदम्॥

[क्षे० कु०]

भोजन के आदि में पिया हुआ जल कृशता-मन्दाग्नि और दोष-कारक है। मध्य में पिया हुआ अग्निदीपक श्रेष्ठ तथा अन्त में पिया हुआ स्थूलता और कफकारक है।

तृषितस्तु न चाश्नीयात्क्षुधितो न पिबेज्जलम्।
तृषितस्तु भवेद्गुल्मी क्षुधितस्तु जलोदरी॥
तृषितो मोहमायाति मोहात्प्राणान् विमुञ्चति।
तस्मात्सर्वास्ववस्थासु न कचिद्वारि वार्यते॥

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्यास लगने पर भोजन न करे, एवं भूख लगने पर केवल जल न पिये। क्योंकि प्यास लगने पर भोजन करने से गुल्म और भूख लगने पर केवल पानी पीने से जलोदर होता है।

प्यास लगने पर मोह (मूर्च्छा) होता है, मोह से प्राण-त्याग होता है। इसलिये सभी अवस्थाओं में कभी भी पानी बन्द नहीं करना चाहिये।

अत्यम्बुपानान्न विपच्यतेऽन्नमनम्बुपानाच्च स एव दोषः।
तस्मान्नरो वह्निविवर्धनाय मुहुर्मुहुर्वारि पिवेदभूरि॥
[चे० कु०]

अधिक पानी पीने से अन्न नहीं पचता। बिल्कुल पानी न पीने से भी वही दोष होता है। इसलिये अग्नि बढ़ाने के लिये मनुष्य को बार-म्बार थोड़ा-थोड़ा पानी पीना चाहिये।

अतियोगेन सलिलं तृष्यतोऽपि प्रयोजितम्।
प्रयाति श्लेष्मपित्तत्वं ज्वरितस्य विशेषतः॥
वर्द्धयत्यामतृण्निद्रातन्द्राध्मानाङ्गगौरवम्।
कासाग्निसादहृल्लासप्रसेकश्वासपीनसान्॥
[अ० सं०]

प्यास लगने पर भी विशेषतः ज्वर के रोगी के बहुत अधिक पानी पीने से श्लेष्मा और पित्त बन जाता है। वह आम, प्यास, नींद, उँहाई, अफरा, अंगों में भारीपन, खाँसी, अग्निमान्द्य, जी मिचलाना, लार गिरना, श्वास एवं जुकाम कर देता है।

अध्वश्रान्ते क्षुधाक्रान्ते शोकक्रोधातुरेषु च।
विषमासनोपविष्टे च पीतं वारि रुजाकरम्॥
तस्मात्प्रसन्नेमनसि पानीयं मन्दमाचरेत्॥
[अ० सं०]

रास्ता चलकर थकने, भूख लगने, शोक क्रोध से पीड़ित होने एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विषम आसन पर बैठे रहने पर पिया हुआ पानी रोगोत्पन्न करने वाला होता है। इसलिये प्रसन्न मन होकर थोड़ा-थोड़ा पानी पीना चाहिये।

अथानुपानकर्म प्रवक्ष्याभि–अनुपानं तर्पयति, प्रीणयति, ऊर्जयति, पर्याप्तिमभिनिर्वर्तयति, भुक्तमवसादयति, अन्नसंघातं भिनत्ति, मार्दवमापादयति, जरयति, सुखपरिणामितामाशुव्यवायितां चाहारस्योपजनयतीति यदाहारगुणैः पानं विपरीतं तदिष्यते।
अन्नानुपानं धातूनां दृष्टं यन्न विरोधि च ॥
[च० सू० अ० २७]

अब अनुपान कर्म कहेंगे :—अनुपान (आहार के बाद या साथ में पिया गया हुआ द्रव पदार्थ जल आदि) तृप्ति करता है, पुष्ट करता है, तेज बढ़ाता है, सन्तोष उत्पन्न करता है, भोजन को अवसादित (शिथिल) करता है, अन्न संघात का भेदन करता है, मृदुता करता है, पाचन है, आहार को सुखपूर्वक पचने योग्य और शीघ्र शरीर में फैलने योग्य बना देता है।

जो अनुपान, किये हुये आहार के गुण से विपरीत हो वही पीना चाहिये। और अन्न का अनुपान वही होना चाहिये जो धातुओं का विरोधी न हो।

✓ अम्लेन केचिद्विहता मनुष्या माधुर्ययोगे प्रणयी भवन्ति।
तथाम्लयोगे मधुरेण तृप्तास्तेषां यथेष्टं प्रवदन्ति पथ्यम् ॥
शीतोष्णतोयासवमद्ययूषफलाम्लधान्याम्लपयोरसानाम्।
यस्यानुपानं तु हितं भवेद्यत्तस्मै प्रदेयन्त्विह मात्रया तत् ॥
व्याधिञ्च कालं च विभाव्य धीरैर्द्रव्याणि भोज्यानि च तानि तानि।

अम्ल से पीड़ित कोई मनुष्य मधुर पदार्थों से, उसी प्रकार मधुर से तृप्त जन अम्ल पदार्थों से सन्तुष्ट होते हैं। इसलिये उनके लिये यथेष्ट पथ्य कहा जाता है—

शीत या उष्ण जल, आसव, मद्य, यूष, फल की खटाई (पन्ना आदि)

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

धान्याम्ल (काँजो) दूध तथा मांसरस में से जो जिसके लिये हितकर हो उसे वह अनुपान मात्रापूर्वक देना चाहिये व्याधि और काल तथा खाये जा रहे विविध भोजनों का विचार कर ।

सर्वानुपानेषु वरं वदन्तिः
मेध्यं यदम्भः ❀ शुचि भाजनस्थम् ।
लोकस्य जन्मप्रभृतिप्रशस्तं,
तोयात्मकाः सर्वरसाश्च दृष्टाः ॥

पवित्र बर्तन में रक्खा हुआ स्वच्छ जल सब अनुपानो में श्रेष्ठ कहा गया है । लोगों को जन्म से ही वह हितकर है क्योंकि सभी रस भी जल से ही उत्पन्न देखे गये हैं ।

सङ्क्षेप एषोऽभिहितोऽनुपानेष्वतः परं विस्तरतोऽभिधास्ये ।

यह संक्षेप में कहा गया । अब इसके बाद अनुपानों के विषय में विस्तार से कहेंगे ।

उष्णोदकानुपानं तु स्नेहानामथ शस्यते ।
ऋते भल्लातकस्नेहात् स्नेहात्तौवरकात्तथा ॥
अनुपानं वदन्त्येके तैले यूषाम्लकाञ्जिके ।
शीतोदकं माक्षिकस्य पिष्टान्नस्य च सर्वशः ॥
दधिपायसमद्यार्तिविषजुष्टं तथैव च ।
केचित् पिष्टमयस्याहुरनुपानं सुखोदकम् ॥
पयो मांसरसो वाऽपि शालिमुद्गादिभोजिनाम् ।

भिलावे एवं चालमुगरा के तेल के अतिरिक्त सभी स्नेहों का अच्छा अनुपान उष्ण जल होता है ।

❀ अन्नानुपाने सलिलमेव श्रेष्ठं सर्वरसयोनित्वात् सर्वभूतसात्म्याज्जीवनीयादिगुणयोगाच्च । (वा०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

कुछ लोग कहते हैं कि तैलमय पदार्थ का अनुपान यूष, या अम्लकाञ्जी है। मधु और सभी पिट्ठी के पदार्थ, दही, खीर खाने पर एवं मद्य और विष सम्बन्धी विकार में अनुपान शीत जल है।

कुछ लोग पिट्ठी के पदार्थों का अनुपान गरम जल कहते हैं। शालि और मूंग आदि खानेवालों का अनुपान दूध या मांस रस भी है।

युद्धाध्वातपसन्तापविषमद्यरुजासु च।
माषादेरनुपानन्तु धान्याम्लं दधि मस्तु वा॥
मद्यं मद्योचितानां तु सर्वमांसेषु पूजितम्।
अमद्यपानामुदकं फलाम्लं वा प्रशस्यते॥
क्षीरं घर्माध्वभाष्यस्त्रीक्लान्तानाममृतोपमम्।
सुरा कृशानां स्थूलानामनुपानं मधूदकम्॥

युद्ध, मार्ग, घाम, अग्निसामीप्य, विष और मद्य जनित कष्ट में और उड़द आदि खाने पर काञ्जी, दही या दही के पानी का अनुपान देना चाहिए।

मद्यपायियों के लिए सभी मांसों के खाने पर अनुपान स्वरूप मद्य ही श्रेष्ठ है। किन्तु शराब न पीनेवालों के लिए जल या फलों का खट्टा रस (कृतसन्धान खट्टा पानी आदि) श्रेष्ठ है।

घर्म (घाम), मार्ग, भाषण और स्त्रीप्रसंग से थके हुए लोगों के लिए दूध अमृत समान है। कृशों का अनुपान अन्न का शराब और स्थूलों की मधु का शर्बत है।

निरामयाणां चित्रन्तु भक्तमध्ये प्रकीर्तितम्।
स्निग्धोष्णं मारुते पथ्यं कफे रूक्षोष्णमिष्यते॥
अनुपानं हितञ्चाषि पित्ते मधुरशीतलम्।
हितं शोणितपित्तिभ्यः क्षीरमिक्षुरसस्तथा॥
अर्कशेलुशिरीषाणामासवास्तु विषार्त्तिषु।

[सु० सू० अ० ४६]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

निरोग लोगों के लिये भोजन के बीच में भाँति-भाँति के अनुपान कहे गये हैं। बात में—स्निग्ध उष्ण, कफ में—रूक्ष उष्ण, पित्त में—मधुर शीतल अनुपान पथ्य है।

रक्त-पित्तवालों के लिए दूध और ईख का रस, विष पीड़ितों को मदार, लिसोड़ा और शिरीष (सिरसा वृक्ष) के आसव देने चाहिये।

सर्वेषामनुपानानां माहेन्द्रंतोयमुत्तमम्।
सात्म्यं यस्य तु यत्तोयं तत् तस्मै हितमुच्यते॥
उष्णं वाते कफे तोयं पित्ते रक्ते च शीतलम्।
दोषवद् गुरु वा भुक्तमतिमात्रमथापि वा॥
यथोक्तेनानुपानेन सुखमन्नं प्रजीर्य्यति।

सब अनुपानों में श्रेष्ठ आकाश से गिरा (पात्र में लिया हुआ) वर्षा का जल है। जिसके लिये जो जल सात्म्य हो उसके लिये वही जल हितकर कहा गया है। वायु—कफ में उष्ण और पित्त-रक्त में शीतल जल देना चहिये। दोषपूर्ण गुरु अथवा अधिक मात्रा में खाया हुआ अन्न यथोक्त अनुपान से सुखपूर्वक पच जाता है।

रोचनं बृंहणं वृष्यं दोषसंघातभेदनम्॥
तर्पणं मार्दवकरं श्रमक्लमहरं सुखम्।
दीपनं दोषशमनं पिपासाच्छेदनं परम्॥
बल्यं वर्णकरं सम्यगुनुपानं सदोच्यते।

ठीक अनुपान सर्वदा रुचिकारक, धातुवर्धक, वृष्य, मलों को निकालने-वाला, तृप्तिकारक, मृदुताकारक, थकावट, सुस्ती दूर करने वाला, सुखदायी, अग्निदीपक, दोषशामक, प्यास को शान्त करने वाला, बल और वर्ण कारक कहा गया है।

तदादौ कर्शयेत्पीतं स्थापयेन्मध्यसेवितम्॥
पश्चात्पीतं बृंहयति तस्माद्वीक्ष्य प्रयोजयेत्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

वह भोजन के आदि में पिया हुआ कृश, मध्य में सेवित हुआ वयस्थापन और बाद में पिया हुआ स्थूल करता है। अतः सोच-विचार कर उसे प्रयोग करना चाहिये।

अनुपानावश्यकत्वम्

स्थिरतां गतमक्लिन्नमन्नमद्रवपायिनाम्।
भवत्याबाधजननमनुपानमतः पिबेत्॥

द्रव न पीनेवालों का बिना क्लिन्न हुआ अन्न, स्थिरता को प्राप्त होकर बाधा उत्पन्न करने वाला होता है। इसलिए अनुपान पीना चाहिए।

निषिद्धानुपाना रोगिणः

न पिबेच्छ्वासकासार्त्तो रोगे चाप्यूर्ध्वजत्रुगे।
क्षतोरस्कः प्रसेकी च यस्य चोपहतः स्वरः॥

श्वास कास से पीड़ित, ऊर्ध्वजत्रुगत रोग में, उरः क्षतवाला, मुख नासा नेत्र स्राव वाला रोगी और स्वरभेद में अनुपान न पिये।

अनुपानादनुवर्जनीयं कर्म

पीत्वाऽध्वभाष्याध्ययनगेयस्वप्नान्न शीलयेत्।
प्रदूष्यामाशयं तद्धि तस्य कण्ठोरसि स्थितम्॥
स्यन्दाग्निसादच्छर्द्यादीनामयान् जनयेद्बहून्।

अनुपान पीने पर मार्ग, भाषण, अध्ययन, गान और शयन का सेवन (एक क्षणतक) नहीं करना चाहिए। क्योंकि वह (अनुपान) आशय को दूषित कर प्रयोक्ता के कण्ठ और उर में स्थित होकर अभिष्यन्द, अग्निमान्द्य, एवं छर्दि आदि बहुत से रोगों को उत्पन्न करता है।

गुरुलाघवचिन्तेयं स्वभावं नातिवर्त्तते॥
तथा संस्कारमात्रां न कालांश्चाप्युत्तरोत्तरम्।

गुरु लाघव का यह विचार स्वभाव, संस्कार मात्रा एवं उत्तरोत्तर काल का अतिक्रमण नहीं करता है अर्थात् इनसे सम्बन्धित है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मन्दकर्म्मानलारोग्याः सुकुमाराः सुखोचिताः ।
जन्तवो ये तु तेषां हि चिन्तेयं परिकीर्त्तिता ॥
बलिनः खरभक्ष्या ये ये च दीप्ताग्नयो नराः ।
कर्म्मनित्याश्च ये तेषां नावश्यं परिकीर्त्यते ॥

[सु० सू०]

यह विचार तो मन्द कर्म (कम काम करनेवाले) मन्दाग्नि और कम आरोग्यवाले, सुकुमार अथ च सुखी (आरामतलब) प्राणियों के लिए कहा गया है ।

बलवान, कठोर पदार्थ खानेवाले, दीप्ताग्नि एवं हमेशा परिश्रम करनेवाले लोगों के लिए यह सब आवश्यक नहीं है, क्योंकि वे सब हजम कर सकते हैं ।

भोजनोत्तरं कर्म

एवं भुक्त्वा समाचामेच्चूषग्रहणपूर्वकम् ।
भोजने दन्तलग्नानि निर्हृत्याचमनं चरेत् ॥

इस प्रकार भोजन कर मुँह में जल भरकर खूब हिलाकर आचमन (कुल्ला) करे और दाँतो में फँसे हुए भोजन को निकालकर पुनः आचमन करे ।

दन्तान्तर्गतं चान्नं शोधनेनाहरेच्छनैः ।
कुर्यादनिर्हृतं तद्धि मुखस्यानिष्टगन्धताम् ॥

दाँतों में लगे हुए अन्न को धीरे-धीरे शोधन (खरिका) से निकाल लेना चाहिए । क्योंकि दाँतों से बिना निकाला हुआ जूठा अन्न मुख में अप्रिय गन्ध (सड़न) उत्पन्न कर देता है ।

दन्तलग्नमनिर्हार्यं लेपं मन्येत दन्तवत् ।
न तत्र बहुशः कुर्याद्यत्नं निर्हरणं प्रति ॥

किन्तु दाँत में लगे हुए अनिवार्य लेप (जूठ) को दाँतों के ही समान मान लेना चाहिए । उसे निकालने के लिए बारम्बार यत्न नहीं करना चाहिए ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

आचम्य जलयुक्ताभ्यां पाणिभ्यां चक्षुषी स्पृशेत् ।
भुक्त्वा च स्मरेन्नित्यमगस्त्यादीन् सुखावहान् ॥
[भा० ५०]

आचमन कर जलयुक्त हाथों से नेत्रों का स्पर्श करे और भोजनोपरान्त आरोग्यदायी अगस्त्य आदि ऋषियों को स्मरण करे ।

जीर्णेऽन्ने वर्द्धते वायुर्विदग्धे पित्तमेव तु ।
भुक्तमात्रे कफश्चापि तस्माद् भुक्ते हरेत्कफम ॥
धूमेनापोह्य हृद्यैर्वा कषायकटुतिक्तकैः ।
पूगकक्कोलकर्पूरलवङ्गसुमनःफलैः ॥
ताम्बूलपत्रसहितैः सुगन्धैर्वा विचक्षणः ।
भुक्त्वा राजवदासीत यावदन्नक्लमो गतः ॥

अन्न के पच जाने पर वायु, पचते समय पित्त और भोजन समाप्त करते ही कफ बढ़ता है । इसलिए भोजन के बाद कफ को क्षीण करना चाहिये । उसे धूम-पान से या हृदय को प्रिय कसैले कटु तिक्त रस वाले पदार्थ, सोपाड़ी, शीतलचीनी, कपूर, लवङ्ग जायफल आदि सुगन्धित पदार्थों से युक्त ताम्बूल की बीड़ा खाकर हरण करे । भोजन करने के बाद जब तक अन्नजन्य सुस्ती (आलस्य) न चली जाय तब तक राजा के समान (निश्चिन्त आराम करता हुआ) रहे ।

कर्पूरजातिकक्कोललवङ्गकटुकाह्वयैः ।
सचूर्णपूगखदिरैः पत्रं तम्बूलजं शुभम् ॥
मुखवैशद्यसौगन्ध्यकान्तिसौष्ठवकारकम् ।
हनुदन्तस्वरमलजिह्वेन्द्रियविशोधनम् ॥
प्रसेकशमनं हृद्यं गलामयविनाशनम् ।
प्रभाते पूगमधिकं मध्यान्हे खदिरं तथा ॥
निशासु चूर्णमधिकं ताम्बूलं भक्षयेत्सदा ।
आद्यं विषोपमं पीतं द्वितीयं भेदि दुर्जरम् ॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तृतीयादनुपातव्यं सुधातुल्यं रसायनम् ।
पथ्यं सुप्तात्थिते भुक्ते स्नाते वान्ते च मानवे ॥

कपूर, जावित्री, कंकोल (सुगन्ध कोकिला) लवंग और कटु पदार्थों से एवं चूना, सोपाड़ी खैर से युक्त ताम्बूल पत्र खाना चाहिये । वह मुख को विशद, सुगन्धित, कान्तियुक्त और सुन्दर करनेवाला है। हनु, दांत, स्वर, मल, जिह्वा और इन्द्रियों को शुद्ध करनेवाला है। मुख नासादि स्राव को शमन करनेवाला, हृदय को प्रिय एवं गले के रोगों को नाश करने वाला है। ताम्बूल में प्रातःकाल सोपाड़ी, दोपहर में खैर एवं रात में चूना अधिक डालकर खाना चाहिए। पान की पहली पीक विष तुल्य, दूसरी भेदी और दुष्पाच्य है। तीसरी पीक सुधा के समान रसायन, पीने योग्य है। ताम्बूलचर्वण सोकर उठने, भोजन, स्नान और वमन के बाद पथ्य है।

रक्तपित्तक्षतक्षीणतृष्णामूर्च्छापरीतिनाम् ।
रूक्षदुर्बलमर्त्यानां न हितं चास्य शोषिणाम् ॥ [सु०]
विज्ञेयं च तथा दन्तदुर्बलेक्षणरोगिणाम् ।
ताम्बूलं नातिसेवेत न विरिक्तो बुभुक्षितः ॥
देहदृक्केशदन्ताग्निश्रोत्रवर्णबलक्षयः ।
शोषः पित्तानिलास्रं स्यादतिताम्बूलभक्षणात् ।

[भा० प्र०]

रक्त पित्त, क्षत क्षीण, प्यास और मूर्च्छा से युक्त तथा रूक्ष दुर्बल एवं मुखशोष वाले मनुष्यों के लिये पान अहित है। दुर्बलदांत वाले नेत्ररोगवाले, विरेचन किये हुए एवं भूखे मनुष्यों को ताम्बूल अधिक नहीं सेवन करना चाहिये।

अधिक ताम्बूल खाने से शरीर, दृष्टि, केश, दाँत, अग्नि, कान, वर्ण और बल का क्षय, शोष एवं पित्त-वायु-रक्त के रोग होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

ततः पादशतं गत्वा वामपार्श्वेऽ तु संविशेत् ।
शब्दरूपरसान्गन्धान् स्पर्शांश्च मनसःप्रियान् ॥
भुक्तवानुपसेवेत तेनान्नं साधु तिष्ठति ॥

भोजन के बाद लगभग सौ पग टहलकर बाईं करवट लेट जाय। भोजन कर लेने के बाद मन को प्रिय लगनेवाले शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श का सेवन करे। इससे अन्न ठीक ढंग से पाचन-संस्थान में ठहरता है।

भोजनोत्तरं वर्जनीयं कर्म

शयनं चासनं चाति न भजेन्न द्रवाधिकम् ।
नाग्न्यातपौ न प्लवनं न यानं नापि वाहनम् ॥ [सु०]
व्यायामं च व्यवायं च धावनं यानमेव च ।
युद्धं गीतं च पाठं च मुहूर्तं भुक्तवांस्त्यजेत् ॥
[भावमिश्रः]

भोजन करने के बाद शयन (नींद), आसन (देरतक बैठना), द्रवाधिक्य, अग्नि, घाम, उछलना-कूदना, चलना और घोड़ा आदि की सवारी का सेवन न करे। व्यायाम, मैथुन, दौड़ना, सवारी, युद्ध, गीत और पढ़ने को एक मुहूर्त (४८ मिनट) भर त्याग दे।

भुक्त्वोपविशतस्तन्द्रा शयानस्य तु पुष्टता ।
आयुश्चङ्क्रममाणस्य मृत्युर्धावति धावतः ॥
[यो० र०]

ऽ श्वासानष्टौ समुत्तानस्तान् द्विः पार्श्वे तु दक्षिणे ।
ततस्तद्द्विगुणान् वामे पश्चात्स्वप्याद्यथासुखम् ॥
वामदिशायामनलो नाभेरुर्ध्वेऽस्ति जन्तूनाम् ।
तस्मात्तु वामपार्श्वं शयीत भुक्तप्रपाकार्थम् ॥
[भा० प्र०]

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भोजन करने पर बैठने से उँहाई, लेटने से पुष्टि, टहलने से आयु (तन्दुरुस्ती) बढ़ती है, किन्तु दौड़नेसे पीछे-पीछे मृत्यु दौड़ती है।

शय्या

सुशय्याशयनं हृद्यं पुष्टिनिद्राधृति प्रदम्।
श्रमानिलहरं वृष्यं विपरीतमतोऽन्यथा॥
त्रिदोषशमनी खट्वा तूली वातकफापहा।
भूशय्या वृंहणी वृष्या काष्टपट्टी तु वातला॥

[भा० प्र०]

अच्छी शय्या पर सोना हृदय को बल, पुष्टि, नींद और धैर्य्य देनेवाला है, थकावट, वायुरोग हरनेवाला तथा वृष्य है। इसके विपरीत (बुरी) शय्या विपरीत फल देती है।

खटिया त्रिदोष शामक, रूई के गद्दे से युक्त शय्या (पलंग) वात कफनाशक, पृथ्वी की शय्या—धातुवर्द्धक वृष्य एवं लकड़ी का तख्ता—वातवर्धक होता है।

संवाहनम्

संवाहनं मांसरक्तत्वक्प्रसादकरं परम्।
प्रीतिनिद्राकरं वृष्यं कफवातश्रमापहम्॥

[भा० प्र०]

शरीर दबवाना मांस, रक्त और त्वचा को शान्ति देनेवाला प्रसन्नता, निद्रा कारक, वृष्य एवं कफ-वायु-थकावट को दूर करनेवाला है।

वायुसेवनम्

प्रवातं रौक्ष्यवैवर्ण्यस्तम्भकृद् दाहपक्तिनुत्।
स्वेदमूर्च्छापिपासाध्नमप्रवातमतोऽन्यथा॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सुखं वातं प्रसेवेत ग्रीष्मे शरदि मानवः।
निर्वातमायुषे सेव्यमारोग्याय च सर्वदा॥
[सु० चि० अ० २४]

तेज वायु-रूक्षता विवर्णता और जकड़न करनेवाला तथा दाह, पाचन-शक्ति को नष्ट करनेवाला है। किन्तु न अधिक तेज वायु इसके विपरीत पसीना, मूर्छा और प्यास को नाश करनेवाला है। मनुष्य ग्रीष्म और शरद् ऋतु में सुखपूर्वक वायु सेवन करे। निर्वात (मन्द वायु) आयु तथा आरोग्य के लिये सर्वदा सेवन करना चाहिये।

व्यजनस्यानिलो दाहस्वेदमूर्च्छाश्रमापहः।
तालवृन्तभवो वातस्त्रिदोषशमनो मतः॥
वंशव्यजनजस्तूष्णो रक्तपित्तप्रकोपणः।
चामरो वस्त्रसम्भूतो मायूरो वेत्रजस्तथा॥
एते दोषजिता वाताः स्निग्धा हृद्याः सुपूजिताः।
[भा० प्र०]

विद्युत्सञ्चालितो वातः रूक्षः शान्तिकरः स्मृतः।

पंखे की हवा दाह, स्वेद, मूर्छा और थकावट को दूर करती है। ताड़ के पंखे की हवा त्रिदोष शामक कही गई है। बांस के पंखे की हवा उष्ण, रक्त-पित्त को कुपित करने वाली है। चँवर वस्त्र, मयूरपंख और वेंत के पंखे से उत्पन्न हवा दोष को जीतनेवाली, स्निग्ध, हृदय को प्रिय एवं प्रशस्य है। और बिजली के पंखे की हवा रूक्ष तथा शान्तिकर है।

बालव्यजनमौजस्यं मक्षिकादीनपोहति॥
[सु० चि० अ० २४]

बालों का पंखा (चँवर) ओज बढ़ानेवाला है और मक्खी आदि को दूर करता है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आतपवर्जनम्

आतपः पित्ततृष्णाग्निस्वेदमूर्च्छाभ्रमास्रकृत् ।
दाहवैवर्ण्यकारी च छाया चैतानपोहति ॥

[सु० चि० अ० २४]

धूप-पित्त, प्यास, ताप, पसीना, मूर्छा, चक्कर, रक्तदोष, अन्तर्दाह और बदरंग करने वाला है। किन्तु छाँह इनको दूर करती है।

दिवास्वापविवेकः

दिवास्वापं न कुर्वीत यतोऽसौ स्यात्कफावहः
ग्रीष्मवर्ज्येषु कालेषु दिवास्वप्नो निषिध्यते ॥

[भा० प्र०]

दिन में सोना नहीं चाहिये, क्योंकि यह कफ उत्पन्न करने वाला है। ग्रीष्म के अतिरिक्त सभी ऋतुओं में दिन में सोना निषिद्ध है।

ग्रीष्मे चादानरूक्षाणां वर्धमाने च मारुते ।
रात्रीणां चातिसङ्क्षेपाद्दिवास्वप्नः प्रशस्यते ॥

ग्रीष्म ऋतु में आदान काल (सूर्य के द्वारा जगत् का रस खींचने का काल) के कारण रूक्ष मनुष्यों में वायु बढ़ जाने पर और रात के अत्यन्त छोटी होने के कारण दिन में सोना हितकर है।

ग्रीष्मवर्ज्येषु कालेषु दिवास्वप्नात्प्रकुप्यतः ।
श्लेष्मपित्ते, दिवास्वप्नस्तस्मात्तेषु न शस्यते ॥

ग्रीष्म को छोड़कर अन्य ऋतुओं में दिवा-स्वप्न से कफ और पित्त कुपित होते हैं। इसलिये उनमें दिवास्वप्न हितकारी नहीं हैं।

मेदस्विनः स्नेहनित्याः श्लेष्मजाः श्लेष्मरोगिणः ।
दूषीविषार्ताश्च दिवा न शयीरन् कदाचन ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

मेदस्वी, सर्वदा स्नेह सेवी, कफ प्रकृति वाले, कफ रोगी और दूषी-विष से पीड़ित जन कभी भी दिन में न सोयें।

हृल्लीमकः शिरःशूलं स्तैमित्यं गुरुगात्रता।
अङ्गमर्दोऽग्निनाशश्च प्रलेपो हृदयस्य च॥
शोथारोचकहृल्लासपीनसार्धावभेदकाः।
कोठोऽरुःपिडकाः कण्डूस्तन्द्रा कासो गलामयाः॥
स्मृतिबुद्धिप्रमोहश्च संरोधः स्रोतसां ज्वरः।
इन्द्रियाणामसामर्थ्यं विषवेगप्रवर्तनम्।
भवेन्नृणां दिवास्वप्नस्याहितस्य निषेवणात्।
तस्माद्धिताहितं स्वप्नं बुद्ध्वा स्वप्यात्सुखं बुधः॥

[चरकः]

अहित दिवा-स्वप्न के सेवन करने से मनुष्यों को हृल्लीमक, शिर में पीड़ा, स्तैमित्य (शरीर में गीलापन-सा), शरीर का भारीपन, अंगमर्द, अग्नि-नाश, हृदय का लेप युक्त होना, शोथ, अरुचि, जी मिचलाना, जुकाम, अधकपारी, चकत्ता, छोटी फुन्सियाँ, खुजली, उंहाई, खांसी, गले के रोग, स्मृति और बुद्धि की भ्रान्ति, स्रोतों की रुकावट, ज्वर, इन्द्रियों में असमर्थता और विष (यदि पहले से शरीर में हो) वेग का प्रसार होता है। इसलिये बुद्धिमान् हित-अहित शयन को जानकर सुख पूर्वक सोये।

भोजनात्प्राग्दिवास्वापात्पाषाणमपि जीर्यति।
भोजनान्ते दिवास्वापाद्वातपित्तकफोद्भवः॥

[यो० र०]

अजीर्ण होने पर भोजन के पहले दिवास्वाप से पत्थर भी पच जाता है। किन्तु भोजन के बाद दिन में सोने से वात, पित्त और कफ की उत्पत्ति होती है।

गीताध्ययनमद्यस्त्रीकर्मभाराध्वकर्षिताः।
अजीर्णिनः क्षताः क्षीणावृद्धा बालास्तथाऽबलाः॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तृष्णातीसारशूलार्ताः श्वासिनो हिक्किनः कृशाः।
पतिताभिहतोन्मत्ताः क्लान्ता यानप्रजागरैः॥
क्रोधशोकभयक्लान्ता दिवास्वप्नोचिताश्च ये।
सर्व एते दिवास्वप्नं सेवेरन् सार्वकालिकम्॥
धातुसाम्यं तथा ह्येषां बलं चाप्युपजायते।
श्लेष्मा पुष्णाति चाङ्गानि स्थैर्यं भवति चायुषः॥

[च० सू० अ० २१]

गायन, अध्ययन, मद्य, स्त्री-सेवन, कार्य करने, भार ढोने और मार्ग से कर्षित, अजीर्ण-क्षतक्षीण रोग वाले, वृद्ध, बालक, दुर्बल, प्यास-अतिसार-शूल से पीड़ित, श्वास-रोगी, हिचकी से पीड़ित, कृश, गिर पड़े हुये, चोटीले, पागल, सवारी और जागरण से थके हुए, क्रोध-शोक-भय से क्लान्त, दिन में सोना जिन्हें अभ्यस्त है, ये सभी जन सब ऋतुओं में दिन में सो सकते हैं। ऐसा करने से इनकी धातुयें सम होती हैं। बल उत्पन्न होता है, श्लेष्मा अंगों को पुष्ट करता है और आयु स्थिर होती है।

दिवा वा यदि वा रात्रौ निद्रा सात्म्यीकृता तु यैः।
न तेषां स्वपतां दोषो जाग्रतां चोपजायते॥

[सु०]

जिन लोगों ने दिन या रात में नींद नित्य अभ्यास से सात्म्य कर लिया है, उनको उसके अनुसार सोने अथवा जागने में विकार नहीं उत्पन्न होता।

उचितो हि दिवास्वापो नित्यं येषां शरीरिणाम्।
वातादयः प्रकुप्यन्ति तेषामस्वपतां दिवा॥

[भा० प्र०]

जिन मनुष्यों के लिए दिन में सोना सर्वदा अभ्यस्त है, दिन में न सोने से उनके वातादि दोष कुपित होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

दिवामैथुननिषेधः

आयुः क्षयभयाद्विद्वान्नाह्नि सेवेत कामिनीम् ।
अवशो यदि सेवेत तदा ग्रीष्मवसन्तयोः ॥
[भा० प्र०]

विद्वान् आयु-क्षय के भय से दिन में स्त्री-सेवन न करे। यदि इसके लिए लाचार हो तो ग्रीष्म वसन्त में सेवन कर सकता है।

माध्यन्दिनीयं कर्म

धर्म्मोत्तराभिरर्थ्याभिः कथाभिस्त्रिगुणात्मभिः ।
मध्यंदिनस्य गमयेदिष्टशिष्टसहायवान् ॥
[अ० स०]

धर्म प्रधान, अर्थ युक्त एवं त्रिगुणात्मक (सत्व रज और तम गुण-वाली) कथाओं को कहते सुनते प्रिय और सज्जन सहायकों के साथ दोपहर का समय बिताये।

(रात्रिचर्या)

सन्ध्यायां निषिद्धकर्माणि

एतानि पञ्च कर्माणि सन्ध्यायां वर्जयेद्बुधः ।
आहारं मैथुनं निद्रां सम्पाठं गतिमध्वनि ॥
भोजनाज्जायते व्याधिर्मैथुनाद् गर्भवैकृतिः ।
निद्रयो निःस्वता पाठादायुर्हानि र्गतेर्भयम् ॥
[भा० प्र०]

बुद्धिमान् सायंकाल भोजन, मैथुन, नींद, पढ़ना और मार्ग गमन इन पाचों कामों को त्यांग दे, क्योंकि उस समय भोजन से व्याधि, मैथुन से गर्भ में विकार, नींद से दरिद्रता, पढ़ने से आयु की हानि एवं मार्ग-गमन से भय होता है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ज्योत्स्नादीनां गुणाः

ज्योत्स्ना शीता स्मरानन्दप्रदा तृट्पित्तदाहहृत् ।
ततो हीनगुणः कुर्यादवश्यायोऽनिलं कफम् ॥
तमो भयावहं मोहदिङ्मोहजनकं भवेत् ।
पित्तहृत्कफहृत् कामवर्धनं क्लमकृच्च तत् ॥

[भा० प्र०]

चाँदनी–शीतल, काम के आनन्द को देने वाली, प्यास-पित्त दाह नाश करने वाली है। ओस उससे कम गुण वाली तथा वायु-कफ करती है। अन्धकार-भयकारक, मोह और दिशाओं में भ्रम उत्पन्न करने वाला है। वह पित्त-कफनाशक, कामवर्धक एवं सुस्ती करने वाला है।

पृथक्पृथक् सर्वयामकर्तव्यम्

प्रदोषपश्चिमौ यामौ वेदाभ्यासेन तौ नयेत् ।
प्रहरद्वयं शयानो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

[दक्षस्मृतिः]

रात्रि के प्रदोष (पूर्व) और अन्तिम प्रहरों को वेदाभ्यास द्वारा बिताये। शेष दो प्रहरों में (६ घंटा) सोने वाला ब्रह्मवर्चस् को प्राप्त करता है।

रात्रिभोजनम्

रात्रौ तु भोजनं कुर्यात्प्रथमप्रहरान्तरे ।
किञ्चिदूनं समश्नीयाद् दुर्जरं तत्र वर्जयेत् ॥

[भा० प्र०]

रात के पहले पहर में भोजन कर लेना चाहिए। उस समय दिन की अपेक्षा कुछ कम खाना चाहिए तथा दुष्पाच्य पदार्थ न सेवन करना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

शयनासनम्

भुक्त्वा पूर्वोक्तमाचारं कृत्वा हृष्टमनाः शुचिः।
देशे शुचावनाकीर्णे द्वित्राप्तपरिचारकः॥
युक्तोपधानं स्वास्तीर्णं विस्तीर्णाविषमं सुखम्।
जानुतुल्यं मृदुशुभं सेवेत शयनासनम्॥
प्राग्दक्षिणशिराः पादावकुर्वाणो गुरून् प्रति।
पूर्वापरदिशो भागे धर्ममेवानुचिन्तयन्॥
[अ० सं०]

भोजन के बाद पूर्वोक्त आचरण करता हुआ प्रसन्नमन, स्वच्छ होकर पवित्र तथा विस्तृत स्थान में दो तीन परिचारकों के साथ तकिया से युक्त अच्छी तरह बिछे हुए, विस्तृत, अविषम, सुखदायी, जानु के बराबर ऊँचे, कोमल शुभ शयनासन (पलंग) पर पूर्व या दक्षिण और सिर करके गुरुओं की ओर तथा पूर्व, दक्षिण की ओर बिना पैर किए धर्म चिन्तन करते हुए सोवे।

निशि स्वस्थमनास्तिष्ठेन्मौनी दण्डी सहायवान्।
एवं दिनानि मे यान्तु चिन्तयेदिति सर्वदा॥
[क्षे० कु०]

रात में स्वस्थ मन, मौन, डण्डा और सहायकों से युक्त रहे। इस प्रकार (सुख पूर्वक) मेरे दिन बीतें, ऐसा सर्वदा सोचना चाहिए।

व्यवायः

शरीरे जायते नित्यं देहिनः सुरतस्पृहा।
अव्यवायान्मेहमेदोवृद्धिः शिथिलता तनोः॥ [भा० प्र०]

देहधारियों के शरीर में सर्वदा मैथुन की अभिलाषा उत्पन्न होती

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है। मैथुन न करने से शरीर में प्रमेह और चर्बी की वृद्धि और शिथिलता होती है।

रात्रौ व्यवायं कुर्वीत योषिता निजया सह।

[चे० कु०]

रात में अपनी पत्नी के साथ मैथुन करे।

विवाहवयः

अथास्मै पञ्चविंशतिवर्षाय द्वादशवर्षां पत्नीमावहेत्, पित्र्यधर्मार्थकामप्रजाः प्राप्स्यतीति।

[सु० शा० अ० १०]

पच्चीस वर्ष वाला युवक पित्र्य कार्य, धर्म, अर्थ, काम और सन्तान-प्राप्ति की इच्छा से बारह वर्ष की स्त्री से विवाह करे (न कि गर्भाधान) यह सुश्रुत का मत है।

गर्भाधानकालः

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान् नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलो भिषक्॥
ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्*।
यदा धत्ते पुमान् गर्भः कुक्षिस्थः स विपद्यते॥
जातो वा न चिरञ्जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत॥

[सुश्रुतः]

---

* 'ऊनद्वादशवर्षायाम्' इति हस्तलिखित पुस्तकस्थः पाठः।
[निर्णयसागरीयडल्हणटीकोपेतसुश्रुतटिप्पणी]

सङ्गमनविषये वाग्भटमतम्

† पूर्णषोडशवर्षा स्त्री पूर्णविंशेन सङ्गता।
शुद्धे गर्भाशये मार्गे रक्ते शुक्रेऽनिले हृदि॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS-Gra

कुशल वैद्य पचीस वर्ष के पुरुष और सोलह वर्ष की स्त्री को समान रूप से प्राप्त वीर्य वाला जाने। अतः सोलह वर्ष से कम आयुवाली स्त्री में पचीस वर्ष से कम आयुवाला पुरुष जब गर्भाधान करता है तो वह गर्भ कुक्षि में ही मर जाता है। अथवा उत्पन्न होने पर चिरञ्जीवी नहीं होता या दुर्बल इन्द्रियों वाला होता है। इसलिये अत्यन्त बाला में गर्भाधान न करना चाहिये। वाग्भटाचार्य ने तो गर्भाधानार्थ पुरुष बीस वर्ष का और स्त्री सोलह वर्ष की माना है।

ऋते वै षोडशाद्वर्षात्तथातिक्रान्तसप्ततेः।
स्त्रियं कामयमानस्य जायते हि बलक्षयः॥ [चे०कु०]

सोलह वर्ष बिना बीते तथा सत्तर वर्ष के बीत जाने पर स्त्री सेवन की इच्छा करने वाले का बलक्षय होता है। (महर्षि वात्सायन ने पुरुष को ७० वर्ष आयु तक युवा ही माना है।)

बालेति गीयते नारी यावद्वर्षाणि षोडश।
ततस्तु तरुणी ज्ञेया द्वात्रिंशद्वत्सरावधि॥
तदूर्ध्वमधिरूढा स्यात्पञ्चाशद्वत्सरावधि।
वृद्धा तत्परतो ज्ञेया सुरतोत्सववर्धिता॥ [भा०प्र०]

सोलह वर्ष की आयु तक स्त्री बाला कही जाती है, उसके बाद बत्तीस वर्ष तक तरुणी तत्पश्चात् पच्चास वर्ष तक प्रौढ़ा तदनन्तर मैथुन में वर्जित वृद्धा कही गयी है।

*वयो रूपगुणोपेतां तुल्यशीलां कुलोद्भवाम्।
अभिकामोऽभिकामां तु हृष्टो हृष्टामलंकृताम्॥

वीर्यवन्तं सुतं सूते ततो न्यूनाब्दयोः पुनः।
रोग्यल्पायुरधन्यो वा गर्भो भवति नैव वा॥
[वा० शा० अ० १]

* कुलं च शीलं च सनाथता च विद्या च वित्तं च वपुर्वयश्च।
एतान् गुणान् सप्त विचिन्त्य देया कन्या बुधैः शेषमचिन्तनीयम्॥
[व्या० स्मृ०

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सेवेत प्रमदां युक्त्या बाजीकरणवृंहितः।

[सू० चि० अ० २४]

वाजीकरण आहार औषध द्वारा बढ़ी धातुवाला मैथुनाभिलाषी पुरुष, रूप गुण सम्पन्न, समान शीलवाली, कुलीन मैथुनाभिलाषिणी, हर्षिता और शृङ्गार वस्त्राभूषण से सजी हुई उत्कट मद वाली स्त्री का सेवन करे।

निदाघशरदोर्बाला हिता विषयिणी मता।
तरुणी शीतसमये प्रौढा वर्षावसन्तयोः॥

[भा० प्र०]

निदाघ (ग्रीष्म) और शरद में बाला, शीत काल में तरुणी तथा वर्षा वसन्त में प्रौढ़ा मैथुन में हितकारिणी मानी गयी है।

बाला नवीनसुरते मुदिता तमिस्रे,
सञ्जायतेऽथ तरुणी महति प्रकाशे।
प्रौढ़ा प्रकाशतमसोः समुपैति सौख्यं,
वृद्धा तु न क्वचित जीवितहारिणी सा॥

[वात्सायनः]

बाला नवीन मैथुन में अन्धकार में तथा तरुणी बहुत प्रकाश में प्रसन्न होती है। प्रौढ़ा प्रकाश अन्धकार दोनों मिश्रित में सुख प्राप्त करती है। किन्तु वृद्धा मैथुन में कभी सुख नहीं पाती। वह मैथुन से कुछ आरोग्य नाश करने वाली ही होती है।

नित्यं बाला सेव्यमाना नित्यं वर्धयते बलम्।
तरुणी ह्रासयेच्छक्तिं प्रौढोद्भावयते जराम्॥
सद्योमांसं नवं चान्नं बाला स्त्री क्षीरभोजनम्।
घृतमुष्णोदके स्नानं सद्यः प्राणकराणि षट्।
पूतिमांसं स्त्रियो वृद्धा बालार्कस्तरुणं दधि।
प्रभाते मैथुनं निद्रा सद्यः प्राणहराणि षट्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वृद्धोऽपि तरुणीं गत्वा तरुणत्वमवाप्नुयात् ।
वयोऽधिकां स्त्रियं गत्वा तरुणः स्थविरायते ॥
[भा० प्र०]

सर्वदा सेवन की गयी बाला सर्वदा बल बढ़ाती है, तरुणी शक्ति कम करती है एवं वृद्धा बुढ़ापा उत्पन्न करती है ।

ताजा मांस, नया अन्न, बाला स्त्री, दूध का आहार, घृत सेवन और उष्ण जल में स्नान ये तुरन्त बलदायक हैं ।

दुर्गन्धित (सड़ा) मांस, वृद्धा स्त्री, कन्याराशिका सूर्य, तरुण (बिना पूरा जमा हुआ) दही, प्रातः काल में मैथुन और सोना ये छ तुरन्त बलनाशक हैं । वृद्ध पुरुष भी तरुणी स्त्री से मैथुनकर तरुणवत् बल प्राप्त करता है, किन्तु जवान भी अपने से अधिक आयुवाली स्त्री से मैथुन कर बुढ़ापा प्राप्त करता है ।

ऋतुकाले तु सुरतमवश्यं कारयेद्बुधः ।
स्त्रीनिःश्वासहतो ना हि दुर्भगत्वमवाप्नुयात् ॥
[भा० प्र०]

बुद्धिमान् को ऋतु काल (मासिकधर्मोत्तर स्नान करने के बाद) में अवश्य मैथुन करना चाहिये, नहीं तो स्त्री के दुखपूर्ण निश्वास से पीड़ित मनुष्य दुर्भाग्य को प्राप्त करता है ।

त्रिभिस्त्रिभिरहोभिर्हि समेयात्प्रमदां नरः ।
सर्वेष्वृतुषु घर्मे तु पक्षात्पक्षाद् व्रजेद् बुधः ॥
[सु० चि० अ० २४]

पुरुष सभी ऋतुओं में तीन-तीन दिन पर स्त्रीसंसर्ग करे । परन्तु ग्रीष्म ऋतु में पन्द्रह-पन्द्रह दिन पर स्त्रीगमन करे ।

सेवेत कामतः कामं बलाद्वाजीकृतो हिमे ।
प्रकामं तु निषेवेत मैथुनं शिशिरागमे ॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

व्यहाद्वसन्तशरदोः पञ्चाद्वर्षानिदाघयोः ।

[चरकः]

हेमन्त ऋतु में वाजीकरण औषधि खाते हुये इच्छा पूर्वक मैथुन किया जा सकता है। शिशिर ऋतु में तो और अधिक मैथुन किया जा सकता है, किन्तु वसन्त शरद में तीन-तीन दिन पर एवं वर्षा ग्रीष्म में पन्द्रह-पन्द्रह दिन पर मैथुन करे।

शीते रात्रौ दिवा ग्रीष्मे वसन्ते तु दिवा निशि ।
वर्षासु वारिदध्वाने शरत्सु सरसि स्मरः ॥

[भा० प्र०]

शीत ऋतु में रात में—ग्रीष्म में दिन में, वसन्त में—दिन रात में, वर्षा में—बादल गरजते समय एवं शरद ऋतु में—तालाब के समीप रहने से कामदेव जागृत होता है।

कुचेलां च कुशीलां च विधवां च परस्त्रियम् ।
नारीं नीचकुलोद्भूतां त्यजेत्सम्यग्विचक्षणः ॥

[चे० कु०]

बुद्धिमान पुरुष गन्दी, दुराचरण वाली, विधवा, पर-स्त्री और नीच कुल में उत्पन्न स्त्री के साथ संसर्ग न करे।

रजस्वलामकामाञ्च मलिनामप्रियां तथा ।
वर्णवृद्धां वयोवृद्धां तथा व्याधिप्रपीड़िताम् ॥
हीनाङ्गीं गर्भिणीं द्वेष्यां योनिदोषसमन्विताम् ।
सगोत्रां गुरुपत्नीञ्च तथा प्रव्रजितामपि ॥
सन्ध्यापर्वस्वगम्याञ्च नोपेयात्प्रमदां नरः ।
गोसर्गे चार्धरात्रे च तथा मध्यन्दिनेषु च ॥
लज्जासमावहे देशे विवृते ऽशुद्ध एव च ।
क्षुधितो व्याधितश्चैव क्षुब्धचित्तश्च मानवः ॥
मातविण्मूत्रवेगी च पिपासुरतिदुर्बलः ।

[सु० चि० अ० २४]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

रजस्वला, मैथुन में उदासीन, गन्दी, अप्रिय, जाति में बड़ी, आयु में बड़ी, व्याधि पीड़ित, हीन अंग वाली, द्वेषयुक्त, योनिदोषयुक्त, सगोत्रा, गुरुपत्नी, सन्यासिनी, संध्याकाल में और पर्व तिथियों में तथा अगम्या स्त्री से मैथुन न करे। गोधूलि में, आधी रात में, दोपहर में, लज्जायुक्त तथा खुले स्थान में मैथुन न करे। अपवित्र, भूखा, व्याधि-पीड़ित, व्याकुलचित्त, वायु-पुरीष-मूत्र के वेग से युक्त, प्यासा एवं अति दुर्बल मनुष्य मैथुन न करे।

नामेध्यां नाशास्तां, नानिष्टरूपाचारोपचारां नादक्षां नादक्षिणां नाकामां नान्यकामां नान्यस्त्रियं नान्ययोनिं नायोनौ न चैत्यचत्वरचतुष्पथोपवनश्मशानाघातनस्रलिलौषधिद्विज-गुरुसुरालयेषु न सन्ध्ययोः - नातिथिषु* नाशुचिर्नाजगर्भभेषजो नाप्रणीतसङ्कल्पो नानुपस्थितप्रहर्षो नाभुक्तवान् नात्यशितो न विषमस्थो न मूत्रोच्चारपीड़ितो न श्रमव्यायामोपवासक्लमाभि हतो नाऽरहसि व्यवायं गच्छेत्। [चरकः]

अपवित्र, अयोग्य, अनिष्ट रूप-आचरण एवं उपचार से युक्त, अदक्ष, प्रतिकूल, मैथुन में उदासीन, पर पुरुष को चाहनेवाली, परस्त्री, दूसरी योनि (पशु आदि), अयोनि (गुद-मुख आदि) में और चैत्य (पूज्य वृक्ष), चत्वर (ग्राम गोष्ठी का स्थल), चौराहा, उपवन, श्मशान, वध स्थल, जलाशय, औषधालय, ब्राह्मण, गुरु और देवता के निवास स्थान में एवं सन्ध्याकाल और वर्जित तिथियों में मैथुन न करे। अपवित्र, बिना वाजीकरण औषधि खाये, मैथुनेच्छा एवं हर्ष बिना

---

*अमावस्यामष्टमीञ्च पौर्णमासीं चतुर्दशीम्।
ब्रह्मचारी भवेन्नित्यमप्यृतौ स्नातको द्विजः॥
[मनु० अ० ४]

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उत्पन्न हुए, भूखा, अधिक भोजन किया हुआ, विषम ढंग से, मूत्र पुरीष के वेग से पीड़ित, थकावट, व्यायाम, उपवास, सुस्ती से पीड़ित एवं एकान्त रहित स्थान में मैथुन न करे।

नाजग्धमेषजोऽत्रवाक्ये भेषजशब्देन वाजीकरणौषधं ग्राह्यम्। उक्तञ्चतथा भगवता चरकेणः—

वाजीकरणमन्विच्छेत्पुरुषोनित्यमात्मवान्।
तदायत्तौ हि धर्मार्थौ प्रीतिश्च यश एव च॥

बिना औषधि खाये इस वाक्य में औषधि शब्द से वाजीकरण औषधि ग्रहण करना चाहिये। जैसा कि भगवान चरक ने कहा है:—

विचारवान् पुरुष सर्वदा वाजीकरण औषधि सेवन की आकांक्षा करे क्योंकि धर्म, अर्थ, प्रीति और यश उसी के अधीन है।

अपत्यसन्तानकरं यत्सद्यःसंप्रहर्षणम्।
वाजीवातिबलो येन यात्यप्रतिहतः स्त्रियः॥
भवत्यतिप्रियः स्त्रीणां येन येनोपचीयते।
जीर्यतोऽप्यक्षयं शुक्रं फलवद्येन दृश्यते॥

जो सन्तान का विस्तार करनेवाला तथा तुरन्त हर्षित करनेवाला है, जिसके द्वारा अश्व के समान अत्यन्त बलवान होकर मनुष्य स्त्रियों में अप्रतिहत होकर मैथुन करता है, जिससे स्त्रियों का अत्यन्त प्यारा हो जाता है, जिससे पुष्ट होता है, वह बुढ़ापा में भी जिसके कारण फलयुक्त (सन्तानोत्पादक) अक्षय शुक्र (वीर्य) वाला होता है—

प्रभूतशाखः शाखीव येन चैत्यो यथा महान्।
भवत्यर्च्यो बहुमत प्रजानां सुबहुप्रजः॥
सन्तानमूलं येनेह प्रेत्य चानन्त्यमश्नुते।
यशः श्रियं बलं पुष्टिं वाजीकरणमेव तत्॥

बहुत शाखाओं से युक्त ग्रामपूज्य वृक्ष की भाँति मनुष्य, जिसके द्वारा अधिक सन्तान वाला होकर बहुतों द्वारा सम्मान-प्राप्त और पूजनीय होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

है। इस जगत में जो सन्तानोत्पत्ति का मूल कारण है, जिसके द्वारा मरने के बाद मोक्ष की भी प्राप्ति हो सकती है तथा जिससे कीर्त्ति, लक्ष्मी, बल और पुष्टि प्राप्त होती है वही वाजीकरण है।

पुत्रस्यायतनं ह्येतद् गुणाश्चैते सुताश्रयाः।
वाजीकरणमग्र्यं च क्षेत्रं स्त्री या प्रहर्षिणी॥
दृष्टा ह्येकैकशोऽप्यर्थाः परं प्रीतिकराः स्मृताः।
किं पुनः स्त्रीशरीरे ये सङ्घातेन व्यवस्थिताः॥

यह वाजीकरण पुत्रोत्पत्ति का कारण है। ये धर्म अर्थादि गुण सुत पर ही आश्रित हैं। हर्ष उत्पन्न करनेवाली क्षेत्रस्वरूप स्त्री ही श्रेष्ठवाजीकरण है। इन्द्रियों के एक-एक विषय ही परम प्रीति कारक देखे गये हैं, फिर क्या कहना ? जो कि स्त्री के शरीर में समूह रूप से एकत्र व्यवस्थित हैं।

सङ्घातो हीन्द्रियार्थानां स्त्रीषु नान्यत्र विद्यते।
स्त्र्याश्रयो हीन्द्रियार्थो यः स प्रीतिजननोऽधिकः॥

सभी इन्द्रियों के विषयों की एकत्र प्राप्ति स्त्री के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं हो सकती। फिर जो इन्द्रियार्थ स्त्री पर ही अवलम्बित है वह तो सबसे अधिक प्रीत्युत्पादक है।

स्त्रीषु प्रीतिर्विशेषेण स्त्रीष्वपत्यं प्रतिष्ठितम्।
धर्मार्थौ स्त्रीषु लक्ष्मीश्च स्त्रीषु लोकाः प्रविष्ठताः॥

स्त्री में विशेषतः प्रीति, अपत्य, धर्म-अर्थ-लक्ष्मी और सभी इह लोक परलोक प्रतिष्ठित हैं।

सुरूपा यौवनस्था या लक्षणैर्या विभूषिता।
या वश्या शिक्षिता या च सा स्त्री वृष्यतमा मता॥

जो स्त्री सुरूप, जवान, सुलक्षणों से विभूषित वश्य और शिक्षित है वह अत्यन्त वृष्य मानी गयी है।

नानाभक्त्या तु लोकस्य दैवयोगाच्च योषिताम्।
तं तं प्राप्य विवर्धन्ते नरं रूपादयो गुणाः॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लोगों के अनेक (भिन्न भिन्न) प्रकार की रुचि वाले होने के कारण, भाग्यवश स्त्रियों को उनमें से अपने अनुरूप गुण वाले पति को पाने से उसके रूप आदि गुण और भी बढ़ जाते हैं।

वयोरूपवचोहावैर्या यस्य परमाङ्गना।
प्रविशत्याशु हृदयं दैवाद्वा कर्मणोऽपि वा॥
हृदयोत्सवरूपा या या समानमनःशया।
समानसत्त्वा या वश्या या यस्य प्रीयते प्रिये॥
या पाशभूता सर्वेषामिन्द्रियाणां परैर्गुणैः।
यया वियुक्तो निस्त्रीकमरतिर्मन्यते जगत्॥
यस्या ऋते शरीरं ना धत्ते शून्यमिवेन्द्रियैः।
शोकोद्वेगारतिभयैर्या दृष्ट्वा नाभिभूयते॥
याति यां प्राप्य विस्रम्भं दृष्ट्वा हृष्यत्यतीव याम्।
अपूर्वामिव यां याति नित्यं हर्षातिवेगतः॥
गत्वा गत्वाऽपि बहुशो यां तृप्तिं नैव गच्छति।
सा स्त्री वृष्यतमा तस्य नानाभावा हि मानवाः॥

वय-रूप-वाणी हावभावों से जो उत्तम स्त्री दैवयोग या कर्म-कौशल से जिस पुरुष के हृदय में शीघ्र प्रवेश कर जाती है। जो हृदय की उत्सव स्वरूप, समान आशय वाली, समान मन वाली वश्य है और जिसकी प्रसन्नता में मनुष्य प्रसन्न होता है। जो अपने परम गुणों से पुरुष की सभी इन्द्रियों के लिये पाश स्वरूप है। पुरुष जिससे अलग रहने पर, बिना स्त्री के, सारे संसार को आनन्दरहित मानता है। जिसके बिना वह शरीर को इन्द्रियों से शून्य की भांति धारण करता है। जिसको देखकर शोक, उद्वेग, बेचैनी और भय से मनुष्य आक्रान्त नहीं होता। जिसको पाकर मनुष्य विश्वस्त होता है। जिसको देखकर अत्यन्त हर्षित होता है। हर्ष के अतिवेग से जिसे नई की भांति (पुरानी होने पर भी) समझता हुआ गमन करता है और जिसमें बारम्बार गमन करने पर भी तृप्ति नही होती। ऐसी स्त्री उसके लिये वृष्यतम है। क्योंकि मनुष्य अनेक भावना वाले होते हैं (अर्थात् पुरुष और स्त्री यदि एक भावना वाले हुए तो वृष्यतमत्व प्राप्त होता है)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

अतुल्यगोत्रां वृष्यां च प्रहृष्टां निरुपद्रवाम् ।
शुद्धस्नातां व्रजेन्नारीमपत्यार्थी निरामयः ॥

सन्तानेच्छुक निरोग पुरुष अतुल्य गोत्रा, वृष्या, हर्षवती, उपद्रव रहित और मासिक धर्म से शुद्ध होकर स्नान की हुई स्त्री में गमन करे।

अच्छायश्चैकशाखश्च निष्फलश्च यथाद्रमः ।
अनिष्टगन्धश्चैकश्च निरपत्यस्तथा नरः ॥

निस्सन्तान पुरुष, छाया रहित एक शाखा युक्त निष्फल अप्रिय गन्धवाले अकेले पेड़ के समान है।

चित्रदीपः सरः शुष्कमधातुर्धातुसन्निभः ।
निष्प्रजस्तृणपूलीति ज्ञातव्यः पुरुषाकृतिः ।

निस्सन्तान को चित्रित दीपक, सूखा तालाब, धातु के समान पर अधातु (शुक्ति को देखकर रजत मनाने के समान) एवं पुरुष के आकार में तृण पूली (घास-फूस की मानुषी आकृति) ही जानना चाहिये।

अप्रतिष्ठश्च नग्नश्च शून्यश्चैकेन्द्रियश्च ना ।
मन्तव्यो निष्क्रियश्चैव यस्यापत्यं न विद्यते ॥

जिसको सन्तान न हो उसे अप्रतिष्ठित, नग्न, सून्य, केवल एक इन्द्रिय (भोजनार्थ मुख) वाला और निष्क्रिय मानना चाहिये।

बहुमूर्तिर्बहुमुखो बहुव्यूहो बहुक्रियः ।
बहुचक्षुर्बहुज्ञानो बह्वात्मा च बहुप्रजः ॥

बहुत सन्तान वाला—बहुमूर्त्ति, बहुमुख, बहुव्यूह, बहुकर्म, बहुचक्षु, बहुज्ञान एवं बहुत आत्मा वाला माना जाता है।

मङ्गल्योऽयं प्रशस्तोऽयं धन्योऽयं वीर्यवानयम् ।
बहुशाखोऽयमिति च स्तूयते ना बहुप्रजः ॥

यह मंगलमय है, प्रशंसनीय, धन्य, वीर्यवान एवं बहुत शाखाओं (वंशानुवंश) वाला है, इस प्रकार बहुत सन्तान वालों की प्रशंसा की जाती है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रीतिर्बलं सुखं वृत्तिर्विस्तारो विपुलं कुलम् ।
यशो लोकाः सुखोदर्कास्तुष्टिश्चापत्यसंश्रिताः ॥

प्रीति, बल, सुख, जीविका, विस्तार बड़ा परिवार, यश, सुखप्रद स्वर्ग लोक एवं सन्तुष्टि, ये सब सन्तान पर आश्रित हैं।

तस्मादपत्यमन्विच्छन् गुणांश्चापत्यसंश्रितान् ।
वाजीकरणनित्यः स्यादिच्छन् काममुखानि च ॥

इसलिये सन्तान तथा सन्तानाश्रित गुणों को चाहते हुए एवं काम-सुख की इच्छा करते हुए नित्य वाजीकरण सेवन करे।

रजस्वलां प्राप्नवतो नरस्यानियतात्मनः ।
दृष्ट्यायुस्तेजसा हानिरधर्म्मश्च ततो भवेत् ॥

अजितेन्द्रिय पुरुष के रजस्वला से गमन करने से दृष्टि, आयु तथा तेज की हानि और अधर्म होता है।

लिङ्गिनीं गुरुपत्नीञ्च सगोत्रामथ पर्वसु ।
वृद्धाञ्च सन्ध्ययोश्चापि गच्छतो जीवितक्षयः ॥

ब्रह्मचारिणी, गुरुपत्नी, सगोत्रा, अमावस्या, चतुर्दशी आदि पर्वों, वृद्धा और दोनों संध्या (प्रातः और सायं) में मैथुन करने से जीवन का क्षय होता है।

गर्भिण्यां गर्भपीड़ा स्याद् व्याधितायां बलक्षयः ।
हीनाङ्गीं मलिनां द्वेष्यां कामं वन्ध्यामसंवृते ॥
देशेऽशुद्धे च शुक्रस्य मनसश्च क्षयो भवेत् ।

गर्भिणी में मैथुन करने से—गर्भपीड़ा, रोगिणी में—बलक्षय, हीनांगी, मलिना, द्वेष्या, बन्ध्या स्त्री के साथ एवं खुले, अपवित्र स्थान में मैथुन करने से शुक्र और मन का क्षय होता है।

क्षुधितः क्षुब्धचित्तश्च मध्याह्ने तृषितोऽबलः ।
स्थितस्य हानिं शुक्रस्य वायोः कोपञ्च विन्दति ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

भूखा, व्याकुल चित, प्यासा, निर्बल पुरुष के एवं दोपहर में मैथुन करने से स्थित शुक्र की हानि और वायु का प्रकोप होता है।

व्याधितस्य रुजा प्लीहा मृत्युर्मूर्च्छा च जायते।
प्रत्यूषस्यर्द्धरात्रे च वातपित्ते प्रकुप्यतः॥

रोगी के मैथुन करने पर रोगवृद्धि, प्लीहवृद्धि, मृत्यु और मूर्छा हो सकती है। उषःकाल एवं आधी रात में मैथुन करने से वात पित्त प्रकुपित होते हैं।

तिर्य्यग्योनावयोनौ च दुष्टयोनौ तथैव च।
उपदंशस्तथा वायोः कोपः शुक्रस्य च क्षयः॥

तिर्यग् योनि, अयोनि और रुग्ण योनि में मैथुन करने से उपदंश, वातप्रकोप एवं शुक्रक्षय होता है।

उच्चारिते मूत्रिते च रेतसश्च विधारणे।
उत्ताने च भवेच्छीघ्रं शुक्राश्मर्य्यास्तु सम्भवः॥

पुरीष और मूत्र के वेग लगने पर एवं उतान (पुरुष नीचे स्त्री ऊपर) होकर मैथुन करने पर तथा शुक्र के वेग (क्षरण) को रोकने से शीघ्र ही शुक्राश्मरी की उत्पत्ति होती है।

रेतसश्चातिमात्रन्तु मूर्द्धावरणमेव च।
स्थितावुत्तानशयने विशेषेणैव गर्हितम्॥
क्रीड़ायामपि मेधावी हितार्थी परिवर्जयेत्।

उतान होकर (विपरीत) मैथुन करने से शुक्र का अतिमात्रा में मूर्द्धावरण (वीर्य का लिंग मुख तक पहुंच कर रुक जाना) हो जाता है। अतः वह विशेष निन्दित है। हितेच्छु बुद्धिमान् क्रीड़ा (कामकेलि) में भी इसका परित्याग करे।

सर्वं परिहरेत्तस्मादेतल्लोकद्वयेऽहितम्।
शुक्रं चोपस्थितं मोहान्न सन्धार्य्यं कथञ्चन॥

[सु० चि० अ० २४

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इसलिये इस लोक और परलोक दोनों में अहित इन सबको त्याग दे और क्षरण के लिये उपस्थित शुक्र को भूल से भी कभी न रोके।

न च न्युब्जां पार्श्वगतां वा संसेवेत, न्युब्जाया वातो बलवान् स योनिं पीड़यति, पार्श्वगताया दक्षिणे पार्श्वे श्लेष्मा संच्युतोऽपिदधाति गर्भाशयं, वामे पित्तं पार्श्वे; तस्याः पीड़ितं विदहति रक्तशुक्रं; तस्मादुत्ताना सती बीजं गृह्णीयात्, तस्या हि यथास्थानमवतिष्ठन्ते दोषाः। पर्याप्ते चैनां शीतोदकेन परिषिञ्चेत्। तत्रात्यशिता क्षुधिता पिपासिता भीता विमनाः शोकार्ता क्रुद्धान्यं च पुमांसमिच्छन्ती मैथुने चातिकामा वा नारी गर्भं न धत्ते विगुणां वा प्रजां जनयति। अतिबालामतिवृद्धां दीर्घरोगिणीमन्येन वा विकारेणोपसृष्टां वर्जयेत्; पुरुषेऽप्येत एव दोषाः; अतः सर्वदोषवर्जितौ संसृज्येयातां संजातहर्षौ मैथुने चानुकूलाविष्टगन्धं स्वास्तीर्णं सुखं शयनमुपकल्प्य मनोज्ञं हितमशनमशित्वा नात्यशितौ दक्षिणपादेन पुमान् वामपादेन स्त्री चारोहेत्; तत्र मन्त्रं प्रयुञ्जीत—अहिरसि आयुरसि सर्वतः प्रतिष्ठाऽसि धाता त्वा दधातु विधाता त्वा दधातु ब्रह्मवर्चसा भवेदिति।

पट्ट (उतान के विपरीत) अथवा बगल में सोयी हुई स्त्री में मैथुन न करे। क्योंकि पट्ट सोई हुई का वायु बलवान होता है वह योनि को पीड़ित करता है। बगल में सोई हुई के दाहिने पार्श्व में कफ च्युत होकर गर्भाशय को ढक देता है। बायें पार्श्व में पित्त रहता है। जो कुपित होकर उसके रज-शुक्र को विदग्ध कर देता है। इसलिये स्त्री उतान होकर बीज ग्रहण करे क्योंकि इससे वातादि दोष यथास्थान ठहरते हैं। मैथुन समाप्त होने पर स्त्री को ठण्ढे जल से सिञ्चन करना चाहिये।

अधिक भोजन की हुई, भूखी, प्यासी, डरी, बेमन, शोक-पीड़ित, क्रोधी, दूसरे पुरुष को चाहती हुई, अथवा अत्यन्त मैथुनाभिलाषिणी स्त्री गर्भ धारण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

नहीं करती या विकृत सन्तान उत्पन्न करती है। अत्यन्त बाला, अत्यन्त वृद्धा और दीर्घरोगिणी या अन्य विकार से युक्त स्त्री से मैथुन नहीं करना चाहिये। इन विकारों से युक्त पुरुष में भी यही दोष समझने चाहिये। इसलिये सब दोषों से रहित स्त्री-पुरुष मैथुनेच्छा प्रवृत्त होने पर मैथुन के समय परस्पर अनुकूल स्थिति में रहते हुए मनःप्रिय और हितकारी भोजन करके किन्तु अधिक भोजन न करते हुए सुगन्धित और अच्छी तरह से बिछी हुई सुखद शय्या पर मैथुन करें। उस शय्या पर पुरुष पहले दाहिने पैर से और स्त्री बायें पैर से चढ़े। उस समय इस मन्त्र का प्रयोग करे—

"ब्रह्मा बृहस्पतिर्विष्णुः सोमः सूर्यस्तथाश्विनौ।
भगोऽथ मित्रावरुणौ पुत्रं वीरं दधातु मे॥
इत्युक्त्वा संवसेताम्॥ [च० शा० अ० ८]

ऐसा पढ़ कर दोंनों संयोग करें।

अन्यथागमने दोषाः

भ्रमक्लमोरुदौर्बल्यबलधात्विन्द्रियक्षयः।
अपर्वमरणं च स्यादन्यथागच्छतः स्त्रियम्। [वा०

स्त्रियों में विधि विरुद्ध गमन करने से पुरुष को चक्कर, सुस्ती, रान में दुर्बलता, बल-धातु-इन्द्रियों का क्षय एवं पर्वविहीन तिथियों में मरण होता है।

निषिद्धव्यवायाः

अत्यशितोऽवृतिः क्षुद्वान् दुःस्थिताङ्गः पिपासितः।
बालो वृद्धोऽन्यवेगार्तः त्यजेद्रोगी च मैथुनम्॥
[अ० हृ०

अधिक भोजन किया हुआ, अधीर, भूखा, दुःखद स्थिति में अंग रखता हुआ, प्यासा, बालक, वृद्ध, अन्य (मल-मूत्रादि) वेगों से पीड़ित तथा रोगी मनुष्य मैथुन न करे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अतिव्यवाये हानिः

अतिस्त्रीसम्प्रयोगाच्च रक्षेदात्मानमात्मवान् ।
शूलकासज्वरश्वासकार्श्यपाण्डवामयक्षयाः ॥
अतिव्यवायाज्जायन्ते रोगाश्चाक्षेपकादयः ।
अतिप्रसंगाद् भवति शोषः शुक्रक्षयावहः ॥

[सु० चि० अ० २४]

आत्मवान अधिक स्त्री सेवन से अपनी रक्षा करे। क्योंकि अधिक मैथुन से शूल, कास, ज्वर, श्वास, कृशता, पाण्डु, क्षय और आक्षेपक आदि रोग हो जाते हैं। अति मैथुन करने से शुक्रक्षयजन्य शोष होता है।

स्त्रीषु संयमे लाभाः

स्मृतिमेधायुरारोग्यपुष्टीन्द्रियशोबलैः ।
अधिका मन्दजरसो भवन्ति स्त्रीषु संयताः ।

[वा०]

स्त्रियों में संयत जन स्मृति, बुद्धि, आयु, आरोग्य, पुष्टि, इंद्रिय की शक्ति, यश और बल में अधिक तथा मन्द बुढ़ापा वाले होते हैं।

सुरतान्ते सेवनीयम्

स्नानानुलेपनहिमानिलखण्डखाद्य-
शीताम्बुदुग्धरसयूषसुराप्रसन्नाः ।
सेवेत चानुशयनं विरतौ रतस्य-
तस्यैवमाशु वपुषः पुनरेतिधाम ॥

[वाग्भटः]

मैथुन समाप्त करने पर, स्नान, चन्दनादि लेप, ठण्ढी वायु, शक्कर-प्रधान आहार, शीतल जल, दूध, मांस-रस, यूष, अन्न की शराब या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

प्रसन्ना (शराब का ऊपरी स्वच्छ भाग, ब्राण्डी) सेवन करके तब सोवे। ऐसा करने से उसका शरीर पुनः तेज को प्राप्त करता है।

रजस्वलाचर्याः

मासि मासि रजःस्त्रीणां रसजं स्रवति त्र्यहम्।
वत्सराद् द्वादशादूर्ध्वं याति पञ्चाशतः क्षयम्॥ ✓
[वा०

बारह वर्ष आयु के ऊपर स्त्रियों का रसजन्य रज प्रत्येक महीने में तीन दिन निकलता है। पचास वर्ष उम्र के बाद वह बन्द हो जाता है।

आर्तवस्रावदिवसाद्ऋतुः षोडशरात्रयः।
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः॥
[भा० प्र०

आर्त्तव स्राव के दिन से सोलह रात तक ऋतु काल कहा जाता है वही समय गर्भ-ग्रहण के योग्य है।

पीनप्रसन्नवदनां प्रक्लिन्नात्ममुखद्विजाम्। ✓
नरकामां प्रियकथां स्रस्तकुक्ष्यक्षिमूर्धजाम्॥
स्फुरद्भुजकुचश्रोणिनाभ्यूरुजघनस्फिचम्।
हर्षौत्सुक्यपराञ्चापि विद्याद्ऋतुमतीमिति॥
[सु० शा० अ० ३

भरे हुए और प्रसन्न मुखवाली, आर्द्र मन-मुख—दाँत वाली, नर संगम की कामना करने वाली, प्रिय कथा में इच्छा करने वाली, ढीली कुक्षि, आँख और केशों वाली, भुजा, कुच, श्रोणि, नाभि, ऊरु, जघन भाग, स्फिक् (नितम्ब) में फड़कन वाली एवं हर्ष-उत्सुकता से युक्त स्त्री को ऋतुमती जानना चाहिए।

ऋतौ प्रथमदिवसात्प्रभृति ब्रह्मचारिणी दिवास्वप्नाञ्जनाभ्यपातस्नानानुलेपनाभ्यङ्गनखच्छेदनप्रधावनहसनकथनातिशब्दश्र

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

णावलेखनानिलायासान् परिहरेत्। किङ्कारणं ? दिवा स्वपन्त्याः स्वापशीलोऽञ्जनादन्धो रोदनाद्विकृतदृष्टिः स्नानानुलेपनाद्दुःखशीलस्तैलाभ्यङ्गात् कुष्ठी नखापकर्त्तनात् कुनखी प्रधावनाच्चलो हसनाच्छ्यावदन्तौष्ठतालुजिह्वः प्रलापी चातिकथनादतिशब्दश्रवणाद्बधिरोऽवलेखनात्खलतिर्मारुतायाससेवनादुन्मत्तो गर्भो भवतीत्येवमेतान् परिहरेत्। दर्भसंस्तरशायिनीं करतलशरावपर्णान्यतमे हविष्यभोजिनीं त्र्यहञ्च भर्त्तुः संरक्षेत। ततः शुद्धस्नातां चतुर्थेऽहन्यहतवाससमलंकृतां कृतमङ्गलस्वस्तिवाचनां भर्त्तारं दर्शयेत्। कस्य हेतोः ?

ऋतु के पहले दिन से ही स्त्री ब्रह्मचारिणी रह कर दिवाशयन, सुरमा, अश्रुपात, स्नान, अनुलेपन, मालिश, नखकर्त्तन, दौड़ना, हँसना, कथन, अतिशब्द सुनना, जमीन खुरचना, तेज हवा का सेवन और परिश्रम त्याग दे। क्योंकि दिन में सोने से निद्रालु, सुरमा से अन्धा, रोने से विकृत दृष्टि, स्नान-अनुलेपन से दुःखी, तेल की मालिश से कुष्ठी, नख काटने से कुनखी, दौड़ने से चञ्चल, हँसने से काले दाँत, ओठ और जीभ वाला, अति कथन से प्रलापी, अति शब्द श्रवण से बहिरा, जमीन खुरचने से खलति (बाल झरने वाला); तेज वायु सेवन और परिश्रम से पागल गर्भ (बच्चा) होता है। इसलिए इनको त्याग दे। कुशासन पर सोने वाली एवं हाथ-कसोरा या पत्ता में से किसी में खीर खाने वाली रजस्वला स्त्री तीन दिन तक पति द्वारा सुरक्षित (संगम-रहित) रहे। उसके बाद चौथे दिन शुद्ध (रजःस्राव रहित) हुई स्नान की हुई अनुपहत वस्त्र पहन कर, अलंकार धारण किये, मंगल और स्वस्तिवाचन कराके स्त्री अपने पति को देखे। वह किस कारण ?

पूर्व्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमङ्गना।
तादृशं जनयेत् पुत्रं भर्त्तारं दर्शयेदतः॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

ततो विधानं पुत्रीयमुपाध्यायः समाचरेत् ।
कर्मान्ते च क्रमं ह्येनमारभेत विचक्षणः ॥

इसलिए कि ऋतुस्नाता स्त्री पहले जैसा पुरुष देखती है वैसा ही पुत्र उत्पन्न करती है, अतः वह पहिले पति को देखे । तदन्तर पुरोहित द्वारा पुत्रीय संस्कार करे । चतुर मनुष्य इस कर्म के अन्त में यह क्रम आरम्भ करे—

गर्भाधानविधिः

ततोऽपराह्णे पुमान् मासं ब्रह्मचारी सर्पिःस्निग्धः सर्पिःक्षीराभ्यां शाल्योदनं भुक्त्वा मासं ब्रह्मचारिणीं तैलस्निग्धां तैलमाषोत्तराहारां नारीमुपेयाद्रात्रौ सामादिभिरभिविश्वास्य विकल्प्यै वञ्चतुर्थ्यां षष्ठ्यांमष्टभ्यां दशम्यां चोपेयादिति पुत्रकामः ।

एषूत्तरोत्तरं विद्यादायु रारोग्यमेव च ।
प्रजासौभाग्यमैश्वर्यं बलञ्च दिवसेषु वै ॥

अतः परं पञ्चम्यां सप्तम्यां नवम्यामेकादश्याञ्च स्त्रीकामः । त्रयोदशीप्रभृतयो निन्द्याः ।

युग्मेषु तु पुमान् प्रोक्तो दिवसेष्वन्यथाबला ।
पुष्पकाले शुचिस्तस्मादपत्यार्थी स्त्रियंव्रजेत् ॥ [सु०]

उसके बाद अपराह्ण में एक महीने से ब्रह्मचर्य पालन करने वाला पुरुष घृत से स्निग्ध होकर घी दूध से शालि चावल का भात खाकर एक मास पहले से ब्रह्मचर्य धारण करती हुई, तेल से स्निग्ध, तेल उरद प्रधान आहार खायी हुई स्त्री के साथ रात्रि में सान्त्वना आदि द्वारा विश्वास उत्पन्न कर मैथुन करे । इस प्रकार कार्य कर पुत्राभिलाषी रजःप्रारम्भ से चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, दशमी और द्वादशवीं में मैथुन करे ।

इन दिनों में उत्तरोत्तर अधिक-आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, बल और सन्तति का सौभाग्य जानना चाहिये । कन्याभिलाषी पञ्चमी, सप्तमी, नवमी और एकादशवीं तिथि में मैथुन करे ।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

त्रयोदशी आदि तिथियाँ निन्दित हैं। युग्म (जुस) तिथियों में मैथुन करने से पुत्र अन्यथा कन्या प्राप्त होती है। इसलिये सन्तानेच्छु पुरुष (ऋतु) काल में पवित्र होकर स्त्रीगमन करे।

तत्र प्रथमे दिवसे ऋतुमत्यां मैथुनगमनमनायुष्यं पुंसां भवति। यश्च तत्राधीयते गर्भः स प्रसवमानो विमुच्यते। द्वितीयेऽप्येवं सूतिकागृहे वा। तृतीयेऽप्येवमसम्पूर्णाङ्गोऽल्पायुर्वा भवति। चतुर्थे तु सम्पूर्णाङ्गो दीर्घायुश्च भवति। न च प्रवर्तमाने रक्ते बीजं प्रविष्टं गुणकरं भवति। यथा नद्यः प्रतिस्रोतःप्लावि-द्रव्यं प्रक्षिप्तं प्रतिनिवर्तते नोर्ध्वं गच्छति तद्वदेव द्रष्टव्यम्। तस्मान्नियमवर्ती त्रिरात्रं परिहरेत्। अतः परं मासादुपेयात्।

नियतं दिवसेऽतीते संकुचत्यम्बुजं यथा।
ऋतौ व्यतीते नार्यास्तुयोनिःसंव्रियते तथा॥

[सु० शा० अ० २]

ऋतुकाल में पहले दिन गमन करना पुरुषों के लिए अनायुष्य होता है। जो गर्भ उस समय धारण किया जाता है वह पैदा होते ही मर जाता है। दूसरे दिन गमन करने से भी ऐसा ही होता है अथवा प्रसूति गृह में ही बालक की मृत्यु हो जाती है। तीसरे दिन भी ऐसा ही अथवा अपूर्ण अंग एवं अल्पायु वाला होता है। चौथे दिन मैथुन करने से पूर्णाङ्ग एवं दीर्घायु होता है। बहते हुए रक्त में डाला गया बीज गुणकारी नहीं होता जिस प्रकार नदी में बहाव के विरुद्ध दिशा में छोड़ा हुआ द्रव्य लौट आता है ऊपर नहीं जाता, उसी प्रकार यहाँ भी समझना चाहिए। इसलिए नियम पालन करती हुई रजस्वला को तीन दिन त्याग दे। इसके एक महीने बाद यथानियम पुनः गमन करे।

जिस प्रकार दिन बीत जाने पर कमल निश्चय संकुचित हो जाता है उसी प्रकार ऋतु बीत जाने पर स्त्रियों की योनि (गर्भाशय) बन्द हो जाती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

स्वप्नः

निद्राहेतुः

यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्लान्विताः ।
विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपति मानवः ॥

[चरक:

कार्य करने वाली इन्द्रियाँ जब मन के थक जाने पर थकावट से युक्त होती हैं और अपने विषयों से हट जाती हैं तब मनुष्य सोता है।

देहं विश्रमते यस्मात्तस्मान्निद्रा प्रकीर्तिता ।

निद्रान्तु वैष्णवीं पाप्मानमुपदिशन्ति सा स्वभावत एव सर्व प्राणिनोऽभिस्पृशति ।

देहविश्राम के लिये ही नींद है। नींद भगवान की माया है, वह पाप (तमोजन्य) कही गयी है (इसी हेतु देवताओं को नींद नहीं लगती)। वह स्वभावतः सभी प्राणियों को स्पर्श करती है।

तत्र यदा संज्ञावहानि स्रोतांसि तमोभूयिष्ठः श्लेष्मा प्रतिपद्यते तदा तामसी नाम निद्रा सम्भवत्यनवबोधिनी सा प्रलयकाले। तमोभूयिष्ठानामहःसु निशासु च भवति। रजोभूयिष्ठानामनिमित्तम्। सत्वभूयिष्ठानामर्धरात्रे । क्षीणश्लेष्मणामनिलबहुलानां मनःशरीराभितापवताञ्च नैव सा वैकारिकी भवति।

भवन्ति चात्र ।
हृदयञ्चेतनास्थानमुक्तं सुश्रुत ! देहिनाम् ।
तमोऽभिभूते तस्मिंस्तु निद्रा विशतिदेहिनाम् ॥
निद्राहेतुस्तमः सत्वं बोधने हेतुरुच्यते ।
स्वभाव एव वा हेतुर्गरीयान् परिकीर्त्यते ॥

[सु० शा०

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जब संज्ञावाही स्रोतों में तमप्रधान कफ प्राप्त होता है तब मनुष्यों को न जगाने वाली तामसी नींद आती है वह प्रलय काल (मृत्यु काल) में होती है। तम प्रधान जनों को नींद दिन रात आती रहती है। रजोगुण प्रधान जनों को अनिमित्त (वेवक्त) आती है। सत्व प्रधान जनों जो आधी रात आती है, क्षीणश्लेष्मा, वातबहुल और पीड़ित मनशरीर वालों को नहीं आती। वह विकार जन्य होती है। भगवान् धन्वन्तरि ने कहा है—हृदय (मस्तिष्क) देह धारियों का चेतना स्थान है। उसके तम व्याप्त होने पर नींद प्रविष्ट होती है। निद्रा का कारण तम और जागरण का कारण सत्व गुण की प्रवृत्ति है। अथवा इन दोनों का सबसे बड़ा कारण प्राकृतिक ही समझा जाता है।

निद्राप्रकाराः

तमोभवा श्लेष्मसमुद्भवा च मनःशरीरश्रमसम्भवा च।
आगन्तुकी व्याध्यनुवर्तिनी च रात्रिस्वभावप्रभवा च निद्रा॥
रात्रिस्वभावप्रभवा मता या तां भूतधात्रीं प्रवदन्ति निद्राम्।
तमोभवामाहुरघस्य मूलं, शेषं पुनर्व्याधिषु निर्दिशन्ति॥

नींद के कई प्रकार हैं—तमोजन्य, कफोत्पन्न और मानसिक शारीरिक श्रमोत्पन्न, आगन्तुक, व्याधि की अनुगामिनी एवं रात में स्वाभाविक निद्रा। रात में जो स्वाभाविक निद्रा है उसे प्राणियों को धारण करने वाली कहा गया है। तमोत्पन्न पाप (आयुः क्षय) का मूल है। शेष निद्रायें व्याधियों में कही गयी हैं।

निद्राशक्तिः

निद्रायत्तं सुखं दुःखं पुष्टिः कार्श्यं बलाबलम्।
वृषता क्लीवता ज्ञानमज्ञानं जीवितं न च॥
(च० सू० अ० २१]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सुख-दुःख, पुष्टि, कृशता, बल, निर्बलता, वृषता, नपुंसकता, ज्ञान-अज्ञान, जीवन और मरण ये सब नींद के अधीन हैं।

युक्त निद्रागुणाः

सैव युक्ता पुनर्युक्ते निद्रा देहं सुखायुषा।
पुरुषं योगिनं सिद्ध्या सत्या बुद्धिरिवागता॥
[च० सू० अ० २१]

वही निद्रा युक्ति संगत होने पर शरीर को सुख और आयु से युक्त करती है। योगी पुरुषों में सिद्धि से सत्य बुद्धि के समान वह मनुष्यों में आती है।

पुष्टिवर्णबलोत्साहमग्निदीप्तिमतन्द्रिताम्।
करोति धातुसाम्यञ्च निद्रा काले निषेविता॥
[सू० चि० अ० २४]

यथा समय सेवित निद्रा—पुष्टि, बल, उत्साह, अग्निदीप्ति, अतन्द्रिता (चेतनता) और धातु-साम्य करती है।

देहवृत्तौ यथाऽऽहारः तथा स्वप्नः सुखो मतः।
[च० सू० अ० २१]

देह धारण के लिए जिस प्रकार आहार आवश्यक है, उसी प्रकार निद्रा भी आरोग्यप्रद, आवश्यक कही गयी है।

यथाकालमतो निद्रां रात्रौ* सेवेत सात्म्यतः॥
[वा० सू० अ० ७]

इसलिये रात में यथासमय सात्म्यानुसार निद्रा का सेवन करे।

---

* अहोरात्रे विभजते सूर्यो मानुषदैविके।
रात्रिः स्वप्नाय भूतानां चेष्टायै कर्मणामहः॥
(मनुः)

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भोजनानन्तरं निद्रा वातं हरति पित्तहृत् ।
कफं करोति वपुषः पुष्टिंसौख्यं तनोति हि ॥
[भा० प्र०]

भोजनोपरान्त नींद वायु पित्त को हरती है, कफ करती है। और शरीर में पुष्टि एवं सौख्य का विस्तार करती है।

अयुक्त निद्रादोषाः

अकालेऽतिप्रसङ्गाच्च नच निद्रा निषेविता ।
सुखायुषी परा कुर्यात्कालरात्रिरिवापरा ॥
[च० सू० अ० २१]

असमय एवं अधिक सेवित तथा न सेवन की हुई नींद दूसरी काल-रात्रि के समान सुख और आयु को हरती है।

अकालशयनान्मोहज्वरस्तैमित्यपीनसाः ।
शिरोरुक्शोफहृल्लासस्रोतोरोधाग्निमन्दताः ॥
[वा० सू०]

असमय सोने से मोह (मनो विभ्रम), ज्वर, शरीर में गीलापन के समान, जुकाम, सिर दर्द, शोथ, जी मिचलाना, स्रोतों की रुकावट और अग्निमान्द्य होता है।

भुक्तमात्रस्य च स्वप्नाद्धन्त्यग्निं कुपितः कफः ।
[मा० नि०]

भोजन करते ही सो जाने से कुपित कफ अग्नि (पाचन शक्ति) का नाश कर डालता है।

मितस्वप्ने लाभः

तस्मान्नजागृयाद्रात्रौ दिवास्वप्नञ्च वर्जयेत् ।
ज्ञात्वा दोषकरावेतौ बुधः स्वप्नं मितं चरेत् ॥
अरोगः सुमना ह्येवं बलवर्णान्वितो वृषः ।
नातिस्थूलकृशः श्रीमान् नरो जीवेत् समाः शतम् ॥
[सु० शा० अ० ४]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

इसलिए रात में न जागे और न दिन में सोवे। इन दोनों को दोष कारक जानकर बुद्धिमान मात्रापूर्वक ही निद्रा सेवन करे।

इस प्रकार निरोग, प्रसन्न मन, बल वर्ण युक्त, वृष (वीर्यवान्) न अति स्थूल न कृश और लक्ष्मीवान् (या तेजस्वी) होकर मनुष्य सौ वर्ष जीता है।

निद्राविशेषाः

रात्रौ जागरणं रूक्षं स्निग्धं प्रस्वपनं दिवा।
अरूक्षमनभिष्यन्दित्वासीनप्रचलायितम् ॥

[च० सू० अ० २१]

रात में जागरण रूक्ष, दिवा स्वप्न स्निग्ध, बैठकर ऊँघना नरूक्ष और न अभिष्यन्दि है।

शयनं पित्तनाशाय वातनाशाय मर्दनम्।

[भा० प्र०]

शयन पित्त नाशन एवं मर्दन (संवाहन) वातनाशन के लिए है।

कफमेदोविषार्तानां रात्रौ जागरणं हितम्।

[सु० शा० अ० ४]

कफ-मेद-विष पीड़ितों के लिए रात्रि-जागरण हितकारी है।

असात्म्याज्जागरादर्धं प्रातः सुप्यादभुक्तवान्।

[वा० सू० अ० ७]

रात्रि में असात्म्य (अभ्यास के प्रतिकूल) जागरण होने पर आधे समय (जागरणकाल का आधा) तक प्रातः बिना खाये सोवे।

निद्रानाशे हेतवः

निद्रानाशोऽनिलात्पित्तान्मनस्तापात्क्षयादपि।
सम्भवत्यभिघाताच्च प्रत्यनीकैः प्रशाम्यति ॥

[सु० शा० अ० ४]

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वायु, पित्त की वृद्धि, मनस्ताप, धातुक्षय एवं चोट लगने से निद्रा-नाश होता है और इनके विपरीत कारणों से वह शान्त होता है।

निद्रानाशाद्रोगोत्पत्तिः

निद्रानाशादङ्गमर्दशिरोगौरवजृम्भिकाः।
जाड्यं ग्लानिभ्रमापक्तिस्तन्द्रा रोगाश्च वातजाः॥

[वा० सू० अ० ७]

निद्रानाश से अंगमर्द, सिर में भारीपन, जँभाई, जड़ता, ग्लानि, चक्कर, अजीर्ण, ऊँहाई एवं वातजन्य रोग होते हैं।

निद्रानयनोपायाः

कान्ताबाहुलताश्लेषो निर्वृतिः कृतकृत्यता।

[वा० सू०]

प्रिया की बाहुलता में आलिंगन, शान्ति, (निश्चिन्ता) एवं कृत-कृत्यता (कार्य पूर्ण कर लेना) ये नींद लाने के उपाय हैं।

अभ्यंगोत्सादनं स्नानं ग्राम्यानूपौदका रसाः।
शाल्यन्नं सदधि क्षीरं स्नेहो मद्यं मनः सुखम्॥
मनसोऽनुगुणा गन्धाः शब्दाः संवाहनानि च।
चक्षुषस्तर्पणं लेपः शिरसो वदनस्य च॥
स्वास्तीर्णं शयनं वेश्म सुखं कालस्तथोचितः।
आनयन्त्यचिरान्निद्रां प्रनष्टा या निमित्ततः।

[च० सू० अ० २१]

किसी कारण से नष्ट हुई नींद को मालिश, उबटन, स्नान, ग्रामीण-आनूप-जलीय मांसरस, दही युक्त शालि चावल, दूध, मद्य, मानसिक सुख, मनःप्रिय गन्ध-शब्द, देह का मर्दन, नेत्रों का तर्पण, सिर एवं मुख पर लेप, अच्छी तरह बिछी हुई शय्या, सुखदायी घर तथा अनुकूल (अभ्यस्त) समय शीघ्र ला देते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

एतान्येव च भूयिष्ठं निद्रालुः परिवर्जयेत्।

[अ० सं० सू०]

निद्रालु व्यक्ति (जिन्हें नींद बहुत आती है) इन्हें विशेषतः त्याग दे।

अहितनिद्रावारणोपायाः

(निद्रानाशहेतवो वा)

कायस्य शिरसश्चैव विरेकश्छर्दनं भयम्।
चिन्ता क्रोधस्तथा धूमो व्यायामो रक्तमोक्षणम्॥
उपवासोऽसुखा शय्या सत्त्वौदायं तमोजयः।
निद्राप्रसंगमहितं वारयन्ति समुत्थितम्॥
एत एव च विज्ञेया निद्रानाशस्य हेतवः।
कार्यं कालो विकारश्च प्रकृतिर्वायुरेव च॥

[च० सू० अ० २१]

शरीर एवं शिर का विरेचन (विरेचन और नस्य) वमन, भय, क्रोध, धूमपान, व्यायाम, रक्तमोक्षण, उपवास, दुखदायी शय्या, सत्व गुण की वृद्धि, तमोगुण पर विजय, ये उठे हुए अहित निद्रा-प्रसंग को दूर करते हैं। कार्यसंलग्नता, काल (अप्राप्त या अतिक्रान्त), विकार, प्रकृति तथा वायुवृद्धि भी निद्रानाश के कारण हैं।

नियतसमये निद्रागमनोपायाः

ब्रह्मचर्यरतेर्ग्राम्यसुखनिस्पृहचेतसः।
निद्रा सन्तोषतृप्तस्य स्वंकालं नातिवर्तते॥

[वा० सू० अ० ७]

ब्रह्मचर्य में रत, ग्राम्यधर्म (मैथुन) से निस्पृहचित्त वाले और सन्तोष से तृप्त जन को निद्रा अपने समय का अतिक्रमण नहीं करती। अर्थात् ठीक समय पर आ ही जाती है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

निशान्ते जलपाने गुणाः

कासश्वासातिसारज्वरपिड़ककटीकुष्ठकोठप्रकारान्,
मूत्राघातोदरार्शःश्वयथुगलशिरः कर्णशूलाक्षिरोगान् ।
ये चान्ये वातपित्तक्षतजकफकृता व्याधयः सन्ति जन्तोः,
तांस्तानभ्यासयोगादपनयति पयःश्रीपीतमन्ते निशायाः ॥

[भा० प्र०]

नित्य प्रति अभ्यास से रात के अन्त (ऊषः काल) में पिया हुआ जल—खाँसी, श्वास, अतिसार, ज्वर, पिड़िका, कटिशूल, कुष्ठ, विविध कोठ (चकत्ते जलपित्ती आदि) मूत्राघात, उदर, अर्श, शोथ, गला-सिर-कान के शूल, नेत्र रोग तथा मनुष्यों को होने वाली अन्यान्य वात-पित्त-कफजन्य बीमारियों को नाश करता है ।

ब्रह्मचर्यम्

आहारशयनब्रह्मचर्यैर्युक्त्या प्रयोजितैः ।
शरीरं धार्यते नित्यमागारमिव धारणैः ॥

[वा० सू० अ० ७]

युक्ति पूर्वक प्रयुक्त आहार, शयन और ब्रह्मचर्य द्वारा घरनों से घर के समान, नित्य शरीर धारण किया जाता है ।

आहारो वर्णितः पूर्वं शयनञ्चापि वर्णितम् ।
स्वास्थ्यप्रदं सदा सेव्यं ब्रह्मचर्यन्तु वर्ण्यते ॥
स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ।
सङ्कल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिर्वृत्तिरेव च ॥

---

* अम्भसः प्रसृतीरष्टौ रवावनुदिते पिवेत् ।
वातपित्तकफान् जित्वा जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

एतन्मैथुनमष्टाङ्गं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥
विपरीतं ब्रह्मचर्यम्— [या० व०]
आयुरारोग्यसौख्यदम् ॥

आहार का वर्णन हो चुका, शयन का वर्णन भी हो चुका। अब स्वास्थ्य प्रदाता और सर्वदा सेवन करने योग्य ब्रह्मचर्य का वर्णन करते हैं :—स्मरण, कीर्त्तन, क्रीड़ा, घूरना (नजर गड़ाकर देखना), गुह्य भाषण, संकल्प (मन में निश्चय करना), अध्यवसाय (उद्योग) एवं मैथुन की क्रिया की सम्पन्नता ये मैथुन के आठ अङ्ग पण्डितों ने कहे हैं।

इनके विपरीत आचरण आयु आरोग्य और सौख्य को देने-वाला ब्रह्मचर्य है।

वीर्यरक्षोपायाः

"प्रोक्तं मैथुनमष्टाङ्गं त्यजेद् ब्रह्मपरोऽथवा।"
ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदारनिरतः सदा ॥
पर्ववर्जं व्रजेच्चैनां तद्व्रतो रतिकाम्यया। [मनुः]

ब्रह्मचर्यपरायण हो कहे हुए आठ प्रकार के मैथुनों को त्याग दे। अथवा ऋतुकाल में तथा अपनी पत्नी में ही सर्वदा रमण करनेवाला हो तथा एक पत्नीव्रत धारण करता हुआ रति की इच्छा से पर्वरहित तिथियों में स्त्रीगमन करे।

तीक्ष्णाम्लाद्यतिसेवाञ्च जह्यान्नित्यमतन्द्रितः।
एवं रक्षितवीर्यः स्यात्स्वस्थवृत्तपरायणः ॥

अतन्द्रित (निरलस) होकर तीक्ष्ण और अम्ल आदि पदार्थों का अति सेवन त्याग दे। इस प्रकार सुरक्षितवीर्य होकर स्वस्थ-वृत्त में सर्वदा लगा रहे।

ब्रह्मचर्यफलम्

धर्म्यं यशस्यमायुष्यं लोकद्वयरसायनम्।
अनुमोदामहे ब्रह्मचर्यमेकान्तनिर्मलम् ॥ [वा० सू०

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

धर्म यश एवं आयु को करने वाले एवं दोनों लोकों (इहलोक, परलोक) के लिये रसायनस्वरूप निर्मल ब्रह्मचर्य निश्चित अनुमोदनीय है।

आहारस्य परं धाम शुक्रं तद्रक्ष्यमात्मनः।
क्षये ह्यस्य बहून् रोगान् मरणं वा नियच्छति॥
नैव देवा न गन्धर्वा न पिशाचा न राक्षसाः।
न चान्ये स्वयमक्लिष्टमुपक्लिश्यन्ति मानवम्॥
[च०]

आहार का परम तेज अपना शुक्र है। इसकी रक्षा करनी चाहिये, क्योंकि इसके क्षय से बहुत रोग अथवा मृत्यु प्राप्त होती है। स्वयं अक्लिष्ट (क्लेश न पाये हुए स्वस्थ) मनुष्य को देवता, गन्धर्व, पिशाच, राक्षस और अन्यान्य कोई भी क्लेश नहीं देते हैं।

ऋतुचर्या

अथातः ऋतुचर्याध्यायं व्याख्यास्यामः। कालो हि नाम भगवान् स्वयम्भूरनादिमध्यनिधनोऽत्र रसव्यापत्संपत्ती जीवितमरणे च मनुष्याणामायत्ते स सूक्ष्मामपि कलां न लीयत इति कालः संकलयति कालयति वा भूतानीति कालः। तस्य संवत्सरात्मनोभगवानादित्यो गतिविशेषेणाक्षिनिमेषकाष्ठाकलामुहूर्त्ता होरात्रपक्षमासर्त्वयनसंवत्सरयुगप्रविभागं करोति। तत्र लघ्वक्षरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेषः। पञ्चदशाक्षिनिमेषाः काष्ठा। त्रिंशत्काष्ठाः कलाः। विंशतिकलो मुहूर्तः कलादशभागश्च। त्रिंशन्मुहूर्तमहोरात्रम्। पञ्चदशाहोरात्राणि पक्षः। स च द्विविधः शुक्लः कृष्णश्च तौ मासः॥

अब ऋतुचर्या नामक अध्याय की व्याख्या करेंगे—

भगवान् काल स्वयम्भू (स्वयं उत्पन्न होने वाले) अनादि मध्यरहित एवं अनन्त हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

इसी में रसों की व्यापत्ति, सम्पत्ति एवं मनुष्यों का जीवन-मरण निहित है। जिसकी सूक्ष्म कला भी नष्ट नहीं होती अथवा जो प्राणियों को संकलित (एकत्रित) करता है या जो प्राणियों को खा जाता है वही काल है। संवत्सर आत्मावाले उस काल को भगवान सूर्य अपनी गतिविशेष से उसके अक्षिनिमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त्त, दिन-रात, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष एवं युग—ये विभाग करते हैं।

लघु अक्षर उच्चारण मात्र के समय का अक्षिनिमेष, पन्द्रह अक्षिनिमेष का काष्ठा, तीस काष्ठा की कला, बीस सही एक बटा दस ($२०\frac{१}{१०}$) कला का मुहूर्त, तीस मुहूर्त का दिन रात, पन्द्रह दिन-रात का पक्ष होता है। पक्ष दो होता है—शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष। इन दोनों को मिलाकर एक मास कहा जाता है।

तत्र माघादयोद्वादशमासा द्विमासिकमृतुं कृत्वा षडृतवो भवन्ति। ते शिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्ताः। तेषां तपस्तपस्यौ शिशिरः, मधुमाधवौवसन्तः, शुचिशुक्रौ ग्रीष्मः, नभोनभस्यौ वर्षा, इषोर्जौ शरत्, सहःसहस्यौ हेमन्त इति। त एते शीतोष्णवर्षलक्षणाश्चन्द्रादित्ययोः कालविभागकरत्वादयने द्वे भवतो दक्षिणमुत्तरञ्च। अथ खल्वयने द्वे युगपत्संवत्सरो भवति। ते तु पञ्च युगमिति संज्ञां लभन्ते। स एष निमेषादियुगपर्यन्तः कालश्चक्रवत्परिवर्तमानः कालचक्रमुच्यत इत्येके।

[सु० सू० अ० ६]

माघ आदि बारह महीनों में दो-दो महीने प्रत्येक ऋतु के हिसाब से क्रमशः छ ऋतुएँ होती हैं। वे शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद और हेमन्त हैं। उनमें माघ फागुन-शिशर, चैत बैसाख-वसन्त, जेठ आषाढ़-ग्रीष्म, सावन भादों-वर्षा, क्वार कार्त्तिक-शरद् और अगहन पूस-हेमन्त ऋतु होता है। शीत, उष्ण और वर्षा लक्षणों वाले इन ऋतुओं से चन्द्र-सूर्य द्वारा काल विभाग किये जाने के कारण दो

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अयन होते हैं—दक्षिणायन और उत्तरायण। दो अयनों के योग से एक संवत्सर (वर्ष) होता है। पाँच वर्ष की युग संज्ञा होती है। चक्र के समान घूमता हुआ निमेष से लेकर युग तक, यह काल कुछ लोगों द्वारा काल चक्र कहलाता है।

तस्याशिताद्यादाहाराद्बलं वर्णश्च वर्धते।
यस्यतु सात्म्यं विदितं श्रेष्टाहारव्यपाश्रयम्॥

चेष्टा और आहार सम्बन्धी ऋतुसात्म्य जिसको विदित है, उसके अनुसार भक्ष्य आदि आहार से बल और वर्ण बढ़ता है।

इह खलुसंवत्सरं षडंगमृतुविभागेन विद्यात्। तत्रादित्यस्योदगयनमादानं च त्रीनृतून् शिशिराहीन् ग्रीष्मान्तान् व्यवस्येत् वर्षादीन् पुनर्हेमन्तान्तान् दक्षिणायनं विसर्गं च।

वर्ष छ ऋतुओं के विभाग से जानना चाहिए। शिशिर से लेकर ग्रीष्म तक की तीन ऋतुओं को उत्तरायण या आदान काल कहना चाहिये और वर्षा से हेमन्त तक दक्षिणायन या विसर्ग काल कहना चाहिये।

विसर्गे च पुनर्वायवो नातिरूक्षाः प्रावान्तीतरे पुनरादाने, सोमश्चाप्याहतबलः शिशिराभिर्भाभिरापूरयञ्जगदाप्यायति शश्वदतो विसर्गः सौम्यः, आदानं पुनराग्नेयं, तावेतावर्कवायू सोमश्च कालस्वभावमार्गपरिगृहीताः कालर्तुरसदोषदेहबलनिर्वृत्तिप्रत्ययभूताः समुपदिश्यन्ते।

विसर्ग काल में वायु अधिक रूक्ष नहीं बहती पर आदान काल में वायु अधिक रूक्ष बहती है। चूँकि विसर्ग काल में निराबाध बल वाला चन्द्रमा ठण्ढी किरणों से संसार को पूर्ण करता हुआ सर्वदा पुष्ट करता है, इसलिये विसर्ग काल सौम्य हैं और आदान काल में ऐसा नहीं होता अपितु सूर्य बली होता है अतः आग्नेय (उष्ण) है। काल-स्वभाव द्वारा मार्ग ग्रहण किये हुए ये दोनों सूर्य और वायु तथा चन्द्रमा काल ऋतु रस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

दोष और शारीरिक बल की उत्पत्ति में कारण स्वरूप कहे गये हैं।

तत्र रविर्भाभिराददानो जगतः स्नेहं वायवस्तीव्ररूक्षाश्चोप. शोषयन्तः शिशिरवसन्तग्रीष्मेष्वृतुषु यथाक्रमं रौक्ष्यमुत्पाद्. यन्तो रूक्षान् रसान् तिक्तकषायकटुकांश्चाभिवर्धयन्तो नृणां दौर्बल्यमावहन्ति।

आदान अर्थात् शिशिर, बसन्त ग्रीष्म ऋतु में संसार के स्नेह को सूर्य अपनी किरणों द्वारा खींचता हुआ और तीव्र रूक्ष वायु उसे सुखाता हुआ क्रमशः रूक्षता उत्पन्न करता है। एवं, तिक्त-कषाय कटु नामक रूक्ष रसों को बढ़ा कर मनुष्यों में दुर्बलता उत्पन्न करता है।

वर्षाशरद्धेमन्तेष्वृतुषु तु दक्षिणाभिमुखेऽर्के कालमार्गमेघ. वातवर्षाभिहतप्रतापे, शशिनि चाप्याहतबले, माहेन्द्रसलिलप्र. शान्तसंतापे जगत्यरूक्षा रसाः प्रवर्धन्तेऽम्ललवणमधुराः, यथा. क्रमं तत्र बलमुपचीयते नृणामिति॥

विसर्ग अर्थात् वर्षा, शरद्, हेमन्त ऋतुओं में सूर्य के दक्षिणायन होने पर काल, मार्ग, मेघ, हवा, वर्षा के द्वारा सूर्य-ताप के क्षीण हो जाने, चन्द्रमा के पूर्ण बलिष्ठ होने और वर्षा जल के द्वारा संसार के ताप शान्त हो जाने पर अरूक्ष (स्निग्ध) अम्ल लवण मधुर रस बढ़ते हैं। अतः क्रमशः मनुष्यों का बल बढ़ता है।

भवन्ति चात्र
मध्ये मध्यबलं, त्वंते श्रेष्ठमग्रे च निर्दिशेत्।
आदावन्ते च दौर्बल्यंविसर्गादानयोर्नृणाम्॥
[च० सू० अ० ६

कहा भी है। इन दोनों (विसर्ग और आदान) कालों में से प्रत्येक के मध्य में मध्यबल, विसर्ग के अन्त तथा आदान के आदि में श्रेष्ठ बल होता हैं। एवं विसर्ग के आदि में तथा आदान के अन्त में दुर्बलता बढ़ती है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इह तु वर्षाशरद्धेमन्तवसन्तग्रीष्मप्रावृषःषड्ऋतवो॰ भवन्ति दोषोपयप्रकोपोपशमनिमित्तम्। ते तु भाद्रपदाद्येन द्विमासिकेन व्याख्याताः। तद्यथा। भाद्रपदाश्वयुजौ वर्षा। कार्त्तिकमार्गशीर्षौ शरत्। पौषमाघौ हेमन्तः। फाल्गुनचैत्रौ वसन्तः। वैशाखज्येष्ठौ ग्रीष्मः। आषाढ़श्रावणौ प्रावृडिति। तत्र वर्षास्वोषधयस्तरुण्योऽल्पवीर्य्या आपश्चाप्रसन्नाः क्षितिमलप्रायास्ता उपयुज्यमाना नभसि मेघावते जलप्रक्लिन्नायां भूमौ क्लिन्न-

---

टिप्पणी

॰चयकोपशमा यस्मिन् दोषाणां सम्भवन्ति हि।
ऋतुषट्कं तदाख्यातं रवे राशिषु सङ्क्रमात्॥
ग्रीष्मो मेषवृषौ प्रोक्तौ प्रावृड् मिथुनकर्कयोः।
सिंहकन्ये स्मृता वर्षा तुलावृश्चिकयोः शरत्॥
धनुर्म्मीनौ च हेमन्तो वसन्तः कुम्भमीनयोः।
(शा० सं०)

संशोधनमधिकृत्यैते वर्षादय ऋतवः सञ्चयादिज्ञानार्थं पृथगुक्ता भगवता सुश्रुतेन। तथैव चरकेणाऽपि रोगभिषग्जितोये विमाने—

'हेमन्तो ग्रीष्मो वर्षा चेति शीतोष्णवर्षलक्षणास्त्रय ऋतवो भवन्ति तेषामन्तरेष्वितरे साधारण लक्षणास्त्रय ऋतव प्रावृड्शरद्वसन्ता इति। प्रावृडिति प्रथमः प्रविष्टः कालः तस्यानुबन्धो हि वर्षा, एवमेते संशोधनमधिकृत्य षड् विभज्यन्ते ऋतव इति। (च० वि० स्था० ८)

शिशिरादयस्तु रसं बलञ्चाधिकृत्योक्ताः।
अन्ये त्वन्यथा व्याख्यानयन्ति—गङ्गाया दक्षिणे कूले वर्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

देहानां प्राणिनां शीतवातविष्टब्धाग्नीनां विदह्यन्ते विदाहात्पित्त-सञ्चयमापादयन्ति स सञ्चयः शरदि प्रविरलमेघे वियत्युपशुष्यति पङ्क ऽर्ककिरणप्रविलापितः पैत्तिकान् व्याधीन् जनयति। ता एवौषधयः कालपरिणामात् परिणतवीर्य्या बलवत्यो हेमन्ते भवन्त्यापश्च प्रसन्नाः स्निग्धा अत्यर्थं गुर्व्यस्ता उपयुज्यमाना मन्दकिरणत्वाद्भानोः सतुषारपवनोपस्तम्भितदेहानां देहिनामबिदग्धाः स्नेहाच्छैत्याद्गौरवादुपलेपाच्च श्लेष्मणः सञ्चयमापादयन्ति, स सञ्चयो वसन्तेऽर्करश्मिप्रविलापित ईषत्स्तब्धदेहानां देहिनां श्लैष्मिकान् व्याधीन् जनयति। ता एवौषधयो निदाघे निःसारा रूक्षा अतिमात्रं लघ्व्यो भवन्त्यापश्च, ता उपयुज्यमानाः सूर्य्यप्रतापोपशोषितदेहानां देहिनांरौक्ष्याल्लघुत्वाद्वैशद्याच्च वायोः सञ्चयमापादयन्ति स सञ्चयः प्रावृषि चात्यर्थं जलोपक्लिन्नायां भूमौ क्लिन्नदेहानां प्राणिनां शीतवातवर्षैरितो वातिकान् व्याधीन् जनयति। एवमेष दोषाणां सञ्चयप्रकोपहेतुरुक्तः।

आयुर्वेद में वर्षा, शरद, हेमन्त, वसन्त, ग्रीष्म और प्रावृट् ये छ ऋतुयें दोषों के उपचय, प्रकोप और शमन के निमित्त कही गयी हैं। उनकी गणना भाद्रपद से दो दो मास करके बताई गई है। भादों, क्वार—वर्षा, कार्तिक अगहन—शरद, पूस माघ—हेमन्त, फागुन चैत—

वहु भवति तेन तत्र प्रावृडादिक्रमः। गङ्गोत्तरे कूले शीतं बहु भवति तेन तत्र हेमन्तशिशिरौ भवतः। उक्तं हि काश्यपेन—

भूयो वर्षति पर्जन्यो गङ्गाया दक्षिणे जलम्।
तेन प्रावृड्वर्षाख्यौ ऋतू तेषां प्रकल्पितौ॥
गङ्गाया उत्तरे कूले हिमवदम्बुसङ्गमे।
भूयः शीतमतस्तेषां हेमन्तशिशिरावृतू॥ इति॥

अयङ्गयदासाचार्येण दूषित इति डल्हणः।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वसन्त, वैसाख ज्येष्ठ—ग्रीष्म और आषाढ़ सावन—प्रावृट्। वर्षा ऋतु में औषधियाँ (जड़ी-बूटी घास अन्न आदि) तरुण (नई) अथच अल्पवीर्य वाली होती हैं। एवं जल पृथ्वी के मल से मलिन होता है। ये प्रयुक्त होने पर आकाश के मेघाच्छन्न रहने एवं पृथ्वी के जल से गीली रहने पर गीली देह तथा ठण्ढी वायु से विष्टब्ध अग्नि वाले प्राणियों में विदग्ध होती हैं। इनके विदाह से पित्त सञ्चय को प्राप्त होता हैं। शरद ऋतु में छिटपुट मेघयुक्त आकाश हो जाने एवं कीचड़ के सूख जाने पर सूर्य की किरणों द्वारा पिघलाया हुआ वह सञ्चय पैत्तिक रोग उत्पन्न कर देता है। हेमन्त ऋतु में वे ही औषधियाँ काल परिणाम से परिवर्त्तित वीर्य वाली और बलवती हो जाती हैं। जल भी स्वच्छ स्निग्ध और बहुत गुरु हो जाता है। उनका उपयोग करने से—सूर्य की मन्द किरणों के कारण हिमयुक्त वायु द्वारा स्तब्ध देह वाले प्राणियों में उपसुक्त अविदग्ध वे औषधियाँ और जल स्निग्ध, शीतल भारी और उपलेपी होने के कारण कफ का सञ्चय करती हैं। वसन्त ऋतु में सूर्य की किरणों द्वारा पिघला हुआ वह सञ्चय अल्प स्तब्ध देह वाले प्राणियों में श्लैष्मिक व्याधियाँ उत्पन्न कर देता है।

ग्रीष्म ऋतु में वे ही औषधियाँ एवं जल निस्सार, रूक्ष तथा अत्यन्त हलका हो जाता है। सूर्यसंताप से शुष्क देह वाले प्राणियों में प्रयुक्त वे औषधियाँ और जल रूक्ष लघु तथा विशद होने के कारण वायु का सञ्चय कर देते हैं। प्रावृट् ऋतु में शीतवायु और वर्षा से प्रेरित वह सञ्चय जल से गीली भूमि पर गीली देह वाले प्राणियों में वातिक व्याधियाँ उत्पन्न कर देता है। इस प्रकार यह दोषों के सञ्चय और प्रकोप का कारण बताया गया है।

तत्र वर्षाहेमन्तग्रीष्मेषु सञ्चितानां दोषाणां शरद्वसन्तप्रावृट्सु च प्रकुपितानां निर्हरणं कर्त्तव्यम्। तत्र पैत्तिकानां व्याधीनामुपशमो हेमन्ते श्लैष्मिकाणां निदाघे वातिकानां घनात्यये स्वभावत एव त एते सञ्चयप्रकोपोपशमा व्याख्याताः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वर्षा, हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में संचित हुए दोष क्रमशः शरद, वसन्त एवं प्रावृट् में कुपित होते हैं। दोष का निर्हरण उनके इस प्रकोपकाल में करना चाहिये। पैत्तिक व्याधियों का वसन्त में, श्लैष्मिक व्याधियों का ग्रीष्म एवं वातजन्य व्याधियों का शमन शरद् ऋतु में स्वभावतः हो जाता है।

इस प्रकार सञ्चय, प्रकोप और उपशमों का यहाँ व्याख्यान (विस्तार पूर्वक कथन) किया गया।

तत्र पूर्वाह्णे वसन्तस्य लिङ्गं मध्याह्ने ग्रीष्मस्यापराह्णे प्रावृषः प्रदोषे वार्षिकं शारदमर्द्धरात्रे प्रत्यूषसि हैमन्तमुपलक्षयेत्। एवमहोरात्रमपि वर्षमिव शीतोष्णवर्षलक्षणं दोषोपचयप्रकोपोपशमैर्जानीयात्।

प्रतिदिन पूर्वाह्ण(प्रातः ६ से १० बजे तक) में वसन्त ऋतु का, दोपहर (दस बजे से २ बजे दिन तक) में ग्रीष्म का, अपराह्ण (२ बजे दिन से ६ बजे शाम तक) में प्रावृट् का प्रदोष (६ बजे शाम से १० बजे रात तक) में वर्षा का, आधी रात (रात में १० से २ बजे तक) में शरद एवं उषः काल (रात में दो बजे से ६ बजे तक) में हेमन्त का लक्षण दिखाई पड़ता है।

इस प्रकार प्रतिदिन दिन रात में भी वर्ष के समान ही दोषों के सञ्चय, प्रकोप और शमन निमित्त शीत उष्ण एवं वर्षा का लक्षण जाननाचाहिये।

तत्राव्यापन्नेष्वृतुष्वव्यापन्ना ओषधयो भवन्त्यापश्च ता उपयुज्यमानाः प्राणायुर्बलवीर्य्यौजस्कर्य्यो भवन्ति।

अविकृत ऋतुओं में औषधियाँ एवं जल अविकृत रहते हैं। वे प्रयुक्त होने पर प्राण आयु बल वीर्य और ओज को करने वाले होते हैं।

ऋतूनामत ऊर्ध्वमव्यापन्नानां लक्षणान्युपदेक्ष्यामः।

इसके पश्चात् अविकृत ऋतुओं के लक्षणों का उपदेश करेंगे:—

वायुर्वात्युत्तरः शीतो रजोधूमाकुला दिशः।
छन्नस्तुषारैः सविता हिमानद्धा जलाशयाः॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ऋतु एवं दोषपरक चक्र

वर्ष

उत्तरायण	दक्षिणायन
आदानकाल	विसर्गकाल
(सूर्य बलवान होने के कारण आग्नेय)	(चन्द्रबली होने के कारण सौम्य)
तिक्त, कषाय, कटु रसों की वृद्धि	अम्ल, लवण, मधुर रसों की वृद्धि

ऋतु और उसके मास	शिशिर माघ फागुन	वसन्त चैत्र वैशाख	ग्रीष्म जेठ आषाढ़
प्रतिदिन ऋतुकाल		प्रातः ६–१०	दोपहर १०–२
बल		मध्य	दुर्बल
संचितदोष			वायु
कुपितदोष अथवा हरणीय दोष		कफ	
स्वभावतः शमितदोष			श्लेष्मा

वर्षा सावन भादों	शरद क्वार कार्तिक	हेमन्त अगहन पूस
रात ६–१०	आधी रात १०–२	उषाकाल २–६
दुर्बल	मध्यबल	श्रेष्ठबल
पित्त		कफ
वायु (प्रावृट्के दृष्टिकोण से)	पित्त	
	वात	पित्त

सूच ।:–बहुत जगह दोष संचय के हिसाब से शिशिर ऋतु न मानकर प्रावृट ऋतु मानी गयी है जो वर्षा के लक्षणों से युक्त आषाढ़ सावन में बतायी गयी है। इसका दैनिक काल अपराह्ण २ बजे से ६ बजे तक है।

CC-0. RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

दर्पिता ध्वाङ्क्षखड्गाह्वमहिषोरभ्रकुञ्जराः ।
रोध्रप्रियंगुपुन्नागाः पुष्पिता हिमसाह्वये ॥

हेमन्त ऋतु (अगहन पूस) में शीतल उत्तरी हवा बहती है, दिशायें धूलि और धूम से व्याप्त रहती हैं। सूर्य कुहरा से ढका रहता है। जलाशय बरफ, पाला से व्याप्त रहते हैं। कौवा, गैंड़ा, भैंसा, भेंड़ा और हाथी उन्मत्त रहते हैं। लोध, प्रियङ्गु और केशर फूली रहती है।

शिशिरे शीतमधिकं वातवृष्ट्याकुला दिशः ।
शेषं हेमन्तवत् सर्व्वं विज्ञेयं लक्षणं बुधैः ॥

शिशिर ऋतु (माघ फागुन) में शीत अधिक और दिशायें वायु-वृष्टि से आकुल रहती हैं। शेष सभी लक्षण हेमन्त के समान जानना चाहिये।

दिशो वसन्ते विमलाः काननैरुपशोभिताः ।
किंशुकाम्भोजबकुलचूताशोकादिपुष्पितैः ॥
कोकिलाषट्पदगणैरुपगीता मनोहराः ।
दक्षिणानिलसंवीताः सुमुखाः पल्वलोज्वलाः ॥

वसन्त ऋतु (चैत वैसाख) में निर्मल दिशायें उपवनों, फूले हुए पलाश, कमल, मौलसिरी, आम, अशोक से सुशोभित एवं कोयलों और भौरों के गीतों से मनोहर होती हैं। वे दक्षिणी वायु से व्याप्त होती हैं तथा छोटे जलाशयों से सुन्दर तथा उज्ज्वल रहती हैं।

ग्रीष्मे तीक्ष्णांशुरादित्यो मारुतो नैर्ऋतोऽसुखः ।
भूस्तप्ता सरितस्तन्व्यो दिशः प्रज्वलिता इव ॥
भ्रान्तचक्राह्वयुगलाः पयःपानाकुला मृगाः ।
ध्वस्तवीरुत्तृणलता विपर्णाकितपादपाः ॥

ग्रीष्म-ऋतु (जेठ आषाढ़) में सूर्य तीक्ष्ण किरणों वाला होता है। नैर्ऋतकोण की दुखदायी वायु बहती है। पृथ्वी तप्त, नदियां क्षीण जल वाली और दिशायें जलती हुई सी होती हैं। चकवा और चकई घबड़ायें रहते हैं।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मृग जल पीने के लिये व्याकुल रहते हैं। पौदे, तृण और लताएँ ध्वस्त एवं वृक्ष बिना पत्ते के होते हैं।

प्रावृष्यम्बरमानद्धं पश्चिमानिलकर्षितैः।
अम्बुदैर्विद्यु दुद्योतप्रस्नुतैस्तुमुलस्वनैः॥
कोमलश्यामशष्पाढ्या शक्रगोपोज्ज्वला मही।
कदम्बनीपकुटजसर्ज्जकेतकिभूषिता॥

प्रावृट् ऋतु (आषाढ़ सावन) में आकाश पश्चिमी वायु द्वारा आकर्षित उमड़े हुये बादल, बिजली की चमक वर्षा एवं घोर शब्दों से व्याप्त रहता है। पृथ्वी कोमल हरी-हरी घास से भरी हुई, वीर-बहूटी से कान्तिमान होती है तथा कदम्ब, छोटा कदम्ब, कुरैया, सरई के पेड़ों एवं केवड़ा से सुशोभित होती है।

तत्र वर्षासु नद्यम्भः पूरोद्भ्रमतटद्रुमाः।
वाप्यः प्रोत्फुल्लकुमुदनीलोत्पलविराजिताः॥
भूरव्यक्तस्थलश्वभ्रा बहुशस्योपशोभिता।
नातिगर्जत्स्रवन्मेघनिरुद्धार्कग्रहं नभः॥

वर्षा (सावन भादों) में नदियाँ जल से भरी होती हैं। उनके किनारे के वृक्ष टूटे रहते हैं। वापियाँ (पोखरो, बावलियाँ) खिली हुई कोइन और नीले कमल से सुशोभित रहती हैं। पृथ्वी अस्पष्ट स्थल एवं गड्ढों से युक्त तथा बहुत शस्य से सुशोभित रहती है। अधिक न गर्जने वाले पर बरसते हुए बादलों से, सूर्य नक्षत्र और आकाश ढके रहते हैं।

वभ्रुरुष्णः शरद्यर्कः श्वेताभ्रविमलं नभः।
तथा सरस्यम्बुरुहैर्भान्ति हंसासघट्टितैः॥
पङ्कशुष्कद्रुमाकीर्णा निम्नोन्नतसमेषु भूः।
वाणसम्राह्वबन्धूककाशासनविराजिता॥

शरद-ऋतु (क्वार कार्त्तिक) में सूर्य पिंगल वर्ण वाला और उष्ण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

होता है। आकाश सफेद बादलों से युक्त एवं निर्मल होता है। तालाब झील कमल और हंस के समूहों से सुशोभित होते हैं। पृथ्वी नीच-ऊँच और सम स्थानों में सूखे कीचड़ और वृक्षों से व्याप्त तथा सरपत, छितिवन, गुलदुपहरिया, कासा और असना वृक्ष से सुशोभित रहती है।

स्वगुणैरतियुक्तेषु विपरीतेषु वा पुनः।
विषमेष्वपि वा दोषाः कुप्यन्त्यृतुषु देहिनाम्॥

ऋतुओं के अपने स्वाभाविक गुणों के अतियोग होने पर या विपरीत होने पर या विषम होने पर प्राणियों में दोषों का प्रकोप होता है।

हरेद्वसन्ते श्लेष्माणं पित्तं शरदि निर्हरेत्।
वर्षासु शमयेद्वायुं प्राग्विकारसमुच्छ्रयात्॥
[च० सू० अ० ६]

व्याधि प्रकोप के पहले ही वसन्त ऋतु में कफ और शरद में पित्त संशोधन देकर निकाले एवं वर्षा में वायु का शमन करे।

हिमर्तुचर्या

शीते शीतानिलस्पर्शसंरुद्धो बलिनां बली।
पक्ता भवति हेमन्ते मात्राद्रव्यगुरुक्षमः॥
स यदा नेन्धनं युक्तं लभते देहजं तदा।
रसं हिनस्त्यतो वायुः शीतः शीते प्रकुप्यति॥
[च० सू० अ० ६]

हेमन्त काल में बलवान पुरुषों में शीत वायु के स्पर्श से अभ्यन्तर अवरुद्ध हुई अग्नि प्रबल होती है। अतः वह मात्रया गुरु एवं प्रकृत्या गुरु द्रव्यों को पचाने में समर्थ हो जाती है। वह जब ऋतु के अनुकूल इन्धन (आहार) नहीं प्राप्त करती तो देह के रस को नाश कर डालती है। इसलिये शीत वायु शीतकाल में प्रकुपित होता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अतोहिमेऽस्मिन्सेवेत*स्वाद्वम्ललवणान् रसान् ॥
[बा० सू० अ० ३]

इसलिये इस हेमन्त ऋतु में मधुर अम्ल और लवण रसों का सेवन करना चाहिये ।

वर्जयेदन्नपानानि लघूनि वातलानि च ।
प्रवातं प्रमिताहारमुदमन्थं हिमागमे ॥
[च०सू०अ० ३]

हेमन्त ऋतु में लघु, वातकारक अन्न, प्रवात, प्रमित (वास्तविक मात्रा से कम नपा तुला हुआ) भोजन और बहुत पतला आहार त्याग दे ।

दैर्घ्यान्निशानामेतर्हि प्रातरेव बुभुक्षितः ।
अवश्यकार्यं सम्भाव्य यथोक्तं शीलयेदनु ॥
वातघ्नतैलैरभ्यंगं मूर्ध्नि तैलविमर्दनम् ।
नियुद्धं कुशलैः सार्धं पादाघातं च युक्तितः ॥
कषायापहृतस्नेहस्ततः स्नातो यथाविधि ।
कुंकुमेन सदर्पेण प्रदिग्धोऽगुरुधूपितः ॥
रसान् स्निग्धान् पलं†पुष्टं गौंड़मच्छसुरां सुराम् ।
गोधूमपिष्टमाषेक्षीरोत्थविकृतीः शुभाः ॥
नवमन्नं बसां तैलं शौचकार्ये सुखोदकम् ॥

इस ऋतु में रात्रि के लम्बी होने के कारण सुबह ही भूख लग जाती है। अतः मल-मूत्रपरित्याग आदि आवश्यक कायों को कर प्रातःकाल ही ऋतु में कहा हुआ आहार करे ।

वायुनाशक तैलों से मालिश, सर पर तैल मर्दन, चतुर पहलवानों के साथ कुश्ती लड़ना, युक्ति पूर्वक पादाघात सहित, सेवन करे । फिर कसैले (मिट्टी आँवला आदि) द्रव्यों के उत्पादन से शरीर के बाहर का स्नेह दूर कर यथाविधि स्नान कर केशर और कस्तूरी (युक्त चन्दन) का

---

*हेमन्तेलवणक्षारतिक्ताम्लकटुकोत्कटं, ससर्पिस्तैलमहिममशनंहितमुच्यते ।
† औदकानूपविलेशयप्रसहानां मांसानीत्यर्थः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

लेप कर अपने को अगुरु से धूपित करे। स्निग्ध रस, पुष्ट मांस (मेढ़ा मांस), गौड़ (गुड़ से निर्मित शराब) अच्छसुरा (प्रसन्ना, मांडी) सुरा (अन्न की शराब) गेहूँ का आटा, उर्द, ईख और दूध के शुद्ध विकार (मिठाई, खोआ, मलाई आदि), नया अन्न, चर्बी और तेल का सेवन करे। शौच कार्य में कुछ गरम जल का प्रयोग करे।

प्रावाराजिनकौशेयप्रवेणीकौचवास्तृतम् ॥
उष्णस्वभावै र्लघुभिः प्रावृतः शयनं भजेत्।

प्रावार (गद्दा), चर्म, रेशम, ऊन और अंडी के बने हुये वस्त्र से बिछे हुए विस्तर पर उष्ण स्वभाव वाले (अलदान आदि) हलके कपड़े से शरीर ढक कर सोये।

युक्त्यार्कंकिरणान् स्वेदं पादत्राणं च सर्वदा।
पीवरोरुस्तनश्रोण्यः समदाः प्रमदाः प्रियाः ॥
हरन्ति शीतमुष्णांग्यो धूपकुङ्कुमयौवनैः।
अङ्गारतापसन्तप्तगर्भभूवेश्मचारिणः ॥
शीतपारुष्यजनितो न दोषो जातु जायते।
[वा० सू० अ० ३

सदा युक्ति-पूर्वक सूर्य की किरणों और अग्नि का सेवन करे और जूता पहने।

पुष्ट ऊरू (रान) स्तन और श्रोणी (नितम्ब) वाली, मदमत्त प्रिय, अगर धूप, केशर के लेप एवं यौवन के कारण उष्ण अङ्गवाली स्त्रियाँ शीत को नष्ट करती हैं।

अंगारताप से तप्त कमरे वाले घर में रहने वाले जनों को शीत की कठोरता से उत्पन्न होने वाले दोष कभी नहीं होते।

अग्निर्वातकफस्तम्भशीतवेपथुनाशनः।
आमाभिष्यन्दजरणो रक्तपित्तप्रदूषणः ॥
[सू० चि० अ० २४

टिप्पणी

*पृष्ठतः सेवयेदर्कं जठरेण हुताशनम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अग्नि–वायु कफ की जकड़न, शीत और कम्पन को नाश करती है। आमाभिष्यन्द को पचाने वाली एवं रक्तपित्त को दूषित करनेवाली है।

शिशिरर्तुचर्या

हेमन्तशिशिरे तुल्ये शिशरेऽल्पं विशेषणम्।
रौक्ष्यमादनजं शीतं मेघमारुतवर्षजम्॥
तस्माद्धैमन्तिकः सर्वः शिशिरे विधिरिष्यते।
निवातमुष्णमधिकं शिशिरे गृहमाश्रयेत्॥
कटुतिक्तकषायाणि वातलानि लघूनि च।
वर्जयेदन्नपानानि शिशिरे शीतलानि च॥

[च० सू० अ० ६]

हेमन्त और शिशिर ऋतुयें बराबर हैं। किन्तु शिशिर ऋतु में आदानकाल जन्य रूक्षता एवं बादल, वायु और वर्षा जन्य शीत कुछ अधिक होता है। इसलिये शिशिर ऋतु में हेमन्त की सारी ऋतुचर्या करनी चाहिये। शिशिर में अधिकतर निवात (जहाँ सीधी हवा न जाय) और उष्ण घर में रहे। शिशिर ऋतु में कटु तिक्त कषाय वातकारक लघु एवं शीतल अन्नपान त्याग देना चाहिये।

वसन्तर्तुचर्या

हेमन्ते * निचितःश्लेष्मा शैत्याच्छीतशरीरिणाम्।
औष्ण्याद्वसन्ते कुपितः कुरुते च गदान् बहून्॥
ततोऽम्लमधुरस्निग्धलवणानि गुरूणि च।
वर्जयेद्व्यमनादीनि कर्म्माण्यपि च कारयेत्॥
पष्टिकान्नं यवान् शीतान् मुद्गान् नीवारकोद्रवान्।

---

* अत्रहेमन्तान्तर्भूतत्वाच्छिशिरस्यहेमन्तशब्देन शिशिर एव बोध्यः। तथाहवाग्भटः कफश्चितोहिशिशिरेवसन्तेर्कांशुतापितः इति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

लावादिविष्किररसैर्दध्यादूषैश्च युक्तितः।
पटोलनिम्बवार्त्ताकुतिक्तकैश्च हिमात्यये।
भजेन्मध्वासवारिष्टान् सीधुमाध्वीकमाधवान्॥

शीत शरीर वाले लोगों की शीतलता के कारण संचित हुआ श्लेष्मा वसन्त ऋतु में उष्णता के कारण कुपित होकर बहुत से रोगों को उत्पन्न कर देता है।

इसलिये इस ऋतु में अम्ल मधुर स्निग्ध लवण और गुरु पदार्थ त्याग देना चाहिये। वमन आदि कफ नाशक कार्य करना चाहिये। साठी चावल, यव, शीतल अन्न, मूँग, तीना और कोदो को, लवा आदि विष्किरों (विखेर कर खाने वाले पक्षियों) के मांस-रस, यूष, परवल नीम का कोपल, भण्टा और तिक्त पदार्थों के साथ युक्तिपूर्वक हिमात्यय (वसन्त) में खाये। मधु, आसव, अरिष्ट, सीधु (सिरके का भेद) महुआ की शराब तथा मधु निर्मित शराब सेवन करनी चाहिये।

व्यायाममञ्जनं धूमं तीक्ष्णञ्च कवलग्रहम्।
सुखाम्बुना च सर्व्वार्थान् सेवेत कुसुमागमे॥
तीक्ष्णरूक्षकटुक्षारकषायं कोष्णमद्रवम्।
यवमुद्गमधुप्रायं वसन्ते भोजनं हितम्॥

कुसुमागम (वसन्त) में व्यायाम, सुरमा, धूमपान, तीक्ष्ण द्रव्यों का बना कवल गंडूष (मुँह में द्रव पदार्थ धारण कर उसे हिलाकर कुल्ला कर देना) सेवन करे। एवं सभी स्नानादि कार्य गरम जल से करे।

वसन्त ऋतु में तीक्ष्ण, रूक्ष, कटु, क्षार, कषाय, कुछ उष्ण, द्रव रहित, यव मूँग एवं मधु प्रधान भोजन हितकारी है।

व्यायामोऽत्र नियुद्धाध्वशिलानिर्घातजो हितः।
उत्सादनं तथा स्नानं वनिताः काननानि च॥
सेवेत निर्हरेच्चापि हेमन्तोपचितं कफम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शिरोविरेकवमननिरूहकवलादिभिः ।
वर्ज्जयेन्मधुरस्निग्धदिवास्वप्नगुरुद्रवान् ॥
[सू० उ० अ० ६४]

इसमें व्यायाम कुश्ती, चंक्रमण, पत्थर की गदा फेरना तथा घूँसा आदि से शरीर पर चोट देना चाहिये। उबटन, स्नान, स्त्रियों और काननों का सेवन विशेषतः करना चाहिये तथा हेमन्त में सञ्चित श्लेष्मा को शिरोविरेचन (नस्य) वमन, निरूहण वस्ति और कवल गण्डूष आदि के द्वारा निर्हरण करे। मधुर, स्निग्ध, गुरु और तरल द्रव्य तथा दिवास्वप्न त्याग दे।

वसन्ते भ्रमणं पथ्यम् । [भा० प्र०]

वसन्त ऋतु में टहलना हितकारी है।

दक्षिणानिलशीतेषु परितो जलवाहिषु ।
अदृष्टनष्टसूर्येषु मणिकुट्टिमकांतिषु ॥
परपुष्टविघुष्टेषु कामकर्मान्तभूमिषु ।
विचित्रपुष्पवृक्षेषु काननेषु सुगंधिषु ॥
गोष्ठीकथाभिश्चित्राभिर्मध्याह्नं गमयेत्सुखी । [वा० सू०]

दक्षिणी वायु से शीतल, चारों ओर जलस्रोत से युक्त, न दिखाई पड़ने के कारण सूर्य की किरणों से रहित, मणियों के चबूतरों (स्फटिक निर्मित) से कान्तिमान, कोकिल स्वर से झंकृत, काम कर्म के अन्त (रति) योग्य भूमिवाले, विचित्र पुष्प वाले वृक्षों से युक्त, सुगन्धित उपवनों में गोष्ठी की सुन्दर चित्र-विचित्र कथाओं से मध्याह्न काल सुखपूर्वक बिताये।

ग्रीष्मर्तुचर्या

तीक्ष्णांशुरतितीक्ष्णांशुर्ग्रीष्मे संक्षिपतीव यत् ।
प्रत्यहं क्षीयते श्लेष्मा तेन वायुश्च वर्धते ॥

ग्रीष्म ऋतु में चूँकि सूर्य अत्यन्त तीक्ष्ण किरणें फेंकता है, इसलिये प्रतिदिन श्लेष्मा क्षीण होता है अतः इससे वायु बढ़ता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

अतोऽस्मिन् पटुकटूवम्लव्यायामार्ककरांस्त्यजेत्।
भजेन्मधुरमेवान्नं लघु स्निग्धं हिमं द्रवम्॥

इसलिये इस ऋतु में नमकीन, कटु, अम्ल पदार्थ, व्यायाम और सूर्य की किरणों का त्याग करे और मधुर लघुस्निग्ध शीतल द्रव भोजन करे।

सुशीततोयसिक्तांगो लिह्यात्सक्तून् सशर्करान्।
मद्यं न पेयं पेयं वा स्वल्पं सुबहुवारि वा॥
अन्यथा शोफशैथिल्यदाहमोहान् करोति तत्।
कुन्देन्दुधवलं शालिमश्नीयाज्जांगलैः पलैः॥
पिबेद्रसं नातिघनं रसालां रागखांडवौ॥
पानकं पंचसारं वा नवमृद्भाजनस्थितम्।
मोचचोचदलैर्युक्तमम्लं मृन्मयशुक्तिभिः॥
पाटलावासितं चाम्भः सकर्पूरं सुशीतलम्।

ठण्ढे जल से अंगों का सिञ्चन कर शक्कर युक्त जव का सत्तू खाये। मद्य न पिए। या थोड़ा सा अथवा बहुत जल डालकर पिये। नहीं तो वह सूजन, शिथिलता, दाह और मोह उत्पन्न कर देता है। कुन्द और चन्द्रमा के समान श्वेत चावलके भातको जंगली पशुओं, पक्षियों के मांस रस से खाये। अधिक गाढ़ापन से रहित मांसरस, रसाला (शिखरन) राग, खाडव, पानक अथवा नये मिट्टी के पात्र में रक्खा हुआ पंचसार (पंचामृत अथवा मुनक्का, महुआ, खजूर, गम्भारीफल और फालसा से निर्मित शर्बत) पिये। केला फूल और दोलचीनी के पत्ते से युक्त या गुलाब से सुवासित निर्मल शीतल जल मिट्टी या सीप के पात्र में रखकर पिये।

शशांककिरणान् भक्ष्यान् रजन्यां भक्षयन् पिबेत्।
सशितं माहिषं क्षीरं चन्द्रनक्षत्रशीतलम्।

रात में चन्द्रमा की किरणों से व्याप्त भक्ष्य पदार्थ खाता हुआ चन्द्र किरण और नक्षत्र से शीतल (रात में आकाश में स्थित) भैंस का दूध चीनी डाल कर पिये।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अभ्रंकषमहाशालतालरुद्धोष्णरश्मिषु ।।
वनेषु माधवीश्लिष्टद्राक्षास्तबकशालिषु ।
सुगन्धिहिमपानीय सिच्यमानपटालिके ।।
कायमाने चिते चूतप्रवालफललुम्बिभिः ।
कदलीदलकल्हारमृणालकमलोत्पलैः ।।
कल्पिते कोमलैस्तल्पे हसत्कुसुमपल्लवे ।
मध्यंदिनेऽर्कतापार्तः स्वप्याद्धारागृहेऽथवा ।।

दोपहर में सूर्यताप से पीड़ित मनुष्य गगनचुम्बी बड़े वृक्ष साखू और ताड़ द्वारा उष्ण किरणों को रोकने वाले एवं माधवीलता से आलिंगित, अंगूर के गुच्छों से सुशोभित वन में, सुगन्धित ठण्डे जल से सींचे जा रहे खस की टट्टी आदिके परदे से युक्त झोंपड़ी जो कि आम की कोमल पत्तियों व लटकते हुये फलों से युक्त है उसमें, केले के पत्ते, कोईन लाल कमल, उसके डण्ठल और नील कमल नीलोफर आदि कोमल द्रव्यों से विरचित, खिले हुये फूल की पंखड़ियों से युक्त शय्या पर सोये। अथवा फोहारा वाले घर में सोवे ।

पुस्तस्त्रीस्तनहस्तास्यप्रवृत्तोशीरवारिणि ।
निशाकरकराकीर्णे सौधपृष्ठे निशासु च ।।
आसना स्वस्थचित्तस्य चन्द्रनार्द्रस्य मालिनः ।
निवृत्तकामन्तत्रस्य सुसूक्ष्मतनुवाससः ।।

रात में जहाँ स्त्री की प्रतिमा के स्तन हाथ मुख से खसका जल झर रहा हो ऐसे मकान की चन्द्रकिरणों से व्याप्त छत पर स्वस्थ चित्त, चन्दन से आर्द्र, माला धारण किये हुए, काम केलि से निश्चिन्त होकर अत्यन्त महीन कपड़ा पहन कर रहे ।

जलार्द्रास्तालवृंतानि विस्तृताः पद्मिनीपुटाः ।
उत्क्षेपाश्च मृदूत्क्षेपा जलवर्षिहिमानिलाः ।।
कर्पूरमल्लिकामाला हाराः सहरिचन्दनाः ।
मनोहरकलालापाः शिशवः सारिकाः शुकाः ।।

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

मृणालवलयाः कान्ताः प्रोत्फुल्लकमलोज्ज्वलाः।
जंगमा इव पद्मिन्यो हरन्ति दयिताः क्लमम्॥
[वा० सू० अ० ३]

जल से गीले ताड़ के पंखे, खिली हुई कमल की पंखुड़ियाँ, जल की वर्षा करने से ठण्डी हवा वाले तेज तथा धीरे चलने वाले फुहारे, कपूर और वेला की मालायें, मलयागिरि चन्दन से आक्त रत्नों के हार मनोहर-सुन्दर बोलने वाले नन्हें बच्चे, मैना और सुग्गे, हाथ में कमल नाल के आभूषण वाली तथा खिले हुए कमल से सुशोभित स्त्रियाँ चलती-फिरती कमलिनी के समान क्लम (थकावट) को दूर करती हैं।

वर्षर्तुचर्या

आदानग्लानवपुषामग्निः सन्नोऽपि सीदति।
वर्षासु दोषा दुष्यन्ति तेम्बुलम्बान्बुदेऽम्बरे॥
सतुषारेण मरुता सहसा शीतलेन च।
भूवाष्पेणाम्लपाकेन मलिनेन च वारिणा॥
वह्निनैव च मन्देन तेष्वित्यन्योन्यदूषिषु।
भजेत्साधारणं सर्वमूष्मणस्तेजनं च यत्॥

वर्षाऋतु में आदानकाल से खिन्न शरीर वाले पुरुषों की मन्द हुई अग्नि दोषों द्वारा और भी मन्द हो जाती है। वे दोष आकाश में जल युक्त मेघों के लटकने पर एकाएक झीसी युक्त शीतल वायु, पृथ्वी की वाष्प, अम्लपाक युक्त मलिन जल एवं मन्दाग्नि से दूषित हो जाते हैं। अतः एक-दूसरे को दूषित करनेवाले दोषों की स्थिति में अग्नि को प्रदीप्त करनेवाली त्रिदोष शामक सभी वस्तुओं का सेवन करना चाहिये।

आस्थापनं शुद्धतनुर्जीर्णं धान्यं रसान् कृतान्।
जांगलं पिशितं यूषान् मध्वरिष्टं चिरन्तनम्॥
मस्तु सौवर्चलाढ्यं वा पंचकोलावचूर्णितम्।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

दिव्यं कौपं शृतञ्चाम्भो भोजनं त्वतिदुर्दिने ॥
व्यक्ताम्ललवणस्नेहं संशुष्कं क्षौद्रवल्लघु ।

शुद्ध शरीर रखते हुये आस्थापन वस्ति, पुराना अन्न, संस्कृत मांस रस, जंगली पशुओं, पक्षियों का मांस, यूष, मधु, पुरातन अरिष्ट, कालानमक अथवा पञ्चकोल का चूर्ण डाल कर दही का पानी, आकाश जल, कुएँ का औटाया हुआ शीत जल सेवन करे। अत्यन्त दुर्दिन (बदली) में अम्ल लवण और स्नेह ज्ञात हो रहा है जिसमें, ऐसा शुष्क हलका भोजन अधुयुक्त कर के खाये।

अपादचारी सुरभिः सततं धूपिताम्बरः ।
हर्म्यपृष्ठे वसेद्वाष्पशीतशीकरवर्जिते ।
नदीजलोदमन्थाहःस्वप्नायासान्परित्यजेत् ॥

[वा० सू० अ० ३]

पैदल (अथवा बिना जूता, बिना खड़ाऊँ) न चले। सर्वदा सुगन्धित और धूपित वस्त्र पहने, वाष्प (भाफा या वर्षा की बूँद) ठण्ढक और ओस रहित मकान की छत पर रहे।

नदी जल, द्रव घोल, दिवास्वप्न, अधिक परिश्रम और घाम का परित्याग कर दे।

प्रघर्षोद्वर्तनस्नानगन्धमाल्यपरो भवेत् ।
लघुशुद्धाम्बरः स्थानं भजेदक्लेदि वार्षिकम् ॥

[च० सू० अ० ६]

वर्षा में घर्षण, उबटन, स्नान, गन्ध (इत्र), माला एवं हलका स्वच्छ कपड़ा धारण करे और गीलेपन से रहित स्थान में रहे।

शरदृतुचर्या

वर्षाशीतोचिताङ्गानां सहसैवार्करश्मिभिः ।
तप्तानामाचितं पित्तं प्रायः शरदि कुप्यति ॥

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वर्षा की शीत के अभ्यस्त अंगों के सहसा सूर्य की किरणों से तप्त हो जाने पर सञ्चित हुआ पित्त प्रायः शरद ऋतु में कुपित होता है।

तत्रान्नपानं मधुरं लघु शीतं सतिक्तकम्।
पित्तप्रशमनंश्च सेव्यं मात्रया सुप्रकाङ्क्षितैः॥

इस ऋतु में अच्छी तरह अन्नाभिलाषा जागने पर मधुर, लघु, शीतल, तिक्तरस युक्त, एवं पित्त को शमन करनेवाला अन्नपान मात्रा पूर्वक सेवन करना चाहिये।

लावान् कपिञ्जलानेणानुरभ्राञ्छरभाञ्छशान्।
शालीन् सयवगोधूमान् सेव्यानाहुर्घनात्यये॥

शरद में लवा, तीतर, काला हरिण, उरभ्र (मृग विशेष या मेष), बारहसिंगा, खरगोश, शालि, यव और गेहूँ ये सेवन करने योग्य कहे गये हैं।

तिक्तस्य सर्पिषः पानं विरेको रक्तमोक्षणम्।
धाराधरात्यये कार्यमातपस्य च वर्जनम्॥
वसां तैलमवश्यायमौदकानूपमामिषम्।
क्षारं दधि दिवास्वप्नं प्राग्वातं चात्र वर्जयेत्॥

शरद ऋतु में तिक्त रस वाले द्रव्यों से सिद्ध घृत का पान, विरेचन, रक्तमोक्षण करना चाहिये और घाम का परित्याग करना चाहिये।

चर्बी, तैल, ओस, जलीय और आनूप मांस, क्षार, दही, दिवास्वप्न और पूर्वी हवा त्याग देना चाहिये।

हंसोदकम्

दिवा सूर्यांशुसंतप्तं निशि चंद्रांशुशीतलम्।
कालेन पक्वं निर्दोषमगस्त्येनाविषीकृतम्॥

---

*—शालिमुद्गसिताधात्री पटोलमधुजाङ्गलम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

हंसोदकमिति ख्यातं शारदं विमलं शुचि ।
स्नानपानावगाहेषु हितमम्बु यथाऽमृतम् ॥

दिन में सूर्य-किरणों द्वारा तप्त, रात में चन्द्र-किरणों द्वारा शीतल, शरद काल से पक्व (निर्दोष), अगस्त्य नक्षत्र के उदित होने से निर्विष, शरद ऋतु का निर्मल और पवित्र जल हंसोदक कहा गया है। यह स्नान, पान और अवगाहन (देर तक जल निवास) में अमृत के समान हितकारी है।

शारदानि च माल्यानि वासांसि विमलानि च ।
शरत्काले प्रशस्यन्ते प्रदोषे चेन्दुरश्मयः ॥

शरद ऋतु में पैदा होनेवाले पुष्पों की माला, निर्मल वस्त्र और सायंकाल चन्द्रमा की किरणें हितकारी हैं।

इत्युक्तमृतुसात्म्यं यच्चेष्टाहारव्यपाश्रयम् ।
उपशेते यदौचित्यादोकसात्म्यं तदुच्यते ॥

यह चेष्टा (विहार) और आहार से सम्बन्ध रखने वाला ऋतुसात्म्य कहा जा चुका। जो अभ्यास होने के कारण उपशय (सात्म्य) होता है उसे ओकसात्म्य कहते हैं।

देशानामामयानां च विपरीतगुणं गुणैः ।
सात्म्यमिच्छन्ति सात्म्यज्ञाश्चेष्टितं चाद्यमेव च ॥
[च० सू० अ० ६]

सात्म्यज्ञ लोग देश एवं रोग के गुणों के विपरीत गुणों वाले विहार और आहार को सात्म्य मानते हैं।

ऋतुपरत्वेन पाननियमः

वर्षासु न पिबेत्तोयं पिबेच्छरदि मात्रया ।
वर्षासु चतुरो मासान्मात्रावदुदकं पिबेत् ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

उष्णे हैमे वसन्ते च कामं ग्रीष्मे तु शीतलम् ।
हेमन्ते च वसन्ते च सीध्वरिष्टौ पिवेन्नरः ॥
शृतशीतं पिवेद् ग्रीष्मे प्रावृट्काले रसं पिवेत् ।
यूषं वर्षति तस्यान्ते प्रपिवेच्छीतलं जलम् ॥
स्वस्थ एवमतोन्यस्तु दोषाहारमतानुगः ।

[सु० चि० अ० २४]

वर्षा ऋतु में जहाँ तक सम्भव हो जल न पिये । अर्थात् अन्य ऋतु पिये । यदि पीना है तो वर्षा के चारों महीनों में मात्रा पूर्वक ही पिये एवं शरद में भी मात्रा पूर्वक ही पिये ।

ग्रीष्म, हेमन्त और वसन्त में यथेच्छ जल पिये, ग्रीष्म में शीतल जल तथा हेमन्त-वसन्त में सीधु और अरिष्ट पिये । ग्रीष्म ऋतु में औटा कर ठण्डा किया हुआ जल, प्रावृट् काल में मांसरस, वर्षा में यूष और शरद में शीतलजल पिये । स्वस्थ के लिये यह विधान है, किन्तु अस्वस्थ दोषानुसार, आहारानुसार अनुपान पिये ।

ऋतुभेदेन भिन्न-भिन्नरससेवनम्

यस्मिन् यस्मिन्नृतौ ये ये दोषाः कुप्यन्ति देहिनाम् ।
तेषु तेषु प्रदातव्या रसास्तेते विजानता ॥

[सु० चि० अ० २४]

जिस-जिस ऋतु में प्राणियों में जो-जो दोष कुपित होते हैं, उस-उस ऋतु में वे-वे दोषशामक रस देने चाहिये ।

शीते वर्षासु चाद्यांस्त्रीन् वसन्तेऽन्त्यान् रसान् भजेत् ।
स्वादुं निदाघे शरदि स्वादुतिक्तकषायकान् ॥
शरद्वसन्तयो रूक्षं शीतं घर्मघनान्तयोः ।
अन्नपानं समासेन विपरीतमतोऽन्यथा ।
नित्यं सर्वरसाभ्यासः स्वस्वाधिक्यमृतावृतौ ॥

[वा० सू० अ० ३]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

शीत और वर्षा में आदि के तीन (मधुर, अम्ल, लवण) और वसन्त में अन्त के तीन (कटु, तिक्त, कषाय) रसों का सेवन करना चाहिये। ग्रीष्म में मधुर, शरद में मधुर, तिक्त और कषाय रस सेवन करना चाहिये। शरद वसन्त में रूक्ष, ग्रीष्म और शरद में शीत द्रव्य सेवन करना चाहिये।

यह संक्षेप में अन्नपान कहा गया है। इससे भिन्न अन्नपान विपरीत (अनुचित) है। यों तो प्रतिदिन सभी (छ) रसों का यथावश्यक अभ्यास करना चाहिये परन्तु ऋतु में कहे हुए रस को उस-उस ऋतु में अधिक सेवन करना चाहिये।

ऋतुसन्धिः

ऋत्वोरंत्यादिसप्ताहावृतुसन्धिरिति स्मृतः।
तत्र पूर्वो विधिस्त्याज्यः सेवनीयोऽपरः क्रमात्॥
असात्म्यजा हि रोगाः स्युः सहसा त्यागशीलनात्।

[वा० सू० अ० ३]

ऋतु के प्रारम्भिक और अन्तिम सप्ताह को ऋतु-संधि कहते हैं। उसमें पहले वाली ऋतु की विधि त्याग कर आने वाली ऋतु की विधि क्रमशः सेवन करनी चाहिये। क्योंकि किसी विधि के सहसा त्यागने या सहसा सेवन करने से असात्म्य जन्य रोग होते हैं।

यमदंष्ट्रा

कार्तिकस्य दिनान्यष्टावष्टावग्रहणस्य च।
यमदंष्ट्राश्च समाख्याता स्वल्पभुक्तो हि जीवति॥

[शार्ङ्गधरः]

कार्तिक के अन्तिम आठ दिन एवं अगहन के प्रारम्भिक आठ दिन—ये सोलह दिन यमदंष्ट्रा (यमराज की दाढ़) कहे गये हैं। इसमें स्वल्प भोजन करने वाला ही स्वस्थ रहता है।

---

*—वैद्यानां शारदी माता पिता च कुसुमाकरः।
यमदंष्ट्रा स्वसा प्रोक्ता हितभुङ्मितभुग्रिपुः॥

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

ऋतुपरत्वेन हरीतकीसेवनम्

हरीतकी मनुष्याणां मातेव हितकारिणी।
कदाचित् कुप्यते माता नोदरस्था हरीतकी॥

[भा० प्र०]

हरें मनुष्यों के लिये माता के समान हितकारी है। माता तो कभी कुपित हो जाती है पर उदरस्थ हरीतकी कभी कुपित नहीं होती अर्थात् सिवा लाभ के हानि नहीं करती।

ग्रीष्मे तुल्यगुडां सुसैन्धवयुतां मेघावनद्धाम्बरे-
सार्धं शर्करया शरद्यमलया शुण्ठ्या तुषारागमे।
पिप्पल्या शिशिरे वसन्तसमये क्षौद्रेण संयोजितां-
राजन् प्राप्य हरीमकीमिव रुजो नश्यन्तु ते शत्रवः॥*

[म० वि० नि०]

एक राजा को आशिर्वाद के रूप में कहा जा रहा है कि "जिस प्रकार ग्रीष्म में बराबर गुड़, वर्षा में सेंधानमक, शरद में स्वच्छ शक्कर, हेमन्त में सोंठ, शिशिर में पिप्पली एवं वसन्त ऋतु में मधु के साथ सेवन की गई हरीतकी को प्राप्त कर रोग नष्ट होते हैं, हे राजन्! उसी प्रकार तुम्हारे शत्रु तुम्हें प्राप्त कर नष्ट हों।

ऋतावृतौ य एतेन विधिना वर्तते नरः।
घोरानृतुकृतान्रोगान्नाप्नोति स कदाचन॥

[सु० उ० अ० ६४]

प्रत्येक ऋतु में इस विधि से जो मनुष्य रहता है वह कभी भी ऋतु जनित भयंकर रोगों को प्राप्त नहीं करता।

---

*—हरीतकी सेवनेन मलावरोधाभावाद्दीप्ताग्नित्वाच्च सदा स्वास्थ्य मनुवर्तते।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सद्वृत्तम्

तत्रेन्द्रियाणां समनस्कानामनुपतापाय प्रकृतिभावे प्रयतितव्यमेभिर्हेतुभिः, तद्यथा—सात्म्येन्द्रियार्थसंयोगेन, बुद्धया सम्यगवेक्ष्यावेक्ष्य कर्मणां सम्यक्प्रतिपादनेन, देशकालात्मगुणविपरीतोपसेवनेन चेति। तस्मादात्महितं चिकीर्षता सर्वेण सर्वं सर्वदा स्मृतिमास्थाय सद्वृत्तमनुष्ठेयम्। तद्ध्यनुतिष्ठन् युगपत्संपादयत्यर्थद्वयमारोग्यमिन्द्रियविजयं चेति।

मन के सहित सभी इन्द्रियों के अनुपात के लिये प्रकृतिस्थ (विकार रहित) होने में इन उपायों—सात्म्य (हित) विषयों के इन्द्रिय-संयोग से, बुद्धिपूर्वक अच्छी तरह विचार कर कार्य करने से एवं देश काल और अपनी प्रकृति से विपरीत आहारादि के सेवन से प्रयत्न करना चाहिये। इसलिये आत्मकल्याण चाहनेवाले सभी लोगों को सर्वदा स्मृतिपूर्वक सभी सद्वृत्त का पालन करना चाहिये। सद्वृत्त का अनुष्ठान आरोग्य और इन्द्रिय विजय दोनों को साथ ही सम्पन्न करता है।

तत्सद्वृत्तमशेषेणोपदेक्ष्यामः। तद्यथा—देवगोब्राह्मणगुरुवृद्धसिद्धाचार्यानर्चयेत्, अग्निमुपचरेत्, ओषधीः प्रशस्ता धारयेत्, द्वौ कालावुपस्पृशेत्, मलायनेष्वभीक्ष्णं पादयोश्च वैमल्यमादध्यात्, त्रिः पक्षस्य केशश्मश्रुलोमनखान् संहारयेत्, नित्यमनुपहतवासाः सुमनाः सुगन्धिः स्यात्।

उन सभी सद्वृत्त (सदाचार) को कह रहे हैं। जैसे:—देवता, ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध, सिद्ध आचार्य की पूजा (सत्कार) करनी चाहिये। अग्नि में हवन करना चाहिये। श्रेष्ठ औषधियाँ धारण करे। दोनों काल स्नान करे मलमार्ग एवं पैरों को बारम्बार साफ रक्खे। पक्ष में तीन बार केश, दाढ़ी लोम और नहों को बनवाना चाहिये। सर्वदा अनुपहत वस्त्र पहने, प्रसन्न मन और सुगन्धित रहे।

साधुवेशः, प्रसाधितकेशो, मूर्धश्रोत्रघ्राणपादतैलनित्यो,

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

धूमपः, पूर्वाभिभाषी, सुमुखो, दुर्गेष्वभ्युपपत्ता, होता, यष्टा दाता, चतुष्पथानां नमस्कर्ता, बलीनामुपहर्ता, अतिथीनां पूजकः पितृभ्यः पिण्डदः, काले हितमितमधुरार्थवादी*, वश्यात्मा, धर्मात्मा, हेतावीर्षुः फलेनेर्षु, निश्चिन्तो, निर्भीको, धीमान्, ह्रीमान्, महोत्साहो, दक्षः, क्षमावान्, धार्मिकः, आस्तिको विनयबुद्धिविद्याभिजनवयोवृद्धसिद्धाचार्याणामुपासिता, छत्री दण्डी मौली सोपानत्को युगमात्रदृग्विचरेत्, मङ्गलाचारशील कुचेलास्थिकण्टकामेध्यकेशतुषोत्करभस्मकपालस्नेनबलिभूमीनां परिहर्ता, प्राक् श्रमाद्व्यायामवर्जी स्यात्, सर्वप्राणिषु बन्धुभूतः स्यात्, क्रुद्धानामनुनेता, भीतानामाश्वासयिता, दीनानाम भ्युपपत्ता, सत्यसंधः, सामप्रधानः। परपरुषवचनसहिष्णु अमर्षघ्नः, प्रशमगुणदर्शी रागद्वेषहेतूनां हन्ता।

सज्जन वेश में रहे। केश संवारे हुए रहे। हमेशा सिर, कान, नाख और पैर में तेल सेवन करे। धूमपान करे। किसी के मिलने आने पर पहले ही बोलनेवाला हो। प्रसन्न मुख रहे। विपत्ति में पड़े हुओं का रक्षक हो। हवन करे। यज्ञ करे। दान दे। चौराहों में स्थित पूज्य वृक्ष देवमूर्ति आदि को नमस्कार करे। देवताओं को बलि देने वाला, अतिथियों की पूजा सत्कार करनेवाला, पितरों को पिण्ड देनेवाला, अवसर पर हित नपा तुला, मधुर और प्रयोजनवाले विषय को बोलनेवाला, इन्द्रियों को वश में करनेवाला, धर्मात्मा, कारण में ईर्ष्या करनेवाला किन्तु फलों में न ईर्ष्या करनेवाला, चिन्ता रहित, निडर, विचारवान, लज्जावान, महान् उत्साही

---

* सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियञ्च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः॥
भद्रभद्रमितिब्रूयाद् भद्रमित्येव वा वदेत्।
शुष्कवैरं विवादं च न कुर्यात्केनचित् सह॥ [मनु.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

क्षमाशील, धार्मिक, आस्तिक रहे। विनय-विद्या-कुटुम्ब और आयु में वृद्ध, सिद्ध और आचार्यों की उपासना करने वाला हो। छाता, डण्डा, सिरपर पगड़ी या टोपी धारण कर और जूता पहनकर चार हाथ आगे देखता हुआ चले। सर्वदा मंगलमय आचरण का अभ्यासी हो। गन्दे वस्त्र, हड्डी-कांटा अपवित्र वस्तु, बाल, भूसी, कूड़ाकरकट, राख, खपड़ा, टूट-फूट के ढेर, स्नान के और बलि के स्थान का त्याग करने वाला एवं थकावट से पहले व्यायाम बन्द कर देने वाला हो। सब प्राणियों में भ्रातृवत् व्यवहार करने वाला, क्रोध करने वाले से अनुनय करनेवाला, डरे हुए लोगों को ढाढ़स बँधाने वाला, गरीबों को हर प्रकार से सहायता पहूँचाने वाला, प्रतिज्ञा-पालक, शान्तिप्रिय, दूसरों के कठोर वचन को सहने वाला, क्रोध को नष्ट करने वाला, शान्तिप्रद गुणों को देखने वाला और राग द्वेष के कारणों को नाश करने वाला हो।

नानृतं ब्रूयात्, नान्यस्वमादद्यात्, नान्यस्त्रियमभिलषेन्नान्यश्रियं, नवैरं रोचयेत्, न कुर्यात्पापं, न पापेऽपि पापी स्यात्, नान्यदोषान् ब्रूयात्, नान्यरहस्यं गमयेत्, नाधार्मिकैर्न नरेन्द्रद्विष्टैः सहासीत नोन्मत्तैर्न पतितैर्नभ्रूणहन्तृभिर्नक्षुद्रैर्नदुष्टैः न दुष्टयानान्यारोहेत् न जानुसमं कठिनमासनमध्यासीत, नानास्तीर्णमनुपहितमविशालमसमं वा शयनं प्रपद्येत, न गिरिविषममस्तकेष्वनुचरेत्, न द्रुममारोहेत्, न जलोग्रवेगमवगाहेत, कूलच्छायां नोपासीत, नाग्न्युत्पातमभितश्चरेत्, नोच्चैर्हसेत्, न शब्दवन्तं मारुतं मुञ्चेत्, नासंवृतमुखो जृम्भां क्षवथुं हास्यं वा प्रवर्तयेत्, न नासिकां कुष्णीयात्, न दन्तान् विघट्टयेत् न नखान् वादयेत्, नास्थीन्यभिहन्यात्, न भूमिं विलिखेत्, न छिन्द्यात्तृणं, न ओष्ठं मृद्नीयात्, न विगुणमङ्गैश्चेष्टेत, ज्योतींष्यग्निममेध्यमशस्तं च नाभिवीक्षेत, न हुँ कुर्याच्छवं, न चैत्यध्वजगुरुपूज्याशस्तश्छायामाक्रामेत्, न क्वापास्वमरसदनचैत्यचत्वरचतुष्प-

---

* अशस्ता रोगिपतितादयः।

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

थोपवनश्मशानाघातनान्यासेवेत, नैकः शून्यगृहं न चाटवीम् प्रविशेत्, न पापवृत्तान् स्त्रीमित्रभृत्यान् भजेत्, नैक विरुध्येत, नावरानुपासीत, न जिह्मं रोचयेत्, नानार्यम् श्रयेत्, न भयमुत्पादयेत् न साहसातिस्वप्नप्रजागरस्नानपा शनान्यासेवेत, नोर्ध्वजानुश्चिरं तिष्ठेत्, न व्यालानुपसर्पे दंष्ट्रिणो न विषाणिनः, पुरोवातातपावश्यायातिप्रवातान् जह्यात् कलिं नारभेत, नासुनिभृतोऽग्निमुपासीत, नोच्छिष्टो नाधःकृ प्रतापयेत्, नाविगतक्लमो नाप्लुतवदनो न नग्न उपस्पृशे न स्नानशात्र्या स्पृशेदुत्तमाङ्गं, न केशाग्राण्यभिहन्यात्, नो स्पृश्यत एव वाससी विभृयात्, नास्पृष्ट्वा रत्नाज्यपूज्यमंग सुमनसोऽभिनिष्क्रामेत्, न पूज्यमंगलान्यपसव्यं गच्छेन्नेत ण्यनुदक्षिणम्।

असत्य न बोले। दूसरे की स्त्री और दूसरे की लक्ष्मी की इच्छा करे। दुश्मनी पसन्द न करे। पाप न करे। पाप (अपराध) करनेवालों प्रति भी पाप न करे। दूसरे के दोषों को न कहे। दूसरों के रहस्यों को प्रकट करे। अधर्मी, राजद्रोही, पागल, पतित, गर्भहत्या करने वा नीच एवं दुष्टों के साथ न बैठे। दुष्ट सवारी पर न चढ़े।

जानु के बराबर ऊँचे कठिन आसन पर न बैठे। बिना बिछा बिछाई हुई, अनुपयोगी छोटी या विषम शय्या पर न सोये। पहाड़ विषम चोटी पर न घूमे। पेड़ पर न चढ़े। उग्रवेग (तेज धारा) जल में अवगाहन, स्नान न करे। नदी के करार की छाया में न अग्निजन्य उत्पात के चारों ओर न घूमे। अट्टहास कर न हँ शब्दयुक्त अधोवायु न त्यागे। बिना मुँह ढके हुए जंभाई छींक हँसी न करे। नाक को न खोदे। दाँतों को परस्पर न रगड़े (कटावे)। नख न बजाये। अपनी हड्डियों को न चटकाये। भूमि न करे। बैठे-बैठे तृण न तोड़े। मिट्टी का ढेला न मले। अङ्गों विगुण (टेढ़े-मेढ़े) कर कोई चेष्टा न करे। बहुत चमकीली

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

एवं तेज अग्नि, अपवित्र और दूषित वस्तुओं को न देखे। शव देख कर हुँकार (घृणापूर्वक) न करे। ग्राम के प्रधान पूज्य वृक्ष, ध्वजा, गुरु, पूजनीयजन, अशस्त, रोगी, पतित आदि की छाया न लांघे। रात में देवमन्दिर, ग्राम के प्रधान वृक्ष, चबूतरा (गोष्ठी-स्थल), चौराहा, उपवन, श्मशान और वधस्थल में न जाय। अकेला शून्य-गृह और वन में न प्रवेश करे। पापकर्मा स्त्री, मित्र और नौकरों से सम्बन्ध न रक्खे। बड़े जनों से विरोध न करे। नीचों से सम्पर्क न रक्खे। कुटिलता न चाहे, अनार्यों का आश्रय न ले, डर न पैदा करे। दुस्साहस, अधिक शयन-जागरण-स्नान-पान भोजन न सेवन करे। ऊपर जानु करके देर तक न ठहरे। सर्प, दाँत से काटने वाले और सींग प्रहरण वाले (साँड़ आदि) के पीछे अनुगमन न करे। पूर्वी हवा, घास, ओस और तेज वायु का सेवन न करे। झगड़ा न प्रारम्भ करे। खूब निश्चिन्त होकर अग्नि सेवन न करे। जूठे मुँह और अपने से नीचे कर अग्नि न तापे। खड़ावट बिना गये, आचमन बिना किये और नङ्गा होकर स्नान न करे। जिस कपड़े को पहन कर स्नान कर रहे हों उसी से उत्तमांग (सिर मुँह) न पोंछे। बालों को न फटकारे। स्नान करके आर्द्र रहते हुए ही वस्त्र न पहने। रत्न, घी, पूजनीय, मङ्गलवस्तु और पुष्प बिना छुए बाहर न निकले। पूजनीय, और मंगलवस्तु को बायें करके न चले और शेष अन्यान्य को दायें करके न चले।

नानृजुः क्षुयान्नाद्यान्न शयीत*, न वेगितोऽन्यकार्यः† स्यात् न वाग्न्यनिसलिलसोमार्कद्विजगुरुप्रतिमुखं निष्ठीविकावातवर्चो-मूत्राण्युत्सृजेत्, न पन्थानमवमूत्रयेत्, न जनवति नाम्नकाले न जपहोमाध्ययनबलिमंगलक्रियासु श्लेष्मसिंघाणकं मुञ्चेत्।

न स्त्रियमवजानीत, नातिविश्रम्भयेत्, न गुह्यमनुश्रावयेत्, नाधिक्रुर्यात्।

---

* नावाक्शिराः शयीत (सु० चि० अ० २४)

† न बहिर्वेगान् ग्रामनगरदेवतायतनश्मशानचतुष्पथसलिलाशयपथि-सन्निकृष्टानुत्सृजेत् न प्रकाशम् (सु० चि० अ० २४)

a Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

न सतो न गुरुन् परिवदेत्, नाशुचिरभिचारकर्मचैत्यपूज्य पूजाध्ययनमभिनिर्वर्तयेत् ।

टेढ़े होकर न छींके, न खाये और न सोये। मलमूत्रादि का वे लगने पर दूसरा कार्य न करे। वायु, अग्नि, जल, चन्द्रमा, सूर्य, ब्राह्म और गुरु के सामने होकर थूक, वायु, पुरीष और मूत्र का त्याग न करे मार्ग में पेशाब न करे। जन-समूह में, भोजन काल में, जप, होम अध्ययन और बलि मंगल कार्यों में नाक न छिनके।

स्त्रियों का अनादर न करे, उनका अधिक विश्वास न करे, उन्हें गुप्त रहस्य न सुनाये और न अपने ऊपर अधिकार दे (अर्थात् सिर पर न चढ़ावे)।

सज्जनों और गुरुओं की निन्दा न करे। अपवित्र होकर अभिचार कर्म (मरण मोहनादि कर्म), चैत्य (ग्रामप्रधान वृक्ष), पूज्य की पूजा और अध्ययन कार्य न करे।

न विद्युत्स्वनार्तवीषु नाभ्युदितासु दिक्षु नाग्निसंप्लवे न भूमिकम्पे न महोत्सवे नोल्कापाते न महाग्रहोपगमने न नष्ट चन्द्रार्कायां तिथौ न सन्ध्ययोर्नामुखाद्गुरोर्नावपतितं नातिमात्रं न नान्तं न विस्वरं नानवस्थितपदं नातिद्रुतं न विलम्बितं नातिव्यक्तं नात्युच्चैर्नातिनीचैः स्वरैरध्ययनमभ्यसेत् ।

बिना ऋतु के बिजली चमकने पर, दिशाओं के अभ्युदित (कोलाहल पूर्ण) होने, अग्नि के उपद्रव, भूकम्प, महोत्सव एवं उल्कापात होने पर महाग्रहों के उपगमन (ग्रहण आदि), नष्ट चन्द्र तिथियों (अमावस्या आदि) सन्ध्या-काल में, गुरुमुख से बिना निकले (अर्थात् बिना गुरु से पढ़े) हुए, अधिक तेजी से, अति विलम्बित उच्चारण कर, अधिक ऊँचे तथा अधिक नीचे स्वर से अध्ययन का अभ्यास न करे।

नातिसमयं जह्यात्, न नियमं भिन्द्यात्, न नक्तं नादोषं चरेत्, न सन्ध्यास्वभ्यवहाराध्ययनस्त्रीस्वप्नसेवी स्यात्, न बालवृद्धलुब्धमूर्खोल्किष्टक्लीबैः सह सख्यं कुर्यात्, न मद्य

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

द्यूतवेश्याप्रसङ्गरुचिः स्यात्, न गुह्यं विवृणुयात्, न कञ्चिदवजानीयात्, नाहंमानी स्यान्नादक्षो नादक्षिणो नासूयकः, न ब्राह्मणान् परिवदेत्, न गवां दण्डमुद्यच्छेत्, न वृद्धान् न गुरुन् न गणान् न नृपान् वाऽधिक्षिपेत् न चातिब्रूयात्, न बान्धवानुरक्तकृच्छ्रद्वितीयगुह्यज्ञान् वहिः कुर्यात्।

अधिक समय बर्बाद न करे। नियम भंग न करे। रात में और जो जाने योग्य नहीं है ऐसे देश में न घूमे। सन्ध्याकाल में भोजन, अध्ययन, स्त्रीसेवन और शयन (नींद) न करे। बालक, वृद्ध, लोभी, मूर्ख, रोग, दारिद्र्य आदि से पीड़ित और नपुंसकों के साथ मित्रता न करे। मद्य, जुआ और वेश्याओं का व्यसन न करे। गुप्त रहस्य को न खोले। किसी का निरादर न करे। अभिमानी, अदक्ष, प्रतिकूल और ईर्ष्यी न हो। ब्राह्मणों की निन्दा न करे। गाय पर डण्डा न चलाये, वृद्ध, गुरु जन, वर्ग अथवा समाज और राजाओं पर आक्षेप न करे, न अधिक बोले, बान्धव-अनुरक्त-आपत्तिकाल के सहायक और रहस्यज्ञाता को अपने से अलग न करे।

नाधीरो नात्युच्छ्रितसत्वः स्यात् नाभृतभृत्यो, नाविश्रब्धस्वजनो, नैकः सुखी, न दुःखशीलाचारोपचारो, न सर्वविश्रम्भी, न सर्वाभिशङ्की, न सर्वकालविचारी, न कार्यकालमतिपातयेत्, नापरीक्षितमभिनिविशेत्, नेन्द्रियवशगः स्यात्, न चञ्चलं मनोऽनुभ्रामयेत्, न बुद्धीन्द्रियाणामतिभारमादध्यात्, न चातिदीर्घसूत्री स्यात्, न क्रोधहर्षावनुविदध्यात्, न शोकमनुवसेत् न सिद्धावौत्सुक्यं गच्छेन्नासिद्धौ दैन्यं, प्रकृतिमभीक्ष्णं स्मरेत्, हेतुप्रभावनिश्चितः स्यात् हेत्वारम्भनित्यश्च, न कृतमित्याश्वसेत्, न वीर्यं जह्यात्। नापवादमनुस्मरेत्।

अधीर चञ्चल मन न हो और नौकरों का बिना पालन किये न रहे। स्वजनों पर अविश्वास न करे। अकेला सुखी न हो (सुख में दूसरों को भी हिस्सा दे), दुःखशील आचरण और उपचार युक्त न हो। सभी का

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

विश्वास न करे। सभी पर शंका भी न करे। सर्वदा सोचता न रहे। कार्य काल में विलम्ब न करे। बिना परीक्षा की हुई वस्तुओं के बारे में हठ न करे। इन्द्रियों के वशीभूत न हो। चञ्चल मन को इधर उधर बहुत न दौड़ाये। ज्ञानेन्द्रियों पर अधिक भार न दे। प्रत्येक कार्य अधिक देर से करने वाला न हो। लगातार क्रोध या हर्ष न करे। सर्वदा चिन्तित न रहे। कार्यसिद्धि में उत्सुक और कार्य की असफलता में दीन न हो। सर्वदा अपनी प्रकृति या प्राकृतिक नियमों का बराबर ध्यान रक्खे। कारण का प्रभाव निश्चित होना जान कर कारणों का प्रारम्भ करने में तत्पर रहे। अपने को कृतकृत्य समझकर आश्वस्त न हो जाय, वीरता का त्याग न करे। अपने अपमान का स्मरण न करे।

नाशुचिरुत्तमाज्याक्ततिलकुशसर्षपैरग्निं जुहुयादात्मानमाशीर्भिराशासानः, अग्निर्मे नापगच्छेच्छरीरात् वायुर्मे प्राणानादधातु, विष्णुर्मे बलमादधातु, इन्द्रो मे वीर्यं, शिवा मां प्रविशन्त्वापः, आपोहिष्ठेत्यपः स्पृशेत्, द्विःपरिमृज्यौष्ठौ पादौ चाभ्युक्ष्य मूर्धनि खानि चोपस्पृशेदद्भिरात्मानं हृदयं शिरश्च, ब्रह्मचर्यज्ञानदानमैत्रीकारुण्यहर्षोपेक्षाप्रशमपरश्च स्यादिति।

[च० सू० अ० ८]

अपवित्र होकर गोघृत, अक्षत, तिल, कुश और सरसों से अग्नि में हवन न करे। अपने को इन आशीर्वादात्मक वचनों 'अग्नि हमारे शरीर से बाहर न जाय, वायु मेरे प्राणों को धारण करे, विष्णु मेरे बल को और इन्द्र मेरे वीर्य को स्थिर रक्खें, कल्याणकारी जल हमारे प्रवेश करें, से आशीर्वाद देता हुआ और पढ़ते हुए "आपो हिष्ठा मयो भुवः" आदि मन्त्र से जल का स्पर्श करे। दोनों समय ओठ को धोकर (आचमन कर) और पैर को धोकर जलयुक्त हाथों से अपने हृदय और सिर तथा चक्षु, नासा आदि इन्द्रियों को स्पर्श करे। ब्रह्मचर्य ज्ञान दान, मैत्री कारुण्य, हर्ष, अनासक्ति तथा शान्ति परायण रहे।

सुखार्थाः सर्वभूतानां मताःसर्वाःप्रवृत्तयः।
सुखं च न बिना धर्मात्तस्माद्धर्मपरो भवेत्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

हिंसास्तेयान्यथाकामं पैशुन्यं परुषानृत ।
संभिन्नालापव्यापादमभिध्वादृग्विपर्ययम् ॥
पापं कर्मेति दशधा कायवाङ्मानसैस्त्यजेत् ।

सभी प्राणियों की सभी प्रवृत्तियाँ सुख के लिये होती हैं और सुख बिना धर्म के नहीं होता. इसलिये धर्मपरायण होना चाहिये। हिंसा, चोरी, अविहित मैथुन, चुगुलखोरी, कठोर, असत्य, भेद करने वाला (झगड़ा लगाने वाला) भाषण, मारना, गुण में दोष का आरोप और कुदृष्टि इन दस प्रकार के पाप कर्म को शरीर, वाणी और मन से त्याग देना चाहिये।

अवृत्तिव्याधिशोकार्तानानुवर्तेत शक्तिनः ।
विमुखान्नार्थिनः कुर्यान्नावमन्येत नाक्षिपेत् ॥

जीविका रहित, रोगी एवं शोकाकुल की यथाशक्ति सहायता करनी चाहिये। अर्थी को विमुख न करे, उसका अपमान और उस पर आक्षेप (गाली देना, डाटना आदि) न करे।

जनस्याशयमालक्ष्य यो यथा परितुष्यति ॥
तंतथैवानुवर्तेत पराराधनपण्डितः ।

मनुष्य का आशय समझकर जो जिस प्रकार सन्तुष्ट हो, उसके साथ उसी प्रकार व्यवहार करे। वस्तुतः मनुष्य को दूसरों की आराधना करने में पण्डित होना चाहिये।

त्रिवर्गशून्यं नारम्भं भजेत्तच्चाविरोधयन् ॥
अनुयायात्प्रतिपदं सर्वधर्मेषु मध्यमाम् ।

अर्थ, धर्म और काम से रहित कोई काम न आरम्भ करे। उनका बिना परस्पर विरोध होते हुये सेवन करे। सभी कार्यों में सदा मध्यम (बीच वाले) मार्ग का अनुसरण करे।

नदीं तरेन्न बाहुभ्यां नक्तं सेवेत न द्रुमम् ॥
सन्दिग्धनावं नारोहेन्नासीतोत्कटकास्थितः ।

[वा० सू० अ० ३]

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

हाथों से तैर कर नदी न पार करे। रात में वृक्ष की छाया में न रहे। सन्देह पूर्ण नाव पर न चढ़े। उत्कट (उकुरवा) आसन से न बैठे।

सम्मार्जिनीरजो नैव देहे दद्यात्कदाचन।
प्रतिभूर्न भवेत्कापि न च साक्षीवृथा भवेत्॥
न भिन्नशयने स्वप्यान्नानेकविवरेऽपिच।

[भा० प्र०]

अपनी देह पर झाड़ू की धूल कभी न पड़ने दे। कभी किसी का जामिन (जमानतदार) न हो और न व्यर्थ (झूठा) किसी का गवाह बने। टूटी हुई एवं अनेक छिद्र वाली चारपाई पर न सोये।

वैरिणं नोपसेवेत साहाय्यञ्चैव वैरिणः।
अधार्मिकं तस्करं च परस्यैव च योषितम्॥

दुश्मन एवं दुश्मन के सहायक का साथ न करे। अधार्मिक, चोर एवं परस्त्री का भी साथ न करे।

न हीदृशमनायुष्यं लोके किञ्चन विद्यते।
यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम्॥

पर स्त्री का सेवन जैसे पुरुष का आयु हीन करता है, संसार में वैसा आयुहीनकारक कार्य और कोई नहीं है।

क्षत्रियञ्चैव सर्पञ्च ब्राह्मणञ्च बहुश्रुतम्।
नावमन्येत वै भूष्णुः कृशानपि कदाचन॥
एतत्त्रयं हि पुरुषं निर्दहेदवमानितम्।
तस्मादेतत्त्रयं नित्यंनावमन्येत बुद्धिमान्॥

[मनुः अ० ४]

क्षत्रिय, सर्प और विद्वान् ब्राह्मण यदि दुर्बल भी हो तो भी भविष्य में अपनी उन्नति चाहने वाला इनका अपमान न करे।

क्योंकि ये तीन अपमानित होने पर पुरुष को जला डालते हैं। इसलिये बुद्धिमान इनका कभी अपमान न करे।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अनातुरः स्वानि खानि न स्पृशेदनिमित्ततः।
रोमाणि च रहस्यानि सर्वाण्येव विवर्जयेत्॥
[मनु० अ० ४]

स्वस्थ मनुष्य अकारण अपने शारीरिक छिद्रों को न छूए। तथा उपस्थ के एवं गुप्ताङ्गों के सभी रोवों को भी न छूए।

परोपघातक्रियया वर्जयेदर्जनं श्रियः।
अर्थानां धर्मलब्धानामदाताऽपि ह्यसम्भवात्॥
स्वर्गापवर्गविभवानयत्नेनाधितिष्ठति।
नोत्संगे भक्षयेद् भक्ष्यान् जलं नाञ्जलिना पिवेत्॥
सर्वञ्च तिलसम्बद्धं नाद्यादस्तमिते रवौ।
न भुक्तमात्र आयस्येन्न निषिद्धं भजेत्सुखम्॥

दूसरे का उपघात कर लक्ष्मी की प्राप्ति न करे। धर्म द्वारा अर्जित होने वाले धन का दान न करने पर भी उसे स्वर्ग और अपवर्ग के ऐश्वर्य बिना प्रयत्न के प्राप्त हो जाते हैं। भोजन गोद में रखकर न खाये, हाथ की अञ्जलि से जल न पिये। तिल से बनी हुई सभी चीजों को सूर्य अस्त हो जाने पर न खाये। भोजन करने के बाद ही परिश्रम न करे और निषिद्ध सुख का सेवन न करे।

परस्य दण्डं नोद्यच्छेत् क्रुद्धो नैनं निपातयेत्।
अन्यत्र पुत्राच्छिष्याद्वा शासनार्हाद्धिताशयः॥

हित चाहने के अभिप्राय से मनुष्य पुत्र, शिष्य और शासनीय के अतिरिक्त अन्य किसी पर न डण्डा ताने और न क्रुद्ध होकर उसे मारे।

नृत्यवादित्रगीतादि नोल्वणामाचेरत्क्रियाम्।
ऊर्ध्वं नाभेः शरीरस्य स्पृशेन्नाधरवाससा॥

नाचना, बजाना और गाना आदि कार्यं को उल्वण रूप से न करे। शरीर में नाभि के ऊपरी अंगों को निचले वस्त्र से न छुवाये (पोंछे)।

न कुर्यान्मिथुनीभूय शौचं प्रति विलम्बनम्।
पाणिद्वयेन युगपत्कण्डूयेन्नात्मनः शिरः॥

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

यदि एक साथ दो आदमी शौच के लिए गये हों तो अन्योन्याश्रित होकर उठने में विलम्ब न करे। दोनों हाथ से एक बारगी अपना शिर न खुजलाये।

पादं पादेन नाक्रामेन्न कण्डूयेन्न शौचयेत्।
न कांस्यभाजने तौ च नोपविष्टः प्रसाधयेत्॥

एक पैर जमाकर दूसरे को उठाता हुआ न चले। न एक पैर को दूसरे पैर से खुजलाये, न साफ करे (रगड़े), बैठा हुआ काँसे के वर्तन में दोनों पैरों को रखकर न धुलाये।

भद्रकामो जनः पश्येन्न क्रुद्धस्य गुरोर्मुखम्।
स्त्रियं स्रवन्तीं नोदक्यां न नग्नां नाऽन्यसङ्गताम्॥

कल्याणेच्छु मनुष्य क्रुद्ध गुरु के मुख की ओर न देखे। रजस्वला अथवा मल-मूत्र त्याग करती हुई, नग्न, नदी में स्नान करती हुई और अन्य से आलिङ्गित या मैथुनलग्न स्त्री को न देखे।

न पत्नीं भोजनस्वप्नक्षुतजृम्भादुरासने।
शयीत नैकशयने न चाश्नीयात्तया सह॥

भोजन करती हुई, सोती हुई, छींकती हुई, जँभाई लेती हुई और दुरासन पर बैठी हुई अपनी स्त्री को न देखे। उसके साथ सदा एक शय्या पर न सोये और न उसके साथ (एक ही पात्र में) भोजन करे।

तामनीर्ष्यश्च गोपायेत्स्वैरिणीं नाधिवासयेत्।
नात्मानमवजानीयान्न स्तूयान्न च पीड़येत्।

बिना ईर्ष्या के उसकी रक्षा करे। व्यभिचारिणी को अपने घर में न बसाये। अपना निरादर (ग्लानि) न करे, न आत्मस्तुति ही करे और न अपने को क्लेश दे।

न हीनानवमन्येत वृत्तार्थाङ्गबलश्रुतैः
नारुन्तुदः स्यान्न क्रूरो न तीक्ष्णो नोपतापवान्॥

आचरण, धन, अंग, बल और विद्या से हीन जनों का निरादर न करे। मर्मवेधी वचन बोलने वाला न हो और न क्रूर, तीक्ष्ण तथा परपीड़क हो।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नोच्छिष्टस्तारकाराहुतुहिनांशुदिवाकरान् ।
पश्येन्न यायान्न पठेन्न स्वप्यान्नस्पृशेच्छिरः ॥

जूठे मुँह तारा, राहु, चन्द्र और सूर्य को न देखे। और जूठे मुँह न चले, न पढ़े, न सोये और सिर को न छूए।

पाययन्तीं चरन्तीं वा नान्यस्मै गां निवेदयेत् ।
अर्केन्दुपरिवेषोल्काशतक्रतुधनूंषि च ॥

बछड़े को दूध पिलाती हुई तथा चरती हुई गाय को किसी को दिखा कर न बतलाये। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण, मंडल, उल्कापात और इन्द्रधनुष भी किसी को न दिखाए।

नान्यद्देवार्चने कर्म कुर्याद्धावेन्नवर्षति ।
तिथिं पक्षस्य न ब्रूयान्नक्षत्राणि न निर्दिशेत् ॥

देवार्चन के समय अन्य कार्य न करे। वर्षा में न दौड़े। स्वयं तिथि, पक्ष और नक्षत्र इधर-उधर कहता न फिरे।

नात्मनो जन्मलग्नर्क्षधनसारं गृहे मलम् ।
प्रकाशयेन्नापमानं न च निस्नेहतां प्रभोः ॥

अपना जन्म लग्न, नक्षत्र, धन, बल, घर का छिद्र (त्रुटि), अपमान एवं स्वामी की निस्स्नेहता को न प्रकाशित करे।

नैकाहमप्यधिवसेद्वास्तु तच्छास्त्रगर्हितम् ।
न देशं व्याधिबहुलं नावैद्यं नाप्यनायकम् ॥
नाधर्मिजनभूयिष्ठं नोपसृष्टं न पर्वतम् ।
वसेत्प्राज्याम्बुभैषज्यसमित्पुष्पतृणेन्धने ॥
सुभिक्षक्षेमरम्यान्ते पण्डितै र्मण्डिते पुरे ।

इंजीनियरों से निषिद्ध किये हुये मकान में एक दिन भी न रहे। व्याधिबहुल, वैद्य रहित, शासक रहित, अधार्मिक-जन बहुल, परित्यक्त स्थल में और पर्वत पर न रहे।

अधिक जल, औषधि, लकड़ी, पुष्प, तृण, इन्धन युक्त देश में सुभिक्ष

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

(अकाल रहित) कल्याण और सौन्दर्यमय तथा विद्वानों से सुशोभित नगर में रहे।

सर्वतेजोनिधानं हि नृप इत्युच्यते भुवि।
अदूषयन्मनस्तस्मद्भक्तिमांस्तमुपाचरेत्।

पृथ्वी पर राजा सब तेजों (शक्तियों) का निधान (कोश) कहा गया है। इसलिए मन को बिना विकृत किये भक्तिपूर्वक उसकी उपासना करे।

पर्यस्तिकोपाश्रयकोपहास-
विवादनिष्ठीवनजृम्भणानि।
सर्वाः प्रकृत्यभ्यधिकाश्च चेष्टाः,
तत्सन्निधाने परिवर्जयेत्तु॥

राजा के समीप वह जिस पर क्रुद्ध है उसका आश्रय लेना, क्रोध, हँसी, बँहस, थूकना, जँभाई, एवं सभी प्रकृति विरुद्ध चेष्टाएँ त्याग देनी चाहिये।

सत्वाद्यवस्था विविधाश्चतास्ताः,
सम्यक्परीक्ष्यात्महितं विदध्यात्।
अन्योऽपि यः कश्चिदिहास्ति मार्गो,
हितोपदेशेषु भजेत तं च॥

[अ० सं० अ० ३]

अपनी सत्व आदिजन्य भाँति-भाँति की अवस्थाओं की अच्छी तरह परीक्षा कर आत्म-कल्याण करे। इनके अतिरिक्त हित के सम्बन्ध में दूसरा भी कोई मार्ग हो तो उसका भी पालन करे।

आचार्यः सर्वचेष्टासु लोक एव हि धीमतः।
अनुकुर्यात्तमेवातो लौकिकेऽर्थे परीक्षकः॥

लोक ही सभी कामों में बुद्धिमानों का आचार्य है। इसलिये सांसारिक विषयों में पुरुष लोक-प्रणाली का ही अनुसरण करे।

आद्रसंतानता त्यागः कायवाक्चेतसां दमः।
स्वार्थबुद्धिः परार्थेषु पर्याप्तमिति सद्व्रतम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सभी जीवों में दयार्द्र मनोवृत्ति, त्यागभाव, शरीर वाणी और मन को अपने वश में रखना एवं उपकारार्थ दूसरे के कार्य को अपना ही समझ कर करना यह पूर्ण (सर्वोच्च) सदाचार है।

नक्तंदिनानि मे यांति कथं भूतस्य सम्प्रति।
दुःखभाङ् नभवत्येवंनित्यं सन्निहितस्मृतिः॥

[वा० सू० अ०]

मेरे रात-दिन किस प्रकार बीत रहे हैं इस प्रकार नित्य स्मरण कर ठीक आचरण करने वाला मनुष्य दुःख नहीं प्राप्त कर सकता।

इतिचरितमुपेतः सर्वजीवोपजीव्यम्--
प्रथितपृथुगुणौघो रक्षितो देवताभिः।
समधिकशतजीवी निर्वृतः पुण्यकर्मा--
व्रजति सुगतिनिम्नो देहभेदऽपि तुष्टिम्॥

[वृद्धवाग्भटः]

समस्त प्राणियों के लिये सुखदायी ऊपर बताये हुये आचारों से युक्त रहने पर अपने उत्तम गुणों से प्रसिद्ध, देवताओं द्वारा रक्षित एवं कृतकृत्य पुण्यात्मा उत्तमगतिप्रवण मनुष्य सौ वर्ष से भी अधिक जीवन धारण कर मर जाने पर भी (अच्छी गति एवं) सन्तोष को प्राप्त करने वाला होता है।

(हिताहितविवेकः)

अधारणीया वेगाः

वेगान्न धारयेद्वातविण्मूत्रक्षवथूद्गुधाम्।
निद्राकासश्रमश्वासजृम्भाश्रुच्छर्दि रेतसाम्॥
रोगाः सर्वेऽपि जायन्ते वेगोदीरणधारणैः।

[वा० सू०]

वायु, पुरीष, मूत्र, छींक, प्यास, भूख, नींद, खांसी एवं थकावट से

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

उत्पन्न श्वास, जँभाई, आँसू, वमन और निकलते हुये वीर्य के वेग को न रोके, क्योंकि इन वेगों को रोकने से सभी रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

वेगनिग्रहजा रोगा* ये शास्त्रे परिकीर्तिताः।
इच्छंस्तेषामनुत्पत्तिं वेगानेतान्न धारयेत्॥

[च० सू०

आयुर्वेद में कथित वेगों को रोकने से उत्पन्न होने वाले रोगों की अनुत्पत्ति चाहने वाला पुरुष इन (वातादि के) वेगों को न रोके।

धारणीयावेगाः

इमांस्तु धारयेद्वेगान् हितैषी प्रेत्य चेह च :
साहसानामशस्तानां मनोवाक्कायकर्मणाम्॥
लोभशोकभयक्रोधमानवेगान् विधारयेत्।
नैर्लज्ज्येर्ष्यातिरागाणामभिध्यायाश्च बुद्धिमान्॥

लोक और परलोक में कल्याणेच्छु मनुष्य मानसिक, वाचिक और शारीरिक कामों के अहित पूर्ण दुस्साहसों, लोभ, शोक, भय, क्रोध और अभिमान के वेगों को रोके तथा निर्लज्जता, ईर्ष्या, अति-आसक्ति (मोह) एवं दूसरे में दोष दिखाने के वेग को भी बुद्धिमान व्यक्ति रोके।

टिप्पणी

अधोवातस्य रोधेन गुल्मोदावर्तरुक्क्लमाः।
वातमूत्रशकृत्सङ्गदृष्ट्यग्निवधहृद्गदाः॥
स्नेहस्वेदविधिस्तत्र वर्तयो भोजनानि च।
पानानि वस्तयश्चैव शस्तं वातानुलोमनम्॥
शकृतः पिण्डिकोद्वेष्टप्रतिश्यायशिरोरुजः।
ऊर्ध्ववायुः परीकर्तिः हृदयस्योपरोधनम्॥
मुखेन विट् प्रवृत्तिश्च पूर्वोक्ताश्चामयाः स्मृताः।
अंगभंगाश्मरीबस्तिमेढ्रवंक्षणवेदनाः॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

परुषस्यातिमात्रस्य सूचकस्यानृतस्य च ।
वाक्यस्याकालयुक्तस्य धारयेद्वेगमुत्थितम् ॥

बहुत कठोर, चुगली, झूठ और अनवसर बोले जाने वाले वाक्य के उठे हुए वेग को रोके ।

देहप्रवृत्तिर्या काचिद्वर्तते परपीड़या ।
स्त्रीभोगस्तेयहिंसाद्यास्तस्या वेगान् विधारयेत् ॥

देह की जो भी प्रवृत्ति परपीड़ा के लिये हो जैसे पर स्त्री-भोग, चोरी तथा हिंसा आदि उसके वेगों को रोकना चाहिये ।

पुण्यशब्दो विपापत्वान्मनोवाक्कायकर्म्मणाम् ।
धर्मार्थकामान् पुरुषः सुखी भुङ्क्ते चिनोति च ॥

[च० सू०]

टिप्पणी

मूत्रस्य रोधात्पूर्वे च प्रायो रोगास्तदौषधम् ।
वर्त्यभ्यङ्गावगाहाश्च स्वेदनं वस्तिकर्म च ॥
अन्नपानं च विड्भेदि विड्रोधोत्थेषु यक्ष्मसु ।
मूत्रजेषु च पानं च प्राग्भक्तं शस्यते घृतम् ॥
जीर्णान्तिकं चोत्तमया मात्रया योजनाद्वयम् ।
अवपीड़कमेतच्च संज्ञितं धारणात्पुनः ॥
उद्गारस्यारुचिः कम्पो विबन्धो हृदयोरसोः ।
आध्मानकासहिध्माश्च हिध्मावत्तत्र भेषजम् ॥
शिरोर्तीन्द्रियदौर्बल्यमन्यास्तम्भादितं क्षुतेः ।
तीक्ष्णधूमांजनाघ्राणनावनार्कविलोकनैः ॥
प्रवर्तयेत् क्षुतिं सक्तां स्नेहस्वेदौ व शीलयेत् ।
शोषांगसादवाधिर्यसम्मोहभ्रमहृद्गदाः ॥
तृष्णाया निग्रहात्तत्र शीतः सर्वो विधिर्हितः ।
अंगभंगारुचिग्लानिकार्श्यशूलभ्रमाः क्षुधः ॥

Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

मनुष्य मन, वाणी एवं शरीर के कामों के पापराहित्य से यशस्वी होकर, धर्म, अर्थ और काम को सुखपूर्वक भोगता तथा सञ्चय करता है।

रोगानुत्पत्तिकरा भावाः

जितेन्द्रियं नानुतपन्ति रोगास्तत्कालयुक्तं यदि नास्ति दैवम्।
दैवं पुरा यत्कृतमुच्यते तत् तत्पौरुषं यत्त्विह कर्म दृष्टम्॥
प्रवृत्तिहेतुर्विषमः स दृष्टो निवृत्तिहेतुस्तु समः स एव।
नरो हिताहारविहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावानाप्तोपसेवी च भवत्यरोगः।
मतिर्वचः कर्म सुखानुबन्धि सत्त्वं विधेयं विशदा च बुद्धिः॥
ज्ञानं तपस्तत्परता च योगे यस्यास्ति तं नानुतपन्ति रोगाः।
[च० शा० अ० २]

टिप्पणी

तत्र योज्यं लघु स्निग्धमुष्णमल्पं च भोजनम्।
निद्राया मोहमूर्धाक्षिगौरवालस्यजृम्भिकाः॥
अङ्गमर्दश्च तत्रेष्टः स्वप्नः संवाहनानि च।
शोषो हिध्मा च कार्योऽत्र कासहा सुतरां विधिः॥
गुल्महृद्रोगसम्मोहाः श्रमश्वासाद्विधारितात्।
हितं विश्रमणं तत्र वातघ्नश्च क्रियाक्रमः॥
जृम्भायाः क्षववद्रोगाः सर्वश्चानिलजिद्विधिः।
पीनसाक्षिशिरोहृद्रुङ्मन्यास्तम्भारुचिभ्रमाः॥
सगुल्मा वाष्पतस्तत्र स्वप्नो मद्यं प्रियाः कथाः।
विसर्पकोठकुष्ठाक्षिकंडूपांड्वामयज्वराः॥
सकासश्वासहृल्लासव्यंगश्वयथवो वमेः।
गंडूषधूमानाहारान् रूक्षं भुक्त्वा तदुद्गमः॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0 In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जितेन्द्रिय के पास रोग नहीं आते यदि उस समय उसका दैव (भाग्य) दूषित न हो। पूर्व जन्म के कर्म को दैव और इस जन्म के कर्म को पौरुष कहते हैं। उसी दैव एवं पौरुष का विषम (प्रतिकूल) होना रोगोत्पत्ति का कारण एवं उनका सम (अनुकूल) होना रोगनाश का कारण है।

हित आहार विहार का सेवन करने वाला, विचार कर कार्य करने वाला, विषयों में अनासक्त, दाता, प्राणियों में समचेता, सत्य व्यवहार वाला, क्षमाशील एवं आप्तों (किसी भी अवस्था में असत्य न कहने वालों) का सेवक मनुष्य निरोग होता है। जिसके सदा सुखदायक गति वाणी और कर्म हैं, एवं वशीभूत मन, स्वच्छ बुद्धि, ज्ञान, तप तथा योग (चित्त-वृत्तियों को रोकने) में तल्लीनता है उसके पास रोग नहीं फटकते।

आयुष्यं भोजनं जीर्णे वेगानां चाऽविधारणम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च साहसानां च वर्जनम्॥

[सु० चि० अ० २८]

पच जाने पर भोजन करना, आधारणीय वेगों को न रोकना, ब्रह्मचर्य, अहिंसा और शक्ति से अधिक काम न करना, ये आयु को बढ़ाने वाले हैं।

टिप्पणी

व्यायामः स्नुतिरस्रस्य शस्तं चात्र विरेचनम्।
सक्षारलवणं तैलमभ्यंगार्थं च शस्यते॥
शुक्रात्तत्स्रवणं गुह्यवेदना श्वयथुर्ज्वरः।
हृद्व्यथामूत्रसंगांगभंगवृद्ध्यश्मषंढताः॥
ताम्रचूडसुराशालिवस्त्यभ्यंगावगाहनम्।
वस्तिशुद्धिकरैः सिद्धं भजेत् क्षीरं प्रियाः स्त्रियः॥
तृट्शूलार्तं त्यजेत्क्षीणं विड्वमं वेगरोधिनम्।

[अ० हृ० सू० अ० ४]

aGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वामशायी द्विभुञ्जानः षण्मूत्री द्विपुरीषकः।
स्वल्पमैथुनकारी च शतं वर्षाणि जीवति॥

[चै० कु०]

सदा बायीं करवट सोने वाला, दो बार भोजन करने वाला, छः बार पेशाव तथा दो बार पुरीष त्याग करने वाला एवं थोड़ा मैथुन करने वाला सौ वर्ष तक जीता है।

हैमन्तिकं दोषचयं वसन्ते प्रवाहयन् ग्रैष्मिकमभ्रकाले।
घनात्यये वार्षिकमाशु सम्यक्प्राप्नोति रोगानृतुजान्न जातु॥

[च०]

हेमन्त ऋतु में सञ्चित हुए दोष को वसन्त में, ग्रीष्म ऋतु के दोष-सञ्चय को वर्षाकाल में एवं वर्षा के दोष-सञ्चय को शरद ऋतु में भली-भाँति निकाल देने वाला पुरुष ऋतुजनित विकारों को नहीं प्राप्त करता है।

यथाक्रमं यथायोगमतऊर्ध्वं प्रयोजयेत्।
रसायनानि सिद्धानि वृष्ययोगांश्च कालवित्॥

[च०]

इसके बाद मनुष्य क्रम एवं अनुकूल योग के अनुसार सिद्ध रसायनों तथा वृष्य योगों का सेवन कालानुसार करे।

स्वस्थस्योर्जस्करं यत्तु तद्वृष्यंतद्रसायनम्।

[च० चि० अ० १]

स्वस्थ पुरुषों में ओज (बल) उत्पन्न करने वाली वस्तु वृष्य और रसायन कही गई है।

रसायनं च तज्ज्ञेयं तज्जराव्याधिनाशनम्॥

[शार्ङ्गधर० पू० खं०]

बुढ़ापा और व्याधि को नाश करने वाली वस्तु को रसायन जानना चाहिए।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

रसायनगुणाः

दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः ।
प्रभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलं परम् ॥
वाक्सिद्धिं प्रणतिं कान्तिं लभते ना रसायनात् ।
लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम् ॥
न केवलं दीर्घमिहायुरश्नुते ।
रसायनं यो विधि निषेवते ॥
गतिं सदेवर्षि निषेवितां शुभाम् ।
प्रपद्यते ब्रह्म तथेति चाक्षरम् ॥

[च० चि० अ० १]

मनुष्य रसायन से दीर्घायु, स्मृति, मेधा (धारणाशक्ति), आरोग्य, यौवन, वर्ण और स्वर की वृद्धि, देह एवं इन्द्रियों में उत्तम बल, वाक्सिद्धि, प्रणति (नम्रता) और कान्ति प्राप्त करता है । उत्तम रसादि धातुओं की प्राप्ति के उपाय ही रसायन हैं । जो विधिपूर्वक रसायन का सेवन करता है वह केवल दीर्घायु ही नहीं प्राप्त करता अपितु देवर्षियों द्वारा सेवित शुभ गति एवं अक्षर ब्रह्म को भी प्राप्त करता है ।

आचाररसायनम्

सत्यवादिनमक्रोधं निवृत्तं मद्यमैथुनात् ।
अहिंसकमनायासं प्रशान्तं प्रियवादिनम् ॥
जपशौचपरं धीरं दाननित्यं तपस्विनम् ।
देवगोब्रह्मणाचार्यगुरुवृद्धार्चने रतम् ॥
आनृशंस्यपरं नित्यं नित्यं करुणवेदिनम् ।
समजागरणस्वप्नं नित्यं क्षीरघृताशिनम् ॥
देशकालप्रमाणज्ञं युक्तिज्ञमनहङ्कृतम् ।
शस्ताचारमसंकीर्णमध्यात्मप्रवणेन्द्रियम् ॥

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

उपासितारं वृद्धानामास्तिकानां जितात्मनाम् ।
धर्मशास्त्रपरं विद्यान्नरं नित्यरसायनम् ॥
गुणैरेतैः समुदितः प्रयुंक्ते यो रसायनम्* ॥
रसायनगुणान् सर्वान् यथोक्तान् स समश्नुते ॥

[च० चि० अ० १]

सत्यवादी, क्रोधरहित, मद्य-मैथुन से परे रहने वाला, अहिंसक, आयासरहित, शान्त, प्रियवादी, जप एवं पवित्रता परायण, धीर, दानशील, तपस्वी, देवता-गाय-ब्राह्मण-आचार्य-गुरु तथा वृद्धों की पूजा सम्मान में लीन, नृशंसता (कठोरता ठगी) रहित, प्राणियों को करुणापूर्ण दृष्टि से देखने वाला, ठीक समय से जागने-सोने वाला, नित्य दूध घी खाने वाला, देश-काल के प्रमाण को जानने वाला, युक्तिज्ञ, अहंकार रहित, हित आचरण करने वाला, उदार विचार वाला, अध्यात्म की ओर लगी हुई इन्द्रियों वाला, वृद्ध-आस्तिक जितेन्द्रिय जनों का उपासक एवं सर्वदा धर्मशास्त्रपरायण पुरुष नित्य रसायनसेवी ही समझा गया है। इन गुणों से युक्त जो पुरुष रसायन का सेवन करता है वह रसायन के सभी कहे हुए गुणों को प्राप्त करता है।

---

* पूर्वे वयसि मध्ये वा मनुष्यस्य रसायनम् ।
प्रयुञ्जीत भिषक्प्राज्ञः स्निग्धशुद्धतनोः सदा ॥
नाविशुद्धशरीरस्य युक्तो रासायनो विधिः ।
न भाति वाससि क्लिष्टे रङ्गयोग इवार्पितः ॥

[सु० चि० अ० २७]

अथ सप्त पुरुषा रसायनं नोपयुञ्जीरन् । तद्यथा अनात्मवानलसो दरिद्रः प्रमादी व्यसनी पापकृद् भेषजापमानी चेति । सप्तभिरेव कारणैर्न सम्पद्यते । अज्ञानादनारम्भादस्थिरचित्तत्वाद्दारिद्र्यादनायत्तत्वादधर्मादौषधालाभाच्चेति । [सु० चि० अ० ३०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

रोगास्तथा न जायन्ते प्रकृतिस्थेषु धातुषु ।
धातवश्चाभिवर्धन्ते जरा मान्द्यमुपैति च ॥ [च०]

इस प्रकार धातुओं के प्रकृतिस्थ रहने पर रोग नहीं उत्पन्न होते। धातुयें बढ़ती हैं और बुढ़ापा मन्द हो जाती है।

आयुः परीक्षणम्

नाभिस्थः प्राणपवनः स्पृष्ट्वा हृत्कमलान्तरम् ।
कण्ठाद्बहिर्विनिर्याति पातुं विष्णुपदामृतम् ॥
पीत्वा चाम्बरपीयूषं पुनरायाति वेगतः ।
प्रीणयन् देहमखिलं जीवयन् जठरानलम् ।
शरीरप्राणयोरेवं संयोगादायुरुच्यते ॥ [शा० सं०]

नाभिमें स्थित प्राण-वायु हृदय-कमल को स्पर्श कर आकाश के अमृत (आविसजन) को पीने के लिए कण्ठ से बाहर आता है। वह आकाश के अमृत को पीकर सारे शरीर को पुष्ट करता एवं उदराग्नि को दीप्त करता हुआ पुनः वेग से लौट आता है। शरीर एवं प्राण के इस संयोग को आयु कहते हैं।

तत् त्रिविधं दीर्घं मध्यमल्पञ्चेति ।

वह आयु तीन प्रकार की होती है:-दीर्घायु, मध्यमायु और अल्पायु।

तत्र महापाणिपादपार्श्वपृष्ठस्तनाग्रदशनवदनस्कन्धललाटं दीर्घाङ्गुलिपर्व्वोच्छ्वासप्रेक्षणबाहुं विस्तीर्णभ्रूस्तनान्तरोरस्कं ह्रस्व-जंघामेढ्रग्रीवं गम्भीरसत्वस्वरनाभिमनुच्चैर्वद्धस्तनमुपचितमहारोमशकर्णं पश्चान्मस्तिष्कं स्नातानुलिप्तं मूर्द्धानुपूर्व्या विशुष्यमाणशरीरं पश्चाच्च विशुष्यमाणहृदयं पुरुषं जानीयादीर्घायुः खल्वयमिति । तमेकान्तेनोपक्रमेत । एभिर्लक्षणैर्विपरीतैरल्पायुर्भिश्चैर्मध्यमायुरिति ॥ भवन्ति चात्र ॥

जिसका हाथ, पैर, पार्श्व, स्तनाग्र (चूचक), दाँत, मुख, स्कन्ध और ललाट बृहत् हो। अङ्गुलि पर्व उच्छ्वास आंख और बाहु दीर्घ हो। भौं,

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्तनों का मध्य भाग एवं वक्ष चौड़ा हो, जंघा, लिंगेन्द्रिय और ग्रीवा छोटी हो। सत्व (मन) स्वर और नाभि गम्भीर हो, स्तन न ऊँचा हो और बँधा हो, कान बालों से युक्त हों एवं मस्तिष्क पीछे की ओर फैला हो। स्नान तथा चन्दन आदि लगाने पर क्रमशः सिर और शरीर तत्पश्चात् हृदय सूखता हो। उस पुरुष को निश्चय दीर्घायु जानना चाहिए। निस्सन्दिग्ध मनसे उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। इनसे विपरीत लक्षण वालों को अल्पायु और दोनों के मिले हुये लक्षणों से युक्त पुरुष को मध्यमायु जानना चाहिए। कहा भी है :—

गूढसन्धिसिरास्नायुः संहताङ्गः स्थिरेन्द्रियः।
उत्तरोत्तरसुक्षेत्रो यः स दीर्घायुरुच्यते॥
गर्भात्प्रभृत्यरोगो यः शनैः समुपचीयते।
शरीरज्ञानविज्ञानैः स दीर्घायुः समासतः॥

जिसकी सन्धि सिरा और स्नायु गूढ़ (मांसल होने से ढके हुये हों), जो पुष्ट अंग तथा स्थिर इन्द्रियों से युक्त एवं उत्तरोत्तर सुन्दर सुडौल हो वह दीर्घायु कहा गया है।

जो गर्भ काल से ही निरोग रह कर धीरे-धीरे क्रमशः शरीर ज्ञान और विज्ञान से पुष्ट होता है वह साधारणतः दीर्घायु कहा गया है।

मध्यमस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वं निबोध मे।
अधस्तादक्षिणोर्यस्य लेखाः स्युर्व्यक्तमायताः॥
द्वे वा तिस्रोऽधिका वापि पादौ कर्णौ च मांसलौ।
नासाग्रमूर्ध्वञ्च भवेदूर्ध्वलेखाश्च पृष्ठतः॥
यस्य स्युस्तस्य परममायुर्भवति सप्ततिः।

मध्यमायु का लक्षण यह है—

जिसकी आंखों के नीचे स्पष्टतः लम्बी दो तीन या अधिक रेखायें हों, पैर, कान मांसल हों, नासिका का अगला हिस्सा ऊपर उठा हो, और पृष्ठ पर उभरी रेखायें हों। उसकी अधिकतम आयु ७० वर्ष की होती है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

जघन्यस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वं निबोध मे ॥
ह्रस्वानि यस्य पर्व्वाणि सुमहच्चापि मेहनम् ।
तथोरस्यवलीढ़ानि न च स्यात्पृष्ठमायतम् ॥
ऊर्ध्वञ्च श्रवणौ स्थानान्नासा चोच्चा शरीरिणः ।
हसतो जल्पतो वापि दन्तमांसं प्रदृश्यते ॥
प्रेक्षते यश्च विभ्रान्तं स जीवेत्पञ्चविंशतम् ॥

इसके पश्चात् हीन आयु के लक्षण हमसे जानो :—

जिसकी अंगुलियों की गांठों के मध्य भाग छोटे, लिंगेन्द्रिय बहुत बड़ी, छाती धँसी हुई, पीठ चौड़ाई से रहित, कान और नाक अपने स्थान से ऊँचे हों। हँसते या बोलते समय जिसके मसूड़े दिखायी पड़ते हों, जो भ्रान्त (भ्रमयुक्त) देखता हो। वह २५ वर्ष जीता है।

अथ पुनरायुषो विज्ञानार्थमङ्ग प्रत्यङ्गप्रमाणसारानुपदेक्ष्यामः। तत्राङ्गान्यन्तराधिसक्थिबाहुशिरांसि तदवयवाः प्रत्यङ्गानीति। तत्र स्वैरंगुलैः पादांगुष्ठप्रदेशिन्यौ द्वयंगुलायते। प्रदेशिन्यास्तु मध्यमाऽनामिका कनिष्ठिका यथोत्तरं पञ्चमभागहीना। चतुरंगुलायते पञ्चांगुलविस्तृते प्रपदपादतले पञ्चचतुरंगुलायतविस्तृता पार्ष्णिः। चतुर्दशांगुलायतः पादः। चतुर्दशाङ्गुलपरिणाहानि पादगुल्फजंघाजानुमध्यानि। अष्टादशांगुला जंघा जानूपरिष्टाद्द्वात्रिंशदंगुलमेवं पञ्चाशत्। जंघायामसमावूरू। द्वयंगुलानि वृषणचिबुकदशननासापुटभागकर्णमूलनयनान्तराणि। चतुरंगुलानि मेहनवदनान्तरनासाकर्णललाटग्रीवोच्छ्रायहृच्छ्रवन्तराणि। द्वादशांगुलानि भगविस्तारमेहननाभिहृदयग्रीवास्तनान्तरमुखायाममणिबन्धप्रकोष्ठस्थौल्यानि। इन्द्रवस्तिपरिणाहांसपीठकूर्परान्तरायामः षोडशांगुलः चतुर्विंशत्यंगुलो हस्तः। द्वात्रिंशदंगुलपरिमाणौ भुजौ द्वात्रिंशत्परिणाहावूरू, मणिबन्धकूपरान्तरं षोडशांगुलम्। तलं षट्चतुरङ्गुलायामविस्ता-

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

रम्। अंगुष्ठमूलप्रदेशिनी श्रवणापाङ्गान्तरमध्यमांगुल्यो पञ्चांगुले अर्धपञ्चाङ्गले प्रदेशिन्यनामिके सार्धत्र्यंगुलौकनिष्ठिकांगुष्ठौ। चतुर्विंशतिविस्तारपरिणाहं मुखग्रीवम्। त्रिभागाङ्गुलिविस्तारा नासापुटमर्य्यादा। नयनत्रिभागपरिणाहा तारका। नवमस्तारकांशो दृष्टिः। केशान्तमस्तकान्परमेकादशाङ्गुलम्। मस्तकादवटुकेशान्तो दशाङ्गुलः कर्णावट्वन्तरं चतुर्दशाङ्गुलम्। पुरुषोरःप्रमाणविस्तीर्णा स्त्रीश्रोणिः अष्टादशाङ्गुलविस्तीर्णमुरः। तत्प्रमाणा पुरुषस्य कटी। सविंशमङ्गुलशत पुरुषायामइति।

आयु ज्ञान से लिए अङ्ग प्रत्यंग का प्रमाण और सार कह रहे हैं:—

मध्यकाय, टांग, बाहु और सिर ये अंग; एवं इनके हिस्से प्रत्यंग कहे गये हैं। अपनी अंगुली से पैर का अंगुष्ठ एवं प्रदेशिनी दो अंगुल लम्बी हो। मध्यमा, अनामिका और कनिष्ठिका ये क्रमशः प्रदेशिनी से ¼ भाग छोटी होती जांय। प्रपद और पादतल में से प्रत्येक ४ अंगुल लंबा और ५ अंगुल चौड़ा हो। एड़ी ५ अंगुल लम्बी और ४ अंगुल चौड़ी हो। १४ अंगुल लम्बा पैर हो। पैर, गुल्फ, जंघा और जानु में से प्रत्येक के मध्यभाग का घेरा १४ अंगुल हो। जंघा १८ अंगुल लम्बी हो। जानु के ऊपर (ऊरु) ३२ अंगुल लम्बा हो। इस प्रकार पूरा पैर ५० अंगुल लम्बा हो। जंघा के आयाम के बराबर ही ऊरु हो। दोनों अण्डकोषों के बीच की दूरी, दाढ़ी (अधोहन्वस्थि), दांत (ऊपरी और निचले दोनों दाँत), नासापुट, कर्णमूल एवं आँखों की सीमा के बीच का भाग २ अंगुल हो। लिंग, मुख की लम्बाई, नासिका, कान, ललाट, ग्रीवा की ऊँचाई एवं दोनों दृष्टियों के बीच की दूरी १ अंगुल हो। भग का विस्तार (घेरा), लिंग और नाभि, नाभि और हृदय, हृदय और ग्रीवा और दोनों स्तनों के बीच का अन्तर, मुख की लंबाई, मणिबन्ध और प्रकोष्ठ की मोटाई १२ अंगुल हो। इन्द्रवस्ति का

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

घेरा, कन्धा की लम्बाई और कूर्पर (केहुनी की गोलाई) १६ अंगुल हो। हाथ २४ अंगुल हो, दोनों भुजायें ३२ अंगुल, ऊरू की गोलाई ३२ अंगुल हो। मणिबन्ध और कूर्पर का अन्तर १६ अंगुल हो। हाथ के तलवे १० अंगुल हो। अंगुष्ठ मूल और प्रदेशिनी मूल का अन्तर, कान और अपांग (आँख की कोर) का अन्तर, मध्यमा अंगुलि की लम्बाई ५ अंगुल हो। प्रदेशिनी और अनामिका ४½ अंगुल लम्बी हो। कनिष्ठिका और अंगुष्ठ ३½ अंगुल लम्बे हों। मुख और ग्रीवा का घेरा २४ अंगुल हो। ½ अंगुल चौड़ी नासा पुट की सीमा हो। नेत्र की लम्बाई का ⅓ तारा का घेरा हो, तारक का नवाँ अंश दृष्टि हो, केशान्त और मस्तक का अन्तर ११ अंगुल, मस्तक से ग्रीवा के पश्चाद्भाग (अवटु) के केशान्त का अन्तर १० अंगुल, कान और अवटु का अन्तर १४ अंगुल हो। पुरुष की छाती के बराबर स्त्री की श्रोणि की चौड़ाई हो। छाती १८ अंगुल चौड़ी हो। इतनी ही विस्तृत पुरुष की कमर हो। १२० अंगुल पुरुष की लम्बाई हो।

भवंति चात्र।

कहा भी है :—

देहः स्वैरंगुलैरेष यथावदनुकीर्त्तितः।
युक्तप्रमाणेनानेन पुमान् वा यदि वाऽङ्गना॥
दीर्घमायुरवाप्नोति वित्तञ्च महदृच्छति।
मध्यमं मध्यमैरायुर्वित्तं हीनैस्तथाऽवरम्॥

अपने अंगुल के अनुसार इस प्रमाण से युक्त देह वाला पुरुष या स्त्री दीर्घायु और बहुत धन प्राप्त करती है। इनके माध्यम होने से मध्यम आयु और धन होता है। हीन होने से हीन धन, आयु होती है।

अथसारान् वक्ष्यामः॥ स्मृतिभक्तिप्रज्ञाशौर्य्यशौचोपेतं कल्याणाभिनिवेशं सत्वसारं विद्यात्। स्निग्धं संहतश्वेतास्थिदन्तनखं बहुलकामप्रजं शुक्रेण। अकृशमुत्तमबलं स्निग्धगम्भी-

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

रस्वरं सौभाग्योपपन्नं महानेत्रञ्च मज्जा। महाशिरःस्कन्धहनु-दन्तहन्वस्थिनखमस्थिभिःस्निग्धमूत्रस्वेदस्वरं वृहच्छरीरमायास-सहिष्णुं मेदसा। अच्छिद्रगात्रं गूढास्थिसन्धिमांसोपचितश्च मांसेन। स्निग्धताम्रनखनयनतालुजिह्वौष्ठपाणिपादतलं रक्तेन। सुप्रसन्नमृदुत्वग्रोमाणं त्वक्सारं विद्यादित्येषां पूर्व्वं पूर्व्वं प्रधान-मायुः सौभाग्ययोरपि।

अब सार कह रहे हैं :—स्मृति, भक्ति, प्रज्ञा, शूरता, पवित्रता से युक्त और कल्याण ही चाहने वाले को सत्वसार समझना चाहिये। स्निग्ध, सटा हुआ पुष्ट-श्वेत हड्डी-दाँत नख युक्त तथा काम शक्ति और प्रजा (सन्तान) की अधिकता से युक्त को शुक्रसार समझना चाहिये। कृशता से हीन, उत्तम बल, स्निग्ध, गम्भीर स्वर वाला, सौभाग्य युक्त विशाल नेत्रों वाला मज्जसार होता है। विशाल सिर, कन्धा, दृढ़ दाँत-हन्वस्थि-नखवाला अस्थिसार है। स्निग्ध मूत्र-स्वेद स्वर वाला, विशाल काय एवं परिश्रम सहने वाला मेदसार है। अच्छिद्र शरीर, छिपी हुई अस्थिसन्धियों वाला एवं पुष्ट-मांस से उपचित मांससार है। स्निग्ध और ताम्रवर्ण के नख, नयन, तालु, जिह्वा, ओठ, हाथ और पैर का तलुवा वाला रक्तसार है। अत्यन्त स्वच्छ और कोमल त्वचा और रोमवाले को त्वक्सार जानना चाहिये। इनमें क्रमशः अन्तिम से पहिले-पहिले की और वाले आयु और सौभाग्य में उत्कृष्टतर होते हैं।

भवन्ति चात्र।

कहा भी है :—

सामान्यतोऽङ्गप्रत्यङ्गप्रमाणादथ सारतः।
परीक्ष्यायुः सुनिपुणो भिषक् सिध्यति कर्म्मसु॥

(सु० सू० अ० ३५)

साधारणतः अंग प्रत्यंग के प्रमाण एवं सार से आयु की परीक्षा कर अत्यन्त चतुर वैद्य चिकित्सा कर्म में सिद्धि प्राप्त करता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

तौलानुसारेण स्वास्थ्यपरीक्षणम् *

जनस्य यावत्पर्व (१½ अङ्गुलम्) परिमितः शरी-

स्वस्थशरीरप्रमाणम् (२०—३० वर्षवयसि)

उच्छ्रायः	तौलम्	वक्षःस्थलम्	गलः	बाहुः	मणिबंधः	ऊरू	पिण्डिका	कटिः
स्फी. (फुट)प	अ. से. (पौंड)	पर्वकम् (इञ्च) प.	प०	प०	व०	प०	प०	प०
५—०	११६	३१—३४	१२½	१२½	११½	१५	१२	२५½
५—१	१२०	३१½—३५	१२½	१२½	११½	१५½	१२	२५½
५—२	१२६	३२—३५	१३	१३	१२	१६	१२½	२६½
५—३	१३३	३३—३७	१३½	१३½	१२½	१६½	१२½	२७
५—४	१३८	३४—३८	१३½	१३½	१३	१७	१३	२८
५—५	१४२	३४½—३८½	१३½	१३½	१३½	१७½	१३½	२८½
५—६	१४६	३५—३९	१४	१४	१३½	१८	१३½	२९
५—७	१५१	३५½—४०	१४½	१४½	१४	१८½	१४	२९½
५—८	१५६	३६—४१	१५	१५	१४½	१९	१४½	३०
५—९	१६०	३६½—४१½	१५½	१५½	१४½	१९½	१४½	३०½
५—१०	१६४	३७—४२	१५½	१५½	१५	२०	१५	३१
५—११	१६८	३७½—४२½	१५½	१५½	१५½	२०½	१५½	३१½
६—०	१७५	३८—४२	१५½	१५½	१५½	२१	१५½	३२

[स्वा० शि० पा०]

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

रायामः स्यात्तावत्सेटक (८० तो०) मितं शरीरतौलं स्याच्चे
त्तदा सामान्यतः स्वास्थ्यमवगन्तव्यम् ।

टिप्पणी

सामान्यतः स्वस्थस्य बालकस्य तौलादिप्रमाणम्

आयुः	तौलम्	आयुः	तौलम्	आयुः	तौलम्	आयुः	तौलम्
सप्ताहम्	३½ से०	४–५ स०	४½–५½ से०	५ मा०	७½ से०	११ से०	१० से०
२ ,,	४ ,,	२ मासम्	५½ ,,	६ ,,	८ ,,	१२ ,,	१०½ ,,
३ ,,	४½ ,,	३–४ ,,	६–७ ,,	६–१० ,,	८½–९½		

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मनुष्य का शरीर जितने पर्व (१ पर्व = १½ अंगुल = इंच) लम्बा हो उतने ही सेर (१ सेर = ८० तोला) यदि उसके शरीर का भार हो तो साधारण स्वास्थ्य जानना चाहिये ।

नेत्रसंरक्षणपरायणत्वम्

चक्षुः प्रधानं सर्वेषामिन्द्रियाणां विदुर्बुधाः ।
घननीहारयुक्तानां ज्योतिषामिव भास्करः ॥
चक्षूरक्षायां सर्वकालं मनुष्यै-
र्यत्नः कर्तव्यो जीविते यावदिच्छा ।

टिप्पणी

आयुः	तौलम्	उच्छ्रयः	वक्षःस्थलम्	शिरः
जन्मक्षणम्	३½ सेर०	२०½ पर्वकः	१३½ प०	१४ पर्वकम्
१ वर्षम्	१०½ ,,	२९	१८ ,,	१८ ,,
२ ,,	१३½ ,,	३२½ ,,	१९ ,,	१९ ,,
३ ,,	१५½ ,,	३५	२० ,,	१९½ ,,
४ ,,	१७½ ,,	३८	२०⅜ ,,	१९⅜ ,,
५ ,,	२०½ ,,	४१½ ,,	२१½ ,,	२०½ ,,
६ ,,	२२½ ,,	४४	२३½ ,,	
७ ,,	२४½ ,,	४६	२३½ ,,	
८ ,,	२७½ ,,	४८	२४½ ,,	
९ ,,	३० ,,	५०	२५ ,,	
१० ,,	३३½ ,,	५२	२५ ,,	

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

व्यर्थो लोकोऽयं तुल्यरात्रिंदिवानां ।
पुंसामंधानां विद्यमानेऽपि वित्ते ॥

[वा० उ० अ० १३]

गाढ़े कुहासा और तुषार से युक्त ज्योतियों के मध्य में जैसे सूर्य प्रधान है उसी प्रकार समस्त इन्द्रियों में नेत्र की प्रधानता विद्वानों ने मानी है।

जब तक जीवन की इच्छा रहे तब तक नेत्र की रक्षा सभी प्रकार से करनी चाहिए क्योंकि धन के रहने पर भी रात दिन जिनके लिए समान हैं ऐसे अन्धे पुरुष के लिए यह संसार व्यर्थ है।

उष्णाभितप्तस्य जलप्रवेशाद् दूरेक्षणात् स्वप्नविपर्ययाच्च।
प्रसक्तसंरोदनशोककोपक्लेशाभिघातादतिमैथुनाच्च ॥
शुक्तारनालाम्लकुलत्थमाषनिषेवणाद् वेगविनिग्रहाच्च।
स्वेदाद्रजोधूमनिषेवणाच्च छर्दैर्विघाताद्वमनातियोगात् ॥
वाष्पग्रहात्सूक्ष्मनिरीक्षणाच्च नेत्रे विकारान् जनयन्ति दोषाः।

[सु० उ० अ० १]

उष्णता से पीड़ित शरीर के रहते हुये जल में प्रवेश करने से, दूर की वस्तु को देखने से, निद्रा ठीक न आने से, आँसू के वेग को रोकने से, लगातार रोने, शोक, कोप, क्लेश, एवं चोट लगने से, अति मैथुन से, शुक्त, काञ्जी, अम्लवस्तु, कुलथी, उरद के निरन्तर सेवन से, वेगों को रोकने से, आग धूप के सेवन से, धूल-धूम में रहने से, वमन को रोकने, वमन के अधिक होने से, आँसुओं के रोकने से और सूक्ष्म वस्तु को देखने से कुपित दोष नेत्र में विकार उत्पन्न करते हैं।

प्रायेण सर्वे नयनामयास्ते भवन्त्यभिष्यन्दनिमित्तमूलाः।
तस्मादभिष्यन्दमुदीर्ण्यमाणमुपाचरेदाशु हिताय धीमान् ॥

[सु० उ० अ० ६]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

प्रायः सभी नेत्र विकार अभिष्यन्द (आँख उठने) के कारण होते हैं इसलिये नेत्रहितैषी बुद्धिमान् बढ़ते हुए अभिष्यन्द की चिकित्सा शीघ्र करें।

सततं न निरीक्षेत चलसूक्ष्माऽप्रियाणि च।
नाऽप्रशान्तं न विण्मूत्रं न दर्पणममार्जितम्॥
उद्यन्तमस्तमायान्तं तपन्तं प्रतिमागतम्।
उपरक्तं च भास्वन्तं वाससा वा तिरोहितम्॥
नान्यदप्यतितेजस्वि—(अ० सं० सू० अ० ३)
न भारं शिरसावहेत्।
[वा० सू०]

सर्वदा चञ्चल, सूक्ष्म, अप्रिय, अप्रशान्त घृणित वस्तु, विट्, मूत्र और बिना साफ किया दर्पण, उदय एवं अस्त होते हुए, तपते हुए, दर्पण जलादि में प्रतिबिम्बित, लालिमायुक्त, अति देदीप्यमान एवं कपड़े से आँख ढँककर सूर्य को नहीं देखना चाहिये। इसी तरह अन्यान्य अत्यन्त तेज युक्त चमकीली वस्तु को भी नहीं देखना चाहिये और शिर के ऊपर रख कर भार वहन नहीं करना चाहिये।

नाधीयादश्वमारूढो*न वृक्षं न च हस्तिनम्।
न नावं न खरं नोष्ट्रं नेरिणस्थो न यानगः॥
[मनुः]

घोड़े पर, वृक्ष पर; हाथी पर, नौका पर, गदहे पर ऊँट पर और रेता पर बैठकर एवं किसी भी सवारी (यान-रथादि) पर बैठकर अध्ययन नहीं करना चाहिये (क्योंकि इन सबों पर आरोहण करने पर दृष्टि चञ्चल रहती है अतः ऐसा करने पर नेत्रों में विकार आ जाता है।)

---

* अश्वादीनां चलत्वाद् दृष्टेः सम्भ्रान्त्या चाक्षुषरोगसम्भवान्निषेधः कृतो भगवता मनुना।

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सर्वदा च निषेवेत स्वस्थोऽपि नयनप्रियः।
पुराणयवगोधूमशालिषष्टिककोद्रवान् ॥
मुद्गादीन् कफपित्तघ्नान् भूरिसर्पिः परिप्लुतान्।
शाकं चैवंविधं मांसं जांगलं दाडिमं सिताम् ॥
सैन्धवं त्रिफलां द्राक्षां वारि पाने च नाभसम्।
आतपत्रं पदत्राणं विधिवद्दोषशोधनम् ॥

स्वस्थ मनुष्य भी अपने नेत्रों की भलाई के लिए पुराने जव, चावल, साठी, कोदो और मूंग आदि कफ पित्त को दूर करने वाले को घृत मिलाकर सेवन करें। इसी तरह शाक, जांगल-मांस, अनार मिश्री, सेंधा नमक, त्रिफला, मुनक्का, आकाशीयजल, छाता और जूता आदि का सेवन करें। और विधि पूर्वक दोषों का यथाकाल शोधन करें

वर्जयेद्वेगसंरोधमजीर्णाध्यशनानि च]
शोकक्रोधदिवास्वप्ननिशाजागरणानि च ॥
विदाहि विष्टंभकरं यच्चेहाहारभेषजम्।
द्वे पादमध्ये पृथुसन्निवेशे
शिरे गते ते बहुधा च नेत्रे।
ताम्रक्षणोद्वर्तनलेपनादीन्
पादप्रयुक्तान्नयनं नयंति ॥
मलोष्णसंघट्टनपीडनाद्यै-
स्ता दूषयंते नयनानि दुष्टाः।
भजेत्सदा दृष्टिहितानि तस्माद्
उपानदभ्यंजनधावनानि" ॥

[वा० उ० अ० १५]

मल मूत्र का वेग रोकना, अजीर्ण, अध्यशन, शोक, क्रोध, दिवास्वप्न रात में जागना, विदाही और कब्जकर विहार-आहार और औषध

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

परित्याग करना चाहिए। पाद के मध्यभाग से दो मोटी शिरायें नेत्र को गयी हैं वे पाद में मर्दन, उबटन, लेप, आदि करने पर उसके प्रभाव को नेत्र में शीघ्र पहुँचाती हैं और यदि पैर में गंदे एवं उष्ण वस्तु का संसर्ग हो अथवा चोट आदि लग जाय तो वे दूषित होकर नेत्रों को दूषित करती हैं। इसलिये नेत्रहितकारी वस्तु जूता और मालिश एवं पादप्रक्षालन आदि हमेशा सेवन करना चाहिए।

सर्वात्मना नेत्रबलाय यत्नं।
कुर्वीत नस्याञ्जनतर्पणाद्यैः॥
दृष्टिश्च नष्टा विविधं जगच्च।
तमोमयं जायत एकरूपम्॥

नस्य, अञ्जन, तर्पण आदि क्रियाओं द्वारा सभी प्रकार से नेत्र में बल होने के लिए यत्न करना चाहिए, क्योंकि नेत्र के नष्ट होने पर अनेक सामग्री से सुसज्जित यह संसार उसके लिए अन्धकार स्वरूप एक-सा हो जाता है।

"सुपुष्पाणि सुगन्धीनि नित्यं शीर्षे प्रधारयेत्।
क्लेदायाससमुद्भूतस्वेददुर्गन्धनाशनम्॥
चक्षुष्यं दाहशमनं सौमनस्यं च जायते।
हेमन्ते शिशिरे चैव शतपत्रन्तुशोभनम्॥
ईषदुष्णं सुगन्धं च सुशीतं दृष्टिदायकम्।
शिरोभ्रमविनाशार्थं शतपत्रं तु शोभनम्॥

क्लेद, आयास से उत्पन्न स्वेद, दुर्गन्धि को दूर करने के लिए सदा सिर के ऊपर सुगन्धित पुष्पों को धारण करना चाहिए। वह नेत्र के लिए हितकर, दाहशामक और मन को प्रसन्न करनेवाला होता है।

हेमन्त और शिशिर ऋतु में लाल कमल के फूलों को धारण करना चाहिये। वह कुछ उष्ण, सुगन्धित-शीत, दृष्टिदायक है और शिरोभ्रम को दूर करने के लिये अच्छा है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

श्लेष्मवातप्रशमनमुष्णवीर्यं च निर्मलम्।
पुष्पाणां प्रवरं चैव केतकीपुष्पमुच्यते॥
वसन्ते केतकी धार्या धर्मे नैपालमालती।
प्रावृट्सु पाटलं धार्यं चम्पकं शरदि स्मृतम्॥ [वै०कु०

केतकी (केवड़ा) पुष्प कफ वात को शान्त करने वाला, उष्ण वीर्य, निर्मल एवं पुष्पों में श्रेष्ठ होता है।

वसन्त में केवड़ा, ग्रीष्म में नेवारी, प्रावृट् में गुलाब, शरद में चम्पा का पुष्प धारण करना चाहिए।

व्यङ्गबलीपलितघ्नं पीनसवैस्वर्यकासशोथघ्नम्।
रजनीत्र्ययेऽम्बुनस्यंक्षरसायनं दृष्टिजननं च॥ [भा० प्र०

प्रातःकाल जल का नस्य लेने (अर्थात् नाक से पीने) से अंग की झुर्री, बाल पकना, पीनस, वैस्वर्य्य, कास और शोथ दूर होता है और रसायन है एवं दृष्टि के लिये लाभकारी होता हैं।

सौवीरमंजनं नित्यं हितमक्ष्णोस्ततो भजेत्।
चक्षुस्तेजोमयं तस्य विशेषात् श्लेष्मणो भयम्॥
योजयेत्सप्तरात्रेऽस्मात्स्रावणार्थं रसाञ्जनम्।
[वा० सू० अ०

सौवीर अंजन (काला सुरमा) नेत्र-हितकारी होता है अतः नेत्र में लगाना चाहिये—क्योंकि नेत्र तेज स्वरूप है, उसे कफ से विशेष भय रहता है अतः कफ को दूर करने के लिये प्रति सप्ताह सुरमा को नेत्र में लगाना चाहिये।

त्रिफला रुधिरस्रुतिर्विशुद्धि-
र्मनसो निर्वृतिरंजनं च नस्यम्।

---

* पातव्यं नासया नीरं प्रसृतित्रयमात्रकम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

शकुनासनता सपादपूजा
घृतपानं च सदैव नेत्ररक्षा ॥
अहितादशनात्सदा निवृत्ति-
र्भृशभास्वच्चलसूक्ष्मवीक्षणाच्च
मुनिना——निमिनोपदिष्टमेतत्
परमं रक्षणमीक्षणस्य पुंसाम् ॥

[वा० उ० अ० १३]

नेत्र रक्षा की दृष्टि से त्रिफला चूर्ण का सेवन, रक्तमोक्षण एवं रक्तशुद्धि, मन को प्रसन्न रखना, अञ्जन, नस्य, सदैव शुभ सूचक आसन पर बैठना, पाद-प्रक्षालन और घृतपान करना लाभकर है।

अहित भोजन, अत्यन्त तेज (चमकीले), अति चलायमान और अति सूक्ष्म वस्तुओं को देखने से हमेशा दूर रहना चाहिए ऐसा विधान निमि मुनि का बताया हुआ परम नेत्ररक्षक है।

प्रकृतिपरिचयपूर्वकमाहारादिसेवनम्

सप्त प्रकृत्यो भवन्ति। दोषैः पृथक् द्विशः समस्तैश्च।
शुक्रशोणितसंयोगे यो भवेद् दोष उत्कटः।
प्रकृतिर्जायते तेन तस्या मे लक्षणं शृण ॥

सात प्रकृतियाँ होती हैं—१ वात, पित्त, ३ कफ, ४ वातपित्त, ५ वातकफ, ६कफपित्त, ७ वातपित्तकफ (त्रिदोष) से बनने वाली।

शुक्रशोणित के संयोग अर्थात् गर्भाधान के समय जो दोष अधिक होता है उससे जायमान मनुष्य की प्रकृति उसके अनुसार बनती है।

तत्र जागरूकः शीतद्वेषी दुर्भगः स्तेनो मत्सर्य्यनार्य्यो गान्धर्वचित्तःस्फुटितकरचरणोऽतिरूक्षश्मश्रुनखकेशः क्रोधी दन्तनखादी च भवति।

टिप्पणी—* शकुनाशनता ऐसा पाठ भी मिलता है उसका जाङ्गल पक्षी के मांस का खाना यह अर्थ होगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

जागरूक, शीतद्वेषी, दुर्भाग्य (या दूषित इच्छा) वाला, चोर, ईर्ष्यी, अनार्य, गाने बजाने में रुचि रखनेवाला, हाथ-पैर में विषम वाला अत्यन्त रूक्ष दाढ़ी-नख-केश वाला, दन्त और नख को चबाने वाला क्रोधी मनुष्य वात प्रकृति का कहा जाता है—

अधृतिरदृढ़सौहृदः कृतघ्नः कृशपुरुषो धमनीततः प्रलापी।
द्रुतगतिरटनोऽनवस्थितात्मा वियदपि गच्छति सम्भ्रमेण सुप्तः॥
अव्यवस्थितमतिश्चलदृष्टिर्मन्दरत्नधनसञ्चयमित्रः।
किञ्चिदेव विलपत्यनिबद्धं मारुतप्रकृतिरेष मनुष्यः।
वातिकाश्चाजगोमायुशशाखूष्ट्रशुनान्तथा।
गृध्रकाकखरादीनामनूकैः कीर्त्तिता नराः॥

धैर्यहीन, अदृढ़ मित्रता वाला, कृतघ्न, दुबला, रूक्ष, समस्त शरीर में धमनीजाल दिखाई देनेवाला, व्यर्थ बकवादी, शीघ्र चलनेवाला व्यर्थ घूमने वाला, चञ्चल स्वभाव और सुप्तावस्था में आकाश में भ्रमण करने वाला, चञ्चल मति एवं दृष्टि वाला और अल्प रत्न-धन का सञ्चय, अल्प मित्र वाला, एवं बिना सम्बन्ध के व्यर्थ कुछ बोलने वाला मनुष्य वातप्रकृति का कहा जाता है।

वात प्रकृति वाले मनुष्य-बकरा, गोमायु (स्यार), खरगोश, ऊँट, कुत्ता, गीध, काक और गदहा आदि के स्वभाव की तरह स्वभाव वाले होते हैं।

स्वेदनो दुर्गन्धः पीतशिथिलाङ्गस्ताम्रनखनयनतालुजिह्वौष्ठ पणिपादतलो दुर्भगो बलीपलितखालित्यजुष्टो बहुभुगुष्णद्वेषी क्षिप्रकोपप्रसादो मध्यमबलमध्यमायुश्च भवति॥

अधिक पसीना निकलनेवाला, दुर्गन्धी, पीले एवं शिथिल अंग वाला, ताम्रवर्ण का नख-नेत्र-तालु-जिह्वा-ओठ-हाथ-पैर तलवे वाला दुर्भाग्य वाला, वली (झुरियाँ), पलित (वे वक्त बाल पकना

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

खालित्य (बाल झड़ना) से युक्त, बहुत खानेवाला, उष्ण वस्तु से दूर रहनेवाला, शीघ्र ही कुपित और प्रसन्न होने वाला, मध्य बल और मध्य आयु वाला पुरुष पित्त प्रकृति का समझा जाता है।

मेधावी निपुणमतिर्विगृह्य वक्ता।
तेजस्वी समितिषु दुर्निवारवीर्य्यः॥
सुप्तः सन् कनकपलाशकर्णिकारान्।
सम्पश्येदपि च हुताशविद्युदुल्काः॥
न भयान् प्रणमेदनतेष्वमृदुः प्रणतेष्वपि सान्त्वनदानरुचिः।
भवतीह सदा व्यथितास्यगतिः स भवेदिहपित्तकृतप्रकृतिः॥
भुजङ्गोलूकगन्धर्वयक्षमार्जारवानरैः।
व्याघ्रर्क्षनकुलानूकैः पैत्तिकास्तु नराः स्मृताः॥

मेधावी (बुद्धिमान्), चतुर, विग्रह (झगड़ा) युक्त वार्तालाप करने वाला, तेजस्वी, सभाओं में प्रभावशाली, सुप्तावस्था में—सुवर्ण, पलाश अमलतास का पुष्प, अग्नि, बिजली और उल्का देखनेवाला, भय से किसी के सम्मुख नीचा न होने वाला, अनम्रों के लिये कठोर, नम्रों को सान्त्वना देने वाला और सदा व्यथितमुख वाला पित्तप्रकृति का मनुष्य समझा जाता है।

पित्तप्रकृति का मनुष्य—

भुजंग (सर्प), उल्लू, गन्धर्व, यक्ष, बिल्ली, वानर, व्याघ्र, भालू और नकुल के समान स्वभाव वाला होता है।

दूर्व्वेन्दीवरनिम्बशाद्वारिष्टशरकाण्डानामन्यतमवर्णः सुभगः प्रियदर्शनो मधुरप्रियः कृतज्ञो धृतिमान् सहिष्णुरलोलुपो बलवांश्चिरग्राही दृढवैरश्च भवति।

दूर्वा, नील कमल, सेहुंडपत्र, हरे नीम के वृक्ष और शरकाण्ड (सैंठा) में किसी एक के समान वर्ण वाला, सुन्दर सौभाग्य सम्पन्न

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

प्रियदर्शन, मधुरप्रिय, कृतज्ञ, धैर्यवाला, सहिष्णु, लालचरहित, वलवान् चिरग्राही और दृढ़ वैर वाला कफप्रकृति का मनुष्य होता है।

शुक्लाक्षः स्थिरकुटिलातिनीलकेशो
लक्ष्मीवान् जलदमृदंगसिंहघोषः।
सुप्तः सन् सकमलहंसचक्रवाकान्
सम्पश्येदपि च जलाशयान् मनोज्ञान्॥

रक्तान्तनेत्रः सुविभक्तगात्रः स्निग्धच्छविः सत्वगुणोपपन्नः क्लेशक्षमो मानयिता गुरूणां ज्ञेयो बलासप्रकृतिर्मनुष्यः दृढ़शास्त्रमतिः स्थिरमित्रधनः परिगण्य चिरात् प्रददाति बहु परिनिश्चितवाक्यपदः सततं गुरुमानकरश्च भवेत् स सदा॥

ब्रह्मरुद्रेन्द्रवरुणैः सिंहाश्वगजगोवृषैः।
तार्क्षहंससमानूकाः श्लेष्मप्रकृतयो नराः॥

कफ प्रकृति का मनुष्य—श्वेत-नेत्र वाला, स्थिर-घुंघराले-काले केश वाला, धनवान्, मेघ-मृदंग-सिंह की तरह उच्च स्वर से बोलने वाला, सुप्तावस्था में कमल-हंस-चक्रवाक और सुन्दर जलाशयों को देखने वाला, नेत्र का अन्त भाग रक्त वर्ण वाला, अङ्गों की सुन्दर बनावट एवं स्वच्छ स्निग्ध-कान्ति वाला, सत्वगुण युक्त, क्लेश सहनेवाला, श्रेष्ठ जनों को मानने वाला होता है। वह शास्त्रों में दृढ़ विश्वास रखने वाला, स्थायी मित्र और धन से युक्त, विचार पूर्वक देर से पर बहुत देने वाला, निश्चित वचन बोलने वाला और गुरुओं का मान करने वाला होता है।

ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, वरुण, सिंह, घोड़ा, हाथी, बैल, गरुड़ और हंस के स्वभाव की तरह स्वभाव वाले कफ प्रकृति के मनुष्य होते हैं।

द्वयोर्वा तिसृणांवापि प्रकृतीनान्तुलक्षणैः।
ज्ञात्वा संसर्गजा वैद्यः प्रकृतीरभिनिर्दिशेत्॥
प्रकोपोवाऽन्यथाभावः क्षयो वा नोपजायते।
प्रकृतीनां स्वभावेन जायते तु गतायुषः॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

दो-दो या तीनों प्रकृति के लक्षणों के मिश्रित लक्षण देखकर वैद्य को द्वन्द्वज या सन्निपातज प्रकृति निश्चित करना चाहिये। प्रकृति का प्रकोप या परिवर्तन या क्षय कभी नहीं होता है। यदि होता है तो मुमूर्षु में।

विषजातो यथा कीटो न विषेण विपद्यते।
तद्वत्प्रकृतयो मर्त्यं शक्नुवन्ति न बाधितुम्॥
प्रकृतिमिह नराणां भौतिकीं केचिदाहुः।
पवनदहनतोयैः कीर्त्तितास्तास्तु तिस्रः॥
स्थिरविपुलशरीरः पार्थिवश्च क्षमावान्।
शुचिरथ चिरजीवी नाभसः खैर्महद्भिः॥

विष में उत्पन्न क्रिमि जैसे विष से नहीं मरता है, उसी प्रकार जन्म-काल से ही प्रकृति में मिले हुये वात-पित्त-कफ मनुष्य को बाधित नहीं करते हैं। कोई आचार्य पाञ्चभौतिक प्रकृति भी मानते हैं। उनमें वायु (वात), अग्नि (पित्त) और जल (कफ) को बता चुके हैं। स्थिर एवं बड़ा शरीर वाला और क्षमावान् पुरुष पार्थिव प्रकृति और स्वच्छ, दीर्घजीवी, बड़े-बड़े छिद्रों वाला पुरुष आकाशीय प्रकृति वाला कहा जाता है।

शौचमास्तिक्यमभ्यासो वेदेषु गुरुपूजनम्।
प्रियातिथित्वमिज्या च ब्रह्मकायस्य लक्षणम्॥
माहात्म्यं शौर्यमाज्ञा च सततं शास्त्रबुद्धिता।
भृत्यानां भरणञ्चाऽपि माहेन्द्रं कायलक्षणम्॥
शीतसेवा सहिष्णुत्वं पैङ्गल्यं हरिकेशता।
प्रियवादित्वमित्येतद्वारुणं कायलक्षणम्॥
मध्यस्थता सहिष्णुत्वमर्थस्यागमसञ्चयौ।
महाप्रसवशक्तित्वं कौबेरं कायलक्षणम्॥

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

गन्धमाल्यप्रियत्वञ्च नृत्यवादित्रकामिता ।
विहारशीलता चैव गान्धर्व्वं कायलक्षणम् ॥
प्राप्तकारी दृढोत्थानो निर्भयः स्मृतिमान् शुचिः ।
रागमोहभयद्वेषैर्वर्जितो याम्यसत्ववान् ॥
जपव्रतब्रह्मचर्य्यहोमाध्ययनसेविनम् ।
ज्ञानविज्ञानसम्पन्नमृषिसत्वं नरं विदुः ॥
सप्तैते सात्विकाः कायाः ।

पवित्रता, आस्तिकता, वेदों का अभ्यास करना, गुरुओं (बड़ों) की पूजा (सम्मान) करना, अतिथिप्रिय होना और यज्ञ करना, यह ब्राह्म शरीर का लक्षण है। माहात्म्य, शूरता, आज्ञाकारिता, सदा शास्त्र में बुद्धि लगाना, और भृत्यों का पालन करना यह माहेन्द्र शरीर का लक्षण है।

शीत वस्तु की सेवा, सहिष्णु होना, पिङ्गल वर्ण, भूरा बाल होना और प्रिय बोलना यह वारुण शरीर का लक्षण है।

सभी धर्म एवं कार्यों में मध्यस्थ रहना, सहनशील होना, धन कमाना और उसको सञ्चय करना, अधिक सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति होना यह कौबेर शरीर का लक्षण है।

सुगन्ध एवं माला-प्रिय होना, नाच बाजा में मन लगाने वाला और विहारशील होना यह गान्धर्व शरीर का लक्षण है।

प्राप्त कार्य को करना, स्थायी उन्नति होना, निर्भयता, स्मरण शक्ति सम्पन्न होना, पवित्रता के साथ रहना, राग, मोह, भय, द्वेष से रहित रहना याम्य शरीर का लक्षण है।

जप, व्रत, ब्रह्मचर्य, होम, अध्ययन करने वाला और ज्ञान-विज्ञान से युक्त शरीर को ऋषिसत्व कहा जाता है। ये सात सात्विक काय कहे जाते हैं।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

राजसांस्तु निबोध मे।
ऐश्वर्यवन्तं रौद्रञ्च शूरं चण्डमसूयकम् ॥
एकाशिनं चौदरिकमासुरं सत्वमीदृशम्।
तीक्ष्णमायासिनं भीरुं चंडं मायान्वितन्तथा ॥
विहाराचारचपलं सर्पसत्वं विदुर्नरम्।
प्रवृद्धकामसेवी चाप्यजस्राहार एव च ॥
अमर्षणोऽनवस्थायी शाकुनं कायलक्षणम्।
एकान्तग्राहिता रात्रावसूया धर्म्मबाह्यता ॥
भूशमात्रं तमश्चापि राक्षसं कायलक्षणम्।
उच्छिष्टाहारता तैक्ष्ण्यं साहसप्रियता तथा ॥
स्त्रीलोलुपत्वं नैर्लज्ज्यं पैशाचं कायलक्षणम्।
असंविभागमलसं दुःखशीलमसूयकम् ॥
लोलुपञ्चाप्यदातारं प्रेतसत्वं विदुर्नरम्।
पडेते राजसाः 'कायाः ॥

अब राजस काय कहते हैं। ऐश्वर्य वाला, डरानेवाला, शूर, क्रोधी, निन्दक अकेले खाने वाला और पेटू, आसुर काय कहा जाता है।

तेज, परिश्रमी, डरपोक, क्रोधी, मायावी, आचार-विहार में चञ्चल मनुष्य को सर्पकाय जाने। अति मैथुनप्रिय, सदा केवल भोजन में लगा हुआ, न बरदाश्त करने वाला, चञ्चल चित्त वाला मनुष्य शाकुन (पक्षी) काय कहा जाता है।

रात्रि में एकान्तवास चाहने वाला, ईर्ष्या करने वाला, धर्म से दूर रहने वाला और तमः प्रधान पुरुष राक्षस काय कहा जाता है।

जूठा आहार खाने वाला, तेज, साहसप्रिय, स्त्री प्रसंग की अति इच्छा करने वाला, लज्जाहीन पुरुष पैशाच काय कहा जाता है।

कर्तव्याकर्तव्य का विभाग न करने वाला, आलसी, दुःखशील,

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

ईर्ष्या, लालची एवं दानेच्छारहित पुरुष को प्रेतकाय कहते हैं। ये राजस काय हैं।

तामसांस्तु निबोध मे ॥
दुर्म्मेधस्त्वं मन्दता च स्वप्ने मैथुननित्यता।
निराकरिष्णुता चैव विज्ञेयाः पाशवा गुणाः ॥
अनवस्थितता मौर्ख्यं भीरुत्वं सलिलार्थिता।
परस्पराभिमर्दश्च मत्स्यसत्वस्य लक्षणम् ॥
एकस्थानरतिर्नित्यमाहारे केवले रतः।
वानस्पत्यो नरः सत्त्वधर्म्मकामार्थवर्जितः ॥
इत्येते त्रिविधाः कायाः प्रोक्ता वै तामसास्तथा ॥

अब तामस काय का वर्णन किया जाता है। बुद्धिहीनता, मन्दता, प्रतिदिन स्वप्न में मैथुन (स्वप्नदोष) होना और हरएक बात का खण्डन कर देना यह पाशव (पशु समान) काय का लक्षण है।

चपलमति, मूर्ख, डरपोक, अधिक जल चाहने वाला, आपस में झगड़ा करने वाला पुरुष मत्स्यकाय कहा जाता है। सदा एक ही स्थान में पड़ा रहने वाला, केवल भोजन में ही लगा रहने वाला और सत्वगुण तथा धर्म-अर्थ-काम से हीन पुरुष, वानस्पत्य काय कहा जाता है। ये तीन प्रकार के तामस काय वाले हैं।

कायानां प्रकृतीर्ज्ञात्वा त्वनुरूपां क्रियां चरेत् ॥
महाप्रकृतयस्त्वेता रजः सत्वतमःकृताः।
प्रोक्ता लक्षणतः सम्यग्भिषक् तांश्च विभावयेत् ॥
[सु० शा० अ० ४]

कायों की प्रकृति समझकर उसके अनुसार चिकित्सा करनी चाहिये। लक्षणों से ये रज सत्व तम सम्बन्धी महाप्रकृतियाँ बतायी गयी हैं। इन्हें ठीक-ठीक समझना चाहिये।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

तथैव चरकोऽप्याह :—

समपित्तानिलकफाः केचिद् गर्भादिमानवाः ।
दृश्यन्ते वातलाः केचित्पित्तलाः श्लेष्मलास्तथाः ॥
तेषामनातुराः पूर्वे वातलाद्याः सदाऽऽतुराः ।
दोषानुशयिता ह्येषां देहप्रकृतिरुच्यते ॥
विपरीतगुणस्तेषां स्वस्थवृत्तेर्विधिर्हितः ।
समसर्वरसं सात्म्यं समधातोः प्रशस्यते ॥

[च० सू० अ० ७]

कोई मनुष्य गर्भ से ही समवात-पित्त-कफ प्रकृति कोई वातल, पित्तल, श्लेष्मल, प्रकृति के होते हैं। उसमें समवातपित्तकफ प्रकृति वाले स्वस्थ, शेष रोगी माने जाते हैं।

इनमें दोष के अनुबन्धके अनुसार देहप्रकृति कही गयी है। उस दोष के विपरीत गुण वाले आहार-विहार स्वास्थ्य के लिये हितकारी होते हैं। समवातपित्तकफ प्रकृति वाले (स्वस्थ) पुरुष के लिये तो समान रूप से सभी रसों का सेवन अच्छा माना जाता है।

हिताहितसेवनवर्जनक्रमः

उचितादहिताद्धीमान् क्रमशो विरमेन्नरः ।
हितं क्रमेण सेवेत क्रमश्चात्रोपदिश्यते ॥
प्रक्षेपापचये ताभ्यां क्रमः पादांशिको भवेत् ।
एकान्तरं ततश्चोर्ध्वं द्व्यन्तरं त्र्यन्तरं तथा ॥
क्रमेणापचिता दोषाः क्रमेणोपचिता गुणाः ।
सन्तो यान्त्यपुनर्भावमप्रकम्प्या भवन्ति च ॥

[च० सू० अ० ७]

अहित आहारादि यदि मनुष्य को उचित (अभ्यस्त) हो गया हो तब उसे क्रमशः छोड़ना चाहिए और हित वस्तु को भी क्रमशः ही

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सेवन करना चाहिए। इस क्रम को आगे बता रहे हैं—प्रक्षेप (हित वस्तु का सेवन) अपचय (अहित वस्तु का त्याग) में मात्रया पार्श्व-शिक क्रम होना चाहिए अर्थात् चतुर्थांश २ क्रमशः छोड़ें व बढ़ावें। त्याग करने तथा ग्रहण करने में समय का अन्तर क्रमशः १ दिन उसके बाद २ दिन फिर ३ दिन का होना चाहिये। इस क्रम से दोष जनक वस्तु का त्याग करने से दोष (विकार) नष्ट होकर पुनः नहीं उभड़ते और गुणजनक वस्तु का सेवन करने से गुण (स्वास्थ्य) स्थिर हो जाते हैं।

अहितवर्जने हितसेवने च विशेषः

विधिरेष विकाराणामनुत्पत्तौ निदर्शितः।
निजानामितरेषां तु पृथगेवोपदिश्यते॥
ये भूतविषवाय्वग्निसम्प्रहारादिसम्भवाः।
नृणामागन्तवो रोगाः प्रज्ञा तेष्वपराध्यति॥
ईर्ष्याशोकभयक्रोधमानद्वेषादयश्च ये।
मनोविकारास्तेऽप्युक्ताः सर्वे प्रज्ञापराधजाः*॥

वात पित्त कफ जन्य रोगों की उत्पत्ति न हो इसके लिए यह मार्ग बताया गया। इससे भिन्न आगन्तुक रोगों के लिए पृथक् उपाय बतायेंगे।

भूत, विष, वात, अग्नि, प्रहार आदि से जो आगन्तुक रोग पैदा होते हैं उनमें मनुष्य की प्रज्ञा का अपराध कारण है।

ईर्ष्या, शोक, भय, क्रोध, मान, द्वेष आदि जो मन के विकार होते हैं वे सभी प्रज्ञापराधजन्य ही हैं।

---

* बुद्धया विषमविज्ञानं विषमञ्च प्रवर्तनम्।
ज्ञापरावं जानीयान्मनसो गोचरं हि तत्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

त्यागः प्रज्ञापराधानामिन्द्रियोपशमः स्मृतिः।
देशकालात्मविज्ञानं सद्वृत्तस्यानुवर्तनम्।
आगन्तूनामनुत्पत्तावेष मार्गो निदर्शितः।

प्रज्ञापराध का त्याग, इन्द्रियों का शमन, हिताहित का स्मरण रखना, देशकाल-आत्मा का ज्ञान और सद्वृत्तों का सेवन, यह मार्ग आगन्तुक रोगों को उत्पन्न न होने देने के लिये बताया गया है।

प्राज्ञः प्रागेव तत्कुर्याद्धितं विद्याद्यदात्मनः॥
†आप्तोपदेशप्रज्ञानं प्रतिपत्तिश्च कारणम्।
विकाराणामनुत्पत्तावुत्पन्नानां च शान्तये॥
पापवृत्तवचःसत्त्वाः सूचकाः कलहप्रियाः।
मर्मोपहासिनो लुब्धाः परवृद्धिद्विषः शठाः॥
परापवादरतयश्चपला रिपुसेविनः।
निर्घृणास्त्यक्तधर्माणः परिवर्ज्या नराधमाः॥

बुद्धिमान् को उचित है कि वह जिस-जिस वस्तु को अपना हितकारी समझे उसे पहिले ही से करे। आप्तोपदेश का ज्ञान और वैसा आचरण रोगों की अनुत्पत्ति और उत्पन्न रोगों की शान्ति का कारण है। पापमय आचरण-वचन-मन वाले, चुगुलखोर, झगड़ालू, मर्मवेधी उपहास करनेवाले, लोभी, दूसरे की उन्नति के द्वेषी, दुष्ट, दूसरे की निन्दा में लीन, चंचल, शत्रु पक्षमें लगे रहने वाले, दयारहित और धर्महीन नीच पुरुषों को सर्वथा त्याग देना चाहिए अर्थात् इनका संग नहीं करना चाहिये।

---

† रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तास्तपोज्ञानबलेन ये।
येषां त्रिकाल्ममलं ज्ञानमव्याहतं सदा॥
आप्ताः शिष्टा विबुद्धास्ते॥ (चरकः)

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

बुद्धिविद्यावयःशीलधैर्यस्मृतिसमाधिभिः ।
वृद्धोपसेविनो वृद्धाः स्वभावज्ञा गतव्यथाः ॥
सुमुखाः सर्वभूतानां प्रशान्ताः शंसितव्रताः ।
सेव्याः सन्मार्गवक्तारः पुण्यश्रवणदर्शनाः ॥
आहाराचारचेष्टासु सुखार्थी प्रेत्य चेह च ।
परं प्रयत्नमातिष्ठेद्बुद्धिमान् हितसेवने ॥

बुद्धि, विद्या, अवस्था, स्वभाव, धीरता, स्मृति, समाधि† में जो बढ़े हुये हैं और जो वृद्धों की सेवा में लगे हुये हैं, स्वभाव को समझनेवाले, दुःखरहित, समस्त प्राणिवर्ग के लिये सुमुख, शान्त, प्रशस्त प्रतिज्ञा वाले तपस्वी, सन्मार्ग के उपदेशक, पुण्यकीर्ति, पुण्यमय दर्शन और प्रसिद्धि वाले महापुरुषों की सेवा करनी चाहिये । इहलोक और परलोक में सुख को चाहने वाले व्यक्ति के लिए उचित है कि आहार, आचार और चेष्टा में हित वस्तु के सेवन करने का ही परम प्रयत्न करें ।

निन्दितानिन्दितपुरुषविवेचनपूर्वकमाचरणम्

इह खलु शरीरमधिकृत्याष्टौ पुरुषा निन्दिता भवन्ति, तद्यथा अतिदीर्घश्चातिह्रस्वश्चातिलोमा चालोमा चातिकृष्णश्चातिगौरश्चातिस्थूलश्चातिकृशश्चेति ।

तत्रातिस्थूलकृशयोर्भूय एवापरे निन्दितविशेषा भवन्ति, अतिस्थूलस्य तावदायुषो ह्रासो जवोपरोधः कृच्छ्रव्यवायता दौर्बल्यं दौर्गन्ध्यं स्वेदाबाधः क्षुदतिमात्रं पिपासातियोगश्चेति भवन्त्यष्टौ दोषाः । तदतिस्थौल्यमतिसंपूरणाद्गुरुमधुरशीतस्निग्धोपयोगादव्यायामादव्यवायादिवास्वप्नाद्धर्षनित्यत्वादचिन्तनाद्बीजस्वभावाच्चोपजायते । तस्यातिमात्रं मेदस्विनो मेद एवोपचीयते न तथेतरे धातवः, तस्मादस्यायुषो ह्रासः शैथिल्यात् सौकुमार्याद्गुरुत्वाच्च

† एकाग्रचित्तता ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

मेदसो जवोपरोधः शुक्राबहुत्वान्मेदसावृतमार्गत्वाच्च कृच्छ्रव्यवायता, दौर्बल्यमसमत्वाद्धातूनां, दौर्गन्ध्यं मेदोदोषान्मेदसः स्वभावात्स्वेदलत्वाच्च मेदसः श्लेष्मसंसर्गादभिष्यन्दित्वाद्बहुत्वाद्गुरुत्वाद्व्यायामासहत्वाच्च स्वेदाबाधः तीक्ष्णाग्नित्वात्प्रभूतकोष्ठवायुत्वाच्च क्षुदतिमात्रं पिपासातियोगश्चेति। (च. सू. २१)

देह के अनुसार ये आठ पुरुष निन्दित होते हैं :—बहुत बड़े, बहुत छोटे, बहुत रोम वाले, बिना रोम वाले, अत्यन्त काले, अत्यन्त गोरे, अत्यन्त मोटे, अत्यन्त दुबले।

अधिक मोटे एवं अधिक दुबले मनुष्यों के विषय में और भी निंदित विशेष बातें ये होती है :—

अति स्थूल पुरुष में आयु की हानि, वेग की रुकावट, दुःख से मैथुन-क्षमता, दुर्बलता, दुर्गन्धता, स्वेद अधिक आना, भूख अधिक लगना, प्यास अधिक लगना ये आठ दोष होते हैं। यह अतिस्थूल होना—अत्यन्त भोजन करने, गुरु, मधुर, शीत, स्निग्ध वस्तु खाने, व्यायाम न करने, मैथुन न करने, दिन में सोने, हमेशा प्रसन्न रहने, निश्चिन्त रहने और गर्भजनक मातृ-पितृबीज के स्वभाव से होता है।

उस अतिस्थूल पुरुष के केवल मेद की जितनी वृद्धि होती है उतनी वृद्धि और धातुओं की नहीं होती है। इसलिये आयु का ह्रास, मेदा के शिथिल सुकुमार और गुरु होने से वेग (स्फूर्ति) की रुकावट होती है। मेद से धातुओं का मार्ग बन्द हो जाता है अतः शुक्र की कमी के कारण—मैथुन में कठिनाई होती है। धातुओं के समान न होने से—दुर्बलता, मेद के दोष से, मेद के स्वभाव से और मेद के स्वेदल होने से दुर्गन्धि होती है। कफ के संसर्ग से, अभिष्यन्दि होने से बहुत और गुरु होने से, व्यायाम शक्ति (परिश्रम करने) की असमर्थता से, स्वेद का आधिक्य होता है। अग्नि के तेज होने एवं कोष्ठ में वात के अधिक होने से भूख और प्यास अधिक लगती है।

Digitized by Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मेदसावृतमार्गत्वाद्वायुः कोष्ठे विशेषतः ।
चरन् संधुक्षयत्यग्निमाहारं शोषयत्यपि ॥
तस्मात्स शीघ्रं जरयत्याहारं चातिकाङ्क्षति ।
विकारांश्चाश्नुते घोरान् कांश्चित्कालव्यतिक्रमात् ॥

मेद से मार्ग बन्द हो जाने के कारण वायु कोष्ठ में विशेष चलता हुआ अग्नि को तेज करता एवं आहार का शोषण करता है अतः वायु शीघ्र आहार को पचाता है और भोजन की आकांक्षा प्रकट करता है। यदि भोजन प्राप्त होने में कुछ विलम्ब हो जाय तो कई भयङ्कर उपद्रवों को प्राप्त करता है।

एतावुपद्रवकरौ विशेषादग्निमारुतौ ।
एतौ हि दहतः स्थूलं वनदावो वनं यथा ॥
मेदस्यतीव संवृद्धे सहसैवानिलादयः ।
विकारान् दारुणान् कृत्वा नाशयन्त्याशु जीवितम् ॥

ये अग्नि और वायु विशेष उपद्रव करने वाले हैं। जैसे दावाग्नि वन को नष्ट करती है वैसे ये स्थूल शरीर को नष्ट कर देते हैं। मेद के अत्यन्त बढ़ जाने पर ये वातादि दोष झट भयङ्कर रोगों को उत्पन्न कर जीवन को नष्ट कर देते हैं।

मेदोमांसातिवृद्धत्वाच्चलस्फिगुदरस्तनः ।
अयथोपचयोत्साहो नरोऽतिस्थूल उच्यते ॥
इति मेदस्विनो दोषा हेतवो रूपमेव च ।
निर्दिष्टं, वक्ष्यते वाच्यमतिकार्श्येऽप्यतः परम् ॥
सेवा रूक्षान्नपानानां लङ्घनं प्रमिताशनम् ।
क्रियातियोगः*शोकश्च निद्रावेगविनिग्रहः ॥

* 'क्रियातियोगो वमनादिसंशोधनक्रियाणामतियोगः, गंगाधरः।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रूक्षस्योद्वर्तनं स्नानस्याभ्यासः प्रकृति*र्जरा ।
विकारानुशय†क्रोधः कुर्वन्त्यतिकृशं नरम् ॥

मेद और मांस के अत्यन्त बढ़ जाने के कारण जिसका नितम्ब, उदर और स्तन चलने में हिलता है, जिसके शरीर की वृद्धि और उत्साह (कर्मशक्ति) यथावत् नहीं है, उस मनुष्य को अतिस्थूल कहते हैं। इस तरह मेदस्वी का दोष हेतु और स्वरूप का वर्णन किया जा चुका इसके बाद अतिकृश के विषय में कहेंगे। रूक्ष अन्न पान, उपवास, नपा-तुला भोजन, वमनादि क्रिया का अधिक सेवन, नित्य शोक, निद्रा के वेग का रोकना, रूक्ष स्नान का अभ्यास, प्रकृति, वृद्धावस्था, निरन्तर रोगी रहना और क्रोध करते रहना, ये सभी कारण मनुष्य को अति कृश बनाते हैं।

व्यायाममतिसौहित्यं क्षुत्पिपासामहौषधम् ।
कृशो न सहते तद्वदतिशीतोष्णमैथुनम् ॥
प्लीहा कासः क्षयःश्वासो गुल्माशांस्युदराणि च ।
कृशं प्रायोऽभिधावन्ति रोगाश्च ग्रहणीगताः ॥
शुष्कस्फिगुदरग्रीवो धमनीजालसंततः ।
त्वगस्थिशेषोऽतिकृशः स्थूलपर्वा नरो मतः ॥
सततव्याधितावेतावतिस्थूलकृशौ नरौ ।
सततं चोपचर्यौ हि कर्षणैर्बृंहणैरपि ॥
स्थौल्यकार्श्ये वरं कार्श्यं समोपकरणौ हि तौ ।
यद्युभौ व्याधिरागच्छेत्स्थूलमेवातिपीड़येत् ॥
सममांसप्रमाणस्तु समसंहननो नरः ।
दृढ़ेन्द्रियत्वाद् व्याधीनां न बलेनाभिभूयते ॥

---

* 'प्रकृतिरतिकृशमातापितुः शोणितशुक्रस्य स्वभावः' गङ्गाधरः ।
† 'विकारानुशयो व्याधेश्चिरानुवृत्तिः' गंगाधरः ।

aj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

क्षुत्पिपासातपसहः शीतव्यायामसंसहः।
समपक्ता समजरः सममांसचयो मतः॥

व्यायाम, अत्यन्त भोजन, भूख, प्यास, तेज औषध, अत्यन्त शीत, उष्ण वस्तु और अति मैथुन को कृश पुरुष सहने में असमर्थ होते हैं।

कृश पुरुष को शीघ्र ही प्लीहा, कास, क्षय, श्वास, गुल्म, अर्श उदर और ग्रहणी रोग होते हैं।

नितम्ब-उदर-ग्रीवा सूखे हुए, सारी देह में धमनी जाल फैले हुए, चमड़ा हड्डी मात्र शेष और बड़ी-बड़ी गाठें (पोर्वा) वाला मनुष्य अति कृश कहा गया है।

अतिस्थूल और अतिकृश मनुष्य सदा रोगी रहते हैं। इनकी चिकित्सा क्रमशः कर्षण और वृंहण करनी चाहिये। दोनों में कृश ही अपेक्षाकृत अच्छा है। यद्यपि दोनों सम उपकरण वाले हैं, किन्तु दोनों में यदि कोई रोग हो जाये तो वह स्थूल पुरुष को ही अधिक पीड़ा वाला करता है।

सममांसप्रमाण और गठीला वदन वाला मनुष्य इन्द्रियों के बलवान् होने से व्याधि के बल से आक्रान्त नही होता।

वह ठीक अग्निबल, ठीक पाचन, ठीक अवस्था एवं समान मांसोपचय वाला भूख, प्यास, धूप शीत और व्यायाम को सहने वाला होता है।

गुरु चातर्पणं चेष्टं स्थूलानां कर्षणं प्रति।
कृशानां बृंहणार्थं च लघु संतर्पणं च यत्॥

स्थूल पुरुषों को कर्षण के लिए विशेष अपतर्पण, एवं कृश पुरुष को वृंहण के लिए लघु सन्तर्पण भोजन देना चाहिये।

वाताघ्नान्यन्नपानानि श्लेष्ममेदोहराणि च।
रूक्षोष्णा बस्तयस्तीक्ष्णा रूक्षाण्युद्वर्तनानि च॥
गुडूचीभद्रमुस्तानां प्रयोगस्त्रैफलस्तथा।
तक्रारिष्टप्रयोगस्तु प्रयोगो माक्षिकस्य च॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

विडङ्गनागरं क्षारः काललोहरजो मधु ।
यवामलकचूर्णं च प्रयोगः श्रेष्ठ उच्यते ॥
बिल्वादिपञ्चमूलस्य प्रयोगः क्षौद्रसंयुतः ॥
शिलाजतुप्रयोगस्तु साग्निमन्थरसः परः ।

मूल को कर्षण के लिए वातघ्न, कफघ्न और मेदोहर अन्नपान रूक्ष-उष्ण-तीक्ष्ण वस्ति, रूक्ष उबटन, गुरुचि, नागरमोथा, त्रिफला, रिष्ट, मधु, विडङ्ग, सोंठ, यवक्षार, लोहभस्म, मधु, जौ का आटा, मलका के चूर्ण का पृथक्-पृथक् प्रयोग हितकर होता है। बिल्वादि चमूल का प्रयोग मधु के साथ और शिलाजतु का प्रयोग अरणी के स (क्वाथ) से करना चाहिये।

प्रशातिका प्रियांगुश्च श्यामाका यवका यवाः ।
जूर्णाह्वाः कोद्रवा मुद्राः कुलत्थाश्च मकुष्ठकाः ॥
आढ़कीनां च बीजानि पटोलामलकैः सह ।
भोजनार्थं प्रयोज्यानि पानं चानु मधूदकम् ॥
अरिष्टांश्चानुपानार्थं मेदो मांसकफापहान् ।
अतिस्थौल्यविनाशाय संविभज्य प्रयोजयेत् ॥

सवई, चावल, काकुन, साँवा, वनजव (जई), जव, जोन्हरी, कोदो, मूंग, कुलथी, मोथी, अरहर, परोरा और आँवला भोजन के लिए देना चाहिए। अनुपान में जल मिला हुआ मधु का शर्बत देना चाहिए। मेद मांस और कफ को नष्ट करने वाले अरिष्ट भी अनुपान के लिए दिये जा सकते हैं। अतिस्थूलता को नष्ट करने के लिए यह सब सोच विचार कर प्रयोग करना चाहिये।

प्रजागरं व्यवायं च व्यायामं चिन्तनानि च ।
स्थौल्यमिच्छन् परित्यक्तुं क्रमेणाभिप्रबर्धयेत् ॥

स्थूलता कम करने की इच्छा वाले पुरुष को विशेष जागरण (रात्रि निद्रा), मैथुन, व्यायाम और चिन्तन का क्रमशः अभ्यास बढ़ाना चाहिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्वप्नो हर्षः सुखाशय्या मनसो निर्वृतिः शमः।
चिन्ताव्यवायव्यायामविरामः प्रियदर्शनम्॥
नवान्नानि च नवं मद्यं ग्राम्यानूपौदका रसाः।
संस्कृतानि च मांसानि दधि सर्पिः पयांसि च॥
इक्षवः शालयो माषा गोधूमा गुडवैकृतम्।
वस्तयः स्निग्धमधुरास्तैलाभ्यङ्गश्च सर्वदा॥
स्निग्धमुद्वर्तनं स्नानं गन्धमाल्यनिषेवणम्।
शुक्लवासो यथाकालं दोषाणामवसेचनम्॥
रसायनानां वृष्याणां योगानामुपसेवनम्।
हत्वातिकार्श्यमादत्ते नृणामुपचयं परम्॥
अचिन्तनाच्च कार्याणां ध्रुवं सन्तर्पणेन च।
स्वप्नप्रसङ्गाच्च नरो वराह इव पुष्यति॥

शयन, हर्ष, सुन्दरशय्या, मानसिक सुख, शान्ति तथा चिन्ता मैथुन और व्यायाम से विराम और प्रिय वस्तुओं का दर्शन, नूतन अन्न, नूतन मद्य, ग्राम्य-आनूप-जलीय जीवों का मांसरस, संस्कृत मांस, दधि, घृत, दुग्ध, ईख, चावल, उरद, गेहूँ, गुड़-विकार (चीनी मिश्री आदि), स्निग्ध एवं मधुर वस्ति, सदा तैल की मालिश, स्निग्ध उबटन, स्नान, इत्र आदि सुगन्धित पदार्थों एवं माला का धारण, श्वेत वस्त्र, संचित दोषों का यथा समय निष्कासन, रसायन और वृष्ययोगों का सेवन कृशता को दूर कर मनुष्यों को पुष्ट एवं मोटा बनाता है।

कार्यों की चिन्ता न होने से, तर पदार्थों का भोजन करने से और इच्छानुसार सोने से मनुष्य शूकर की तरह मोटे हो जाते हैं।

हिताहितद्रव्यविवेकः

येषामेव हि भावानां संपत्सञ्जनयेन्नरम्।
तेषामेव विपद्व्याधीन् विविधान् समुदीरयेत्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

जिन पदार्थों का ठीक उपयोग पुरुष को स्वस्थ बनाता है। उन्हीं पदार्थों का दुरुपयोग विविध व्याधि को उत्पन्न करता है।

अथात्रेयस्य भगवतो वचनमनुनिशम्य पुनरेव वामकः काशिपतिरुवाच भगवन्तमात्रेयं–भगवन्! सम्पन्निमित्तजस्य पुरुषस्य विपन्निमित्तजानां च रोगाणां किमभिवृद्धिकारणमिति?

अथोवाच भगवानात्रेयः हिताहारोपयोगः एक एव पुरुषस्याभिवृद्धिकरोभवति, अहिताहारोपयोगः पुनर्व्याधीनां निमित्तमिति।

एवंवादिनं भगवन्तमात्रेयमग्निवेश उवाच–कथमिह भगवन्! हिताहितानामाहारजातानां लक्षणमनपवादमभिजानीयां, हितसमाख्यातानां चैव ह्याहारजातानामहितसमाख्यातानां च मात्राकालक्रियाभूमिदेहदोषपुरुषावस्थान्तरेषु विपरीतकारित्वमुपलभामह इति।

इस तरह भगवान् आत्रेय के वचन श्रवण कर काशिराज वामक बोले–संपत् निमित्त स्वस्थ पुरुषों और विपत् निमित्त रोगों के बढ़ने का कारण क्या है?

उनसे भगवान् आत्रेय बोले कि केवल हितकारी आहार ही पुरुष की वृद्धि का कारण होता है और अहित आहार ही रोगों की उत्पत्ति का कारण होता है।

इस तरह कहते हुए भगवान् आत्रेय से अग्निवेश बोले भगवन्! हित और अहित आहार का निरपवाद लक्षण कैसे समझा जाये जबकि हित या अहित कहे जाने वाले आहार मात्रा, काल, कर्म, देश, शरीर, दोष, पुरुष और विभिन्न अवस्थाओं के भेद से विपरीतता (हित आहार अहितकर और अहित आहार हितकर) पाई जाती है।

तमुवाच भगवानात्रेयः–यदहारजातमग्निवेश! समांश्चैव शरीरधातून् प्रकृतौ स्थापयति विषमांश्च समीकरोतीत्येतद्धितं

---

* यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्यापथ्यमित्यनेन हेतुना न किञ्चिद्द्रव्यमेकान्तेन हितमहितं वास्तीति केचिदाचार्या ब्रुवते तत्तु न सम्यक्। इह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

विद्धि, विपरीतमहितमिति, एतद्धिताहितज्ञलक्षणमनववादं भवति।

तद्यथा-आहारत्वमाहारस्यैकविधं, अर्थाभेदात्; स पुनर्द्वियोनिः, स्थावरजङ्गमात्मकत्वात्, द्विविधप्रभावः हिताहितोदर्कविशेषात्, चतुर्विधोपयोगः, पानाशनभक्ष्यलेह्योपयोगात्, षड्रसस्वादः रसभेदतः षड्विधत्वात्, विंशतिगुणः, गुरुलघुशीतोष्णस्निग्धरूक्षमन्दतीक्ष्णस्थिरसरमृदुकठिनविशदपिच्छिलश्लक्ष्णखरसूक्ष्मस्थूलसान्द्रद्रवानुगमनात्, अपरिसंख्येयविकल्पः, द्रव्यसंयोगकरणबाहुल्यात्। तस्य खलु ये ये विकारावयवा भूयिष्ठमुपयुज्यन्ते, भूयिष्ठकल्पानां च मनुष्याणां प्रकृत्यैव हिततमाश्चाहिततमाश्च, तांस्तान् यथावदनुव्याख्यास्यामः।

तद्यथा--लोहितशालयः शूकधान्यानां पथ्यतमत्वे श्रेष्ठतमा भवन्ति, मुद्गाःशमीधान्यानां, आन्तरीक्षमुदकानां, सैंधवं लवणानां जीवन्तीशाकं शाकानां, ऐणेयं मृगमंसानां, लावः पक्षिणां, गोधा विलेशयानां, रोहितो मत्स्यानां, गव्यं सर्पिः सर्पिषां, गोक्षीरं

खलु यस्माद्द्रव्याणि स्वभावतः संयोगतश्चैकान्तहितान्येकान्ताहितानि हिताहितानि च भवन्ति। तत्रैकान्तहितानि जातिसात्म्यात् सलिलघृतदध्योदनप्रभृतीनि एकान्ताहितानि दहनपचनमारणादिषु प्रवृत्तान्यग्निक्षारविषादीनि। संयोगादपराणि विषतुल्यानि भवन्ति। हिताऽहितानि तु यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्यापथ्यमित्यतः सर्वप्राणिनामयमाहारार्थवर्ग उपदिश्यते।

तद्यथा रक्तशालिषष्टिककंगुकमुकुन्दकपाण्डुकपोतकप्रमोदककालकाशनकपुष्पककर्दमकशकुनाहृतसुगन्धककलमनीवारकोद्रवोद्दालकश्यामाकगोधूमवेणुयवादयः। एणहरिणकुरङ्गमृगमातृकाश्वदंष्ट्राकरालक्रकरकपोतलावतित्तिरिकपिञ्जलवर्तीरवर्त्तिकादीनां मांसानि। मुद्गवनमुद्गमकुष्टकलायमसूरमङ्गल्यचणकहरेण्वाढ़कीसतीनाः। चिल्लिवास्तुकसुनिषण्णकजीवन्तीतण्डुलीयकमण्डूकपर्ण्यः। गव्यं घृतं सैंधवदाड़िमामलकमित्येषवर्गः सर्वप्राणिनां सामान्यतः पथ्यतमः। [सु० सू० अ० २०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

क्षीराणां, तिलतैलं स्थावरजातानां स्नेहानां, वराहवसा आनूप-मृगवसानां, चुलुकीवसा मत्स्यवसानां, पाकहंसवसा जलचर-विहंगवसानां, कुक्कुटवसा विष्किरशकुनिवसानां, अजमेदः शाखादमेदसां, शृङ्गवेरं कन्दानां, मृद्वीका फलानां, शर्करा इक्षुविकाराणामिति प्रकृत्यैव हिततमानामाहारविकाराणां प्राधान्यतो द्रव्याणि व्याख्यातानि भवन्ति ॥ [च० सू० अ० २५]

अग्निवेश से भगवान् आत्रेय बोले—कि जो आहारसमूह सम शरीर धातुओं को प्राकृत अवस्था में रखे और विषम शरीर धातु को सम करे वही हितकर आहार है। इससे भिन्न आहार को अहित समझना चाहिये। यही हित और अहित आहार का ठीक लक्षण है।

सभी आहार मुख के द्वारा उदर में आहार किया अर्थात् खाया जाता है अतः आहारस्वरूप अर्थ के अभेद से वह एक प्रकार का ही हुआ। फिर भी उसकी स्थावर और जंगम भेद से दो योनि है। प्रभाव भेद से—हित और अहित, उपयोग के दृष्टिकोण से—पान, अशन, भक्ष्य और लेह्य चार भेद हैं। रस ६ होते हैं अतः वह स्वाद भेद से छ प्रकार का होता है। गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, मन्द, तीक्ष्ण, स्थिर, सर, मृदु, कठिन, विशद, पिच्छिल, श्लक्ष्ण, खर, स्थूल, सान्द्र द्रव भेद से उसमें २० गुण होते हैं।

संयोग-संस्कार के अनेक होने से उसके भेद असंख्य भी हो जाते हैं।

उनके जिन जिन अवयवों का अधिक प्रयोग होता है और जो विविध प्रकार की कल्पना (निर्माण) करके खानेवाले मनुष्यों के लिये स्वभावतः हितकारी और अहितकारी हैं उनका यथावत् वर्णन करेंगे।

जैसे—शूकधान्यों में लाल धान का चावल पथ्य की दृष्टि में श्रेष्ठतम और शमीधान्यों में मूँग, जलों में आकाशीय जल, नमकों में सेंधा नमक, शाकों में जीवन्ती शाक, मृग मांसों में एण (काला मृग का) मांस, पक्षियों में लवा, विलेशयों में गोह, मछलियों में रोहू, घृतों में गोघृत, दुग्धों में गो दुग्ध, स्थावर स्नेहों में तिलतैल, आनूप जीवों की चर्बी में

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सुवर की चर्बी, जल-जन्तुओं की चर्बी में चुलुकी (सूँस) की चर्बी, जल-चर पक्षियों की चर्बी में पाकहंस (बत्तक) की चर्बी, विष्किर पक्षियों की चर्बी में मुर्गा की चर्बी, डालपात भक्षण करने वाले जीवों की चर्बी में बकरे की चर्बी, कन्दों में अदरख, फलों में मुनक्का (अंगूर) और ईख के विकारों में चीनी ये हितकर द्रव्यों में स्वभाव से ही श्रेष्ठ कहे गये हैं।

तथा—ब्रह्मचर्यनिवातशयनोष्णोदकनिशास्वप्नव्यायामाश्चैकान्ततः पथ्यतमाः। [सु० सू० अ० २०]

ब्रह्मचर्य, निवात स्थान में शयन, उष्ण जल सेवन, रात्रि में ही सोना और नित्य व्यायाम करना स्वभावतः अवश्य हितकारी होते हैं।

अथ खलु त्रीणि द्रव्याणि नात्युपयुञ्जीताधिकमन्येभ्यो द्रव्येभ्यः, तद्यथा-पिप्पलीः, क्षारं, लवणमिति।

पिप्पल्यो हि कटुकाः सत्यो मधुरविपाका गुर्व्यो नात्यर्थं स्निग्धोष्णाः प्रक्लेदिन्यो भेषजाभिमताश्च, ताः सद्यः शुभाशुभकारिण्यो भवन्ति, आपातभद्राः प्रयोगसमसाद्गुण्यात्, दोषसंचयानुबन्धाः सततमुपयुज्यमाना हि गुरुप्रक्लेदित्वाच्छ्लेष्माणमुत्क्लेशयन्ति, औष्ण्यात्पित्तं, नचवातप्रशमनायोपकल्पन्तेऽल्पस्नेहोष्णभावात्, योगवाहिन्यस्तु खलुभवन्ति,तस्मात्पिप्पलीर्नात्युपयुञ्जीत।

पीपरि, क्षार, नमक, इन तीन द्रव्यों को और द्रव्यों की अपेक्षा अधिक नहीं खाना चाहिये।

पीपरि कटु होते हुये भी मधुर विपाक वाली, गुरु, न अत्यन्त स्निग्ध न अत्यन्त उष्ण, प्रक्लेद उत्पन्न करने वाली और औषध में प्रयोज्य मानी गई है। वह शीघ्र ही शुभ एवं अशुभ फल देने वाली होती है। ठीक (अल्पकाल, अल्प मात्रा में) प्रयोग से शुभगुण वाली होने से खाते ही लाभकारी होती है। निरन्तर उपयोग करने से दोषसंचय का अनुबन्ध करती है। गुरु प्रक्लेदी होने से कफ को, उष्ण होने से पित्त को उभाड़ती है और अल्प स्नेह तथा अल्प उष्ण होने से वात को शान्त नहीं करती है—किन्तु योग वाही होती है इसलिए अधिक पीपरि नहीं खानी चाहिए।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

क्षारः पुनरौष्ण्यतैक्ष्ण्यलवणोपपन्नः क्लेदयत्यादौ पश्चाद्विशो
षयति, स पचनदहनभेदनार्थमुपयुज्यते, सोऽतिप्रयुज्यमानः
खल्वाहृदयपुंस्त्वोपघातकरः संपद्यते, येह्येनं ग्रामनगरनिगम-
जनपदाः सततमुपयुञ्जतेतेऽप्यान्ध्यषण्ढ्यखालित्यपालित्यभाजो
बहुव्यापकर्तिनश्च भवन्ति। तद्यथा प्राच्याश्चीनाश्च। तस्मात् क्षारं
परिमितमुपयुञ्जीत। लवणं पुनरौष्ण्यतैक्ष्ण्योपपन्नमनतिस्निग्धमुप-
हन्ति विस्रंसनसमर्थमन्नद्रव्यरुचिकरमापातभद्रं प्रयोगसम
वायादोषसञ्चयानुबन्धनम्। तद्रोचनपाचनोपक्लेदनविस्रंस-
नार्थमुपयुज्यते। तदत्यर्थमुपयुज्यमानं ग्लानिशैथिल्यदौर्बल्या-
दिनिर्वृत्तिकरं शरीरस्य भवति। ये ह्येनद्ग्रामनगरनिगमजनपदाः
सततमुपयुञ्जते ते भूयिष्ठग्लास्नवः शिथिलमांसशोणिता अपरि-
क्लेशसहाश्च भवन्ति। तद्यथा वाह्लीकसौराष्ट्रिकसैन्धवसौवी-
रकाः। तेहि पयसापि सदा लवणमश्नन्ति। येऽपीहभूमेरत्यूष-
रदेशास्तेष्वौषधिधीरुद्वनस्पतिवानस्पत्या न जायन्ते। अल्प
रसो वा भवन्ति लवणापहतत्वात्। तस्माल्लवणं नात्युप-
युञ्जीत ये ह्यति लवणसात्म्याः पुरुषाः तेषामपि खालित्येन्द्र-
लुप्तपालित्यानि बलयश्चाकाले भवन्ति।

तैलसर्पिर्मधूनि वातपित्तश्लेष्मप्रशमनानि द्रव्याणि भवन्ति। तत्र, तैलं स्नेहौष्ण्यगौरवोपपन्नत्वाद्वातं जयति सततमभ्यस्यमानं, वातो हि रूक्षशैत्यलाघवोपपन्नो विरुद्धगुणो भवति, विरुद्धगुणसन्निपाते हि द्रव्यमभवजीयते, तस्मात्तैलं वातं जयति सततमभ्यस्यमानम्। सर्पिः सर्पिरेव पित्तं जयति माधुर्यच्छैत्यान्मन्दवीर्यत्वाच्च, पित्तं ह्यमधुरमुष्णं तीक्ष्णं च। मधु च श्लेष्माणं जयति, रौक्ष्यात्तैक्ष्ण्यात् कषायत्वाच्च श्लेष्मा हि स्निग्धो मन्दो मधुरश्च॥

एवान्यदपि किंचिद्द्रव्यमेवं वातपित्तकफेभ्यो गुणतो विपरीतं विरुद्धं विज्ञाय सततमभ्यस्यमानम्

[च०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

क्षार उष्ण तीक्ष्ण और नमकीन होने से पहले क्लेद करता है बाद में शोषण करता है। उसका प्रयोग पाकार्थ, दाहार्थ और भेदनार्थ होता है। अधिक उपयोग में लाने से, केश आँख हृदय और पुंस्त्व शक्ति का नाश करता है। जो ग्राम-नगर-कस्बा-प्रान्त वासी इसका सदा प्रयोग करते हैं, वे अन्धे, नपुंसक, खल्वाट होते हैं और उनके बाल वे वक्त पक जाते हैं, हृदय में शूल होता है। जैसे पूर्वी बंगाल आदि देशों और चीन देश के लोग। इसलिए अधिक क्षार का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

नमक गरम, तेज, ईषत्स्निग्ध उपक्लेदी, टिघलाने में समर्थ, अन्न में रुचि पैदा करने वाला है प्रयोग के अनुसार सादगुण्य से शीघ्र ही कल्याण कारक है किन्तु वैपरीत्य से दोष-सञ्चय का अनुबन्ध कारक भी है। इसका उपयोग, रोचन, पाचन, क्लेदन, पिघलाकर दोष निकालने के काम में होता है।

इसका अधिक प्रयोग करने से ग्लानि, शिथिलता और दुर्बलता उत्पन्न होती है—जो ग्राम-कस्बा-शहर-प्रान्त वासी इसका सदा अधिक प्रयोग करते हैं वे अधिक ग्लानियुक्त शिथिलमांसरक्त वाले, दुःख को न सहन करने वाले होते हैं।

जैसे—बलख, सौराष्ट्र, सिन्ध, सौवीर देशवासी। ये दूध के साथ भी नमक खाते हैं। इस भूमि पर जो अत्यधिक ऊसर देश हैं उनमें औषधि (अन्नादि) वीरुध (लता) वनस्पति और वानस्पत्य द्रव्य नहीं उत्पन्न होते हैं अथवा वे नमक के सम्बन्ध से अल्प तेज वाले होते हैं। इसलिये अधिक नमक नहीं खाना चाहिए। जो अभ्यासतः स्वभाववश अधिक नमक खाने वाले होते हैं उनमें भी खल्वाट इन्द्रलुप्त (चाई चुआँ) का होना और अकाल में बाल पकना एवं झुर्री आना हो जाता है।

तस्मात्तेषां तत्सात्म्यतः क्रमेणापगमनं श्रेयः सात्म्यमपि हि क्रमेणोपनिवर्त्यमानमदोषमल्पदोषं वा भवति ॥

सात्म्यं नाम तत्–यदात्मन्युपशेते, सात्म्यार्थो ह्युपशयार्थः।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

त्रिविधं—प्रवरावरमध्यविभागेन, सप्तविधं च—रसैकैकत्वेन, सर्वरसोपयोगाच्च ॥

तत्र सर्वरसं प्रवरं, अवरमेकरसं, मध्यमं तु प्रवरावरमध्यस्थं प्रवरावरमध्याभ्यां सात्म्याभ्यां क्रमेण प्रवरमुपपादयेत्सात्म्यम् । सर्वसमपि च द्रव्यं सात्म्यमुपपन्नं प्रकृत्याद्युपयोक्तव्यष्टमानि सात्म्याहारविधिविशेषायतनान्यभिसमीक्ष्य हितमेवानुरुध्येत ॥

[च० वि० अ० १]

इसलिए यदि ये सात्म्य हो गये हों तो क्रम से उन्हें छोड़ दे क्योंकि सात्म्य का भी क्रमशः छोड़ना निर्दोष अथवा अल्प दोषवाला होता है ।

सात्म्य वह है जो अपने लिए हितकर हो । जो उपशय का प्रयोजन वही सात्म्य का भी है । वह तीन प्रकार का होता है, प्रवर, अवर और मध्य । वह सात प्रकार का भी होता है, एक-एक करके छहों रसों का १ और १ सर्वरस का उपयोग ।

समस्त रस का अभ्यास प्रवर है । एक रस का अवर । प्रवर और अवर के मध्य रसों का अभ्यास मध्य कहा है । अवर, मध्य सात्म्य का क्रम से परित्याग कर प्रवर सात्म्य को उत्पन्न करे । समस्त रसवाले द्रव्य भी सात्म्य हो जायँ तो भी प्रकृति आदि जो आठ आहार विधि विशेषायतन हैं उनके अनुसार ही हित वस्तु का प्रयोग करे ।

अत ऊर्ध्वमहितानप्युपदेक्ष्यामः—यवकाः शूकधान्यानामपकर्षे प्रकृष्टतमा भवन्ति, माषाः शमीधान्यानां, वर्षाभूदेयमुदकानां, औषरं लवणानां, सर्षपशाकंशाकानां, चिलिचिमो मत्स्यानां, काविकं सर्पिषां, अविक्षीरं क्षीराणां, कुसुम्भस्नेहः स्थावरस्नेहानां-पित्तवसा आनूपमृगवसानां, कुम्भीरवसा मत्स्यवसानां, काकमद्गुवसा जलचरविहंगवसानां, चटकवसा विष्किरशकुनिवसानां, छागमेदः शाखादमेदसां, निकुचं फलानां, मूलकंकन्दानां, फाणित-मिक्षुविकाराणामिति प्रकृत्यैवाहिततमानामाहारविकाराणां प्रकृतानि द्रव्याणि व्याख्यातानि भवन्ति । [च० सू० अ० २५]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

इसके बाद अहित वस्तुओं का वर्णन करूँगा—शूकधान्यों में जई (घोड़े का विशेष खाद्य) अपथ्य में श्रेष्ठतम है, शमीधान्यों में उरद, जलों में बरसाती नदी का जल, नमकों में रेह का नमक, शाकों में सरसोंकाशाक, चौपायों में गोमांस, पक्षियों में काणकपोत (धौरा), विलेशयों में मेढ़क, मछलियों में चिलिचिम (गिरई), घृतों में भेंड़ी का घृत, दुग्धों में भेंड़ी का दुग्ध, स्थावर स्नेहों में बर्रे का तेल, आनूप जानवरों की वसाओं में भैंस की चर्बी, जल-जन्तुओं की चर्बी में नाक की चर्बी, जलचर पक्षियों के चर्बी में काक मद्गु (पनडुब्बी) की चर्बी, विष्किर पक्षियों की चर्बी में चटक (गौरैया) की चर्बी, शाखा खाने वालों की चर्बियों में हाथी की चर्बी, फलों में बड़हर, कन्दों में नेवारमूली और ईख के विकारो में शीरा (चोटा) ये द्रव्य स्वभाव से ही अत्यन्त अपथ्य एवं अहितकर कहे गये हैं।

अहितकरं विरुद्धमशनम्

एवंवादिनं भगवन्तमात्रेयं पुनरग्निवेश उवाच—भगवन्! श्रुतमेतदवितथमर्थसंपद्युक्तं भगवतो यथाद्रव्यगुणकर्माधिकारे वचः, परं त्वाहारविकाराणां वैरोधिकानां लक्षणमनतिसंक्षेपेणोपदिश्यमानं शुश्रूषामह इति ॥

इस तरह कहते हुए भगवान् आत्रेय से अग्निवेश पुनः बोले कि भगवन् द्रव्यगुण कर्म के विषय में अर्थसंपत् से युक्त वचन को सुना अब विरुद्ध आहारों का लक्षण विस्तार से सुनना चाहता हूँ।

तमुवाच भगवानात्रेयः—देहधातुप्रत्यनीकभूतानि द्रव्याणि देहधातुभिर्विरोधमापद्यन्ते, परस्परगुणविरुद्धानि कानिचित्, कानिचित्संयोगात्संस्कारादपराणि देशकालमात्रादिभिश्चापराणि तथा स्वभावादपराणि ॥

तत्र यान्याहारमधिकृत्य भूयिष्ठमुपयुज्यन्ते तेषामेकदेशं वैरोधिकमधिकृत्योपदेक्ष्यामः—न मत्स्यान् पयसा सहाभ्यवहरेत्, उभयं ह्येतन्मधुरं मधुरविपाकं महाभिष्यन्दि शीतोष्णत्वाद्विरुद्ध

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

र्वं विरुद्धवीर्यत्वाच्छोणितप्रदूषणाय महाभिष्यन्दित्वान्मार्गो-
रोधाय चेति ।

उनसे भगवान आत्रेय बोले—शरीर धातुओं के प्रतिकूल द्रव्य
रीर धातुओं से विरुद्ध हो जाते हैं। कोई परस्पर गुण से, कोई
ीर्य से, कोई संस्कार से, कोई देश-काल-मात्रा आदि से और कोई
क्ति से विरुद्ध होते हैं।

जो द्रव्य अधिकतर आहार में उपयोगार्थ आते हैं उनमें से कुछ
रुद्ध द्रव्यों का वर्णन किया जाता है। दूध के साथ मछली न खाये।
ेंकी मधुर एवं मधुर विपाकी, महा अभिष्यन्दी हैं और शीत, उष्ण
ीर्य से विरुद्ध वीर्य हैं, अतः विरुद्ध वीर्य होने से रक्त को दूषित एवं
ू अभिष्यन्दी होने से मार्गों को बन्द करने वाले होते हैं।

तदनन्तरमात्रेयवचनमनुनिशम्य भद्रकाप्योऽग्निवेश-
ुवाच—सर्वानेव मत्स्यान् पयसा सहाभ्यवहरेदन्यत्रैकस्माच्चि-
लिचिमात्; स पुनः शकली सर्वतो लोहितराजिः रोहितप्रकारः
ो भूमौ चरति, तं चेत्पयसा सहाभ्यवहरेन्निःसंशयं शोणित-
ं विबन्धजानां च व्याधीनामन्यतममथवा मरणं प्राप्नु-
ीति।

ेति भगवानात्रेयः। सर्वानेव मत्स्यान्न पयसाऽभ्यवहरेद्धि
लमतु चिलिचिमं, स हि महाभिष्यन्दित्वात्स्थूललक्षणतरा-
ान् व्याधीनुपजनयत्यामविषमुदीरयति।

इसके बाद आत्रेय के वचनों को सुनकर भद्रकाप्य अग्निवेश से
ि-समस्त मछलियों को दूध के साथ खा सकते हैं केवल एक चिलि-
च को छोड़कर। यह चौड़ियादार सब शरीर में रक्त रेखादार रोहित
ों के आकार की होती हैं और बहुधा भूमि (कीचड़) में चलती है,
दि दूध के साथ खाया जाय तो रक्तविकार अथवा विबन्ध-जन्य
ा होता या मरण होता है।

गवान आत्रेय कहते हैं कि ऐसा नहीं, समस्त मछलियों को दूध
ी खाना चाहिए विशेषतः चिलिचिम। क्योंकि यह महाभिष्यन्दी

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

होने से पूरे लक्षण युक्त उपरोक्त रोगों को पैदा करती और आमविष को उत्पन्न करतीं है।

ग्राम्यानूपौदकपिशितानि च मधुतिलगुड़पयोमाषमूलकवि-सैविंरूढधान्यैश्च नैकध्यमद्यात्, तन्मूलं च वाधिर्यान्ध्यवेपथुजा-ड्यविकलमूकतामैन्मिन्यमथवा मरणमाप्नोति (न पौष्करं रोहिणी-शाकं वा)। न कपोतान् सार्षपतैलभृष्टान्मधुपयोभ्यां सहाभ्यव-हरेत्, तन्मूलं हि शोणिताभिष्यन्दधमनीप्रविचयापस्मारशङ्खक-गलगण्डरोहिणीकानामन्यतमं प्राप्नोत्यथवा मरणमिति; न मूलकलशुनकृष्णगन्धार्जकसुमुखसुरसादीनि भक्षयित्वा पयःसेव्यं, कुष्ठाबाधभयात्, न जातु शाकं न लकुचं पक्वं मधुपयोभ्यां सहोपयोज्यं, एतद्धि मरणायाथवा बलवर्णतेजोवीर्योपरोधायालघुव्याधये षण्ढ्याय चेति; तदेव लकुचं पक्वं न माषसूपगुड-सर्पिर्भिः सहोपयोज्यं वैरोधिकत्वात्; तथाऽऽम्रातकमातुलुङ्ग-लकुचकरमर्दमोचदन्तशठवदरकोशाम्रभव्यजाम्बवकपित्थतिन्ति-डीकपारावताक्षोटपनसनालिकेरदाडिमामलकान्येवंप्रकाराणि चा-न्यानि, सर्वं चाम्लं द्रवमद्रवं च पयसा सह विरुद्धं तथा कङ्गुवर-कमकुष्ठककुलत्थमाषनिष्पावाः पयसा सह विरुद्धाः पद्मोत्तरि-काशाकं शार्करो मैरेयो मधु च सहोपयुक्तं विरुद्धं वातं चातिको-पयति, हारिद्रकः सर्षपतैलभृष्टो विरुद्धः पित्तं चातिकोपयति, पायसो मन्थानुपानो विरुद्धः श्लेष्माणं चातिकोपयति, उपोदिका तिलकल्कसिद्धा हेतुरतीसारस्य, बलाका वारुण्या सह कुल्मा-षैरपि विरुद्धा, सा च सूकरवसापरिभृष्टा सद्यो व्यापादयति; मायूरमांसमेरण्डसोसकावसक्तमेरण्डाग्निप्लुष्टमेरण्डतैलयुक्तंसद्यो व्यापादयति; हारीतकमांसं हारिद्रसीसकावसक्तं हारिद्राग्निप्लुष्टं सद्यो व्यापादयति; तदेव भस्मपांसुपरिध्वस्तं सक्षौद्रं मरणाय; मत्स्यनिस्तालनसिद्धाः पिप्पल्यस्तथा काकमाची मधु च मरणाय; मधु चोष्णमुष्णार्तस्य च मधु मरणाय; मधुसर्पिषी समधृते, मधु

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

...रि चान्तरिक्षं समघृतं मधुपुष्करवीजं, मधु पीत्वोष्णोदकं भल्ला-...ष्णोदकं तक्रसिद्धः कम्पिल्लकः, पर्युषिता काकमाची अंगार-...त्वो भास*इति विरुद्धानामित्येतद्यथाप्रश्नमभिनिर्दिष्टं भवतीति।

ग्राम्य, आनूप, औदक, मांस को—मधु, तिल, गुड़, दूध, उरद, ...ी, कमलमूल, अंकुरित धान्यों के साथ नहीं खाना चाहिये। इससे ...वा, बहिरा, कम्पवाला और जड़, विकल, मूक, मिन्मिन मनुष्य ...ता है अथवा मर जाता है—(एवम् उसके साथ पोहकरमूल व ...हिणी (कुटकी) का शाक भी न खाये।)

कपोत मांस को सर्षप तैल में भूँज कर मधु और घृत से नहीं ...ना चाहिये। इससे रक्त-विकार, अभिष्यन्द, धमनीग्रन्थि, मृगी, ...क, गलगण्ड और रोहिणी (बाधी या डिप्थीरिया) में से कोई ...ा होता है अथवा मरण हो सकता है।

मूली, लहशुन, सहिजन, वनतुलसी और तुलसी, काली तुलसी ...ा मरुवा आदि खाकर दूध नहीं पीना चाहिये क्योंकि कुष्ट होने का ...न रहता है। कभी भी चांगेरी (तिनपतिया) शाक और पके बड़-...र के फलों को मधु और दूध के साथ नहीं खाना चाहिये। इससे ...ण होता है; अथवा बल, वीर्य, तेज नष्ट होता एवं बड़ी बीमारियाँ ...र नपुंसकता होती है।

उसी पके हुए बड़हर को उरद की दाल, गुड़, घृत के साथ विरोध ...ने के कारण नहीं खाना चाहिये।

आम, आमड़ा, कागजी नीबू, बड़हर, करौंदा, केला, जम्बीरी नीबू, ...र, बहेरी आम, कमरख (या चालता फल), जामुन, कैंथ, इमली, फालसा, ...रोट, कटहर, नारियल, अनार और अँवरा आदि इसी प्रकार के अन्य ...ी अम्ल द्रव्य चाहे वे द्रव हों या सूखे हों दूध के साथ विरुद्ध हैं।

टिप्पणी

*—वल्लीफलकवककरीराम्लफललवणकुलत्थपिण्याकदधितैलानूपौद-...रोहिपिष्टशुष्कशाकाजाविकमांसमद्यजाम्बवचिलचिममत्स्यगोधावराहांश्च ...ध्यमश्नीयात् पयसा।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

टगुँनी, वनकोदो, मोथी, कुलथी, उरद और सेम दूध के साथ विरुद्ध हैं, बरें का शाक, ऊंख का सिरका, मैरेय (मद्य विशेष) और मधु एक साथ विरुद्ध है। एवं वात को कुपित करता है। हारिल पक्षी का मांस सर्षप तैल से भूना विरुद्ध होता है और पित्त को अति कुपित करता है।

खीर मन्थ के साथ विरुद्ध हैं और कफ को कुपित करता है। पोई का शाक तिलकल्क में सिद्ध हो तो अतिसार करने वाला होता है। बगुले का मांस—मदिरा एवं घुघुरी के साथ विरुद्ध है, वही सूकर की चर्बी से बना हो तो मारने वाला होता है। मोर का मांस एरण्ड की लकड़ी में गोदकर एरण्ड की ही अग्नि में भूजा जाय या एरण्ड तेल में पकाया जाय तो शीघ्र ही मारक होता है। हारिल पक्षी का मांस—दारु हरिद्रा की कील में गोदकर दारु हल्दी की अग्नि में भूजा गया हो तो शीघ्र मारक होता है और वह राख धूल से परिध्वस्त मधु के साथ खाया हुआ मारक होता है।

जिस तेल में मछली तली गयी हो उससे सिद्ध पीपरि, मकोय मधु के साथ खाने से मारक होती हैं।

उष्णकी हुई मधु और गर्मी से पीड़ित मनुष्य के लिये मधु—मारक होती है। मधु घृत सम मात्रा में, मधु और आकाश-जल सम मात्रा में, मधु कमल-बीजचूर्ण के साथ, मधु पीकर उष्ण जल पीना, भेलावा-ऊष्ण जल के साथ, तक्र में पकाया कबीला, बासी मकोय शाक इङ्गुदी, (हिंगोठ) की लकड़ी में गोदकर अग्नि में पकाया हुआ भाद (चील या मुर्गे) का मांस ये सब परस्पर विरुद्ध होते हैं। इस तरह प्रश्न के अनुसार वर्णन हुआ।

टिप्पणी

सुराकृशरापायसांश्च नैकध्यं, मत्स्यैः सहेक्षुविकाराम्, कदलीफलं तालफलंन पयसा दध्ना तक्रेण वा, कांस्यभाजने दशरात्रपर्युषितं सर्पिः नाश्नीयात्। [सु० सू० अ० २०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

भवन्ति चात्र श्लोकाः ।

यहाँ श्लोक भी है :—

यत्किंचिद्दोषमुत्क्लेश्य न निर्हरति कायतः ।
आहारजातं तत्सर्वं विरुद्धमहितार्थकम् ॥
यद्यापि देशकालाग्निमात्रासात्म्यानिलादिभिः ।
संस्कारतो वीर्यतश्च कोष्ठावस्थाक्रमैरपि ॥
परिहारोपचाराभ्यां पाकात्संयोगतोऽपि च ।
विरुद्धं तच्च न हितं हृत्संपद्विधिभिश्च यत् ॥

जो आहार द्रव्य—दोष को शरीर में उभार दे किन्तु शरीर से बाहर न निकाले उसे विरुद्ध कहते हैं वह अहित के लिए होता है । जो देश, काल, अग्नि, मात्रा, सात्म्य, वात पित्त कफ, संस्कार, वीर्य, कोष्ठ, अवस्था क्रम परहेज व पथ्य से और पाक, संयोग से विरुद्ध होता है वह हितकारी नहीं होता है और जो हृदय, सम्पत् (शुभ गुण) एवं विधि के अनुकूल न हो वह भी हित नहीं होता है ।

विरुद्धं देशतस्तावद्भूक्षतीक्ष्णादि धन्वनि ।
आनूपे स्निग्धशीतादि भेषजं यन्निषेव्यते ॥
कालतोऽपि विरुद्धं यच्छीतरूक्षादिसेवनम् ।
शीते काले तथोष्णे च कटुकोष्णादिसेवनम् ॥
विरुद्धमनले तद्वन्नानुरूपं चतुर्विधे ।
मधुसर्पिः समधृतं मात्रया तद्विरुध्यते ॥
कटुकोष्णादिसात्म्यस्य स्वादुशीतादिसेवनम् ।
यत्तत्सात्म्यविरुद्धं तु, विरुद्धं त्वनिलादिभिः ॥
या समानगुणभ्यासविरुद्धान्नौषधक्रिया ।

मारवाड़ आदि धन्वन देश में रूक्ष तीक्ष्ण, आनूप देश में स्निग्ध शीत भेषज विरुद्ध होते हैं यह देश विरुद्ध है ।

ऽल्पहितायोपपद्यते इ० पा० ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

शीतकाल में शीत रूक्ष वस्तु का सेवन, उष्णकाल में कटु उष्ण वस्तु का सेवन यह काल विरुद्ध है। चार प्रकारकी अग्नि (सम, विषम, तीक्ष्ण, मन्द) में विपरीत आहार द्रव्य अग्नि विरुद्ध होते हैं। मधु-घृत सम मात्रा में मात्रा विरुद्ध हैं। कटु-उष्ण सात्म्य पुरुष के लिये मधुर शीत सेवन, सात्म्य विरुद्ध होता है। वातादि दोष के समान गुण वाले वस्तुओं का नित्य सेवन और उनके प्रकोपक अन्न औषध और कार्य वातादि विरुद्ध होते हैं।

संस्कारतो विरुद्धं तद्यद्भोज्यं विषवद् व्रजेत्॥
एरण्डसीसकासक्तं शिखिमांसं तथैव हि।
विरुद्धं वीर्यतो†ज्ञेयं वीर्यतः शीतलात्मकम्॥
तत्संयोज्योष्णवीर्येण द्रव्येण सह सेव्यते।
क्रूरकोष्ठस्य चात्यल्पं मन्दवीर्यमभेदनम्॥
मृदुकोष्ठस्य गुरु च भेदनीयं तथा बहु।
एतत्कोष्ठविरुद्धं तु विरुद्धं स्यादवस्थया॥

---

† अत ऊर्ध्वंरसद्वन्द्वानि रसतो विपाकतश्च विरुद्धानि वक्ष्यामः। तत्र मधुराम्लौ रसवीर्य्यविरुद्धौमधुरलवणौ मधुर कटुकौ च मधुरतिक्तौ रसविपाकाभ्यां मधुरकषायौ चाम्ललवणौ रसतः। अम्लकटुकौ रसविपाकाभ्यामम्लतिक्तावम्लकषायौ च सर्व्वतः। लवणकटुकौ रसविपाकाभ्यां लवणतिक्तौ लवणकषायौ च सर्व्वतः। कटुतिक्तौ रसवीर्य्याभ्यां कटुकषायौ तिक्तकषायौ च रसतः तरतमयोगयुक्तांश्च भावानतिरूक्षानतिस्निग्धानत्युष्णानतिशीतान् नित्येवमादीन् विवर्जयेत्।

भवन्ति चात्र

विरुद्धान्येवमादीनि वीर्यतो यानि कानि च।
तान्येकान्ताहितान्येव शेषं विद्याद्यथायथम्॥
व्याधिमिन्द्रियदौर्बल्यं मरणञ्चाधिगच्छति।
विरुद्धरसवीर्याणि भुञ्जानोऽनात्मवान्नरः॥

[सु० सू० अ० २०]

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

श्रमव्यवायव्यायामसक्तस्यानिलकोपनम् ।
निद्रालसस्यालसस्य भोजनं श्लेष्मकोपनम् ॥
यच्चानुत्सृज्य विण्मूत्रं भुंक्ते यश्चाबुभुक्षितः ।
तच्च क्रमविरुद्धं स्याद्यच्चातिक्षुद्वशानुगः ॥
परिहारविरुद्धं तु वराहादीन्निषेव्य यत् ।
सेवेतोष्णं घृतादींश्च पीत्वा शीतं निषेवते ॥
विरुद्धं पाकतश्चापि दुष्टदुर्दारुसाधितम् ।
अपक्वतण्डुलात्यर्थपक्वदग्धं च यद्भवेत् ॥
संयोगतो विरुद्धं तद्यथाम्लं पयसा सह ।
अमनोरुचिंतं यच्च हृद्विरुद्धं तदुच्यते ॥
संपद्विरुद्धं तद्विद्यादसंजातरसं तु यत् ।
अतिक्रान्तरसं वाऽपि विपन्नरसमेव वा ॥
ज्ञेयं विधिविरुद्धं तु भुज्यते निभृतेन यत् ।
तदेवंविधमन्नं स्याद्विरुद्धमुपयोजितम् ॥

जो भोजन संस्कार की विशेषता से विषवत् हो जाय वह संस्कार रुद्ध कहलाता है। जैसे एरण्ड की लकड़ी में गोद कर पकाया हुआ का मांस विषवत् है। वीर्यतः शीत द्रव्य, उष्णवीर्य द्रव्य के साथ ल करने से वीर्यविरुद्ध होते हैं। क्रूरकोष्ठ के लिए अत्यल्प, मन्दवीर्य, तक औषध और मृदुकोष्ठ के लिए बहुत, गुरु और रेचक औषध कोष्ठ-विरुद्ध कहा जाता है। श्रम, मैथुन, व्यायाम में आसक्त पुरुष लिए वात को कुपित करने वाला भोजन देना, निद्रा, आलस्य युक्त के लिए कफ कुपित करने वाला भोजन देना अवस्था विरुद्ध है। मूत्र का विना त्याग किये हुए और बिना भूख तथा बहुत भूख के ाय जब कभी जो भी खाने को क्रम विरुद्ध कहते हैं। परिहार विरुद्ध है—कि सूकर आदि का मांस खाकर उष्ण वस्तु का सेवन करे और आदि पीकर शीत वस्तु का सेवन करे। दूषित लकड़ी द्वारा किया पाक, अपक्व अथवा अत्यधिक पक्व या जलाया हुआ चावल (भात)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

ये पाक विरुद्ध कहे जाते हैं। संयोग विरुद्ध वह है जो अम्ल पदार्थ दुग्ध के साथ खाया जाय। जो मन को प्रिय न हो वह हृद्विरुद्ध कहा जाता है। जिसमें रस पैदा न हुआ हो (कच्चा हो), जो द्रव्य अधिक पक्व (गलकर रसहीन हो) गया हो तथा खराब विकृत रस वाला हो गया हो तो उसे सम्पद् विरुद्ध कहा जाता है और एकान्त में न खाने को विधि विरुद्ध कहते हैं। इस प्रकार प्रयुक्त अन्न को विरुद्ध कहते हैं।

विरुद्धाशनस्य वितथत्वे कारणम्

सात्म्यतोऽल्पतया वाऽपिदीप्ताग्नेस्तरुणस्य च।
स्नेहव्यायामबलिनो विरुद्धं वितथं भवेत्॥

सात्म्य, अल्प होने से, दीप्ताग्नि एवं तरुण पुरुषों का खाया हुआ और स्नेह सेवन तथा व्यायाम द्वारा बलिष्ट पुरुषों का खाया हुआ विरुद्ध अन्न व्यर्थ हो जाता है अर्थात् अहित नहीं कर सकता।

विरुद्धाशनजा रोगाः

षाण्ढ्यान्ध्यबीसर्पदकोदराणां विस्फाटकोन्मादभगन्दराणाम्।
मूर्च्छामदाध्मानगलामयानां पाण्डवामयस्यामविषस्य चैव॥
किलासकुष्ठग्रहणीगदानां शोषास्रपित्तज्वरपीनसानाम्।
संतानदोषस्य तथैव मृत्योर्विरुद्धमन्नं प्रवदन्ति हेतुम्॥

नपुंसकता, अन्धता, वीसर्प, जलोदर, विस्फोट, उन्माद, भगन्दर, मूर्च्छा, मद, आध्मान, गले का रोग, पाण्डु, आमविष, किलास, कुष्ठ, ग्रहणी, यक्ष्मा, रक्तपित्त, ज्वर, पीनस, सन्तान दोष और मृत्यु का कारण विरुद्ध अन्न होता है।

वैरोधिकनिमित्तानांव्याधीनांप्रतिघातकरोपायाः

एषां च खलु परेषां च वैरोधिकनिमित्तानां व्याधीनामिमे भावाः प्रतिकारा भवन्ति। यथा वमनं विरेचनं च, तद्विरोधिनां च द्रव्याणां संशमनार्थमुपयोगः, तथाविधैश्च द्रव्यैः पूर्वमभिसंस्कारः शरीरस्येति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

भवति चात्र

विरुद्धाशनजान् रोगान् प्रतिहन्ति विरेचनम् ।
वमनं शमनं चैव पूर्वं वा हितसेवनम् ॥

[च० सू० अ० २६]

विरुद्ध वस्तुओं के सेवन से उत्पन्न इन (ऊपर बताये गये) एवं अन्य रोगों को शान्त करने के लिए ये उपाय हैं—जैसे वमन, विरेचन और विरुद्धाहार से उत्पन्न व्याधियों के नाशक द्रव्यों का शमनार्थ प्रयोग अथवा पूर्वकाल से ही ऐसे द्रव्यों को सेवन कर अभ्यस्त करना जिससे विरुद्ध आहार का शरीर पर प्रभाव न पड़े ।

विरुद्ध अशन जन्य रोगों को विरेचन-वमन-शमन औषधियाँ दूर करती हैं अथवा पूर्वकाल ही से हितवस्तु का सेवन दूर करता है ।

उपवासः

यत्किञ्चिल्लाघवकरं देहे तल्लंघनं स्मृतम् ।
लंघनस्यैकदेशोऽयमुपवासः प्रकीर्तितः ॥
चतुष्प्रकारा संशुद्धिः पिपासा मारुतातपौ ।
पाचनान्युपवासश्च व्यायामश्चेति लंघनम् ॥

[च० सू० अ० २२]

शरीर को हलका करने वाला जो कार्य हो उसे लंघन कहते हैं, लंघन का एक भाग उपवास भी है । चारों प्रकार की (वमन, विरेचन, बस्ति, निरूहवस्ति) शुद्धि, प्यास, हवा, धूप, पाचन, उपवास और व्यायाम ये सब लंघन कहे जाते हैं ।

उपवासफलम्

"पुण्यप्रदो ह्यामदोषहरोऽनलकरः सदा ।
स्फूर्तिदश्चोपवासो वै इन्द्रियाणां प्रसादकः ॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

प्रायो व्रतोपवासो हि विधेयः शास्त्रसम्मतः।
धर्मः स्वास्थ्यञ्च लभ्येत वयःस्थैः†सुविचारिभिः॥"

उपवास पुण्य देने वाला, आमदोष दूर करने वाला, अग्नि को बढ़ाने वाला, स्फूर्ति को देने वाला और इन्द्रियों को स्वच्छ करने वाला है। विचारशील वयस्क पुरुष को शास्त्र सम्मत व्रत या उपवास करना चाहिए इससे धर्म एवं स्वास्थ्य दोनों प्राप्त होते हैं।

सर्वव्रतेषु पालनीयाः सामान्यधर्माः

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
देवपूजा च हवनं सन्तोषस्तप आर्जवम्॥
सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः।
[ध० शा०]

क्षमा, सत्य, दया, दान, पवित्रता, इन्द्रियजय, देवपूजा हवन, सन्तोष, तपस्या, आर्जव (सरलता), समस्त व्रतों में ये दश धर्म सेवनीय होते हैं।

एकादशीव्रतम्

"पक्षस्याभ्यन्तरेऽवश्यमुपोष्यैकादशी तिथिः।
अधिकं नैव शक्येत व्रतं कर्तुं नरैर्यदि॥"

यदि मनुष्य अधिक व्रत न कर सके तो—१ पक्ष के अन्दर एकादशी व्रत तो अवश्य करे।

उपवासस्य भेदा विधिश्च

'निराहारः फलाहारो द्विधा लोके तु सम्मतः।
प्रथमो हि वरस्तत्र स्मृतोऽभावे द्वितीयकः॥
निराहारोऽपि द्विविधः सजलो निर्जलस्तथा।
यथाप्रकृति संसेव्यो विचार्य दूरदर्शिभिः॥

† नवालैर्नवृद्धैरिति भावः, (बालवृद्धातुरैर्विनेति धर्मशास्त्रे)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सजलो वातपित्तिभ्यो निर्जलः श्लेष्मिणे तथा।
फलन्तु लघु भोक्तव्यमविष्टम्भकरं सकृत्॥
पूर्वरात्रावुपोष्यैव भुक्ताऽल्पं वा व्रती भवेत्।
अहोरात्रं तथा ग्राम्यदिवास्वप्नादिकंञ्चित्यजेत्॥
कृत्वा शौचादिकं प्रातः, लघु भुञ्जीत भोजनम्।
स्निग्धं सुमधुरं रुच्यं मृद्वन्नं साधु साधितम्॥"

निराहार और फलाहार यह दो प्रकार का व्रत लोक में प्रचलित है। पहला श्रेष्ठ कहा गया है। इसके अभाव में दूसरा कहा गया है। फलाहार भी दो प्रकार का है—सजल और निर्जल। दूरदर्शी पुरुष को विचार कर अपनी प्रकृति के अनुसार निर्जल अथवा सजल व्रत करना चाहिये। वात पित्त प्रकृति वालों को सजल एवं श्लेष्मा वालों को निर्जल ही रहना चाहिये। फलाहारी व्रती को एक बार ही फल (नकि कंद) वह भी जो कब्ज न करने वाला हो, खाना चाहिये। पहली रात उपवास कर अथवा अल्प भोजन करने के बाद ही दूसरे दिन व्रत अहोरात्र करना चाहिए। उस दिन मैथुन एवं दिवास्वप्न आदि नहीं करना चाहिए। दूसरे दिन प्रातः शौचादि क्रिया कर लेने पर लघु, स्निग्ध, मधुर, रुचिकारक, मृदु और ठीक बनाया हुआ अन्न भोजन (पारण) करे।

अनुपवास्याः

आहिताग्निरनड्वांश्चब्रह्मचारी च ते त्रयः।
अश्नन्त एव शोभन्ते नैषां सिद्धिरनश्नताम्॥ [स्मृतिः]

अग्निहोत्री, पहलवान और ब्रह्मचारी (विद्यार्थी) यदि भोजन न करे तो इनका कार्य नहीं होता है अतः इन्हें उपवास न करना चाहिये।

केचिदातुरा अप्युपवासार्हाः

लघ्वदोषिणां प्रमीढानां स्निग्धाभिष्यन्दिवृंहिणाम्।
शिशिरे लंघनं शस्तमपि वातविकारिणाम्॥

---

* असकृज्जलपानाच्च सकृत्ताम्बूलभक्षणात्।
व्रतनाशस्तदा ज्ञेयः दिवास्वापाच्च मैथुनात् [ध० शा०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अबहुश्लेष्मपित्तास्रमलाः संसृष्टमारुताः।
बृंहच्छरीरा बलिनः उपवासाय ते मताः॥
येषामल्पबला रोगाः कफपित्तसमुत्थिताः।
वम्यतीसारहृद्रोगविसूच्यलसकज्वराः॥
विबन्धगौरवोद्गारहृल्लासारोचकादयः।
पिपासानिग्रहैस्तेषामुपवासैश्च तान् जयेत्॥

[च० सू० अ० २२]

चर्मरोगी, प्रमेही, स्निग्ध, अभिष्यन्द, बृंहण वाले और वातरोगियों को भी शिशिर ऋतु में लंघन कराना चाहिए। यदि कफ, पित्त, रक्त और मल का दूषण अधिक न हो किन्तु वातविकार का सम्बन्ध हो, रोगी का शरीर बड़ा एवं बलवान हो तो उन्हें उपवास कराना चाहिये।

जिन लोगों को कफ-पित्तजन्य रोग हल्का हो, वमन, अतिसार, हृद्रोग, हैजा, अलसक, ज्वर, विबन्ध, गुरुता, उद्गारबहुलता, हृल्लास और अरोचक आदि रोग हो तो उन्हें प्यास रोक कर, उपवास कराके-जीतना चाहिए।

प्राणाविरोधिलङ्घनोपदेशः

प्राणाविरोधिना चैनं लङ्घनेनोपपादयेत्।
बलाधिष्ठानमारोग्यं यदर्थोऽयं क्रियाक्रमः॥ [च०]

जितने से बल का नाश न हो, उतना ही उपवास कराना चाहिए। क्योंकि बल के आधीन ही आरोग्य है और उसी के लिए यह चिकित्सा की जाती है।

* सुलंघितलक्षणम्।

वातमूत्रपुरीषाणां विसर्गे गात्रलाघवे।
हृदयोद्गारकण्ठास्यशुद्धौ तन्द्राक्रमे गते॥

---

* दोषाणमेव सा शक्तिर्लंघने या सहिष्णुता।
न तु दोषक्षये कश्चित् सहते लंघनादिकम्॥ (च०)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्वेदे जाते रुचौ चैव क्षुत्पिपासासहोदये।
कृतं लङ्घनमादेश्यं निर्व्यथे चान्तरात्मनि॥

[च० सू० अ० २२]

अपानवात-मूत्र-पाखाना साफ होते हों, शरीर हल्का हो, हृदय, उद्गार-गला और मुख शुद्ध हो, तन्द्रा व थकावट न हो, पाचन-शक्ति बढ़ गई हो, भोजन में रुचि हो, भूख प्यास दोनों साथ लगते हों, मन में कोई कष्ट न हो, तब लंघन ठीक हो गया है ऐसा समझना चाहिये।

अतिकृतलङ्घनदोषाः

पर्वभेदोऽङ्गमर्दश्च कासः शोषो मुखस्य च।
क्षुत्प्रणाशोऽरुचिस्तृष्णादौर्बल्यं श्रोत्रनेत्रयोः॥
मनसः सम्भ्रमोऽभीक्ष्णमूर्ध्ववातस्तमो हृदि।
देहाग्निबलनाशश्च लङ्घनेऽतिकृते भवेत्॥

[च० सू० अ० २२]

अंगुलो की पोर्वा में दर्द, शरीर में मर्दनवत् पीड़ा, कास, मुखशोष कुछ का न लगना, अरुचि, प्यास, कान-नेत्र में दुर्बलता, मन में भ्रम और बार-बार डकार का आना, मस्तिष्क के सामने अन्धकार छा जाना या दिमाग में शून्य मालूम होना, देह, अग्नि के बल का नाश, ये सब अतिलङ्घन होने पर होते हैं।

मादकद्रव्याणामुपयोगनिषेधः

'मद्यं नानाविधं यच्च क्षीरं खर्जूरतालयोः।
धुस्तूरबीजं भङ्गा च फेनं चाहिसमुद्भवम्॥
गञ्जा चण्डू तथा चर्सः तमाखुश्चर्विषतिन्दुकम्।
कोकिणो मल्लकः शृङ्गी वत्सनाभादिको विषः॥

* तमाखौ तथा चर्सादौ 'निकोटीन' इत्याख्यं भयावहं विषं भवति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

तथा मदवहा दुष्टा विल्वक्रमुककोद्रवाः।
तमोगुणात्मकाः सर्वे बुद्धि†हृज्जीवितच्छिदः†† ॥
एतेषां भक्षणं पानं धूमपानं तथैव च।
न कार्यं सुहृठात्काऽपि सदा सुस्वास्थ्यकांक्षिभिः ॥"

अनेक प्रकार के मद्य, खजूर एवं ताल का दूध (ताड़ी), धतूर का बीज, भाँग, अफीम, गाँजा, चण्डू, चर्स, तमाखू, कुचिला, कोकीन, संखिया, सिंगिया, वत्सनाभ आदि विष और मतौना वेल सुपारी एवं कोदो मद को करते हैं। यह सभी तमोगुणी हैं, बुद्धि और जीवन को नष्ट करने वाले हैं।

अच्छे स्वास्थ्य चाहने वाले पुरुष को इनका खान-पान धूमपान आदि कभी भी नहीं करना चाहिये।

जायन्ते धूमपानात्तु श्वयथुः श्वासयन्त्रिकः।
कासः श्वासः स्वरध्वंसो दौर्गन्ध्यं वदने तथा ॥
भक्षणाच्च तमाखोर्हि मालिन्यमानने सदा।
कार्यालस्यं स्मृतेर्नाशो दौर्बल्यं हृदयस्य च ॥
शिरोदन्ताक्षिरोगाश्च वन्हिमान्द्यादयो गदाः।'

धूमपान से श्वास-नलिका में शोथ, कास, श्वास, स्वरभ्रंश, मुख में दुर्गन्ध होती है। तमाखू (सुर्ती) खाने से मुख में मलिनता, कार्य में आलस्य, स्मृति का नाश, हृदय की दुर्बलता, शिर-दन्त-अक्षिरोग और अग्निमान्द्य आदि रोग होते है।

---

†मादकद्रव्यसेवनं ज्ञानेन्द्रियशक्तिह्रासकरमित्यर्थः।

††हृदयमस्तिष्कफुप्फुसादीनां विकृतत्वाज्जीवितमेव नश्यति। अकाले जरा मृत्युरपि प्राप्यत इति। [वा०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

यावद्दृष्टेर्न सम्भ्रान्तिर्यावन्न क्षोभते मनः।
तावदेव विरन्तव्यं मद्याच्छ्रेदात्मवता सदा॥
धर्माधर्मं सुखं दुःखमर्थानर्थं हिताहितम्।
यदासक्तो न जानाति कथं तच्छीलयेद्बुधः॥
मद्ये मोहो भयं शोकःक्रोधो मृत्युश्च संश्रितः।
सोन्मादमदमूर्च्छायाः सापस्मारापतानकाः॥
यत्रैकः स्मृतिविभ्रंशस्तत्र सर्वमसाधु यत्।
अयुक्तियुक्तमन्नंहि व्याधये मरणाय वा॥
मद्यं त्रिवर्गधीधैर्यलज्जादेरपि नाशनम्।
निवृत्तो यस्तु मद्येभ्यो जितात्मा बुद्धिपूर्वकृत्।
विकारैः स्पृश्यते जातु न स शारीरमानसैः॥ [वा०]

जितने से दृष्टि में भ्रान्ति और मन में क्षोभ पैदा न हो उस (मात्रा) के पूर्व ही जितेन्द्रिय पुरुष मद्य से विराम कर ले।

जिस मद्य के वशीभूत होने पर धर्म-अधर्म, सुख-दुःख, अर्थ-अनर्थ और हित अहित का ज्ञान नहीं रहता है उस मद्य का अभ्यास विद्वान् कैसे कर सकते हैं? मद्य सेवन से मोह, भय, शोक, क्रोध, मृत्यु, उन्माद, उदरामय, मूर्छा, अपस्मार और अपतानक रोग होते हैं। जहाँ एक मात्र शक्ति का ही नाश होता है वहाँ सभी बुराइयाँ होने लगती हैं; फलें तो अनेक शक्ति का नाश होता है।

अविधि पूर्वक खाया हुआ अन्न भी व्याधि या मरण के लिए होता है। एवम् अविधि पूर्वक पान किया मद्य धर्म, अर्थ, काम, बुद्धि, धीरता और लज्जा तक को नष्ट कर देता है। जो जितेन्द्रिय बुद्धि पूर्वक कार्य करनेवाला मद्य से निवृत्त रहता है वह शरीर एवं मानसिक रोगों का शिकार नहीं बनता है।

---

* आयुर्वेदोक्तरीत्या निर्मितस्य विधिपूर्वकं सेवनं कर्तुं शक्यत आवश्यकतायाम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

देशः *

"देशं बुद्ध्यानरोनित्यमाहारादिकमाचरेत् ।
न जातु प्राप्नुयाद्रोगं तद्विपरीतसेवनात् ।।"

तत्र त्रिविधः खलु देशो जाङ्गलोऽनूपः साधारणश्चेति । तत्र जाङ्गलः पर्याकाशभूयिष्ठस्तरुभिरपि कदरखदिरासनाश्वकर्ण-धवतिनिशशाल्लकीशालसोमवल्कबदरीतिन्दुकाश्वत्थवटामलकी वनगहनोऽनेकशमीककुभशिंशपाप्रायः स्थिरशुष्कपवनबलविधू-यमानप्रनृत्यत्तरुणविटपः, प्रततमृगतृष्णाकूपोपगूढस्तनुखर-परुषसिकताशर्कराबहुलो लावतित्तिरचकोरानूपचितभूमिभागो वातपित्तबहुलस्थिरकठिनमनुष्यप्रायो ज्ञेयः ।।

देश के ज्ञानानुसार नित्य आहारादि सेवन करे । उसके गुण के विपरीत सेवन करने वाला व्यक्ति रोगी नहीं होता । देश, जाङ्गल, आनूप और साधारण भेद से तीन प्रकार के होते हैं । जाङ्गल देश शून्यभूमि विट्खदिर, खैर, असना (विजयसार) साखू, धव, तिनिश आबनूश सलई, शाल, सोमवल्क (सफेद खैर) बेर, तेंदू, पीपर, वट और आँवला पेड़ के गहन वन से युक्त होता है । और वहाँ अनेक शमी अर्जुन, शीशम आदि पेड़ प्रायः लगे रहते हैं । तथा सूखी वायु के वेग के द्वारा कम्पित होकर नये वृक्ष नाचते हुए देख पड़ते हैं । सदा मृगतृष्णा के कूप से उपगूढ़, पतला खुरदरा रूक्ष वालू और कंकड़ मय वह देश होता है। लाव, तित्तिर, चकोर, पक्षी बहुत रहते हैं । वहाँ प्रायः वात पित्त रोग वाले और स्थिर, कठिन प्रकृति के मनुष्य होते हैं ।

अथानूपो हिन्तालतमालनारिकेलकदलीवनगहनः, सरित्स-मुद्रपर्यन्तप्रायः शिशिरपवनबहुलो वञ्जुलवनवानीरोपशोभि-

---

* भूमिदेहप्रभेदेन देशमाहुरिह द्विधा ।
जांगलं वातभूयिष्ठमानूपं तु कफोल्वणम् ।
साधारणं सममलं त्रिधा भूदेशमादिशेत् । [वा०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

वतीराभिः सरिद्भिरुपगतभूमिभागः, क्षितिधरनिकुञ्जोपशोभितो, मन्दपवनानुजितक्षितिरुहगहनोऽनेकवनराजीपुष्पितवनगहनभूमिभागः, स्निग्धतरुप्रतानोपगूढो, हंसचक्रवाकबलाकानन्दीमुखपुण्डरीककादम्बमद्गुको यष्टिभृङ्गराजशतपत्रमत्तकोकिलानुनादितरुणविटपः, सुकुमारपुरुषः पवनकफप्रायो ज्ञेयः।

अनयोरेव द्वयोर्देशयोर्वीरुद्वनस्पतिवानस्पत्यशकुनिमृगगणभूतः स्थिरसुकुमारवर्णसंहननोपपन्नसाधारणगुणपुरुषः साधारणो ज्ञेयः। [च० क० अ० १]

बानूप देश-ताड़, तमाल, नारियल, केला के घने वनों से युक्त होता है। प्रायः नदी, समुद्र से घिरा हुआ शीतल वायु प्रायः जहाँ बहा करती है। जलवेंत, बेतों के वनों से सुशोभित तीर वाली नदियों से युक्त नवीन वृक्षों के कुञ्जों से सुशोभित और मन्दवायु के चलने से हिलते हुए वृक्षों से युक्त, अनेक वन की पंक्ति पुष्पों से भरा हुआ है भू भाग जिसका, ऐसा वह चिकने-चिकने पेड़ों लताओं से युक्त, हंस, चकवा-चकई, बगुला, नन्दीमुख, पुण्डरीक कलहंस, पनडुब्बी, टिटिहरी, भृंगराज, मोर और मतवाली कोयलों के शब्दों से गुञ्जित नव्य वृक्ष युक्त होता है। वहाँ प्रायः सुकुमार वात कफ प्रकृति वाले मनुष्य होते हैं।

इन दोनों देशों की लताएँ वनस्पतियाँ, वानस्पत्य और पशु, पक्षीगण जहां पाये जाते हों और स्थिर, सुकुमार वर्ण एवं पुष्टि से युक्त साधारण (समत्रिदोष) गुणवाले पुरुष जहाँ होते हों उस देश को साधारण कहते हैं।

समाः साधारणे यस्माच्छीतोष्णवृष्टिमारुताः।
समता तेन दोषाणां तस्मात्साधारणो वरः॥
उचिते वर्तमानस्य नास्ति दुर्देशजं भयम्।
आहारस्वप्नचेष्टादौ तद्देशस्य कृते सति॥ [भा० प्र०]
यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जं तस्यौषधं हितम्।
देशादन्यत्र वसतस्तत्तुल्यगुणमौषधम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

स्वदेशे निचिता दोषा अन्यस्मिन् कोपमागताः।
बलवन्तस्तथा न स्युर्जलजाः स्थलजास्तथा॥

[वृद्धवाग्भटः]

सधारण देश में शीत, उष्ण, वर्षा, हवा, सब सम रहते हैं, अतः दोषों की समता होती है, अतः साधारण देश श्रेष्ठ है। जो मनुष्य जिस देश में रहता है उस देश के अनुसार आहार, स्वप्न, विहार आदि यदि अभ्यस्त कर लेता है तब उसे दुर्देशजन्य रोग होने का भय नहीं होता है। जिस देश में उत्पन्न जो व्यक्ति है, उसे उसी देश की उत्पन्न औषधि हितकर है। किंतु वह यदि दूसरे देश में बसता है तो उसे उसके तुल्य गुणवाली औषध लेनी चाहिये। अपने देश में सञ्चित दोष अन्य देश में कुपित हुए वैसे बलवान नहीं होते हैं, चाहे वे स्थलज हों या जलज हों।

जलम्*

जलं जीवनार्थमेकमत्यावश्यकं वस्तु। न केवलं भोजनार्थं अपितु जनानां स्वशरीररस्य स्वकीयवस्त्रस्यान्यद्रव्याणां वा शुद्धयर्थमपि सततावश्यकमस्ति। न केवला मनुष्याः किन्तु पशवो वनस्पतयः केचिदपि प्राणिन एतदन्तरेण न जीवितुं शक्नुवन्ति। मनुष्यशरीरे समस्तभारस्य १।२ भागो जलस्यैव वर्तते। तदिदं घनद्रववाष्पेत्यवस्थात्रये विद्यते, घनावस्थायां यथा हिमः, द्रवावस्थायां यथा वर्षा, समुद्रः, नदी, सरः, कूपं, इत्यादि, वाष्पावस्थायां तु वायुमण्डलस्य वायौ प्राणिनिःश्वासे च लभ्यते।

---

* जलं भागद्वयोदजनैकभागौषजनसमाहारेण निर्भीयते। सर्वथा विशुद्धं जलं यत्र रासायनिकतया कश्चिद्दोषो न स्याद्दुर्लभमस्ति। अतो लोके पारदृश्यं गन्धस्वादुतारंगरहितं विशेषतः घनपदार्थेन्द्रियकपदार्थादिमात्रावाहुल्यहीनं स्वच्छं दोष्यमानमिवैव विशुद्धं मन्यते।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

जल जीवन के लिए एक अत्यावश्यक वस्तु है। केवल भोजन में ही नहीं बल्कि शरीर, वस्त्र तथा अन्य वस्तुओं की शुद्धि के लिए भी बहुत आवश्यक है।

केवल मनुष्य ही नहीं अपितु पशु, वनस्पति आदि कोई भी जीव बिना जल के जीवन धारण नहीं कर सकता है। मनुष्य शरीर में समस्त शरीर का आधा भाग जल का ही है। यह जल, घन, द्रव और वाष्प इन तीन अवस्थाओं में विभक्त है। घनभाग-बरफ, द्रव-वर्षा, समुद्र, नदी, तालाब, कूप आदि तथा वाष्प भाग वायुमण्डल के वायु में और प्राणी के निःश्वास में पाया जाता है।

दिव्यजल गुणाः

पानीयमान्तरीक्षमनिर्देश्यरसममृतं जीवनं तर्पणं धारणं आश्वासजननं श्रमघ्नं क्लमपिपासामदमूर्च्छातन्द्रानिद्रादाहप्रशमनमेकान्ततः पथ्यतमञ्च तदेवावनीपतितमन्यतमं रसमुपलभते स्थानविशेषान्नदीनदः* सरस्तड़ागवापीकूपचुण्टीप्रस्रवणोद्भिद्विकिरपल्वलादिषु स्थानेष्ववस्थितमिति।

[सु० सू० अ० ४५]

आकाश का जल स्वाद रहित अमृत, जीवन को धारण करने वाला, तृप्ति लानेवाला, शरीर धारण करने वाला, आश्वास जनक, श्रम-नाशक, सुस्ती, प्यास, मद, मूर्छा, तन्द्रा, निद्रा और दाह को शान्त करने वाला निश्चित हितकरी होता है। वही जल जब जमीन पर पड़ता है तो स्थान के अनुसार किसी भी रस के साथ मिलकर—नदी, नद, झील, तालाब, बावली, कूप, चोंड़ा, झरना, सोता, निम्न स्थल, क्यारी और गड्ढ़ा आदि स्थानों में स्थित होता है।

---

* नद्यो गंगाद्याः, नदः सिन्धुशोणाद्यः, सरः प्रकृतिखातं पुरुषव्यापारं विना, तडागः पुरुषव्यापारकृतं खातम्, वापी इष्टिकादिनिबद्धा ससोपान-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

एकविधस्याऽपिजलस्य बहुप्रकारत्वम्

जलमेकविधं सर्वं पतत्यैन्द्रं नभस्तलात्।
तत्पतत्पतितं चैव देशकालावपेक्षते॥
खात्पततसोमवाय्वर्कैःस्पृष्टं कालानुवर्तिभिः।
शीतोष्णस्निग्धरूक्षाद्यैर्यथासन्नं महीगुणैः॥
शीतं शुचि शिवं मृष्टं विमलं लघु षड्गुणम्।
प्रकृत्यादिव्यमुदकं, भ्रष्टं पात्रमपेक्षते॥
श्वेते कषायं भवति पाण्डुरे चैव तिक्तकम्।
कपिले क्षारसंसृष्टमूषरे लवणान्वितम्॥
कटु पर्वतविस्तारे मधुरं कृष्णमृत्तिके।
एतत्पाङ्गुण्यमाख्यातं महीस्थस्य जलस्य हि॥

[च० सू० अ० २७]

आकाश से एक ही प्रकार का ऐन्द्र जल गिरता है, वह गिरता हुआ, गिरा हुआ देश काल की अपेक्षा करने वाला होता है तथा समय के अनुसार आकाश से गिरता हुआ चन्द्रमा और सूर्य की किरणों के स्पर्श से युक्त वह जल, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष आदि समीपस्थ पृथ्वी के गुणों से युक्त हो जाता है।

आकाश का जल स्वभाव से ही शीत, शुचि, कल्याणकारी, मृष्ट, निर्मल और लघु इन छ गुणों से युक्त होता है—वह भूमि पर पड़ने के बाद पात्र की अपेक्षा करता है। जैसे :—

तीर्था पुष्करिणीतिलोके, कूप इष्टिकादिभिर्बद्धोऽसोपानः, चुण्टी अबद्धकूपम्, प्रस्रवणमुच्चप्रदेशात्प्रस्रवज्जलस्थानं पर्वताश्रितम्, उद्भिदं पुनर्निम्नस्थानादूर्ध्वोत्तिष्ठज्जलस्थानम्, विकिरं वालुकादि विकीर्यं गृह्यमाणोदकस्थानम्, केदारः प्रसिद्धः, पल्वलमानूपदेशजं तृणादिच्छन्नं सरः, आदिग्रहणाद् ह्रद-समुद्रादिग्रहणम् (डल्हणः)। दिव्योदकं भोजननिर्माणार्थं शस्त्रादिप्रक्षालनार्थञ्चापि श्रेष्ठतमं मृदुत्वात्क्षाराभावात् शोधनद्रव्यस्याल्पोपयोगाच्च।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

श्वेत पृथ्वी पर—कषैला, पाण्डु पृथ्वी पर तिक्त, भूरी पृथ्वी पर कषाय, ऊसर भूमि में नमकीन, पर्वत पर कटु, काली मिट्टी पर मधुर, इस तरह भूमि पर आए हुए जल की षड्गुणता होती है।

तत्र लोहितकपिलपाण्डुपीतनीलशुक्लेष्ववनिप्रदेशेषु मधुराम्ललवणकटुतिक्तकषायाणि यथासंख्यमुदकानि सम्भवन्तीत्येके मन्यन्ते, तत्तु न सम्यक् तत्र पृथिव्यादीनामन्योन्यानुप्रवेशकृतः पञ्चभूतरसो भवत्युत्कर्षापकर्षेण तत्र स्वगुणभूयिष्ठायां भूमावम्लं लवणञ्च। अम्बुगुणभूयिष्ठायां मधुरम्। तेजोगुणभूयिष्ठायां कटुकं तिक्तञ्च। वायुगुणभूयिष्ठायां कषायञ्च। आकाशगुणभूयिष्ठायामव्यक्तरसमव्यक्तंह्याकाशमित्यतस्तत्प्रधानमव्यक्तरसत्वात्॥

कोई कहता है कि क्रमशः—लोहित, कपिल, पाण्डु, पीले, नीले और श्वेत भूमि भाग में पड़ा हुआ जल मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त, कषाय रस युक्त क्रमशः होता है। पर वह ठीक नहीं हैं, क्योंकि पृथिवी आदि सम्मिलित पांचो महाभूतों वाली होने से उसमें सान्निविष्ट महाभूतों के अधिक या कम होने के अनुसार जल का रस होता है—जैसे—पृथिवी प्रधान भूमि में अम्ल और नमकीन, जल प्रधान भूमि में मधुर, तेजः प्रधान भूमि में कटु और तिक्त, वात प्रधान भूमि में कषाय और आकाशगुण प्रधान भूमि में अव्यक्त रस वाला होता है, क्योंकि आकाश अव्यक्त है अतः उस भूमि में रहने वाला जल भी अव्यक्तरस-वान हो जाता है।

जलस्योपयोगः

जलस्योपयोगो द्विविधः, आभ्यन्तरिको बाह्यश्च। तत्र पानार्थमुपयोग आभ्यन्तरिकः। स्नानमार्जनमार्गसिञ्चनविविधकार्याराद्यर्थमुपयोगो बाह्यश्चेति।

जल का प्रयोग बाहरी और भीतरी दो प्रकार से होता है। पीने के लिये भीतरी प्रयोग और स्नान, मार्जन, मार्ग-सिञ्चन और अनेक कार्यों आदि के लिये बाहरी प्रयोग होता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

आन्तरीक्षाम्बुभेदाः

तत्रान्तरीक्षं चतुर्विधम्। तद् यथा धारं कारं तौषारं हैम-मिति। तत्र धाराभिः पततीति धारम्। करो वर्षोपलास्तेषां तोयं कारम्। तौषारं यदवश्यायजं निशाजलम्। तदेव संहितावय-वत्वेनस्फटिकशिलाशकलसदृशावयवं हिमं तद्भवं हैमम्।

तेषां धारं प्रधानं लघुत्वात्तत्पुनर्द्विविधं गाङ्गं सामुद्रं चेति तत्र गाङ्गमाश्वयुजे मासि प्रायशो वर्षति तयोर्द्वयोरपि परीक्षणं कुर्वीत।

अन्तरीक्ष जल ४ प्रकार का होता है—धार, कार, तौषार और हैम। धारा से जो गिरता है वह धार, कर वर्षा के पत्थर (वनौरी ओले) को कहते हैं। उसके जल को कार, ओस आदि नाम से प्रसिद्ध रात्रि काल का जल जो शीत काल में प्रातः वनस्पतियों पर लक्षित होता है, तौषार कहलाता है। वही संगठित होकर स्फटिक शिला के खण्डों के समान अवयव वाला हिम (बरफ) होता है, उसके जल को हैम कहते हैं। उनमें लघु होने के कारण धार जल प्रधान है। फिर वह दो प्रकार का है गाङ्ग और सामुद्र, गाङ्ग जल आश्विन मास में प्रायः बरसता है। इन दोनों की भी परीक्षा करनी चाहिए।

गाङ्गसामुद्रयोः परीक्षणम्

शाल्योदनपिण्डमकुथितंमविदग्धं रजतभाजनोपहितं वर्षति देवे बहिष्कुर्व्वीत, स यदि मुहूर्त्तं स्थितस्तादृश एव भवति तदा गाङ्गं पततीत्यवगन्तव्यं वर्णान्यत्वे सिक्थक्लेदेच सामुद्रमिति विद्यात्तन्नोपादेयम्।

सामुद्रमप्याश्वयुजे मासि गृहीतं गाङ्गवद्भवति।

ओदन (भात) जो सड़ा, गला न हो, ठीक पक गया हो, उसके पिंड को चांदी के पात्र में रखकर मेघ के वर्षाकाल में बाहर रख दे, जिसमें पानी पात्र में जावे, एक महूर्त (४८ मिनट) के बाद यदि भात जैसे का तैसा हो तो गाङ्ग जल, यदि वर्ण दूसरा और क्लिन्न हो जाय तो सामुद्र जल बरसता है, ऐसा समझना चाहिए।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

आश्विन मास में सामुद्र जल भी गाङ्ग जल की तरह होता है

आन्तरीक्षाम्बुग्रहणरीतिः

गाङ्गं पुनः प्रधानं तदुपाददीताश्वयुजे मासि शुचिशुक्लवितत-तपटैकदेशच्युतमथवाहर्म्यतलपरिभ्रष्टमन्यैर्वाशुचिभिर्भाजनैर्गृहीतं सौवर्णे राजते मृण्मये वा पात्रे निदध्यात्तत्सर्वकालमुपयुञ्जीत।

[सु० सू० अ० ४५]

गाङ्ग जल प्रधान होता है, आश्विन मास में बरसते हुए उस जल को पवित्र श्वेत एवं विस्तृत कपड़े के एक कोण के द्वारा गिराकर ले लेवे अथवा कोठे के छत पर बरसा हो तो उसे बटोर ले या किसी अन्य पवित्र पात्र में लेवे। उसे छानकर सुवर्ण, चांदी या मिट्टी के पात्र में रखे और सदा काम में लावे।

ऐन्द्राख्यं पानीयं जलम्

अन्तरीक्षात्पततीन्द्रसृष्टं चोक्तैश्च पात्रैः परिगृह्यतेऽम्भः। तदैन्द्रमित्येव वदन्ति धीरा नरेन्द्रपेयं सलिलं प्रधानम्॥

[च० सू० अ० २७]

आकाश से इन्द्र (मेघ) द्वारा छोड़ा हुआ जो जल गिरता है, जो कि बताए हुए पात्र में रखा जाता है, उसे विद्वान् लोग राजाओं के पीने योग्य प्रधान ऐन्द्र जल कहते हैं।

गगनाम्बु त्रिदोषघ्नं गृहीतं यत्सुभाजने।
वल्यं रसायनं मेध्यं पात्रापेक्षि ततः परम्॥

[सु० सू० अ० ४५]

अच्छे पात्र में इकट्ठा किया गया आकाशजल त्रिदोष को दूर करने वाला, बलवर्द्धक, रसायन, बुद्धिवर्द्धक होता है। इसके अतिरिक्त भूमि पर पड़ा हुआ भूमि के अनुसार गुणवाला हो जाता है।

तस्यालाभे भौमम्। तच्चाकाशगुणबहुलम्।

[सु० सू० अ० ४५]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

आकाश जल के अभाव में भौम जल लेते हैं वह भी आकाशगुण प्रधान वाला लेना चाहिये।

भौमाम्बु * भेदास्तद्वर्णनञ्च

तत्पुनः सप्तविधम्। तद्यथा कौपं नादेयं सारसं ताड़ागं प्रास्रवणमौद्भिदं चौण्ड्यमिति। [सु०]

वह भौम जल सात प्रकार का होता है—कूप, नदी, झील, तालाब झरना, सोता और चोण्ड़ा का।

ऋतुपरत्वेन भौमाम्बुसेवनम्

तत्र वर्षास्वान्तरिक्षमौद्भिदं वा सेवेत महागुणत्वात् शरदि सर्वं प्रसन्नत्वात् हेमन्ते सारसं ताड़ागं वा वसन्ते कौपं प्रास्रवणं वा ग्रीष्मेष्वेवं प्रावृषि चौण्ड्यमनवमनभिवृष्टं सर्वत्रचेति।

[सु० सू० अ० ४५]

महागुणवान होने से वर्षा काल में आकाशीय या उद्भिद् (सोता का); शरद में स्वच्छ रहने से समस्त जल, हेमन्त में झील एवं तालाब का जल, वसन्त में और ग्रीष्म में कूप एवं झरना का जल, प्रावृट् काल में चोंड़ा का और पुराना जो वर्षा का जल न हो, वह सब पीना चाहिये।

उत्तमपानीयलक्षणम्

ईषत्कषायमधुरं सुसूक्ष्मं विशदं लघु।
अरूक्षमनभिष्यन्दि सर्वं पानीयमुत्तमम्॥

[च० सू० अ० २७]

उत्तम जल कुछ कषाय, मधुर, सूक्ष्म, विशद, लघु, अरूक्ष और अनभिष्यन्दि होता है।

---

* कौपसारसताड़ागचौण्ड्यप्रास्रवणोद्भिदम्।
वापीनदीतोयमिति तत्पुनः स्मृतमष्टधा॥ [अ० स०]
वाप्याः कूपान्तर्गतत्वात्सप्तधैव मतं सुश्रुतेनेति न विशेषः।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

निर्गन्धमव्यक्तरसं तृष्णाघ्नं शुचिशीतलम् ।
अच्छं लघु च हृद्यं च तोयं गुणवदुच्यते ॥ [सु०]

गन्धरहित, अव्यक्तरस, प्यास को नष्ट करने वाला, पवित्र, शीत, स्वच्छ, लघु, और हृदय को प्रिय जल गुणयुक्त कहा गया है ।

ऋतुभेदेनाम्भसोगुणाः

गुर्वभिष्यन्दि पानीयं वार्षिकं मधुरं नवम् ।
तनु लघ्वनभिष्यन्दि प्रायः शरदि वर्षति ॥
तत्तु ये सुकुमाराः स्युः स्निग्धभूयिष्ठभोजनाः ।
तेषां भक्ष्ये च भोज्ये च लेह्ये पेये च शस्यते ॥
राजभी राजमात्रैश्च सुकुमारैश्च मानवैः ।
संगृहीताः शरद्यापः प्रयोक्तव्या विशेषतः ॥
हेमन्ते सलिलं स्निग्धं वृष्यं बलहितं गुरु ।
किञ्चित्ततो लघुतरं शिशिरे कफवातजित् ॥
कषायमधुरं रूक्षं विद्याद्वासन्तिकं जलम् ।
ग्रैष्मिकंत्वनभिष्यन्दि जलमित्येव निश्चयः ॥

[च० सू० अ० २७]

वर्षा ऋतु का जल गुरु अभिष्यन्दि और मधुर होता है, प्रायः शरद् ऋतु में पतला, लघु, और अनभिष्यन्दि जल बरसता है, शरद्काल का संग्रह किया हुआ जल सुकुमार, स्निग्ध, घृतादिप्रधान भोजन करने वाले, राजाओं, राजाओं के समान जनों (रईसों), सुकुमार लोगों को भक्ष्य, भोज्य लेह्य पेय आहार कार्य में प्रयोग करना चाहिये ।

हेमन्तकाल का जल स्निग्ध, वृष्य गुरु एवं बलकारक होता है, शिशिर का जल उससे कुछ लघु और कफ एवं वात को नष्ट करने वाला होता है । वसन्तकाल का जल कसैला, मधुर और रूक्ष होता है । ग्रीष्म ऋतु का जल अभिष्यन्दी नहीं होता है । जल के विषय में यही निश्चय है ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

कौपं जलम्

कूपो द्विविधः असोपानः ससोपानश्चेति। असोपानः कूपशब्देनोच्यते लोके, ससोपानस्तु वापीशब्देनेति। कौपंजलं द्विविधम्।

(१) क्षारम् (२) अव्यक्तरसं मधुरं वा (डल्हणः) तयोः सामान्यगुणाः।

क्षारं पित्तलं कौपं श्लेष्मघ्नं दीपनं लघु।
मधुरं पित्तशमनम्— [सु० सू० अ० ४५]

कूप दो प्रकार का होता है—एक विना सीढ़ी वाला और दूसरा सीढ़ी वाला। पहले को कूप और दूसरे को वापी कहते हैं। कूप का जल दो प्रकार का होता है। (१) क्षारयुक्त (२) अव्यक्त रस या मधुर। उनमें जो क्षारयुक्त (खारा) होता है वह पित्त वर्धक, कफ नाशक, दीपन और लघु होता है। एवं जो मधुर होता है वह पित्त शामक होता है।

स्वास्थ्यकरकूपनिर्माणम्

जलपानार्थं कूपः प्रायश्चत्वारिंशद्धस्तमितो गम्भीरः खननीयः। यावदेव गाम्भीर्यं स्यात्तावदेवश्रेष्ठत्वम्। अगम्भीरः कूपो गम्भीरादश्रेष्ठतरः। पवनाभिक्रम्यमाणायां प्रशस्ततरायाञ्च भूमौ कूपो निर्माप्यः। वसतितो वाह्यस्त्वतिस्वास्थ्यकरः। तस्याभ्यन्तरिकाभित्तिः परिपक्वेष्टिकाभिः शिलाभिर्वा सम्बन्धनीया। तदुपरि घनोऽच्छिद्रः प्रास्तरः कार्यः। कूपसन्निहिता भूमिर्निम्नगा वृत्तोपमूत्रपुरीषालयगोशालाश्वशालागजशालादिरहिता स्यात्। कूपसन्निहिते स्नानादिशौचकर्माऽपि न कार्यं यतः कूपस्रोतः स्वसन्निहितभूमिष्ठजलमाकर्षति। कूपोपर्येकमाच्छादनं काष्ठनिर्मितं स्यादेवं वायुद्वारा प्रेरितानि पर्णधूल्यादीनि तत्र न प्रपतेयुः। कूपमभितो विस्तीर्ण एको वृत्ताकारो निम्नगोच्चस्थलः आभ्यन्तरिकभित्तिवन्निर्माप्यः। तदभित एका प्रणाली कार्या

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

यथा व्यवह्रियमाणं जलं सुदूरे निःसृतं स्यात्। कूपोपरि रज्जुः, लौहादिधातुनिर्मितो घटश्चैको जलनिष्कासनार्थं सदा स्थाप्यः। चर्मपुटको न कदापि स्थाप्यो मङ्क्षुदोषवत्त्वाच्छोधनासौकर्याच्च। प्रतिवर्षं कूपस्थं पङ्कादिकमेकदावश्यं बहिष्कार्यम्।

वाप्यं जलमपि द्विविधं भवति (१) स्वादु (२) सक्षारम्। तयोः सामान्यगुणाः—स्वादु वापी जलं लघु। [अ० स०] वातश्लेष्महरं वाप्यं सक्षारं कटुपित्तलम्।

वापीनिर्माणम्—वापीनिर्माणेऽपि कूपोक्तविधिरनुसरणीयः।

जल पीने के लिए निर्मित कूप प्रायः ४० हाथ गहरा खोदना चाहिये, वह जितना गहरा होता है उतना ही अच्छा होता है। कम गहरा कूप अधिक गहरे वाले से कम अच्छा होता है। जहाँ हवा का आगम हो ऐसी अच्छी भूमि में कूप बनाना चाहिये। ग्राम से बाहर का कूप स्वास्थ्य के लिये अच्छा होता है, भीतरी दीवाल पके ईंट या पत्थर से बनानी चाहिये और उसके ऊपर मोटा पलस्तर भी करवा देना चाहिए। कूप के समीप की भूमि नीची एवं वृक्ष, क्षुप, पेशाबखाना, पाखाना, गोशाला, अश्वशाला और हाथीशाला आदि से दूर रहनी चाहिए। कूप के समीप स्नानादि शौच कार्य भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि कूप का स्रोत समीप में स्थित जल का शोषण करता है। कूप के ऊपर एक काष्ठ का ढक्कन बनाकर रखना चाहिये जिससे उसमें वायु द्वारा पत्तियाँ धूल आदि न गिरें। कूप के चारों तरफ चौड़ा गोलाकार ढालुआँ कुछ ऊँचा स्थल कुयें के भीतर की भित्ति के समान पलस्तर करके बनाना चाहिये और उसके चारों ओर एक नाली भी बनावें। उपयुक्त जल जिससे दूर बह कर निकल जाय। कूप के ऊपर रस्सी और लोहे आदि का बना एक घड़ा जल निकालने के लिए सदा रखना चाहिये। चमड़े का पात्र (मशक या चमड़ा) कदापि न रक्खें क्योंकि वह शीघ्र दोष वाला हो जाता है और सरलता से शुद्धभी नहीं हो सकता है। प्रत्येक वर्ष एक बार कूप से पङ्कादि दूषित वस्तु को बाहर निकालना चाहिए। वापी का जलभी दो प्रकार का

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

होता है—स्वादु और सक्षार। उनका सामान्य गुण यह है—वापी का मीठा जल लघु होता है किन्तु खारा जल कटु और पित्तवर्द्धक तथा वात कफ नाशक होता है।

कूप की तरह वापी का भी निर्माण करना चाहिये।

नलिकाकूपः

अद्यत्वेऽस्य प्रचारो दरीदृश्यते। ईषत्कालाय जलप्राप्त्यर्थमस्य प्रयोगः प्रायः क्रियते। तीर्थे जनसङ्गमे सेनाशिविरे दुर्भिक्षपीड़िते देशे वा भृशं प्रयुज्यते। सार्धद्व्यङ्गुलतश्चतुरङ्गुलपर्यन्ता विस्तृता युग्मलोहनलिका पृथिव्यां तावदारोप्यते यावज्जलराशिः सम्यग्लभ्येत। निम्नस्थनलिकाशिरोऽनेकच्छिद्रवत्तीक्ष्णञ्च भवति। उपरिष्ठान्नलिकाग्रस्थप्रेरकयन्त्रद्वारा प्रेरणेनादावीषन्मलिनं जलं निःसरति। किन्तु शनैः शनैः प्रेरणया सुपूतं शुद्धं जलमायाति।

अत्रेमे लाभाः सन्ति—

(१) भूपृष्ठस्थं जलं नलिकाकूपोदकं न दूषयितुं शक्नोति।

(२) मशकादयस्तत्र न स्थातुं शक्नुवन्ति।

(३) भिन्नभिन्नस्थाने उत्पाट्य प्रयोक्तुं शक्यते।

नलिकाकूपो मृदुभूमौ यत्र प्रायः षोडशहस्तगभीरे स्थले जलं निःसरति लाभप्रदो भवति।

विद्युच्चालितनलिकाकूपः—विद्युद्द्वारासञ्चालितस्यास्योपयोगः प्रचुरजलप्राप्त्यर्थं क्रियते अस्य जलं नलिकाकूपवद्गुणकारकं भवति।

आजकल नलिका कूप का बहुत प्रसार देखा जाता है। कुछ काल के लिए जल निकालने के लिए इसका प्रयोग होता है। तीर्थ में, मेला, सेना, अकाल पीड़ित देश में इसका प्रयोग अधिक होता है। २॥ अंगुल से चार अंगुल की विस्तार वाली दो लोहों की नली को भूमि में उतना ही प्रवेश कराते हैं जितने से जल प्राप्त हो जाय। नली का नीचे का

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

शिर तीक्ष्ण, अनेक सूक्ष्म छिद्रों वाला होता है। ऊपर के शिर पर एक प्रेरक यन्त्र रहता है, जिसे चलाने पर नीचे से पहले कुछ गन्दा और बाद में धीरे-धीरे चलाने से साफ जल आता है।

इससे ये लाभ होते हैं :—

(१) भूमिपर का जल इस नालिका कूप के जल को दूषित नहीं कर सकता। (२) मशकादि जीव उस जल में नहीं रह सकते। (३) भिन्न-भिन्न स्थानों में आवश्यकतानुसार उखाड़ कर प्रयोग कर सकते हैं। यह मृदु भूमि में जहाँ प्रायः १६ हाथ गहराई से जल निकले वहाँ लाभदायक होता है। बिजली के द्वारा संचालित नलिका कूप का प्रयोग अधिक जल निकालने के लिये होता है। इसका जल भी नलिका कूप के जल के समान ही गुणकारक होता है।

नादेयजलस्य गुणावगुणा आनूपादिस्थलप्रकाराश्रिताः। प्रायः स्वतटस्थनगरादिमलानां वाहकत्वान्मलमूत्रतुषोत्करमृत-शरीरादिदूषितत्वाच्च घनं गुरु मलिनञ्च नादेयं जलं भवति। वर्षायान्तु सर्वथैवाऽपेयं जायते। अत एवोक्तं वृद्धवाग्भटेन।

'दिव्यं चारि वरं वर्षे नादेयमवरं परम्'

प्रायो वर्षर्तौ नद्यां स्नानेन ज्वरादयो रोगा आक्रामन्ति। तज्जलपानेन च पाण्डुगलगण्डादयो रोगा उत्पद्यन्ते। परन्त्व-न्यर्तौ नादेयं जलं तत्स्थानाद् गृहीतुं शक्यते यत्र सुप्रवाहो भवति। यतः—सूर्यप्रकाशेन सह प्राणप्रदो वायुः तरङ्गेच्छलद्भिर्जल-दूषितपरमाणुभिः सङ्गम्य तत्परमाणून् सम्भिद्य निर्दोषीकरोति। तथा गुरुपदार्था अधोगच्छन्ति जलञ्चातो निर्मलीभवति।

आनूप जांगल देश भेद से नदी के जल में गुण अवगुण होते हैं। स्वस्थ नगरादि के मलों का वाहक होने से तथा मल-मूत्र, भूसी, कूड़ा-करकट और शव आदि से दूषित होने से नदी का जल घन, गुरु और

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मलिन होता है। वर्षाकाल में तो पीने योग्य सर्वथा नहीं होता। इसलिए वाग्भट कहते हैं कि—वर्षाकाल में दिव्य जल श्रेष्ठ और नदी का निकृष्ट होता है। प्रायः वर्षा में नदी-स्नान से ज्वर आदि रोग होते हैं। वर्षा कालीन नदी का पानी पीने से पाण्डु, गलगण्ड आदि रोग होते हैं। किन्तु अन्य ऋतुओं में उस स्थान से जल ले सकते हैं जहां प्रवाह (धारा) हो, क्योंकि सूर्यप्रकाश के साथ आक्सिजन वायु उछलती हुई तरंगों से जल के दूषित परमाणुओं से मिल कर और उनको नष्ट कर जल को निर्दोष करती है, गुरुपदार्थ नीचे चले जाते हैं इस प्रकार जल शुद्ध हो जाता है।

शुद्धनादेयजलग्रहणरीतिः

नदीतटे सुपक्वेष्टिकादिभिर्बद्धः कूपः खननीयः। यत्र नदीजलं स्रोतोभिःप्रसादितमेकत्रीभवति। तज्जलं सुपेयं गुणवच्च जायते।

सामान्यतो नादेयं जलं द्विविधं भवति।

(१) असान्द्रम् (२) सान्द्रम्

उभयोर्गुणाः

नादेयं वातलं रूक्षं दीपनं लघु लेखनम्।
तदभिष्यन्दि मधुरं सान्द्रं गुरु कफावहम्॥

[सु० सू० अ० ४५]

नदी के तट पर पक्की ईटों से एक कूप बनावे, जहां पर नदी का जल स्रोतों द्वारा स्वच्छ होकर इकट्ठा हो। वह पीने योग्य और गुण वाला होता है। सामान्यतः नदी का जल दो प्रकार का होता है-पतला और गाढ़ा। दोनों के गुण ये हैं :—नदी का असान्द्र जल वातल, रूक्ष, दीपन, लघु और लेखन होता है; सान्द्र जल अभिष्यन्दि, मधुर, गुरु एवं कफकारक होता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

जाङ्गलपश्चिमदेशस्थानूपपूर्वदेशस्थसाधारण मध्यदेशस्थानां नदीनां गुणाः

तत्र नद्यः पश्चिमाभिमुखाः पथ्या लघूदकत्वात्, पूर्वाभिमुखास्तु न प्रशस्यन्ते गुरूदकत्वात्, दक्षिणाभिमुखा नातिदोषलाः साधारणत्वात्।

पश्चिम की तरफ बहने वाली नदियों का जल लघु होने से पथ्य, और पूर्व की तरफ बहने वाली नदियों का जल गुरु होने से अपथ्य होता है एवं दक्षिण की तरफ बहने वाली नदियों का जल साधारण होने से अत्यन्त दोषल नहीं होता है।

अत्र लघुगुरूदकयोर्विवरणम्

नद्यः शीघ्रवहा लघ्व्यः प्रोक्ता याश्चामलोदकाः।
गुर्व्यः शैवालसञ्छन्नाः कलुषा मन्दगाश्च याः॥

[सु० सू० अ० ४५]

जिस नदी का जल स्वच्छ हो और शीघ्र बहने वाला हो उसका जल लघु होता है और सेवार से ढका हुआ, गन्दा, धीरे-धीरे बहने वाली नदियों का जल गुरु होता है।

तथोक्तं वाग्भटेन
वाग्भट ने बताया है—

पश्चिमोदधिगाः शीघ्रवहा याश्चामलोदकाः।
पथ्याः समासात्ता नद्यो विपरीतास्त्वतोऽन्यथा॥

पश्चिम समुद्र में गिरने वाली, शीघ्र बहने वाली और स्वच्छ जल वाली नदियों का जल सामान्यतः पथ्य है, इससे भिन्न अपथ्य है।

शैलादिभेदेन नदीजलगुणाः

उपलास्फालनाक्षेपविच्छेदैःखेदितोदकाः।
हिमवन्मलयोद्भूताः पथ्यास्ता एव च स्थिराः॥
कृमिश्लीपदहृत्कण्ठशिरोरोगान् प्रकुर्वते। [सु० सू० अ० ४५]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

तत्र सह्यप्रभवाः कुष्ठंजनयन्ति, विन्ध्यप्रभवाः कुष्ठं पाण्डुरोगञ्च, महेन्द्रप्रभवाः श्लीपदोदराणि, प्राच्यावन्त्या अपरावन्त्याश्चार्शांस्युपजनयन्ति। पारियात्रं† प्रभवाः पथ्या बलारोग्यकर्यः इति। प्रायेण नद्यो मरुषु सतिक्ता लवणान्विताः।
ईषत्कषाया मधुरा लघुपाका बले हिताः॥ [सु० सू० अ० ४५]

पत्थरों में टक्कर खाने से उत्पन्न उछाल से प्रवाहित जलवाली तथा हिमालय और मलयाचल से निकलने वाली नदियों का जल पथ्य है और यदि नदियों का जल स्थिर हो तब वह कृमि, फील-पाँव, हृदय रोग, कण्ठरोग और शिरोरोग उत्पन्न करता है।

सह्याद्रि (पच्छिमी घाट) से निकलने वाली नदियां कुष्ठ, विन्ध्य से निकलनेवाली कुष्ठ और पाण्डु, महेन्द्राचल से निकलनेवाली फीलपांव और उदररोग, पूर्व अवन्ती, एवं पश्चिमी अवन्ती (उजैन) से निकलने वाली अर्श रोग को उत्पन्न करती हैं और पारियात्र से निकलनेवाली नदियों का जल बलवर्धक, आरोग्यकर होता है। प्रायः मरुस्थल (मारवाड़ देश) की नदियों का जल थोड़ा तीतापन से युक्त, नमकीन, कुछ कषैला, मधुर, पाक में लघु और बलवर्धक होता है।

सारसं जलम्

'तृष्णाघ्नं सारसं वल्यं कषायं मधुरं लघु।' [सु० सू० अ० ४५]

सरः प्राकृतं जलसञ्चायकं नाम। यदाऽत्र जलं पर्वतीयप्रदेशान्निर्जनप्रदेशाद्वाऽगत्यैकत्रीभवति तदाऽत्युत्तमं जायते। यत इदं कोमलमचारं प्रायो वार्षिककल्पं भवति, वर्षोदकापेक्षया तत्र केवलानि विलयनशीलद्रव्याण्यधिकानि भवन्ति। परन्तु निम्नस्थलेन आगत्य जलमत्रैकत्रीभूतं स्याच्चेत्तर्हि मलिनमतोऽसमीचीनं जायते।

† पारियात्रः पर्वतभेदः तत्रप्रभवा नद्यो द्विविधाः तड़ागजाः पथ्याः, दरीजा दोषला इति डल्हणः।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

झील या कुदरती तालाब का जल प्यास को नष्ट करनेवाला, बलवर्धक, कषाय, मधुर एवं लघु होता है। प्राकृतिक (बिना खोदे) जहाँ जल सदा इकट्ठा रहता है उसे सर (झील) कहते हैं। जब सर में पर्वतीय प्रदेश अथवा निर्जन प्रदेश से जल आकर एकत्र होता है तब वह अच्छा हो जाता है, क्योंकि यह जल कोमल, क्षारहीन प्रायः वर्षा के जल के समान होता है। वर्षा जल की अपेक्षा केवल घुलनशील द्रव्य इस जल में अधिक होते हैं। किन्तु यदि जल नीची जगहों में आकर एकत्र हुआ हो तो वह मलिन हो जाने से नहीं अच्छा होता है।

ताड़ागं जलम्

ताड़ागं वातलं स्वादु कषायं कटुपाकि च [सु० सू० अ० ४६]

तालाब का जल वातवर्धक, मधुर, कषैला और कटुपाकी होता है।

ताड़ागं जलं पानार्थं नातिसमीचीनं यतस्तज्जलं बद्धं प्रवाहरहितञ्च तिष्ठति। प्रायो जनास्तत्रैव स्नानं कुर्वन्ति, पशूनपि स्नापयन्ति, वस्त्राणि प्रक्षालयन्ति, मूत्रादिमलोत्सर्गमपि कुर्वन्ति, क्वचित्तु शवमपि प्रक्षिपन्ति। एवं बहुप्रकारैर्दूषणैस्तज्जलं दूषितं भवति। अत एवम्भूतजलपानेन गलगण्डादयो नानारोगा जायन्ते। यत्र कूपादीनां प्रशस्तं जलं न लभ्येत तत्र जलग्रहणार्थं द्वितीयः तडागो निर्माप्यः ततः पानार्थमेव जलं गृहीयुः। स्नानाद्यर्थमन्य एव पृथक् स्यात्। तड़ागे घट्टः पक्वेष्टिकादिभिश्चितो रचनीयः। राजा चास्य रक्षार्थे सदा प्रयतेत। तड़ागे मत्स्यानां जलवल्लरीणां चोपस्थितिरावश्यका जलशोधकत्वात्।

पोखरा या तालाब का जल पीने के लिए बहुत अच्छा नहीं होता है, क्योंकि वह बँधा हुआ और धाराहीन होता है। प्रायः इसमें मनुष्य स्नान करते हैं, पशुओं को भी नहलाते और कपड़ा धोते हैं, मूत्र मल को भी उसी में छोड़ते हैं, कहीं-कहीं मुर्दा भी फेंक देते हैं। इस तरह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अनेकों प्रकार से उसका जल दूषित हो जाता है। इसलिए ऐसे जल को पीने से गलगण्ड आदि अनेक रोग हो जाते हैं। जहाँ कूप आदि का अच्छा जल न मिलता हो वहाँ केवल पीने के लिए अलग तालाब बनावें जिसमें से पीने के लिए ही जल लें। स्नान के लिए दूसरा तालाब बनावें, इनका घाट पके ईंटों से बनावें, राजा इसकी रक्षा में सदा प्रयत्नशील रहे। तालाब में जलशुद्धि की दृष्टि से मछलियाँ एवं जल में पैदा होनेवाली लताओं शेवार आदि का रहना आवश्यक है।

प्रास्रवणं जलम्

कफघ्नं दीपनं हृद्यं लघु प्रस्रवणोद्भवम्। [सु० सू० अ०४५]

झरने का जल कफनाशक, दीपन, हृदय के लिए हितकारी एवं लघु होता है।

प्रास्रवणोदकं प्रायः शुद्धं भवति यदा पर्वतस्थपीतमृत्तिकास्तज्जलं प्रस्रवति तदा हानिकरं भवति।

झरने का जल प्रायः शुद्ध होता है, किन्तु जब पर्वतीय पीली भूमि में होकर वह जल गिरता है तब हानिकर होता है।

औद्भिदं जलम्

मधुरं पित्तशमनमविदाह्यौद्भिदं स्मृतम् [सु० सू० अ० ४५]

उद्भिद (सोते) का जल मधुर पित्तशामक और अविदाहि होता है।

तलस्थं जलमनुकूलपरिस्थितिं प्राप्य स्वभावत उद्भिद्योपरि निःसरति। एवं प्राय उपत्यकासु नदीसरःसमुद्रमध्यभूमिषु वा दृश्यते। तदेवमौद्भिदं जलं द्विविधं भवति, पृष्ठस्रोतस्कं गम्भीरस्रोतस्कञ्चेति।

भूमि के अन्दर स्थित जल अनुकूल परिस्थिति पाकर स्वभावतः ऊपर फोड़कर आता है, इस तरह प्रायः पर्वत के समीप, नदी, झील, समुद्र के मध्यवाली भूमि में देखा जाता है। इस तरह यह औद्भिद जल दो प्रकार का होता है पृष्ठस्रोतस्क, और गम्भीर-स्रोतस्क।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

(१) पृष्ठस्रोतस्कं जलं तद् भवति यत्पृथिव्या अप्रवेश्य स्तरोपरि विस्तृतसिकतामयस्तरेषु एकत्रीभवति। एतज्जलमेक नियमितप्रदेशपर्यन्तंतिष्ठति। तदेवोद्भिद्योपरिष्टान्निःसरति। अस्य स्थायित्वं नास्ति। प्रायः वर्षेतरर्तौ तु शुष्यत एव।

पृष्ठस्रोतस्क वह जल है जो भूमि के अन्दर अप्रवेश्य स्तर के ऊपर फैले हुए बालुकामय स्तर पर एकत्रित होता है। यह जल एक नियमित स्थल तक रहता है। वही भूमि फोड़कर ऊपर से निकलता है। यह स्थायी नहीं रहता हैं। प्रायः वर्षा ऋतु के अतिरिक्त ऋतुओं में सूख जाता है।

(२) गभीरस्रोतस्कं जलं तद् भवति यद् भूगर्भस्थखटिका-सिकताशिलामयस्तरतो बलाद्विभिद्योपरि निःसरति। एतज्जलं निर्मलं स्वच्छञ्च भवति। यत उद्भेदकाले मार्गस्तरेष्वेव परि-सुतं सुपूतं सदुपर्यायाति। इदम्प्रायः स्थायि भवति। अस्य रक्षा-र्थमभितोवृत्ताकारैकोच्चपरिखा इष्टिकादिभिः कार्या। यथा मलमूत्र तुषोत्कारादिमिश्रितं भूपृष्ठस्थं जलं सङ्गस्य तज्जलं दूषयितुं न शक्नुयात्। अस्यसन्निकटे शष्पादीनि न स्युः किन्तु किञ्चिद्दूरे धूल्यादिभ्यो रक्षणार्थमवश्यमेव स्युः। अस्य सन्निहितेऽश्वशाला-गोशालादीनि न स्युस्तथा पशवः जलपानाद्यर्थं न आगच्छेयुः। यतः सर्वदा शुद्धं जलं सुपेयं तिष्ठेत्।

यस्मिन्नौद्भिदे जले गन्धकादीनामंशो भवति, यच्च लवणमयं भवति तत् 'खनिजस्रोतस्कम्' इत्युच्यते। तज्जलमपेयं भवति।

गम्भीरस्रोतस्क वह जल है जो भूमि के अन्तर्भाग में रहनेवाली खटिका, बालू और पत्थर के स्तर को बलात् भेदन कर ऊपर आता है, यह जल निर्मल और स्वच्छ होता है। निकलते समय रास्ते में स्तरों से यह छन-छनकर साफ होकर ऊपर आता है। यह प्रायः स्थायी होता है। इसकी रक्षा के लिये चारों तरफ से ईंट की ऊँची वृत्ताकार खाईं बना देनी चाहिये जिससे मल-मूत्र, भूसी और कतवार मिश्रित भूमि भाग

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

का जल उस जल के साथ मिलकर उसे दूषित न कर दे। इसके समीप घासें भी न हों, किन्तु कुछ दूर पर धूलि से रक्षा करने के लिये घासें रहनी चाहियें। इसके पास घोड़शाला, गोशाला न होनी चाहिये और पशु भी जल पीने के लिए इसके अन्दर न आने पावें जिससे वह जल सदा शुद्ध, पीने योग्य रहे। जिस औद्भिद जल में गन्धक आदि खनिज द्रव्यों का अंश रहता है और जो नमकीन होता है उसे खनिज स्रोतस्क कहते हैं, वह पीने योग्य नहीं होता।

चौण्ड्यं जलम्

चौण्ड्यमग्निकरं रूक्षं मधुरं कफक्षुन्न च। [सु० सू० अ० ४५]

चौण्ड्य (चोंड़ा का) जल अग्निकारक, रुक्ष, मधुर होता है और कफ को नहीं उत्पन्न करने वाला होता है।

चुण्टी ईषद्गभीराऽवद्धा च भवति। अतो दूषितभूपृष्ठजलस्य प्रवेशात् सम्यक्छुद्ध्यभावाच्च तज्जलं नातिसमीचीनम्।

चुण्टी उसे कहते हैं जो थोड़ा गहरा हो और बँधा न हो (अर्थात् कच्चा कुआँ) इसमें दूषित भूमिभाग स्थित जल का प्रवेश होता है इसलिये ठीक शुद्ध न होने के कारण यह बहुत अच्छा नहीं होता है।

वैकिरादिजलगुणाः

वैकिरं कटु सक्षारं श्लेष्मघ्नं लघु दीपनम्।
कैदारं मधुरं प्रोक्तं विपाके गुरु दोषलम्॥
तद्वत्पाल्वलमुद्दिष्टं विशेषाद्दोषलन्तु तत्।
सामुद्रमुदकं विस्रं लवणं सर्वदोषकृत्॥ [सु० सू० अ० ४५]

वैकिर (जमीन पर छिटका हुआ या बालू के नीचे का) जल कटु, क्षार कफनाशक लघु और अग्निदीपक होता है, केदार (क्यारी या नहर) का जल मधुर, विपाक में गुरु और दोषों का वर्द्धक होता है। पल्वल (गड़ही के) जलका यही गुण कहा गया है। विशेष कर यह दोषों को बढ़ाता है। समुद्र का जल दुर्गन्धि, नमकीन और समस्त दोषों को बढ़ाने वाला है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

आनूपादिदेशभेदेनजलगुणाः

अनेकदोषमानूपं वार्य्यभिष्यन्दि गर्हितम्।
एभिर्दोषैरसंयुक्तं निरवद्यन्तु जांगलम्॥
पाकेऽविदाहि तृष्णाघ्नं प्रशस्तं प्रीतिवर्द्धनम्।
दीपनं स्वादु शीतञ्च तोयं साधारणं लघु॥

[सु० सू० अ० ४५]

आनूप देश का जल—अनेक दोषों से युक्त अभिष्यन्दि है अतः निंदित है। जांगल देश का जल—इन सब दोषों से हीन, श्रेष्ठ होता है पाक में अविदाहि, प्यास को दूर करने वाला और रुचिकारक है। साधारण देश का जल दीपन, मधुर, शीत एवं लघु होता है।

विद्यात्कूपतडागादीन् जाङ्गलानूपशैलतः।

[वा० सू० अ० ५]

जांगल आनूप व पर्वतीय देश के कूप तड़ाग आदि का जल भी उस देश के अनुसार ही जानना चाहिये।

कूपादीनां सप्तानां जांगलादिदेशस्थत्वाद् गुरुत्वलघुत्वे वेदितव्ये। अर्थाद्यथोक्तलक्षण आनूपे स्थिताः कूपादयो गुरवः। जाङ्गलेस्थिताश्च आनूपापेक्षया लघवो बहूदकसम्बन्धाभावात्। तेभ्योजांङ्गलेभ्यः पर्वतस्थानां कूपादीनामतिलघुत्वमुदकानामत्यन्ताभावात्।

कूप आदि सातों का जल जांगल-आनूप देश भेद से गुरु और लघु जानना चाहिये। अर्थात् आनूप देशस्थ कूपादि का जल गुरु, जांगल देश स्थित कूपादि का जल आनूप देश की अपेक्षा लघु होता है, क्योंकि अधिक जल से सम्बन्ध नहीं रहता है। पर्वतस्थ कूपादि का जल, जल की अत्यन्त कमी के कारण जांगल देश की अपेक्षा अत्यन्त लघु होता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

भौमाम्बुग्रहणकालः

तत्र सर्वेषां भौमानां ग्रहणं प्रत्युषसि, तत्रहि अमलत्वं शैत्यञ्चाधिकं भवति, सएव चापां परो गुण इति।

[सु० सू० अ० ४५]

सभी भूमिस्थ जल को बड़े सुबह लेना चाहिए। उस समय वह स्वच्छ, अधिक शीत होता है और यही जल का सबसे श्रेष्ठ गुण है।

जलस्य निक्षेपणम्

सदैव जलं स्वच्छे ताम्रपात्रे रीतिपात्रे कांस्यपात्रे वा भृत्वा रक्षणीयम्। धूलिमृत्तिकादिभ्यो रक्षार्थं पात्रमुखमावृतमेव कार्यम्। सोपानसमीपे न कदापि जलपूर्णपात्रं स्थाप्यं यतस्तत्र गमनाऽऽगमनेन धूलिपतनं सम्भाव्यते। तथैव स्नानागारेऽपि न स्थाप्यं यतः सम्भवोऽस्ति तत्र दूषितवायुः समाविशेत्। उक्तपात्रेषु स्थापनेन ग्रीष्मकाले जलमुष्णीभवति। अतस्तदा मृत्पात्रे स्थाप्यम् किन्तु ससूक्ष्मछिद्रत्वाद्दूषितवायुसमावेशशङ्क्या तस्य परिवर्तनं शीघ्रं शीघ्रं सदा कार्यम्। समित्पात्रेषु न क्वापि स्थाप्यं यतस्तानि सत्वरं विशीर्य विकृतानि भवन्ति।

जल को सदा स्वच्छ ताम्र, पीत्तल, कांसा के पात्र में रखना चाहिए। धूल एवं मिट्टी आदि न पड़ जाय, अतः पात्र के मुख को बन्द कर देना चाहिए। सीढ़ी के समीप या नीचे भरा हुआ जलपात्र कभी नहीं रखना चाहिये, ऐसा करने से आने-जाने के कारण उसमें धूल का गिरना अवश्य होता है। इसी प्रकार दूषित वायु के प्रवेश हो जाने के भय से स्नान गृह में भी नहीं रखना चाहिये। उपरोक्त पात्र का जल ग्रीष्मकाल में गरम हो जाता है अतः उस समय मिट्टी के पात्र में रखना चाहिये। किन्तु उसमें सूक्ष्म छिद्र होने से दूषित वायु के प्रवेश की शंका रहती है, अतः शीघ्र-शीघ्र ही उसको बदलते रहना चाहिये। लकड़ी के पात्र में जल कभी नहीं रखना चाहिये क्योंकि वे शीघ्र सड़कर विकृत हो जाते हैं।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

पञ्च निक्षेपणानि* भवन्ति

तद्यथा फलकं, त्र्यष्टकं, मुञ्जवलय, उदकमञ्चिका शिक्यञ्चेति। एषु जलस्थापनेन भूम्यादिस्पर्शाभावाद्दोषान्तरानुदयो भवति। अतो यथासम्भवं भूमौ न जलपात्रं स्थाप्यम्।

चौकी, त्रिकाष्ट, मुंज का गोलक, जलमचिया (बाँस या वेंत का बना हुआ जल रक्षणार्थ एक प्रकार का ऊँचा बकस) और शिकहर। यह पाँच जल रखने का स्थान है, इन जगहों में जल रखने से भूमि का स्पर्श नहीं होता है अतः वह दूषित नहीं होता है इसलिये यथासाध्य भूमि पर जल पात्र नहीं रखना चाहिये।

जलदूषणहेतवः†† तज्जा रोगाश्च

कीटाहिमूत्रविट्कोथतृणजालोत्कारावलिम्।
पङ्कपङ्कजशैवालहटपर्णादिसंस्तृतम्॥
सूर्येन्दुपवनादृष्टं जुष्टं च क्षुद्रजन्तुभिः!
अभिवृष्टं विवर्णञ्च कलुषं स्थूलफेनिलम्॥

---

* निक्षेपणं यत्र जलं निक्षिप्यते तत्। फलकं शाल्मलीकाष्ठादिविरचितम्। त्र्यष्टकमष्टास्रदण्डत्रयसंयोगः। मुञ्जवलयो मुञ्जादिविरचितो वलयाकारः। उदकमञ्चिका आकाशान्तराले निरन्तरनिहितवेत्रवैणवादिविरचित वेत्रगृहाद्यभिधाना। शिक्यं मुञ्जादिविरचितं प्रसिद्धम्। डल्हणः।

†† जलेषु बहुप्रकारा अशुद्धयः सन्ति तत्र प्राणिजाऽशुद्धिर्विसूचिकातिसारप्रवाहिकाऽऽन्त्रिकज्वरानुत्पादयति। वानस्पतिकाशुद्धिरतिसारप्रवाहिके जनयति। खनिजाशुद्धिपुलौहक्षारोऽग्निमान्द्यं यशदक्षारो विबन्धं, मग्नेशियमित्याख्यधातुक्षारो गलगण्डं, सीसकक्षारः नागविषाख्यरोगमुत्पादयति। कठोरघनाम्बुसेवनात्प्रायोऽजीर्णातिसारयोर्लक्षणानि दृश्यन्ते। प्रवाहिकाप्रपि प्रायः तज्जलपानेन भवति यद्रजःसम्पर्केण मलिनं स्याच्छवस्थादतपतं वा स्यादथवा प्रवाहिकारोगिमलसंगमेन दूषितं स्यात्। एवमा-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

विरसं गन्धवत्तप्तं दन्तग्राह्यतिशैत्यतः ।
अनार्तवञ्च यद्दिव्यमार्तवं प्रथमञ्च यत् ॥
लूतादिजन्तुविण्मूत्रविषसंश्लेषदूषितम् ।
तत्कुर्यात्स्नानपानाभ्यां तृष्णाध्मानोदरज्वरान् ॥
कासाग्निसादाभिष्यन्दकण्डूगण्डादिकानतः ।
तद्वर्जयेद् [अ० सं० सू० अ० ६]

कीट, सर्प, मूत्र विट्, सड़न, तृण-समूह और कतवार से युक्त होने से मलिन एवं पंक, कमल, सेवार, झोपड़ी से गिरी पत्तियों आदि से ढका हुआ और सूर्य, चन्द्रमा, वायु से अस्पृष्ट, छोटे-छोटे कीड़ों से युक्त, वार्षिक भूमिष्ठ जल, रंग में खराब, कलुषित, गाढ़ा, फेन वाला, रस-हीन, गन्ध वाला, अत्यन्त गरम, अधिक शीत होने से दाँत में लगने वाला, वर्षाकाल से भिन्न ऋतु का दिव्य जल, वर्षा ऋतु होते हुए भी पहली वृष्टि का जल, लूता (मकड़ी) आदि जीवों के विट्, मूत्र से युक्त तथा विष के सम्बन्ध से दूषित जल में स्नान करने एवं उसके पीने से प्यास, आध्मान, उदर रोग, ज्वर, कास, अग्निमान्द्य, अभिष्यन्द, कण्डू, और गलगण्ड आदि रोग होते हैं। अतः ऐसे दूषित जल का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

अभावे वा तोयस्यान्यस्य शस्यते ॥
जलशोधनरीत्या हि संशुद्धं विविधं पुनः ।

यदि शुद्ध जल न मिले तो जल शुद्ध करने की रीति से अनेक प्रकार से शुद्ध कर काम में लाना चाहिये।

तत्र यत् शैवालपङ्कहटतृणपद्मपत्रप्रभृतिभिरवच्छन्नं शशि-सूर्य्यकिरणानिलैर्नाभिजुष्टं गन्धवर्णरसोपसृष्टञ्च तद्दूष्यापन्न-

---

न्त्रिकज्वरो विसूचिका चापि तत्तद्रोगिमलसम्पर्कदूषितजलसेवनेन भवतः। तथा सूक्ष्मकृमिमिश्रितजलपानेन कृमिरोगा भवन्ति। त एव ककेरुक-केरुकेत्यादिनाम्ना प्रसिद्धाः। जलौका अपि कदाचिज्जलेन सहामाशयं गत्वा बहु रक्तं स्रावयतीत्यवगन्तव्यम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मिति विद्यात्। तस्य स्पर्शरूपरसगन्धवीर्य्यविपाकदोषाः षट् सम्भवन्ति। तत्र खरता पैच्छिल्यमौष्ण्यं दन्तग्राहिता च स्पर्श-दोषाः। पङ्कसिकताशैवालबहुवर्णता रूपदोषाः। व्यक्तरसता रस-दोषः। अनिष्टगन्धता गन्धदोषाः यदुपयुक्तं तृष्णागौरवशूलकफ-प्रसेकानापादयति स वीर्य्यदोषः। यदुपयुक्तं चिराद्विपच्यते विष्टभ्नाति वा स विपाकदोष इति। त एते आन्तरिक्षे न सन्ति।

जो सेवार-पंक-झोपड़ी के पत्ते-कमल-पत्र आदि से ढका हो, चन्द्रमा सूर्य की किरणों और वायु से अलक्षित हो, गन्ध, वर्ण और रस से हीन हो तो उसे खराब समझना चाहिए। उसके स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, वीर्य, विपाक छः दोष होते हैं। उसमें खर, पिच्छिल, उष्ण, और दाँत में लगना यह स्पर्श-दोष; पंक, वालू, सेवार और अनेक रंगों से युक्त होना वह रूप-दोष; व्यक्त रसता—रस दोष; बुरी गन्ध होना—गन्ध दोष; पीने पर भी प्यास, गुरुता शूल और कफप्रेसक होना—वीर्य दोष; पीने पर देर से पचना या कब्ज होना वह विपाक दोष कहा जाता है। ये सब दोष आन्तरिक्ष जल में नहीं होते हैं।

व्यापन्नं वर्जयेन्नित्यं तोयं यच्चाप्यनार्तवम्।
दोषसञ्जननं ह्येतन्नाददीताहितं तु तत्॥
व्यापन्नं सलिलं यस्तु पिबतीहाऽप्रसादितम्।
श्वयथुं पाण्डुरोगं च त्वग्दोषमविपाकताम्॥
श्वासकासप्रतिश्यायशूलगुल्मोदराणि च।
अन्यान् वा विषमान् रोगान् प्राप्नुयादचिरेण सः॥

[सु० सू० अ० ४५]

विकृत और अनार्तव जल का सर्वदा त्याग करना चाहिये; क्योंकि वह दोषजनक और अहितकारी है, इसे नहीं ग्रहण करना चाहिये। बिगड़ा हुआ जल जो बिना शुद्ध किए पीता है उसे शोथ, पाण्डु, चर्म-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

रोग, अपच, श्वास-काश, जुकाम, शूल, गुल्म, उदर और अन्य अनेक प्रकार के विषम रोग शीघ्र ही हो जाते हैं।

दूषितजलशोधनरीतयः

द्विविधं खलु जलस्य शोधनं भवति मार्जनं प्रसादनञ्चेति। तत्र मार्जनम्—

व्यापन्नानामग्निक्वथनं सूर्य्यातपप्रतापनं तप्तायः पिण्डसिकतालोष्ट्राणां वा निर्व्वापणमिति।

[सु० सू० अ० ४५]

जल शोधन दो प्रकार से होता है, एक मार्जन, दूसरा प्रसादन। मार्जन उसे कहते हैं–जिसमें विकृत जल को अग्नि द्वारा खौलाया जाय, सूर्य के ताप (धूप) से तप्त किया जाय, तप्त लोहे का पिण्ड या बालू या कंकड़ को गरम कर जल में बुझाया जाय।

तिर्यक् पातनयन्त्रेण पातितं जलमपि शुद्धतमं भवति किन्तु निःस्वादु जायते। अतः स्वादुताप्राप्त्यर्थमीषत्कालं वायुसम्पर्कं विवृतं रक्षणीयं पश्चाद्घटादौ स्थापनीयम्। क्वथनेन जलस्थाः खटिकालोहादिघनपदार्थानामंशाः, सजीवपदार्थांशाः विसूचिकान्त्रिकज्वराद्युत्पादकाः कृमयश्च प्रायेण विनष्टा भवन्ति। ये केचिज्जीवाणवोऽवशिष्टा अपि भवन्ति ते हानिं कर्तुं न शक्नुवन्ति। क्वथितजलस्य निःस्वादुताऽपनयनार्थमपि पूर्वोक्त विधिरनुसरणीयः।

तिर्यक् पातन (भभका) से उड़ाया हुआ जल भी अच्छा शुद्ध होता है, किन्तु स्वाद रहित होता है। इसे स्वादु बनाने के लिए थोड़े समय हवा में खुला रख कर घड़ा में भर लें। क्वथित करने से जल में रहने वाले खड़िया, लोह आदि घन पदार्थों के भाग, सजीव पदार्थों के अंश और हैजा—मन्थरक ज्वर आदि उत्पन्न करनेवाले कीटाणु प्रायः नष्ट हो जाते हैं, जो कोई जीवाणु बच भी जाते हैं तो वे हानि नहीं कर सकते

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

हुं। उबाले हुए जल को स्वादु बनाने के लिए ऊपर बतायी हुई विधियाँ करनी चाहिये।

प्रसादनम्

तत्र सप्त कलुषस्य प्रसादनानि भवन्ति। तद्यथा—कतक-गोमेदकविसग्रन्थिशैवालमूलवस्त्राणि मुक्ता मणिश्चेति।

[सु० सू० अ० ४५]

कलुषित जल को प्रसादन (स्वच्छ) करने के लिये सात वस्तुएँ होती हैं, जैसे—निर्मली, गोमेद, विसग्रन्थि, सेवारमूल, वस्त्र, मोती और मणि।

कतकस्यफलं (निर्मली) जलेघृष्ट्वा सम्मेलयन्ति किञ्चित् क्षणानन्तरं जलस्य मलमधो गच्छति। स्वच्छं चाम्बूपरि तिष्ठति। द्वेणैके जले रक्तिकैकं कतकस्य प्रयोगः कार्यः। विसग्रन्थि-शैवालमूलयोर्मात्रा नियता नास्ति बुद्ध्यावगन्तव्यम्। गोमेद-मुक्तामणीन् ईषत्कालं जलेऽवस्थाप्य शोधयन्ति।

कतक फल (निर्मली) को चन्दन की तरह जल में घिस कर जल में मिलाते हैं, कुछ देर बाद जल का गन्दा भाग नीचे बैठ जाता है और स्वच्छ जल ऊपर हो जाता है। बारह सेर तीन पाव चार तोला जल में एक रत्ती निर्मली डालनी चाहिये। कमल की भसीड़ और सेवार मूल की मात्रा नियत नहीं है। अपनी बुद्धि से विचार कर डाले। गोमेद, मणि और मोती कुछ देर जल में रखकर शुद्ध करते हैं।

अन्यान्यपि द्रव्याणिऽसन्ति यानि जलं प्रसादयन्ति जीवा-णूंश्च विनाशयन्ति यथा—स्फटिका, तुत्थम् इत्यादि।

※ "पोटाशियमपरमेगनेट" इत्याख्यपाश्चात्यमौषधमद्यत्वे जलप्रसाद-नार्थं विशेषलाभकारि दृश्यते। इदं विसूचिकाप्रभृतीनां जीवाणून् विनाश-यति। कूपजलशोधनार्थं भृशं प्रयुज्यते। घटैके जलेऽर्धपलमस्य सम्मेल्य कूपमध्ये प्रक्षेप्यं यतः सम्पूर्णकूपजले सम्मिलितं स्यात्। अनेन कूपोदकं पक्वजम्बूवद् रञ्जितं भवति। यदि घण्टाचतुष्टयं यावद्रागोऽयंस्थायी स्यात्तर्हिशुद्धमवगन्तव्यमन्यथा पुनरौषधं प्रक्षेप्यमिति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्फटिका-अस्या अम्बुना संयोगात् खटिकादीनामंशा ये प्रायः सर्वत्रजले प्राप्यन्ते, उपरि पृथग्भवन्ति अधश्च शुद्धं जलं तिष्ठति। द्रोणैके जले स्फटिकायाः त्रिरक्तिकातः द्वादशरक्तिकापर्यन्तं पर्याप्तमस्ति।

और भी द्रव्य हैं जो जल को साफ करते एवं जीवाणुओं का विनाश करते हैं। स्फटिका (फिटकिरी) इसका जल के संयोग से खटिका (खड़िया) का अंश जो जल में सर्वत्र रहता है वह ऊपर अलग आ जाता है और शुद्ध जल नीचे हो जाता है। यह बारह सेर तीन पाव चार तोला जल में तीन से बारह रत्ती तक पर्याप्त है।

तुत्थम्—इदं जलस्थान् विसूचिकाऽऽन्त्रिकज्वरयोः कीटाणून् विनाशयति तथा जलकिट्टमपि ह्रासयति। दशलक्षभागे जले भागैकस्य दशमांशात्पञ्चमांशपर्यन्तमेव तुत्थं पर्याप्तम्। एतदर्थमेव ताम्रपात्रे जलनिक्षेपणस्य विधिर्भारते प्रचलति।

तूतिया—यह जल में रहनेवाले हैजा, आन्त्रिक ज्वर आदि को उत्पन्न करनेवाले कीटाणुओं को मारता और जल किट्ट को नष्ट करता है। दस लाख भाग जल में १ भाग के दसवें से पाँचवें भाग तक तूतिया पर्याप्त है। इसलिए ही ताम्रपात्र में जल रखने की विधि भारत में प्रचलित है। क्योंकि तूतिया से तामा निकलता है।

परिस्रावणम्

घनवस्त्रपरिस्रावैः क्षुद्रजन्त्वभिरक्षणम्।

[अ० स०]

मोटे वस्त्र से छान लेने पर छोटे-छोटे कृमि दूर हो जाते हैं।

वस्त्रं स्वच्छं स्यात् तथा परिस्रावार्थं भूयो भूयः परिवर्तनीयम्।

कपड़ा साफ होना चाहिये और छानने के लिये बार-बार बदलते रहना चाहिये।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

त्रिघटयन्त्रम्—परिस्राव्य शुद्धजलग्रहणार्थमिदं श्रेष्ठतरम्, त्र्योघटाः त्रिदण्डयंत्रे क्रमशः उपर्यधः स्थाप्यन्ते। उपरि घटे सिकता जलञ्च निक्षिप्यते तद्घटाधश्छिद्रस्थवस्त्रेण शनैः शनै स्तदकं मध्यघटे परिस्रवति। मध्यघटे तु वानस्पतिककोकिलानि सिकता च स्थाप्यन्ते। एवं तत्स्रुतं जलं मध्यघटे भूत्वा तदधश्छिद्रसंलग्नवस्त्रेणाधःस्थघटे स्रवति तदेव जलं परिस्रुतं शुद्धं मन्यते। एतेषां घटानां मुखमावृतं सदा कार्यम्। घटस्थसिकता सदा कदा प्रायः क्वथनीया यतस्तत्रस्था अशुद्धयो रोगकीटाश्च नष्टा भवेयुः। कोकिलान्यपि प्रतिसप्ताहमेकदावश्यं परिवर्तनीयानि। अथवा जलेन सह सङ्क्वाथ्य रक्षणीयानीति।

त्रिघट यन्त्र—छान कर शुद्ध जल लेने के लिये यह श्रेष्ठ है। इसकी विधि यह है कि ३ घड़े को तीन दण्डों के सहारे ऊपर नीचे क्रम से रक्खें। ऊपर के पात्र में बालू और जल रक्खें, इसमें नीचे के छिद्र में लगी कपड़े की बत्ती से जल छन कर मध्य घड़े में चूता है, बीच के घड़े में लकड़ी का कोयला और बालू रखते हैं जिसके नीचे ऊपर के घड़े की भाँति छिद्र में लगे कपड़े से जल छन कर तीसरे घड़े में चूता है इस तरह छन कर तीसरे घड़े में आया जल शुद्ध माना जाता है। इन घड़ों का मुख बन्द होना चाहिये। घड़े की बालू को कभी-कभी खौलाना चाहिये। जिससे उसकी अशुद्धि एवं रोग-कीटाणु नष्ट हो जायँ। कोयला दो सप्ताह में दूसरा बदलना चाहिये अथवा जल के साथ उबाल कर रखना चाहिये।

वृहद्राशिकजलस्य प्रसादनम्

वालुकीयजलप्रसादनयन्त्रम्*—अस्यप्रयोगः प्रायेण नद्यादि वृहज्जलाशयतटस्थनगरे क्रियते। प्रथमत एकस्मिन् सुरक्षिते

* अद्यत्वे एकं कलाजलप्रसादनयन्त्रं प्रचलितं वर्तते। येनालस्थान हि शीघ्रतरं जलं प्रसाद्यते। अत्रैको रासायनिकपदार्थः सम्मेलनार्थमावश्यको भवति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

जलाधारे नद्यादेरुदकं गृहीत्वा सञ्चीयते। तत्र २४-४८ होरा-पर्यन्तं जलस्थित्या तन्मलिनीकारकस्थूलपदार्थकणाः तले गत्वा-पविशन्ति। ते तलस्था मलाः समये समये निष्कृष्यापनेतव्याः अतएवानेके जलाधाराः स्युः। ततः तज्जलं द्वितीयजलाधारे निःक्षिप्यते। तदेव 'वालुकीयजलप्रसादन यन्त्रम्' इत्युच्यते। एतदिष्टिकासीमेण्टनिर्मितंसुविस्तारायामोत्सेधं चतुष्कोणं भवति। अस्य तले इष्टिकारचितेन स्तरद्वयेनैवम्भूता नाल्यो निर्मीयन्ते, यत्र प्रस्रुतं निर्मलीभूतं जलं सुखं वहेत्। तदुदकस्य वहिर्निष्कासनार्थं तत्र नलः संयोज्यते। तलस्थस्तरयोरुपरि द्विहस्तोत्सेधं वृहत्क्षुद्रक्रमानुसारेण पाषाणलोष्ट्राः संस्थाप्यन्ते। ततः तदुपरि सार्धहस्तोच्छ्रयं सूक्ष्मसिकतास्तरं विस्तार्यते। तदु-परि प्रथमजलाधाराज्जलं नीत्वा हस्तचतुष्टयोच्छ्रयं प्रपूर्यते। एवं सति द्वित्रिदिवसानन्तरं वालुकास्तर एकंतनुकिट्टपटलमुत्पद्यते। यज्जलप्रसादने विशेषोपयोगि भवति। कतिपयकालप्रयोगानन्तरं यदि जलकिट्टपटलस्योपरिस्थिता जलप्रसादने वाधास्यात्तर्हिसि-कताया उपरितनस्तरस्य किञ्चिद्भागः पृथक्कार्यः। एवं भूयो भूयः कृते यदि सिकतास्तरस्य गाम्भीर्यं हस्तादूनं स्यात्तर्हि समस्तवालुका अपनीयान्याः प्रपूरणीयाः। अनेन जलप्रसादन-यन्त्रेण प्रसाद्यमानस्य जलस्यगतिः प्रतिहोरं षडङ्गुलतोऽधिका न स्यात्।

वालुकीय जलप्रसादन यन्त्र—इसका प्रयोग प्रायः नदी एवं बड़े जलाशय के समीपवाले नगर में किया जाता है। पहले किसी सुरक्षित जलाधार में नदी के जल को संचित करते हैं। वहाँ उसे २४ से ४८ घंटे तक रखते हैं इससे जल के मलिन-कारकस्थूल पदार्थ नीचे बैठ जाते हैं। जिसे समय समय पर बाहर निकालते हैं इसलिये जल रखने का अनेक आधार होना चाहिये। फिर उस जल को दूसरे जलाधार में रखते हैं। इसी को

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

बालुकीयजलप्रसादनयन्त्र कहते हैं। यह ईंट, सीमेण्ट से बना लम्बा चौड़ा ऊँचा चौकोर होता है। इसके नीचे के भाग में ईंट से बनी हुई दो सतहों से इस प्रकार नालियाँ बनी होती हैं जिससे स्वच्छ छना हुआ जल आसानी से निकल जाय। उस जल को बाहर निकालने के लिये नल लगाते हैं। नीचे के स्तर से ऊपर दो हाथ ऊँचा बड़े-छोटे पत्थर के टुकड़े क्रम से रखते हैं फिर उसके ऊपर डेढ़ हाथ ऊँचा पतला बालू बिछा देते हैं उसके ऊपर पहले जलाधार से जल लाकर चार हाथ ऊँचाई तक भरते हैं। ऐसा करने पर दो-तीन दिन के बाद बालू के स्तर पर एक पतला किट्ट पटल उत्पन्न होता है जो जल साफ करने में विशेष काम आता है। कुछ समय के बाद यदि किट्ट पटल के ऊपर रहने से जल साफ करने में बाधा हो तो बालू के उपरी स्तर के कुछ भाग को अलग कर दें। इस तरह बार-बार करने पर यदि बालू का स्तर एक हाथ से कम गहरा हो जाय तब उस समस्त बालू को निकालकर दूसरा बालू भर देना चाहिये। इस जलप्रसाधन यन्त्र से साफ किये हुए जल की गति प्रति घण्टे छ अंगुल से अधिक न होनी चाहिये।

जलगन्धनाशनोपायाः

नागचम्पकोत्पलपाटलापुष्पप्रभृति[1]भिश्चाधिवासनमिति।
सौवर्णे राजते ताम्रे कांस्ये मणिमयेऽपि वा।
पुष्पावतंसं भौमे वा वा सुगन्धिसलिलं पिवेत्॥

[सु० सू० अ० ४५]

सोना, चाँदी, ताम्र, काँसा, मणि, (स्फटिक) या मिट्टी के पात्र में रख कर पुष्प से वासित कर सुगन्धित जल पीना चाहिये। नागकेशर, चम्पा, नीलोफर गुलाब आदि पुष्पों से वासित करने से जल की दुर्गन्धि नष्ट हो जाती है और वह सुपेय हो जाता है।

१ प्रभृतिशब्देन करवीरमल्लिकाजात्यादिपुष्पाणाम् ग्रहणम्।

CC-0. JangamWadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

नगरेषु शुद्धजलप्रापणम्

नगरेषु नदीसरस्तडागवृहत्कूपाद्यन्यतमजलाशयतो जलं प्राप्यते। तदम्बु प्रथमतः जलप्रसादनयन्त्रेण शुद्धीकृत्यैकस्मिन् शुद्धजलसञ्चयने निधीयते। तत्सम्बद्धावृतनलद्वारोदकं सर्वत्र दीयते नगरस्य निम्नस्थलस्थत्वे भूम्याकर्षणशक्त्या; उच्चस्थलस्थत्वे च विशिष्टकलाशक्त्या जलप्रापणं क्रियते। जलसञ्चयनायतनमेतावद्भवेत् यन्न्यूनातिम्यूनमष्टाहं यावन्नगर अपः प्रापयितुं शक्नुयात्। प्रतित्रिमासं सञ्चयनं निर्मलीकार्यम्। सञ्चयनसम्बद्धा नगरगामिनो नलकाः (प्रधानाः) सार्द्धचतुरङ्गुलाऽन्यून-व्यासकाः लौहनिर्मिता अन्तः श्लक्ष्णाऽभवन्ति।

शहरों में नदी, सर, तालाव बड़े कूप आदि किसी भी जलाशय से जल लेते हैं। पहले जल-प्रसादन-यन्त्र से शुद्ध कर एक शुद्ध जल संचित करने के लिये निर्मित स्थान में रखते हैं फिर बड़े-बड़े नलों द्वारा सब जगह देते हैं। शहर के नीचे के भागों में भूम्याकर्षक शक्ति से, ऊँचे भागों में विशेष यन्त्र की शक्ति द्वारा प्राप्त करते हैं। जल संचय करने का पात्र इतना बड़ा होना चाहिये जिसमें न्यूनतम आठ दिन तक शहर को जल देने में समर्थ हो सके। तीन-तीन मासपर जलसंचयन को साफ करना चाहिये, उस वृहत्पात्र से निकलने वाला प्रमुख नल कम-से-कम साढ़े चार अंगुल मोटा लोहे का अन्दर चिकना होना चाहिये।

एते मार्गधरातलाद् द्विहस्तगाम्भीर्ये स्थले विस्तार्यन्ते। तत्संबद्धाः प्रतिगृहगामिन्यो नागलोहान्यतरनिर्मिता अनेका नलिका भवन्ति। शीघ्रनाम्यत्वात् सीसकनलिका भृशमुपयुज्यन्ते। यावच्छक्यं तासामुपयोगो न कार्यः यतः सततोपयोगेन

❀ लोहनलकाभ्यन्तरीयभागः कोलतारसर्जरसातसीतैलनिर्मितेन (Angussmith colutsan) द्रवेणालिप्य श्लक्ष्णीक्रियते।

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कदाचित् सीसकांशस्य जलेघुलितत्वान्नागविष†नामकरोगोत्पत्तिः सम्भवेत्।

ये नल रास्ते के धरातल से दो हाथ नीचे फैलाये जाते हैं। इससे प्रत्येक घर को जाने वाली शीशा (नाग) अथवा लोहे की अनेक नली निकाली जाती है। शीघ्र नम्य होने से शीशा की नली का उपयोग अधिक होता है किन्तु इसका प्रयोग यथासम्भव नहीं करना चाहिये क्योंकि शीशे का अंश जल में घुलनशील होने से नाग-विष नामक रोग उत्पन्न हो सकता है।

एता नलिका मलवाहिनीसकाशे न भवेयुः। यतः तद्दूषितवायुद्वारा शुद्धजलस्यापि दोषवत्त्वमापद्यते।

ये नलियाँ मल-मूत्र वहन करने वाली नालियों के समीप न होनी चाहिए क्योंकि उनकी अशुद्ध वायु के द्वारा शुद्ध जल भी दूषित हो जाता है।

दीनजनार्थं मार्गेष्वपि किञ्चित् किञ्चिद्दूरे जलकलाप्रबन्धः कार्यः। एताः कलाः स्वयं नियमनशीलाः प्रेरणया च स्वल्पजलदायिन्यः स्युः।

दीन जनों के लिए मार्ग में कुछ-कुछ दूरी पर कल का प्रबन्ध करना चाहिए। ये कल स्वयं बन्द होनेवाली और दबाने से थोड़ा जल देनेवाली हों।

यत्र जलाधिक्याभावे शुद्धजलं प्रापयितुमशक्यं, तत्र शुद्धाशुद्धजलप्रदानस्य पृथक्पृथक् प्रबन्धः क्रियते। भोजनपानाद्यर्थं शुद्धं जलं किञ्चित्कालं दीयते। तथा मार्गसिञ्चनार्थं मलनाल्यादिस्वच्छीकरणार्थञ्चाऽशुद्धं जलं दीयते। परन्तु नैतद्वरं, यतः सम्भवोऽस्ति यत्कदाचिद् विस्मृत्या शुद्धजलनलिका अशुद्धजलनलकैः सह संयुज्येत्। तथाऽशुद्धजलं पानार्थं प्रयुज्येत्।

† नागविषारूपरोगेऽग्निमान्द्यमलावरोधारोचकगात्रावसादनवृक्कहृदयमलकदोषादीनि भवन्ति।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

नगरे जलप्राप्तणार्थं द्विधाप्रबन्धः क्रियते सन्ततोऽसन्तत-श्चेति। सन्ततेऽहोरात्रमविच्छिन्नं जलं प्राप्यते। परन्त्वसन्तते नियतसमय एव। सन्ततेव्यर्थजलव्ययस्य विशेषसम्भावना भवति। जलमापकयन्त्रद्वारा तज्ज्ञानं कृत्वाऽवरोद्धुं शक्यते। असन्तते न तावज्जलं व्येति। तथापि नेयं पद्धतिः श्रेष्ठा, तत्र-रिक्तावस्थायां सन्निहितमलनाल्यादितो दूषितवाय्वाद्यागमन-भयात्।

जहाँ जिस नगर में जल की कमी के कारण शुद्ध जल न प्राप्त हो सके वहाँ शुद्ध और अशुद्ध जल देने का अलग-अलग प्रबन्ध किया जाता है। शुद्ध जल खाने-पीने के लिए कुछ समय तक देते हैं और अशुद्ध जल मार्ग धोने के लिए तथा मल जाली आदि साफ करने के लिये दिया जाता है।

किन्तु यह ठीक नहीं है, क्योंकि यह सम्भव है कि कभी भूल से शुद्ध जल की नली अशुद्ध जल की नली से मिल जाय तो अशुद्ध जल पीने के लिए प्रयुक्त हो जायगा। शहरों में जल देने का दो प्रबन्ध है। एक सन्तत और दूसरा असन्तत। सन्तत में दिन रात लगातार जल प्राप्त होता है। असन्तत में नियत समय पर ही प्राप्त होता है। लगा-तार जल आनेवाले में अधिक जल व्यय होने की विशेष सम्भावना होती है। उसे मीटर से जान कर बन्द भी कर सकते हैं। असन्ततविधि में उस प्रकार अधिक जल खर्च नहीं होता, किन्तु यह विधि अच्छी नहीं है, क्योंकि नलिका खाली होने पर मल-मूत्रादि की समीपस्थ नलियों से दूषित वायु का प्रवेश जल में होने का भय है।

उष्णोदकम्

दीपनं पाचनं कंठ्यं लघूष्णं वस्तिशोधनम्।
हिध्माध्मानाऽनिलश्लेष्मसद्यःशुद्धे नवज्वरे॥

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कासामपीनसश्वासपार्श्वरुक्षु च शस्यते ।

[वा० सू०]

उष्ण जल दीपन, पाचन, कण्ठ के लिए हितकर, लघु, उष्ण है और वस्ति-शोधन करता है। हिचकी, आध्मान, वात, कफ रोग, वमन-विरेचन आदि से शुद्ध होने के बाद तुरन्त, नव-ज्वर, कास, आमदोष, पीनस, श्वास और पसली के शूल में हितकारी है।

यत्काथ्यमानं निर्वेगं निःफेनं निर्म्मलं लघु ।
चतुर्भागावशेषन्तु तत्तोयं गुणवत्स्मृतम् ॥

[सु० सू० अ० ४५]

जो उबालने में वेग और फेन रहित हो जाय, स्वच्छ एवं लघु हो, चतुर्थांश शेष हो, वह जल गुणकारी होता है।

क्षीणपादत्रिभागार्द्धं देशर्तुगुरुलाघवात् ।
क्वथितं फेनरहितमवेगममलं हितम् ॥

[अ० सं०]

उबालने से क्षीण हो गया चतुर्थांश, त्रिभाग, आधा भाग जिसका ऐसा शेष किया हुआ फेन-वेग रहित स्वच्छ जल देश, काल, लघु और गुरु लाघव के भेद से हितकर होता है।

अष्टमेनांशशेषेण चतुर्थेनार्धकेन वा ।
अथवा कथनेनैव सिद्धमुष्णोदकं वदेत् ॥
श्लेष्मामवातमेदोघ्नं वस्तिशोधनदीपनम् ।
कासश्वासज्वरहरं पीतमुष्णोदकं निशि ॥

[शा० सं०]

अष्टम भाग, चतुर्थ भाग, आधा भाग शेष अथवा केवल खौला कर ही सिद्ध जल उष्ण जल कहा जाता है। रात में गरम जल पीने से श्लेष्म, आमवात, मेद रोग दूर होते हैं। वह वस्ति-शोधक, अग्निदीपक और कास-श्वास, ज्वर को दूर करता है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

श्रृतशीतं जलम्

अनभिष्यन्दि लघु च तोयं क्वथितशीतलम्।
पित्तयुक्ते हितं दोषे व्युषितं तत्त्रिदोषकृत्॥

[वा० सू०]

गरम कर शीत किया हुआ जल अनभिष्यन्दि, लघु होता है। वह पित्तयुक्त दोष में हितकारी होता है यदि वही बासी हो जाय तो त्रिदोष करता है।

दाहातिसारपित्तासृङ्मूर्च्छामद्यविषार्तिषु।
श्रृतशीतं जलं शस्तं तृष्णाच्छर्दिभ्रमेषु च॥
मद्यपानात्समुद्भूते रोगे पित्तोत्थिते तथा।
सन्निपातसमुत्थे च श्रृतशीतं प्रशस्यते॥
न च पर्य्युषितं देयं कदाचिद्वारि जानता।
अम्लीभूतं कफोत्क्लेशि न हितं तत् पिपासवे॥

[सु० सू० अ० ४५]

दाह, अतिसार, रक्तपित्त, मूर्च्छा, मद्य, विषजन्य रोग, प्यास, वमन, भ्रम, मदिरापानजन्य-रोग, पित्तजन्य और सन्निपातजन्य रोग में खौला कर शीत किया हुआ जल हितकारी है।

श्रृत शीत बासी जल को जानकर मनुष्य कभी रोगी को न दें, क्योंकि वह अम्ल हो जाने से कफ को उभारता है और प्यास के लिए भी हितकर नहीं होता है।

पाषाणरूप्यमृद्धेमजतुतापार्कतापितम्।
पानीयमुष्णं शीतं वा त्रिदोषघ्नं तृडर्तिजित्॥

[अ० सं० सू० अ० २]

पत्थर, चांदी, मिट्टी, सोना, रांगा इनको तपा कर पानी में डालने से गरम हुआ, अथवा सूर्यताप से गरम हुआ, जल चाहे उष्ण या शीत हो वह त्रिदोष और प्यास कष्ट को दूर करता है।

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भृतोदकस्य शीतीकरणोपायाः

सप्तश्शीतीकरणानि भवन्ति प्रवातस्थापनम्, उदकप्रक्षेपणम्, यष्टिकाभ्रामणम्, व्यजनम्, वस्त्रोद्धरणम्, बालुकाप्रक्षेपणम्, शिक्यावलम्बनञ्चेति ।

[सु० सू० अ० ४५]

जल को शीत करने के सात उपाय हैं--तेज हवा में रखना, शीत जल से भरे अन्य पात्र में गरम जलपात्र को रखना, दण्ड से विलोड़न करना, पंखे से हवा करना, कपड़े से अनेक बार छानना, बालुका में पात्र रख देना और शिकहर पर लटका देना ।

शीतोदकम्

शीतं मदात्ययग्लानिमूर्च्छाच्छर्दिश्रमभ्रमान् ।
तृष्णोष्णदाहपित्तास्रविषाण्यम्बु नियच्छति ॥

[वा० सू० अ० ५]

शीतल जल, मदात्यय, ग्लानि, मूर्छा, वमन, श्रम, भ्रम, प्यास, गर्मी, दाह, रक्तपित्त और विषजन्य रोग को दूर करता है ।

पार्श्वशूले प्रतिश्याये वातरोगे गलग्रहे ।
आध्मानेस्तिमितेकोष्ठे सद्यः शुद्धे नवज्वरे ॥
हिक्कायां स्नेहपीते च शीताम्बु परिवर्जयेत् ।

[सु० स० अ० ४५]

पसली के शूल, जुकाम, वातरोग, गलग्रह, आध्मान, कब्जियत;

---

* उदकप्रक्षेपणमिति सलिलपूर्णेभाजनेवस्त्रादिपोडिते आकण्ठमपरशीतसलिलनिक्षेपः, यष्टिकाभ्रामणं-यन्त्रयष्ट्यादिभ्रामणम्, व्यजनमिति व्यजनादिना वातलीकरणम्, वस्त्रोद्धरणमिति वस्त्रेणगालनम्, बालुकाप्रक्षेपः मृत्कपात्रस्य बालुकामध्ये निक्षेपणम्, शिक्यावलम्बनं प्रसिद्धम् (डल्हणः)

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

तुरन्त वमन-विरेचन आदि से शुद्ध होने पर, नव ज्वर में, हिचकी में और स्नेहपान करने पर शीतल जल नहीं पीना चाहिए।

दिवार्ककिरणैर्जुष्टं निशायामिन्दुरश्मिभिः।
अरूक्षमनभिष्यन्दि तत्तुल्यं गगनाम्बुना॥

[सु० सू०]

दिन में सूर्य-किरणों और वही रात में चन्द्र-किरणों में रक्खा हुआ जल अरूक्ष और अनभिष्यन्दि तथा आकाश जल के तुल्य हो जाता है।

तोयं हिमकरोद्भवम्।
अतिशैत्यगुरुस्थैर्यसंघातैः कफवातकृत्॥

[अ० सं०]

हिम (बर्फ) तथा ओलों का जल अत्यन्त शीत, गुरु, स्थिर एवं संघात युक्त होने से कफवात को उत्पन्न करने वाला होता है।

रक्षोघ्नं शीतलं ह्लादि ज्वरदाहविषापहम्।
चन्द्रकान्तोद्भवं वारि पित्तघ्नं विमलं स्मृतम्॥

[सु० सू०]

चन्द्रकान्त मणि से उत्पन्न जल भूतनाशक (जीवाणु-नाशक) शीतल, आनन्ददायक, ज्वर-दाह-विष, पित्त का नाशक और निर्मल होता है।

नालिकेरोदकं स्निग्धं स्वादु वृष्यं हिमं लघु।
तृष्णापित्तानिलहरं दीपनं वस्तिशोधनम्॥

[वा० सू०]

नारियल (डाभ) का जल, स्निग्ध, मधुर, वृष्य, हिम और लघु है। वह प्यास, पित्त-वात को दूर करता है तथा दीपन एवं वस्ति-शोधक होता है।

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पानीये विशेषविचारः

पानीयं न तु पानीयं पानीयेऽन्यश्च प्रदेशजे ।
अजीर्णे कथितञ्चामे पक्के जीर्णेऽपिनेतरत् ॥
शीते विधिरयं तप्ते त्वजीर्णे शिशिरं त्यजेत् ।

अन्य प्रदेशज जल पीने पर यदि जीर्ण न हुआ हो तो कोई विजातीय जल नहीं पीना चाहिये इसी तरह आम जल की अजीर्णता में खौलाया जल नहीं पीना चाहिये । पक्व जल के जीर्ण होने पर सजातीय भी कच्चा जल जब तक भोजन न करे नहीं पीना चाहिये । यह विधि आम या पक्व जल जो शीत हैं उनके लिये है । तप्त जल के अपच होने पर भी शीतल जल नहीं पीना चाहिये ।

पानीयं प्राणिनां प्राणा विश्वमेव च तन्मयम् ॥
अतोऽत्यन्तनिषेधेन न क्वचिद्वारि वार्यते ।
आस्यशोषाङ्गसादाद्या मृत्युर्वा तदलाभतः ॥
नहितोयाद्विनावृत्तिः स्वस्थस्य व्याधितस्य वा ।
केवलं सौषधं पक्वमामुमुष्णं हितञ्चतत् ॥
समीक्ष्य मात्रया युक्तममृतं विषमन्यथा ।

प्राणियों का प्राण जल है और संसार ही जलमय है, इसलिये जल का सर्वथा निषेध नहीं किया जा सकता, क्योंकि जल न मिलने से मुखशोष, अंगसादादि होता है और मरण भी हो सकता है । स्वस्थ या रोगियों का जीवन विना जल के नहीं चल सकता है । इसलिये केवल

---

* सर्वं पानीयमन्यप्रदेशजे पानीये अजीर्णे न पानीयं न पेयमिति । निर्जलदुष्टं भवति विजातीये पानीये पीते तज्जरणान्तं यावद्विजातीयं पानीयं न पेयमिति । यथा कौपे ताटाकं ताटाके कौपमिति । एवं सर्वत्र । तथा कौपे अपक्वे जले अजीर्णे क्वथितं पक्वं न पेयम् । तथा पक्वे क्वथिते शीतेऽशीतरदामं न पेयम् । सजातीयमपि पक्वे जीर्णेऽपि यावन्न भुक्तं तावदामन्न पेयम् इत्यर्थः । एष च विधिर्द्वयोरामपक्वयोः शीतयोः । तप्ते-ऽजीर्णे एव शीतन्त्यजेन्नतुजीर्णे ।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

पक्व या औषधि सिद्ध (शीत) तथा कच्चा (शीत ताजा अपक्व) या उष्ण (पकाया हुआ गर्म) किसी प्रकार के जल को विचार कर मात्रा-पूर्वक देने से हितकारी एवं अमृत तुल्य होता है, अन्यथा विष तुल्य है।

आमविष्टब्धयोः कोष्णं निष्पिपासोऽप्यपःपिवेत्।
यावत्यः क्लेदयत्यन्नमतिक्लेदोऽग्निनाशनः ॥

आम-अजीर्ण और विष्टब्ध-अजीर्ण रोग में प्यास न लगने पर भी ईषद् उष्ण जल पिये। जितना जल अन्न का क्लेदन कर सके उतना ही जल पीना चाहिये क्योंकि अधिक क्लेद होने से अग्नि का नाश हो जाता है।

विबद्धः कफवाताभ्यां मुक्तामाशयबन्धनः।
पच्यते क्षिप्रमाहारः कोष्णतोयद्रवीकृतः ॥

कफवात से स्तब्ध आहार गरम जल पीने से द्रवीभूत होकर और आमाशय के बन्धन से मुक्त होकर ग्रहणी में आकर शीघ्र ही पच जाता है।

अनवस्थितदोषाग्नेर्व्याधिक्षीणबलस्य च ॥
नाल्पमप्याममुदकं हितं तद्धि त्रिदोषकृत् ॥
तेजसः प्रतिपक्षत्वान्मन्दाग्निर्वर्जयेज्जलम्।
सर्वमेव तथास्यन्दप्लीहविद्रधिगुल्मिनः ॥
पाण्डूदरातिसाराशोंग्रहणीशोषशोफिनः ।
काममल्पमशक्तौ तु पेयमौषधसंस्कृतम् ॥
ऋते शरन्निदाघाभ्यां पिबेत्स्वस्थोऽपि चाल्पशः।

अनवस्थित दोष, अग्नि वाले और व्याधि के कारण क्षीण बल वालों को थोड़ा भी कच्चा जल पीने से अहित एवं त्रिदोषकारी होता है। अग्नि के विपरीत होने से आम जल मन्दाग्नि वाले को नहीं देना चाहिये तथा अभिष्यन्द, प्लीहा, विद्रधि, गुल्म, पाण्डु, उदर, अतिसार, अर्श, ग्रहणी, शोष, शोथ आदि रोगियों को भी जल नहीं देना चाहिये। अशक्तावस्था में औषध से पकाया हुआ ही जल थोड़ा देना चाहिये।

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शरद और ग्रीष्म को छोड़ कर अन्य ऋतुओं में स्वस्थ मनुष्य को भी थोड़ा-थोड़ा जल पीना चाहिये।

अरोचके प्रतिश्याये प्रसेके श्वयथौ क्षये।
मन्दाग्नावुदरे कुष्ठे ज्वरे नेत्रामये तथा॥
व्रणे च मधुमेहे च पानीयं मन्दमाचरेत्।

[सु० सू० अ० ४५]

अरोचक, जुकाम, मुख से पानी छूटने पर, सूजन, क्षयरोग, मन्दाग्नि, उदर, कुष्ट, ज्वर, नेत्ररोग, व्रण और मधुमेह में अल्प जल पीना चाहिये।

जलस्य बाह्योपयोगः

बाह्यकर्मणि जलं शुद्ध्यर्थमाधिक्येनोपयुज्यते। शुद्धता हि स्वास्थ्यस्य मूलम्। अतः जलं स्वास्थ्यरक्षणायात्यावश्यकंवस्तु। (१) प्रत्यहं मुखादिप्रक्षालनार्थं स्नानार्थञ्च जलमुपयुज्यते। अपरिमार्जनात्तत्वग्रोगा जायन्ते। शरीराच्च सदा दौर्गन्ध्यमायाति। स्नानाद्यर्थमपि स्वच्छं निर्दोषमेव जलं भवेत्। अन्यथा कण्डूवादयो बाह्या रोगाः प्रादुर्भवन्ति। तथोक्तं भगवता सुश्रुतेन—

बाहरी कार्य में शुद्धि के लिए जल को अधिक प्रयोग में लाते हैं क्योंकि शुद्धता ही स्वास्थ्य का मूल कारण है। इसलिए स्वास्थ्य रक्षा के लिए जल एक आवश्यक वस्तु है।

(१) प्रतिदिन मुख धोने के लिए और स्नान के लिए जल का प्रयोग करते हैं। स्नान नहीं करने से चर्मरोग हो जाता है एवं शरीर से दुर्गन्धित आने लगती है। स्नान के लिए भी स्वच्छ दोष रहित जल लेना चाहिए अन्यथा कण्डू आदि बाहरी चर्मरोग हो जाते हैं। जैसा कि भगवान सुश्रुत ने बताया है।

कीटमूत्रपुरीषाण्डशवकोथप्रदूषितम्।
तृणपर्णोत्करयुतं कलुषं विषसंयुतम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

n Public Domain. Digitizatlon by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

योऽवगाहेत वर्षासु पिवेद्वापि नवं जलम्।
स बाह्याभ्यन्तरान्रोगान् प्राप्नुयात् क्षिप्रमेवहि ॥
[सु० सू० अ० ४५]

कीट, मूत्र, मल, अण्डा एवं मुर्दे के सड़ जाने से दूषित, तृण-पत्ती कूड़ा आदि से कलुषित एवं विषयुक्त जल में जो स्नान करता है अथवा वर्षा में नया जल पीता है वह बाहरी एवं भीतरी रोगों को शीघ्र ही प्राप्त करता है।

स्वच्छोदकाभावे दूषितमपि शास्त्रोक्तरीत्या संशोध्योपयोगं कर्तुं शक्यते।

यदि शुद्ध जल न मिले तो अशुद्ध जल को ही शास्त्र की रीति से शुद्ध कर प्रयोग में लाना चाहिए।

(२) मार्गसिञ्चनार्थमुपयुज्यते। मार्गसिञ्चनादस्वास्थ्यकरा रजःकणा नोड्डीयन्ते तथा मार्गस्थजलमपि दृढं भवति। गन्तारश्च लभमानमन्दशीतवाताः प्रसन्ना भवन्ति।

मार्ग सिंचन के लिए भी जल का प्रयोग होता है, इससे अस्वास्थ्यकर धूलिकण उड़ने नहीं पाते हैं, मार्ग दृढ़ होता है और गमन करनेवाले मनुष्य मन्द एवं शीत वायु के स्पर्श से प्रसन्न होते हैं।

(३) वासस्थानचिकित्सालयविद्यालयपशुशालाश्वशालापुरीषालयविविधकार्यालयादिषूपयुज्यते। सर्वत्राऽव्यापन्नस्य शुद्धस्यैव जलस्योपयोगः कार्यः।

वास स्थान, चिकित्सालय, विद्यालय, पशुशाला, अश्वशाला, पाखाना आदि स्थानों को धोने के लिये सभी जगह शुद्ध जल का ही प्रयोग करना चाहिये।

विषदुष्टमार्गोदकादिज्ञानपूर्वकमात्मरक्षणम्

राज्ञोऽरिदेशे रिपवस्तृणाम्बुमार्गान्नधूमश्वसनान् विशेषैः॥
संदूषयन्त्येभिरतिप्रदुष्टान् विज्ञाय लिंगैरभिशोधयेच्च ॥

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शत्रु लोग अपने राजा के शत्रु देश के तृण, जल, रास्ता, अन्न, धूम और हवा आदि को विष से दूषित कर देते हैं। अतः आगे कहे जाने वाले विशेष लक्षणों से समझ कर उन्हें शुद्ध करना चाहिये।

दुष्टं जलं पिच्छिलमुग्रगन्धि फेनान्वितं राजिभिरावृतञ्च।
भण्डूकमत्स्यं म्रियते विहङ्गा मत्ताश्च सानूपचरा भ्रमन्ति॥
मज्जन्ति ये चात्र नराश्वनागास्तेछर्दिमोहज्वरदाहशोफान्।
गच्छन्ति तेषामपहृत्य दोषान् दुष्टं जलं शोधयितुं यतेत॥

विष से दूषित जल-लसदार, दुर्गन्धित, फेनयुक्त, रेखायुक्त होता है। उसमें मेढक, मछली मर जाते हैं, पक्षियाँ मतवाले एवं आनूपचर जीव भी मतवाले होकर इधर-उधर घूमा करते हैं। जो मनुष्य, घोड़ा, हाथी आदि उसमें स्नान करते हैं वे वमन, मोह, ज्वर, दाह, शोफ युक्त हो जाते हैं, इसलिये दोष को दूर कर दुष्ट जल को शुद्ध करना चाहिये।

धवाश्वकर्णासनपारिभद्राः सपाटलाः सिद्धकमोक्षकौ च।
दग्धाः सराजद्रुमसोमवल्कास्तद्भस्मशीतं वितरेत्सरःसु॥
भस्माञ्जलिञ्चापि घटे निधाय विशोधयेदीप्सितमेवमम्भः।

धव का फूल, साखू, विजयसार, पर्वतनिम्ब (फरहद), पाढ़ल, सँभालू, मोखा, अमलतास और सफेद खैर का भस्म बना कर दूषित जल वाले तालाब एवं कूप में छोड़ दें। ६ सेर ६ छटाँक २ तोला जल में अंजलि-मात्र (१६ तोला) उपरोक्त भस्म डाल कर, इस हिसाब से जितना चाहिये उतना जल शुद्ध कर लें।

क्षितिप्रदेशं विषदूषितन्तु शिलास्थलीं तीर्थमथेरिणं वा।
स्पृशन्ति गात्रेण तु येन येन गोवाजिनागोष्ट्रखरा नरा वा।
तच्छूनतां यात्यथ दह्यते च विशीर्य्यते रोमनखास्तथैव॥
तत्राप्यनन्तां सहसव्वंगन्धैःपिष्ट्वा सुराभिर्विनियोज्य मार्गम्॥
सिञ्चेत् पयोभिस्तु मृदन्वितैस्तं विडङ्गपाठाकटभीजलैर्वा॥

जब भूमि, चट्टान, तीर्थ (घाट), ऊसर भूमि, सवारी गाड़ी, ठेला

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

आदि विष से दूषित हो जाते हैं तो उसका स्पर्श करने वाला गौ, हाथी, घोड़ा, ऊँट, गदहा, और मनुष्य अपने जिस अंगों से स्पर्श करता है उसमें शोथ, दाह होता है एवं रोम नख गिर जाते हैं। इसलिये जवासा या अनन्त मूल को सर्वगन्ध द्रव्यों के साथ पीस कर सुरा में या पानी में मिलाकर मार्ग को सींचे अथवा मिट्टी में मिलाकर छिड़के या वायविडंग, पाठा और पहाड़ी नीम का क्वाथ बनाकर छिड़काना चाहिये। इससे भूमि का विष दूर हो जाता है।

तृणेषु भक्तेषु च दूषितेषु सीदन्ति मूर्च्छन्ति वमन्ति चान्ये।
विड्भेदमृच्छन्त्यथवा म्रियन्ते तेषां चिकित्सां प्रणयेद्यथोक्ताम्॥

तृण और भोज्य वस्तुयें, यदि विष से दूषित होती हैं तो उसे खानेवाले जीव दुखी होते, मूर्च्छित होते, वमन करते और विरेचन करते हैं अथवा मर जाते हैं। अतः यथोक्त विषघ्न चिकित्सा उनकी करनी चाहिये।

विषापहैर्वाप्यगदैर्विलिप्य वाद्यानि चित्राण्यपि वादयेत।
तारः सुतारः ससुरेन्द्रगोपः सर्वैश्च तुल्यः कुरुविन्दभागः॥
पित्तेन युक्तैः कपिलान्वयेन वाद्यप्रलेपो विहितः प्रशस्तः।
वाद्यस्य शब्देन हि यान्ति नाशं विषाणि घोराण्यपि यानि सन्ति॥

अथवा विष को दूर करने वाले अगदों को बाजे पर लेप कर चित्रविचित्र रूप से बजाना चाहिये। सुतार (निर्मल), तार (कपूर), वीरबहूटी समभाग और सबके समान कुरुविंदु (हिङ्गुल) को लेकर कपिला गौ के पित्त (गोरोचन) से पीस कर बाजे पर लेप करना चाहिये। ऐसे बाजे के शब्दों से भयंकर विष भी दूर हो जाते हैं।

धूमेऽनिले वा विषसम्प्रयुक्ते खगाः श्रमार्त्ताः प्रपतन्ति भूमौ।
कासप्रतिश्यायशिरोरुजैश्च भवन्ति तीव्रा नयनामयाश्च॥
लाक्षाहरिद्रातिविषाभयाब्दहरेणुकैलादलवल्ककुष्ठम्।
प्रियंगुकाञ्चाप्यनिले निधाय धूमानिलौ चापि विशोधयेत॥

[सु० क० अ० ३]

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

धूम और वायु में यदि विष का मिश्रण हो जाय तो पक्षीगण थक कर भूमि पर गिर जाते हैं और उससे कास, जुकाम, शिरःशूल एवं भयंकर नेत्र रोग होता है।

लाख, हरिद्रा, अतीस, हर्रे, नागरमोथा, रेणुका, इलायची, तेजपात, दालचीनी, कूट और फूलप्रियंगु के चूर्ण को हवा में रखकर धूम और वात की शुद्धि करना चाहिये।

(वायुः)

वायुसञ्चारप्रयोजनम्

वायुर्जीवनस्थितय एक अत्यन्तावश्यकः पदार्थः। भोजनं विना प्राणिनोऽनेकसप्ताहं जीवितुं शक्नुवन्ति तथैव जलं विनाऽपि कतिपयदिवसम्। परन्तु वायोरन्तरेण क्षणमपि जीवितुं न शक्नुवन्ति। श्वसनार्थं, रक्तशुद्ध्यर्थं, शरीरोष्णतारक्षणार्थञ्च वायुरेव कारणम्। आहारद्रव्याणां परिपाचनं श्वासाकृष्टाम्बरपीयूषो (ओषजन) पर्येव निर्भरम्। अतएव जन्मकालादेव श्वासाकर्षणस्यावश्यकता भवति। शुद्धवायुसेवन-

---

* शुद्धवायुमण्डलेऽनेकेवायव्यपदार्थाः मिश्रिताः सन्ति। तत्र मुख्यतया द्वौपदार्थौस्तः। ओषजनो नत्रजनश्चेति अतोऽतिरिक्तः स्वल्पमात्रया क्वेऽपिकतिचित्पदार्थाः सन्ति। यथा आर्गनः, कर्वनद्विओषितः, जलवाष्पम् इति। क्वचित्तु नाममात्रेण ओजोन, अमोनिया, जन्तुवनस्पत्यादेनामंशाश्चापि भवन्ति।

तत्र—ओषजनः	२०·६६
नत्रजनः	७७·११
आर्गनः	०·८०
कर्वनद्विओषितः	०·०३
जलवाष्पम्	१·०४
योगः	१००

जलवाष्पस्य नास्ति नियमः कश्चित्तस्य वृद्धिह्रासौ तापानुसारौ भवतः। 'ओजोनः' इत्येष सम्भवतः $\frac{१}{५०}$ भागः, अमोनिया कोटिभागे त्रिभागा रेखिका न भवति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

मेव स्वास्थ्यरक्षाया मूलम्। एवञ्चचिरेण दूषितवायुसेवनं पूर्वोक्तक्रियागुणवैपरीत्यादस्वास्थ्यमूलम्। तथा हि चरके—

जीवनस्थिति के लिए वायु एक आवश्यक पदार्थ है। भोजन के बिना कई सप्ताह मनुष्य जी सकता है और जल के विना भी कुछ दिनों तक जी सकता है, किन्तु वायु के बिना क्षणमात्र भी जीवित नहीं रह सकता। श्वास के लिए, रक्त शुद्धि के लिए और शरीर-ताप-रक्षा के लिए वायु ही कारण होता है। आहार का पचना श्वास द्वारा आकृष्ट आक्सिजन पर ही निर्भर है। इसीलिये जन्मकाल से ही श्वास लेने की आवश्यकता होती है। शुद्ध वायु का सेवन ही स्वास्थ्य का मूल है। इसी तरह बहुत काल तक दूषित वायु का सेवन पूर्वोक्त क्रिया और गुणों के विपरीत होने से अस्वास्थ्य का मूल कारण होता है—चरक संहिता में लिखा भी है।

---

†ओषजनएवप्राणप्रदो वायुः पूर्वोक्तगुणकः। यं पीत्वैव प्राणिमात्रस्य जीवनमनुवर्तते यदप्राप्त्याविनाशश्चभवति। नत्रजन ओषजनवृद्धिमवरोधयति। अन्यथा वृद्ध ओषजनोऽस्वास्थ्यकरः स्यात्। तथाऽयंवनस्पतीनां परिपोषणे सहायकतमः। आर्गन एको निष्क्रियपदार्थः। कर्बनद्विओषित इत्यस्यवायावस्थानं हानिकरं किन्तु स निःश्वासज्वलनभूमिदोषादिभिर्नियमितमात्रापेक्षया परिवर्धमानोऽपि वनस्पतीनां हरितीकरण (chlorophy) पदार्थ द्वारा प्रायः साम्यस्थितावायाति। अतः स पदार्थः सूर्यप्रकाशे कर्बन-द्वि-ओषितं विच्छेद्य कर्बनं स्वतन्तुनिर्माणार्थं गृह्णाति। ओषजनं च पृथक्करोति। अन्धकारे त्वतोविपरीतक्रिया भवति। अर्थाद्वनस्पतय ओषजनं गृह्णन्ति, कर्बन-द्वि-ओषितं तु परित्यजन्ति। अतएव नक्तं सेवेत न द्रुमम् इति सिध्यति। वर्षावात्ये चास्य मात्रां क्षपयतः। वर्षा तु स्वजते धोलयति। वात्या चेतस्ततो विकिरति। 'जलवाष्पम्' अस्य न्यूनतया रौक्ष्यमाधिक्याच्च शैत्यं भवति। इदमेव तारतम्येन तुषारादिरूपेण विपरिणम्यते। 'ओजोन' अयं प्रबलौषजनीकारकः। अयमोषजनस्य द्वितीय-

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वायुस्तन्त्रयन्त्रधरः प्राणोदानसमानव्यानापानात्मा, प्रवर्तकश्चेष्टानामुच्चावचानां, नियन्ता प्रणेता च मनसः, सर्वेन्द्रियाणामुद्योजकः, सर्वेन्द्रियार्थानामभिवोढा, सर्वशरीरधातुव्यूहकरः, सन्धानकरः शरीरस्य, प्रवर्तको वाचः, प्रकृतिः स्पर्शशब्दयोः, श्रोत्रस्पर्शनयोर्मूलम्, हर्षोत्साहयोर्योनिः, समीरणोऽग्नेः, दोषसंशोषणः, क्लेत्ता बहिर्मलानां, स्थूलाणुस्रोतसां भेत्ता, कर्ता गर्भाकृतीनाम्, आयुषोऽनुवृत्तिप्रत्ययभूतो भवत्यकुपितः।

वायु तन्त्र (नाड़ी आदि) यन्त्र (आशयादि) का धारण करने वाला है—प्राण, उदान, समान, व्यान, अपान स्वरूप है, ऊँची-नीची चेष्टाओं का प्रवर्तक है, मन का नियन्त्रण एवं प्रेरण करनेवाला है, समस्त इन्द्रियों को अपने व्यापार में लगानेवाला, समस्त इन्द्रियार्थों को ग्रहण करनेवाला, समस्त शारीरिक धातुओं को संगठित करने वाला, शरीर के अवयवों का सन्धान कराने वाला, वाणी प्रवर्तक है, स्पर्श और शब्द का कारण कर्ण और त्वचा का मूल, हर्ष एवं उत्साह का जनक, अग्नि का प्रेरक, दोषों का शोषक, मलों को बाहर निकालने वाला स्थूल एवं अणु स्रोतों का भेदक, गर्भ की आकृतियों का कर्ता और आयु के अनुवर्तन का प्रधान कारण अकुपित वायु होता है।

कुपितस्तु खलु शरीरे शरीरं नानाविधैर्विकारैरुपतपति,

स्वरूपः। अस्ययौगिकाणुरोषजनस्यपरमाणुत्रयेण निर्मीयते। रोगोत्पादकजीवाणुनाशकश्चायम्। योऽयं नगरे सघनवसत्यां च नोपलभ्यते। किन्तु समुद्रनदीतटेषु पर्वतीयस्थाने च प्राप्यते। अमोनिया—विकृतदूषितनत्रजनीय पदार्थैरुपलभ्यते।

जीववनस्पत्यादीनामंशाः—ऊर्णापरागकार्पासादीनां खनिजद्रव्याणां च अंशा वायाववलम्बिता भवन्ति। अमोनिया जन्तुवनस्पत्याद्यांशाश्च वायोरुदयो मन्यन्ते।

aiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

वलवर्णसुखायुषामुपघाताय मनोव्याहर्पयति, सर्वेन्द्रियाण्युपहन्ति विनिहन्ति गर्भान् विकृतिमापादयत्यतिकालं धारयति, भयशोकमोहदैन्यातिप्रलापान् जनयति, प्राणांश्चोपरुणद्धि।

[च० सु० अ० १२]

कुपित वायु शरीर में अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करता है। वल, वर्ण, सुख, आयु को नष्ट करता, मन को दुःखी करता है, समस्त इन्द्रियों को नष्ट करता है। गर्भ को नष्ट करता है, उसे विकृत करता एवं अधिक काल तक धारण करता है। भय, शोक, मोह, दीनता, अति प्रलाप को उत्पन्न करता है और प्राणों को भी नष्ट करता है।

दिशाभेदेन वातगुणाः

पूर्वः सुमधुरः स्निग्धो लवणश्चैव मारुतः।
गुरुर्विदाहजननो रक्तपित्ताभिवर्धनः॥
क्षतानां विषजुष्टानां व्रणिनः श्लेष्मलाश्च ये।
तेषामेव विशेषेण सदा रोगविवर्धनः॥
वातलानां प्रशस्तश्च श्रान्तानां कफशोषिणाम्।
तेषामेव विशेषेण व्रणक्लेदविवर्धनः॥

पूर्वी हवा—मधुर, स्निग्ध, नमकीन, गुरु, विदाही, रक्तपित्तकारक, एवं क्षत के रोगी, विषरोगी, व्रणरोगी और कफ के रोगियों के रोग को

वायुदूषणहेतवः-वायुमण्डले पूर्वोक्ता वायव्यादार्था नियतमात्रातोऽधिकाभवैयुः अस्वभाविका पदार्था वा तत्र सम्मिलिता भवेयुस्तदा वायूर्दुष्यति। साधारणतः निःश्वासजन्तुवनस्पत्युत्कुथन [सड़न] ज्वलनदुर्गन्धिवाष्पधूल्यादिवायव्यपदार्थैर्वायुर्दूषितो भवति।

(१) निःश्वासे प्रतिशतं भागचतुष्टयं 'कर्वन-द्वि-ओषित' इत्यस्य प्रायेण भवति। यो हि युवकपुंसः फुस्फुसादहोरात्रे १२ घनस्फीततः १६ घनस्फीतपर्यन्तं निःसरति। जलवाष्पकणा अपि फुप्फुसात् त्वग्भ्यश्च निःस-

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

बढ़ाने वाला होता है, वातप्रधान, श्रान्त एवं कफ-शोषी पुरुषों के लिए हितकारी है, किन्तु इन लोगों के भी व्रण में क्लेद-वर्द्धक होता है।

मधुरश्चाविदाहीच कषायानुरसो लघुः।
दक्षिणो मारुतः श्रेष्ठश्चक्षुष्यो बलवर्धनः।
रक्तपित्तप्रशमनो न च वातप्रकोपणः॥

दक्षिणी हवा—मधुर, अविदाही, कषायानुरस, हल्का, श्रेष्ठ, नेत्रहितकारी, बलवर्धक और रक्तपित्तशामक है। यह वातवर्द्धक नहीं होता है।

विशदो रूक्षपरुषः खरः स्नेहबलापहः॥
पश्चिमो मारुतस्तीक्ष्णः कफमेदोविशोषणः।
सद्यः प्राणक्षयकरः शोषणस्तु शरीरिणाम्॥

पश्चिमी हवा-विशद, रूक्ष, कठोर, स्निग्धता और बल को दूर करने वाला तथा तीक्ष्ण है। कफ और मेद को सुखाता, सद्यः प्राण (बल) क्षय कारक एवं शरीर का शोषक होता है।

रन्ति। तेषां मात्राऽहोरात्रे १५ कला [३० औंस] भवति। मनुष्यापेक्षया पशव आधिक्येन वायुं दूषयन्ति।

(२) उत्कुथ्यमानजन्तुवनस्पतिभ्यो दुर्गन्धिविषात्मकपदार्थाः (कर्वन-द्विओषितप्रभृतिगैसाः) निस्सरन्ति। पशवस्तु त्वक्पुष्पुसेभ्यः १२॥ कलातः २० कला यावद्वाष्पमहोरात्रे निस्सारयन्ति। वनस्पतिभ्योऽपि बहुवाष्पाणि निःसरन्ति।

(३) समित्कोकिलदीपकादीनां प्रज्वालनेन यो धूमो निःसरति सोऽपि वायुर्दुष्यति। प्रस्तरकोकिलप्रज्वालनात् कर्वन-'कर्वन-द्वि-ओषित'-कर्वनकोषित-गन्धक-गन्धकाम्ल-कर्वन-द्विगन्धित-जलादीन्युत्पद्यन्ते। काष्ठस्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

n Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

उत्तरो मारुतः स्निग्धो मृदुर्मधुर एव च।
कषायानुरसःशीतो दोषाणां चाऽप्रकोपणः।
तस्माच्च प्रकृतिस्थानां क्लेदनो बलबर्धनः।
क्षीणक्षयविषार्तानां विशेषेण तु पूजितः॥

[सु० सू० अ०]

उत्तरी वायु, स्निग्ध, मृदु, मधुर, कषायानुरस, शीत और दोषों को न कुपित करने वाला है। वह स्वस्थ पुरुषों के लिए क्लेद (स्निग्धता) कारक एवं वलवर्द्धक होता है और क्षीण, विष से पीड़ित पुरुषों के लिए हितकारी है।

वायुप्रवाहः

वायुषु सदा गतिर्भवति। यतो विकृतवायुः सत्वरं दूरीभवति शुद्धवायुश्चायाति। यो दूषितवायुरस्माभिर्निःश्वासद्वारा वहिः क्रियते स स्वच्छवातेन सङ्गम्य तनुर्जायतेऽतोऽस्माकं न हानिकरः सम्पद्यते। तदेतत् प्राकृतिकवायुप्रवाहोत्पत्तेः कारणं शैत्यमौष्ण्यञ्च वर्तते। तथा शैत्यौष्ण्ययोर्हेतुः—सूर्यप्रकाशोऽस्ति। औष्ण्याद्वायुः तनुतां लघुतां च लभते। स चोपरि-

---

समित्कोकिलानां च प्रज्वालनात्तु कर्वन-द्विओषितो वाष्पश्चेत्येवोत्पद्यते। दीपकेषु मृत्तैलज्वालनादधिकमात्रया कर्वनद्विओषितो जलवाष्पं धूमरजांसि चोत्पद्यन्ते। विद्युत्प्रकाशो न कमपि दोषमुत्पादयति।

(४) दुर्गन्धवाष्पाणि यानि मलमूत्रादिवाहिप्रणालीभ्यो निःसरन्ति तेषु नत्रजनः प्रतिशतम् ९४, ओषजनः प्रतिशतं २, कर्वन-द्वि-ओषितः प्रतिशतं ४ उपलभ्यन्ते। तथा तत्र संक्रामकरोगोत्पादकजीवाणवोऽपि प्राप्यन्ते।

(५) रोगोत्पादककीटाणुभ्योऽतिरिक्ता वायुषूड्डीयमानाः धूलिपरागखनिजद्रव्यताम्रलौहकांस्यादीनां सूक्ष्मकणाः त्वग्रोमनखपूयष्ठीवनादिसूक्ष्मांशाः

uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गच्छति। तत्स्थाने शुद्धः शीतो वायुरायाति। एवमेव वायुषु प्राकृतिकगतिर्नित्यं भवति। गृहेषु एवमेव वायुः प्रवहति। श्वासनिःश्वासाभ्यामन्यैर्ज्वलनहेतुभिर्वा ऽऽभ्यन्तरिकवायुरुष्णः तथा तनुर्भूत्वोपरि गच्छति तथा यत्स्थाने बाह्यःशुद्धशीतवायुरा-गच्छति। यदि बाह्याभ्यन्तरिकवातयोरुष्णतायामान्तर्यं न स्या तर्हि एवम्भूता गतिर्नोपपद्येत। यद्यप्येवं प्रकृतौ वायुशुद्धिप्रब-न्धोऽस्ति तथापि बृहन्नगरेषु तथा सदनेषु सम्यग्वायुशुद्धिकार्यं न भवति। अतस्तत्राशुद्धवायुनिष्कासनार्थं शुद्धवायुसञ्चारार्थं च कश्चिद् उपायः कर्त्तुं युज्यते। स च वातप्रविचार इत्युच्यते।

हवा में सदा गति होती है इसी कारण विकृत वायु शीघ्र ही दूर होता है और शुद्ध वायु आता है। जो दूषित वायु हम लोग श्वास द्वारा छोड़ते हैं वह स्वच्छ वायु में मिलकर हल्का हो जाता है। अतः हम लोगों को हानिकारक नहीं होता है। इस स्वाभाविक वायु के प्रवाह में शीत और उष्ण कारण होता है और शीत उष्ण में सूर्य प्रकाश कारण होता है, उष्णता से वायु पतला एवं हल्का होता है और वह ऊपर चला जाता है उसके स्थान पर शुद्ध शीत वायु आता है।

रोमान्तिकामसूरिकाविस्फोटकादीनांशुष्कत्वर्माणि च प्राप्यन्ते। प्रायेणैते भिन्नभिन्नस्थलेषूपलभ्यन्ते यथाचिकित्सालयादौ रोगोत्पादककीटाणवः, लौहकारादीनामापणौ लौहताम्रादीनां कणा इत्यादि।

अतः सदा स्वास्थ्यरक्षार्थमुपायः कार्यः। अर्थात्तत्स्थानेषु मुखनासिके वस्त्रेणाच्छाद्य कार्यं करणीयम्। अशनवेलायां च सम्यङ्मुखहस्तपादान् प्रक्षाल्य भोक्तव्यमित्यादि।

प्रकृत्या वायुशुद्धिः—पूर्वोक्तवर्णनैः स्पष्टं सिध्यति यत्कर्बनद्विओषिता-दिविषयव्यपदार्थाः प्रतिक्षणमुत्पद्यन्ते। ये हि वायुं दूषयन्ति। परन्तु चेदेवमेव सततं दूषितवायुः तिष्ठेत्तर्हि सर्वेऽपि म्रियेरन् तस्य श्वासकर्मान-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

इस तरह वायु में स्वाभाविक गति हमेशा होती है। घरों में वायु इसी प्रकार चलता है। श्वास निश्वास से और अन्यान्य ज्वलन के कारण भीतरी वायु उष्ण होकर एवं पतला होकर ऊपर चलता है उसके स्थान पर वाहरी शुद्ध शीत वायु का प्रवेश होता है। यदि वाहरी और भीतरी वायु के गरमी में अन्तर न हो तो ऐसी गति नहीं होगी! यद्यपि इस तरह प्रकृति में वायुशुद्धि का प्रवन्ध है तव भी वड़े नगरों, घरों में ठीक शुद्ध वायु का कार्य नहीं होता है। इसलिए वहाँ से अशुद्ध वायु निकालने और शुद्ध वायु के प्रवेश के लिए उपाय करना चाहिए। उसी उपाय को वातप्रविचार कहते हैं।

वातप्रविचारः *

निर्वाधमभितः शुद्धवायुवहनमित्यस्याभिप्रायः। स च द्विविधः वहिर्वातप्रविचारः अन्तर्वातप्रविचारश्चेति। वहिर्वातप्रविचारस्यायमभिप्रायःयन्नगरग्रामादिष्वभितः वायोः सञ्चरणम्। तदर्थं निम्नांकिता उपाया अवलम्बनीयाः—

र्हत्वात्। किन्त्वेतन्न भवति। प्रकृत्यैवैतदर्थमुत्तमः प्रवन्धः कृतः, अर्थाद्वायोः कर्वन-द्वि-ओषितं वनस्पतयो गृह्णन्ति, ओषजनं च स्वतो निष्कासयन्ति यत्सेवनात्स्वास्थ्यरक्षा भवति।

तथा चायमोषजनोदुर्गन्धिभिरैन्द्रियकपदार्थैःमिलित्वा तान् कार्बनिकाम्लामोनियादिषु विपरिणामयति। एते नव्यपदार्था वायुषु विस्तृता एतावन्तः तनवो भवन्ति येषामाघ्राणेन हानिर्न भवति केषाञ्चिदपिजन्तूनाम्। अतोऽतिरिक्तं घनाम्ब्वपि स्वेन सह वायव्यपदार्थान् पृथिव्यां पातयति।

दूषितवातजा रोगाः—दूषितप्रवातसेवनाच्छिरःशूलारोचकालस्यपांडुकासप्रतिश्यायश्वासमलावरोधाग्निमान्द्यकर्णनाददौर्वल्यादयो गदा जायन्ते।

*Ventilation.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वात प्रविचार का अर्थ है शुद्ध वायु का अवाधगति से चारों तरफ से बहना। यह दो प्रकार का होता है-वहिर्वात-प्रविचार और अन्तर्वात-प्रविचार। वहिर्वात-प्रविचार का अर्थ है नगर ग्राम के चारों तरफ वायु का प्रचार। इसके लिए निम्नांकित उपाय करना चाहिए।

(१) निवासगृहाणि पृथक्पृथगेकपंक्तौ भवेयुः।

(२) प्रत्येक सदनानां चतुर्दिक्षु विवृतं स्थानं भवेत्। असम्भवे तदग्रेऽवश्यं स्यात्। गृहमध्येऽङ्गणमप्यवश्यं कार्यम्।

एक श्रेणी में मकान अलग अलग होना चाहिए।

प्रत्येक घरों के चारों तरफ खुला स्थान होना चाहिए। स्थानाभाव हो तो अग्रभाग में खुला स्थान अवश्य हो। घरों में आङ्गन अवश्य होना चाहिए।

(३) राजमार्गवीथिकाः सुविस्तृताः स्युः।

(४) हर्म्याण्यतिसमुन्नतानि कार्याणि। तेषामुच्चता मार्गविस्तारानुकूला स्यात्।

सड़कें और गलियाँ खूब चौड़ी होनी चाहिए।

मकानों की छतें ऊँची होनी चाहिए और उनकी ऊँचाई रास्ते के विस्तार के अनुकूल हों।

(५) नगरेष्वनेकान्युद्यानानि तथा विवृतस्थानानि कार्याणि।

नगरों में अनेक बाग (टहलने योग्य) एवं खुला स्थान होना चाहिए।

(६) सरकेषु सदा जलं प्रकिरणीयं यतो धूलिर्नोड्डीयेत।

सड़कों पर जल का सर्वदा सिञ्चन होना चाहिए जिससे धूलि न उड़े।

(७) मलसङ्करादीनि समयोपर्युत्थाप्य मार्गवीथिका नित्यं स्वच्छीकार्याः।

यन्मध्यमामध्यगतं हि पर्व, तद्द्वादशं स्फीतमिति प्रसिद्धम्।
क्षीतेन सार्धैकमितेन हस्तः, मानाय बोध्यः पुरुषो वयस्थः॥
= Inch, स्फीतम् = Feet.

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

कूड़ा कर्कट समय से उठाकर गलियों को प्रतिदिन साफ करना चाहिए ।

(८) नाल्यो निरन्तरं स्वच्छीकृत्य जलेन प्रक्षाल्याः ।

नालियों को जल से हमेशा साफ करना चाहिए ।

(९) कार्यालयाः नगरेभ्यो बहिर्दूरे निर्मप्याः, नगरेषु न कदापि निर्माप्याः । यतस्तत्रत्या धूमा धूल्यादयश्च बहिर्निर्गच्छेयुः ।

फैक्टरी आदि कारखाने नगर से दूर होने चाहिए, नगर में कभी न बनावें, जिससे उनकी धूलि एवं धूम नगर से बाहर ही निकल जायें ।

एवं सदा नगरेषु वसतिषु शुद्धवायुप्रविचरणं दूषितवायु निर्गमनञ्च भवति, येन तत्रत्यजनाः सदा स्वास्थ्यमनुवर्तन्ते ।

इस तरह नगर एवं ग्राम में शुद्ध वायु का प्रचार और दूषित वायु का निर्गमन होता है, जिससे वहाँ के मनुष्य सदा स्वस्थ रहते हैं ।

अन्तर्वातप्रविचारः--इत्यस्य, गृहाभ्यन्तरे शुद्धवायोः प्रविचरणमशुद्धवायोश्च निर्गमनमित्यभिप्रायः । नगरग्रामादिषु सम्यग्बाह्यवातप्रविचारेण तत्रत्यगृहाभ्यन्तरेष्वपि सम्यग्वात प्रविचारो भवति । गृहेषु प्रतिकुटीरमभितो गवाक्षजालकादीनि वातायनानि कार्याणि ।

अन्तर्वात प्रविचार का अर्थ है, घर के अन्दर शुद्ध वायु का प्रवेश एवं अशुद्ध वायु का निर्गमन । यदि नगर और ग्राम आदि में बाहर शुद्ध वायु का प्रसार है तो वहाँ के घर के अन्दर भी शुद्ध वायु का भली भाँति प्रसार होना स्वभावतः सिद्ध है । इसके लिए घरों के प्रत्येक कमरों में झरोखे, जँगले आदि वातायन बनाना चहिए ।

शुद्धवायोरभीष्टराशिः*—प्रत्येक पुरुषाणां प्रतिहोरं प्रायः

---

*एकसहस्रघनस्फीतघनफलकस्थले प्रतिहोरं त्रिवारं वायुः परिवर्त्यते तदा त्रिसहस्रघनस्फीतशुद्धवातः समुपलभ्यते । तत्र विवृतस्थलेसम्यग्वात-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

३००० घनस्फीत † शुद्धवातस्यावश्यकता भवति येन सुस्वास्थ्यं लभ्यते।

योऽधिकं परिश्रमते तदर्थं ततोऽप्यधिकशुद्धवायुराशिर्भवेत्। स्त्रीणामपि ३००० घनस्फीतपरिमितः, बालकानांतु २००० घनस्फीतपरिमितः शुद्धवायुरावश्यकः।

शुद्ध वायु की मात्रा प्रत्येक पुरुष के लिए प्रति घण्टा ३००० तीन हजार घनफीट आवश्यक है जिससे स्वास्थ्य ठीक रहे। जो अधिक परिश्रम करता है उसके लिए इससे अधिक शुद्ध वायु की आवश्यकता होती है। स्त्रियों के लिए ३००० घनफीट और बालकों के लिए २००० दो हजार घनफुट शुद्धवायु की आवश्यकता होती है।

मनुष्यवत्पशूनामपि शुद्धवायोरावश्यकता भवति। पशवोऽपि शुद्धवायुसमाक्रान्तशालासु स्वस्था निवसन्ति। अतस्तेषां वाताभीष्टराशिज्ञानार्थं तच्छरीराभारो ज्ञातव्यः। साधा-

---

र्थविचरणं भवति तत्र प्रतिहोरं पंचषड्वारं वायुः परिवर्तते। अतएव तत्र गतिमनुज्यं ६०० घनस्फीतस्थानमेव पर्याप्तं भवति।

† वायुमण्डलस्य सहस्रभागे कर्वनद्विओषितस्य मात्रा ६ पर्यन्तं नाऽनत्यकरी भवति। किन्तु ततोऽधिकाऽस्वास्थ्यकरी संजायते। तद्वायौ दौर्बल्यमरतिश्चानुभूयते। विशुद्धवायौ क० द्वि ओ० मात्रा ११५० भागे १ भवति। अतः १००० घनस्फीतवायौ क० ओ२ यदि २ घनस्फीताधिकस्यात्तर्हि सा तस्य ग्राह्यमर्यादा मन्यते। साधारणतः प्रत्येकमनुष्यः प्रतिहोरायां ६ घनस्फीतं क० ओ२ परित्यजति। अतोनिम्नांकितरीत्या ज्ञातुं शक्यते यदेकजनार्थं प्रतिहोरमेतावच्छुद्धवायोरावश्यकता भवतीति—

$$\frac{१००० \times ६}{२} = ३००० \text{ घनस्फीताः}$$

अधिकपरिश्रमकर्तारोऽधिकं क० ओ२ परित्यजन्ति। तदनुसारेण तावदपीत्यमेव ज्ञातव्यम्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

रणनियमोऽयं यदर्धसेटक (Pound) शरीरभारं प्रति २५ घनस्फीतवायुर्भवेदिति ।

मनुष्यों की तरह पशुओं को भी शुद्ध वायु की आवश्यकता है। पशु भी शुद्ध वायु वाले घर में स्वस्थ रहते हैं। इस लिए उनके भी अभीष्टवायुराशिज्ञान के लिए शरीर का भार जानना आवश्यक होता है। साधारणतः १ पौंड के लिए २५ घन फीट शुद्धवायु की आवश्यकता होती है।

स्वस्थपुरुषापेक्षयारुग्णपुरुषेभ्योऽधिकशुद्धवायुराशिर्भवेत् । यतः स्वेदादिकं तेषामधिकं निःसरति। साधारणरोगिणां ३०५० घनस्फीतवायुरावश्यकः। संक्रामकरोगिभ्यः शीतलान्त्रिकज्वराद्याक्रान्तेभ्यस्तु ततोऽप्यधिको भवेत्।

स्वस्थ पुरुष की अपेक्षा रोगी को शुद्ध-वायु की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि पसीना आदि उसे अधिक होते हैं। सामान्य रोगियों के लिए ३०५० घन फीट वायु आवश्यक है और संक्रामक, शीतला, टायफाइड आदि रोगाक्रान्त रोगियों को इससे अधिक वायु की आवश्यकता होती है।

आवश्यकवातप्रविचरणार्थं प्रतिव्यक्त्यभीष्टस्थानम् *

एकजननिवासार्थमभीष्टस्थानम् १००० घनस्फीतघनफलकं भवेत्। यच्च दशस्फीतायतदशस्फीतविस्तृतदशस्फीतोन्नत गृहरूपेणोपलभ्यते। गृहेषु द्वाराणि, वातयनानि तथा जालकानि पर्याप्तानि भवेयुः। तानि च यथासम्भवमन्यान्यसम्मुखानि

---

* भगवतासुश्रुतेन सूतिकागारनिर्माणार्थमेकसूतिकार्थमष्टहस्तायतं चतुर्हस्तविस्तृतं गृहं लिखितम्। सम्भवतो यदि अष्टहस्तपरिमितमौन्नत्यमपि मन्येत चेत्तर्हि १२×१२×६=८६४ घनस्फीतघनस्थानमेकस्यार्थमेकपुरुषार्थं वा सुश्रुतमतेऽपि सिध्यति यदाधुनिकवैद्यमतसान्निध्यं द्योतयति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सुः। यतो वायोर्गमनागमने सौकर्यं स्यात्। श्वासनिश्वासाभ्यां ज्वलनेन च वायुरुष्णो लघुश्च भूत्वोपरि गच्छत्येतो दूषितोष्ण वायोर्निष्कासनार्थं गृहवितानसविधेऽनेके गवाक्षाः कार्याः। एवम्भूतैर्गवाक्षैर्दूषितवायुर्बहिर्निर्गच्छति तथा शुद्धवायुर्वातायन-मार्गेण समागच्छति।

एक मनुष्य के निवास के लिए १००० एक हजार घनफीट, घनफल वाला स्थान होना चाहिए, जो दश फीट लम्बा, दश फीट चौड़ा और दशफीट ऊँचाई वाले गुह से प्राप्त होगा। कमरों में दरवाजा, खिड़की और झरोखे आदि काफी होना चाहिए, यह प्रायः एक के सामने एक होना चाहिए जिससे वायु के गमन आगमन में आसानी हो। श्वास निश्वास, एवं अग्नि आदि के जलने से वायु, उष्ण और लघु होकर ऊपर जाता है। अतः दूषित वायु के निकल जाने के लिए छाजन या छत के समीप अनेकों झरोखे होना चाहिए। इस तरह झरोखों से अशुद्ध वायु जाता है और शुद्ध वायु आता है।

ग्रीष्मकालेऽतिप्रवातप्रखरतापाभ्यामात्मरक्षार्थं द्वारवाता-यनान्यनावृतानि क्रियन्ते। तदानीं शुद्धवायुप्राप्त्यर्थमशुद्धवायुनि-र्गमनार्थञ्चोपायद्वयं विधेयं भवति।

ग्रीष्म-काल में अधिक वायु एवं अधिक धूप से अपनी रक्षा के लिए खिड़की को बन्द रखना चाहिए। उस समय, शुद्ध वायु-प्राप्ति के लिए और अशुद्ध वायु निकालने के लिए दो उपाय किया जाता है।

अन्तःपथो बहिष्पथश्चेति। अन्तःपथेन शुद्धोवायुर्गृहाभ्य-न्तरे समायाति। बहिष्पथेनाशुद्धो वायुर्बहिर्निर्गच्छति। एवं गृहेषु सुखं वातप्रविचरणं भवति।

अंतः पथ और बहिष्पथ। अन्तः पथ से घर के अन्दर शुद्ध वायु आता है, बहिष्पथ से अशुद्ध वायु बाहर जाता है इस तरह घर के अन्दर सुखपूर्वक वायु का प्रसार होता है।

अन्तःपथः— अयमधिष्ठानात् ५–६ स्फीतोच्चैर्भवेत्। प्रवा-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

ताक्रमणप्रखरतापेभ्यो रक्षार्थमस्य मुखं वितानं (छत) प्रति कार्यम्। तथाऽस्य क्षेत्रफलं २४ वर्गपर्वात्मकमर्थादस्यायामः ६ पर्वात्मको विस्तारः ४ पर्वपरिमितश्च कार्यः। अनेन गृहाभ्यन्तरे आगमनशीलवायोर्गतिः प्रतिसार्धद्विविपलं (Second) ५ स्फीततोऽधिका न भवति। यदि सा गतिः २—३ स्फीतपरिमिता प्रतिसार्धद्विविपलं स्यात्तर्हि वरं भवेत्।

अन्तः पथ = भूमि भाग से ५-६ फीट ऊँचा होना चाहिए। अधिक हवा, एवं अधिक धूप से रक्षा के लिए इस पथ के ऊपरी भाग का मुख छत की तरफ होना चाहिए। इसका क्षेत्रफल २४ वर्ग इञ्च होता है अर्थात् ६ इञ्च लम्बा ४ इञ्च चौड़ा होना चाहिए। इससे घर में आने वाला वायु प्रति सेकेण्ड ५ फीट से अधिक नहीं होता है। यदि यह गति २-३ फीट प्रति सेकेण्ड हो तो अच्छा है।

अधिकोपयोगिकरणार्थमस्याकारः शङ्कुवत्कार्यः। तस्य विस्तृतमुखं गृहं प्रति सङ्कुचितमुखं तु बहिः कार्यम्।

अधिक उपयोगी बनाने के लिए इसका मुख शंकाकार कर देना चाहिए। घर के अन्दर की ओर उसका विस्तृत मुख, घर के बाहर संकुचित मुख करना चाहिए।

बहिष्पथः—अयमशुद्धवायुनिष्कासनार्थं निर्मीयते। आकारेणाऽन्तःपथेन सदृश एव कार्यः। वितानेवितानसविधे वा भवेत्, यतोऽशुद्धवायुरुष्णो भूत्वोपरि च गत्वा बहिर्निर्गच्छत्यत उपर्येव नियुज्यते यदि तत्सकाश एव प्रदीपस्तिष्ठेत्तर्हि अशुद्धवातो निर्बाधं सत्वरं बहिर्गच्छेत्।

अन्तःपथबहिष्पथौ सदा धूलितो रक्षणीयौ यतस्तयोः छिद्रमावृतं मा भूत्।

बहिष्पथ = यह अशुद्ध वायु को निकालने के लिये बनाते हैं, स्वरूप में अन्तः पथ के समान ही बनाना चाहिये किन्तु इसका बाहरी मुख छत

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

में या छत के समीप होना चाहिये क्योंकि अशुद्ध वायु उष्ण होकर ऊपर जाकर बाहर निकलता है अतः ऊपर ही द्वार होना उचित है। यदि उसके पास ही दीप भी रखा रहे तो अशुद्ध वायु विना बाधा के शीघ्र ही बाहर चला जायेगा।

इन दोनों (अन्तःपथ, वहिष्पथ) की धूल से रक्षा करनी चाहिये जिससे इनका मुख बन्द न हो जाय।

वायुशुद्धिः

कर्पूरदेवदारुधूपचन्दनश्रीवाससर्जागुरुनिम्बसोमराजिकापत्र-गन्धकगुग्गुलुराजिकाश्वेतसर्षपसाकल्यादिहवनद्रव्याणामग्नौ हवनेन वायुर्विशुध्यति।

कपूर, देवदारु, धूप, चन्दन, गन्धाविरोजा, लोहवान, राल, अगर, नीम, वाकुची (कारीजीरी) तेजपात, गन्धक, गुग्गुल, राई, सफेद सरसो और साकला आदि हवन द्रव्यों को अग्नि में हवन करने से वायु की शुद्धि होती है।

सभास्थानादिकप्रमाणम्

सभाभवनरङ्गभूम्यादौ प्रतिव्यक्ति अल्पस्थानस्य २५०–३०० घनस्फीतघनफलकस्यैवाऽऽवश्यकता भवति। यत एतानि स्थानान्यत्यल्पकालार्थं सेव्यन्ते। चिकित्सालये यत्रातुरा निवसन्ति, यत्रहि ऐन्द्रियकपदार्थाः जीवाणवश्चोपलभ्यन्ते तत्र प्रत्यातुरं न्यूनातिन्यूनं १२०० घनस्फीतस्थानं भवेत्। तथा तलस्य क्षेत्रफलं तस्य द्वादशांशवर्गस्फीतं स्यात्। कारागारे प्रत्येकाभियुक्तार्थं न्यूनातिन्यूनं यत्स्थानं दीयते तत् ६४८ घनस्फीतपरिमितं भवति। तथाऽधिष्ठानस्य क्षेत्रफलं ३६ वर्गस्फीतं भवति। कारागारातुरालये प्रत्यातुरं ६०० घनस्फीतस्थानं दीयते। तथा तलस्य क्षेत्रफलं ५४ वर्गस्फीतं भवति। एकान्तवासदण्डाय १००० घनस्फीतस्थानं दीयते तथाऽधिष्ठानस्य क्षेत्रफलं ७५ वर्गस्फीतं क्रियते।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सभा-भवन एवं रंगभूमि (सिनेमाहाल या नाट्यशाला) आदि में प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से न्यूनतम २५० से ३०० घनफीट स्थान तक की ही आवश्यकता होती है। क्योंकि ये स्थान थोड़े समय के लिये ही व्यवहृत होते हैं। चिकित्सालय में जहाँ रोगी रहते हैं एवं जहाँ ऐन्द्रियिक पदार्थ (रक्तपूय आदि) और जीवाणु प्राप्त होते हैं वहाँ प्रति रोगी के लिये कम-से-कम १२०० घन फीट स्थान होना चाहिये तथा तल का क्षेत्रफल इसका $\frac{1}{12}$ वर्गफीट (१०० वर्गफीट) हो। जेल में प्रत्येक अपराधी के लिये जो न्यूनतम स्थान दिया जाता है वह नाप में ६४८ घनफीट होता है। भूमितल का क्षेत्रफल ३६ वर्गफीट होता हैं। जेल के चिकित्सालय में प्रत्येक रोगी को ९०० घनफीट स्थान दिया जाता है तथा भूमितल का क्षेत्रफल ५४ वर्गफीट होता है। एकान्तवास (नजरबन्दी) का दण्ड पाये हुये व्यक्ति के लिये १००० घनफीट स्थान दिया जाता है। एवं भूमितल का क्षेत्रफल ५७ वर्गफीट होता है।

वासस्थानम्

स्वास्थ्यदृष्ट्या निवासार्थं सा भूमिः*श्रेष्ठा भवति यत् किञ्चिन्निम्नगा, शुष्का, कोष्णा तथा वनस्पत्युत्पत्तियोग्या स्यात् वासगृहंशुष्ककिञ्चिच्छिद्रमयभूम्यामर्थात्तनुसिकतादियुक्तायां निर्मातव्यम्। यतस्तत्रत्यं जलं निर्बाधं दूरे निर्गच्छेदेकत्र माभूत। एतदर्थं चिक्कणमृन्मयभूमिर्न कदाप्यनुमोदनीया आर्द्र-शीतलजलावरोधवतीत्वात्।

स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से निवास योग्य वह भूमि श्रेष्ठ होती है जो कुछ नीची, सूखी, कुछ गरम तथा वनस्पति उत्पन्न होने लायक हो। रहने के लिये घर कुछ छिद्रयुक्त अर्थात् महीन बालू आदि से युक्त भूमि में बनाना चाहिये। जिससे वहाँ का जल बिना रुकावट के दूर चला जाय

---

* भूमिः—श्वेतारक्तकपीतकृष्णवसुधा स्वादुः कटुस्तिक्तकाः, काषायाघृतशोणितान्नमदिरागन्धाः शुभा विप्रतः। [मुहूर्तमार्तण्डः]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वहाँ इकट्ठा न हो। इसके लिये चिकनी मिट्टी से युक्त जमीन को कभी भी पसन्द नहीं करना चाहिये, क्योंकि वह गीली ठण्डी और जल को रोकने वाली होती है।

वास्तुशास्त्रोक्ता ग्राह्यभूमिः

देवानां तु द्विजातीनां चतुरस्रायता श्रुता।
वास्त्वाकृतिरनिन्द्या सावाक्प्रत्यक्दिक्समुन्नता॥
हयेभवेणुवीणाध्वदुन्दिभिध्वनिसंयुता।
पुन्नागजातिपुष्पाब्जधान्यपाटलगन्धकैः॥
पशुगन्धसमा श्रेष्ठा सर्ववीजप्ररोहिणी।
एकवर्णा घना स्निग्धा सुखसंस्पर्शनान्विता॥
विल्वो निम्बश्च निर्गुण्डी पिण्डितः सप्तपर्णकः।
सहकारश्च षड्वृक्षैरारूढ़ा या समस्थला॥
निष्कपाला निरुपला कृमिबल्मीकवर्जिता।
अस्थिवर्ज्या न सुषिरा तनुवालुकसंयुता॥
अङ्गारैर्वृक्षमूलैश्च शूलैश्चापि पृथग्विधैः।
पङ्कसङ्करकूपैश्च दारुभिर्लोष्ट्रकैरपि॥
शर्कराभिरयुक्ता या भस्माद्यैस्तु तुषैरपि।
सा शुभा सर्ववर्णानां सर्वसम्पत्करी धरा।
दध्याज्यमधुगन्धा च तैलासृग्गन्धिका च या।
श्वेतासृक्पीतकृष्णा हयगजनिनदा षड्रसा चैकवर्णा।
गोधान्याम्भोजगन्धोपलतुषरहिताऽवाक्प्रतीच्युन्नता या॥
पूर्वोदग्वारिसारा वरसुरभिसमा शूलहीनास्थिवर्ज्या।
सा भूमिः सर्वयोग्या कणदररहिता सम्मताद्यैर्मुनीन्द्रैः॥

[मयमते अ० ३]

देवताओं और ब्राह्मणों का घर बनाने के लिये चौकोर दक्षिण-पश्चिम दिशा में ऊँची भूमि अनिन्द्य कही गई है। वह घोड़ों, हाथी, वंशी, वीणा,

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

जलाशय, दुन्दुभि की ध्वनि तथा नागकेशर, चमेली, कमल, धान्य, पाटल (गुलाब), की गन्ध से युक्त हो।

श्रेष्ठ गन्धवाली एवं सम भूमि सभी बीजों को उगानेवाली एक रंग की, घन (पोली नहीं), स्निग्ध एवं स्पर्श करने में सुखदाई भूमि मकान बनाने के लिये श्रेष्ठ है। तथा बेल, निम्ब संभालू बहेड़ा छितिवन और आम इन ६ वृक्षों से युक्त, समथल, खपड़ा, पत्थर, क्रिमि, वाम्बी और हड्डी से रहित, पोलापन से रहित महीन बालू युक्त और जो भूमि कोयला, वृक्ष की जड़, भाँति-भाँति के काँटों, कीचड़ और कूड़ा से भरे गड्ढों, वनकाष्ठ, बड़े तथा छोटे कंकड़ों, राख एवं भूसी आदि से न युक्त हो वह सभी वर्णों के लिये सम्पत्तिशालिनी और शुभ है।

जो भूमि दही, घी, मधु, तैल, रक्त की सी गन्धवाली है, सफेद, लाल, पीली, या काली, घोड़े हाथी के शब्द से युक्त है अर्थात् ये जहाँ बाँधे जाते हों, ६ रसों वाली, एक वर्ण की तथा गाय, धान्य, कमल की गन्ध से युक्त, पत्थर, भूसी से रहित, दक्षिण-पश्चिम ऊँची, पूर्व-उत्तर दिशा में जल के निकासी वाली, श्रेष्ठ गन्धयुक्त एवं काँटा हड्डी, कण और दरार से रहित हो वह सब के योग्य, प्राचीन मुनियों द्वारा सम्मत है।

अन्यच्च—मनसश्चक्षुषो यत्र सन्तोषो जायते भुवि।
तस्यां कार्यं गृहं सर्वैरिति गर्गादिसम्मतम्॥
[गृहभूषणे]

तथा जिस भूमि को देखने से मन और नेत्रों को सन्तोष हो, उसी भूमि में घर बनाना चाहिये। यह गर्ग आदि ऋषियों का मत है।

अग्राह्यभूमिः

शवमीनपक्षिगन्धा या सा धरा निन्दिता वरैः।
सभाचैत्यसमीपस्था नृपमन्दिरसंश्रिता॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

देवालयसमीपस्था कण्टकिद्रुमसंयुता ।
वृत्तत्रिकोणविषमा वज्राभा कच्छपोन्नता ॥
चाण्डालवासगच्छाया चर्मकारालयाश्रिता ।
[म० म० अ० ३]

शव, मछली, पक्षियों की गन्ध से युक्त, सभा-भवन, चैत्य वृक्ष, राजमहल और देव-मन्दिर के समीप, काँटेदार वृक्षों से युक्त, गोल, त्रिकोण, विषम, वज्रतुल्य कठोर, कछुए के समान बीच में उभरी, चांडाल (मेहतरों) के घर की छाया (परछाही) से युक्त तथा चमारों (चमड़ा का काम करने वालों) के घरों के बीच की भूमि अच्छे लोगों द्वारा निंदित है।

गृहनिर्माणकाले एतत्सदा विचार्यं, यद्गृहं विवृतस्थले स्यात्तत्रत्यां वायुः शुद्धः स्यान्मलमूत्रप्रणाली च भूपृष्ठे न भवेत्। गर्तरजकघट्टनालकसमीपस्थलेष्वपि गृहनिर्माणार्थं स्थानमुपयोगि न भवति। यतः सजीवपदार्थानामुत्कुथनादिकारणैर्दूषितवायुस्तत्रैकत्रीभूय तिष्ठति।

गृह-निर्माण के समय सर्वदा यह विचारणीय है कि घर खुले स्थान में हो जिससे वहाँ की हवा शुद्ध रहे। मल-मूत्र की नाली पृथ्वी के धरातल पर न हो। गड्ढा, धोबीघाट और नाले के समीम की भूमि में भी घर बनाने के लिये उपयोगी स्थान नहीं होता। क्योंकि सजीव पदार्थों की सड़न आदि कारणों से दूषित वायु वहीं इकट्ठा रहती है।

वस्तुत आवासार्थं श्रेष्ठतमा भुमिः पर्वतशिखरमथवोपत्यका भवति। यदीदं स्थानं छायामयं स्यात्तर्ह्यतिवरम्। वृहत्स्थलेषु आवासाः यथासम्भवं दूरे-दूरे तथोच्चस्थाने निर्माप्याः। यतो वार्षिकं भूमितलस्थं च जलं सुखं प्रोह्य निर्गच्छेत्।

वास्तव में निवास के लिये सर्वश्रेष्ठ भूमि पर्वत शिखर अथवा उपत्यका (पर्वत के पास की भूमि) होती है। यदि यह स्थान छायामय हो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

तो अति उत्तम है। लम्बे स्थलों में जहाँ तक हो सके घर दूर-दूर एवं ऊँचे स्थान पर बनाना चाहिये जिससे वर्षा तथा भूमितल का जल सरलता से बह कर दूर चला जाय।

नैते कदाप्यशोभमानजाङ्गलोषरभूमावगभीरतड़ागसरसोरथवा कस्यचिदबद्धजलाशयस्य सविधे निर्माप्याः। समीपस्थमलसङ्करभूमीनां धूमादिविशिष्टकार्यालयानां श्मशानस्य कृषिक्षेत्राणाञ्च स्थितिरपि हानिकरी भवति।

इन मकानों को शोभा-रहित जंगली ऊसर भूमि में, छिछले तालाब झील अथवा किसी बिना बँधे हुए जलाशय के निकट नहीं बनाना चाहिये। मकानों के समीप मल कूड़ा की भूमि, धुआँ, दुर्गन्धि आदि विशेष पदार्थ निकालने वाले कार्यालय, श्मशान और खेतों की उपस्थिति भी हानिकारक होती है।

नगरेषु ग्रामेषु च गृहं नैवम्भूतासु च भूमिषु निर्मेयं या मलसङ्करैर्गर्तानापूर्य निर्मिताः स्युः।

नगरों और गाँवों में इस प्रकार की भूमि में घर नहीं बनाना चाहिये जो मल और कूड़ा से गड्ढों को भर कर बनायी गयी हो।

भूमिष्ठमुदकं भूपृष्ठात्सप्तहस्तगाम्भीर्यान्न्यूनं मा भूत्। गृहस्य चतुर्दिक्षु विवृता वनस्पतयः स्युर्यतः प्रवातादस्योष्णतायामधिकभेदो न भवेत्।

भूमिगत जल पृथ्वी के धरातल से न्यूनतम सात हाथ से कम गहरा न हो। घर के चारों ओर खुली वनस्पतियाँ हों जिससे प्रवात (तेज हवा) के समय इसकी उष्णता में अधिक अन्तर न हो।

गृहमभितः एतावद्विवृतं स्थानमपि स्याद्यस्य क्षेत्रफलमस्योत्सेधविस्तारसमं स्याद्यतो गृहे सुखं वातप्रविचारो भवेत् तथा

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सम्यक्सूर्यरश्मय आगच्छेयुः। गृहस्य द्वारं† यस्यां दिशि स्याद् गृहोच्चता तद्दिग्वीथिकाविस्ततोऽधिका न स्यात्। कस्यापि अवस्थायां गृहं ४६ हस्तपरिमाणादधिकमुन्नतं न भवेत्। गृहद्वारं‡ यथासम्भवं प्राच्यामुदीच्यां दिशि वा कार्यं, यतः प्रातः सूर्यकराः समापतेयुः।

घर के चारों ओर इतना खुला स्थान भी हो जिसका क्षेत्रफल उसकी ऊँचाई और चौड़ाई के क्षेत्रफल के बराबर हो। जिससे घर में सरलता से वायु का आवागमन हो एवं सूर्य किरणें अच्छी तरह आ सकें। घर का द्वार जिस दिशा में हो घर की ऊँचाई उस दिशा की गली, सड़क की चौड़ाई से अधिक न हो। किसी भी अवस्था में घर ४६ हाथ से अधिक ऊँचा न हो। घर का द्वार जहाँ तक हो सके पूर्व या उत्तर दिशा में बनाना चाहिये जिससे प्रातःकाल सूर्य किरणें अच्छी तरह आ सकें।

शयनागारो यथासम्भवं गृहस्य कोष्ठे द्वितीयखण्डे स्यात्। तस्य च द्वारमुत्तरपूर्वयोः कार्यम्। गृहमभितो भूमिषु प्रस्तरेष्टकाद्यन्यतमैः कुट्टिमं (फर्श) कार्यम्। तदग्रेच हरितशष्पाच्छादितमेकं भूखण्डं स्यात्। तच्छष्पानां कर्तनं नियमतः सदा करणीयम्। ग्रामेषु गृहसन्निकट एव पर्याप्तपानीयप्राप्त्यर्थं कूपश्चावश्यका भवति। किन्त्वेतत्सदा विचार्यं यत्तत्रकूपजल दूषिकाः मलमूत्रादिवाहिन्यः प्रणाल्यो न भवेयुः।

शयनागार जहाँ तक हो सके घर के दूसरे खण्ड के कोठे पर हो। उसका द्वार उत्तर या पूर्व दिशा में हो। घर के चारों ओर पत्थर ईंट या अन्य पदार्थों से फर्श बनाना चाहिये। उसके सामने हरी घास से ढका

† गेहोच्चस्य चतुर्थांशो द्विगुणो द्वार उच्छ्रयः।

‡—पूर्वपश्चिमतो दैर्घ्यं सपादं दक्षिणोत्तरम्।
शुभावहं गृहं चोक्तं सूर्यविद्धं न सौख्यदम्॥ [गृ० भू०]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

हुआ एक भूमि का टुकड़ा हो। उन घासों को नियमपूर्वक सर्वदा काटते रहना चाहिये। ग्रामों में घर के पास ही पर्याप्त जल प्राप्त होने के लिये कुआँ आवश्यक है। परन्तु यह सर्वदा विचारणीय है कि उस कुएँ के जल को दूषित करनेवाली मलमूत्रवाहिनी नालियाँ समीप में न हों।

भित्तिमूलम् (नींव)

एतावद् दृढं स्यात् यद्गृहस्यभारं सम्यक् प्रसहेत। अस्योपरि पाषाणखण्डानामन्येषां वाऽप्रवेश्यपदार्थानांस्तरेणैकं तलं रचनीयं यन्न्यूनातिन्यूनंसार्द्धहस्तपरिमितमुन्नतं स्यात्तथा चतुर्दिक्षुभित्तेः मूलादष्टाङ्गुलपरिमितमग्रे विस्तृतं स्यात्।

नींव इतनी मजबूत होनी चाहिये जिससे वह घर का बोझ सँभाल सके। इसके ऊपर पत्थर के टुकड़ों अथवा अन्यान्य अप्रवेश्य स्तरवाले (सोमेन्ट आदि) पदार्थों के परत से तल (फर्श) बनाये। जो न्यूनतम डेढ़ हाथ ऊँची एवं चारों दिशाओं में नींव से ८ अंगुल आगे (बाहर की ओर) निकाली हो।

भूमेरार्द्रताया भूमिगतवायोश्च रक्षार्थमुपपीठं* (कुर्सी) निर्माप्यं यद्धि भूपृष्ठात् पर्याप्तमुच्चैः स्यात्। यदि गृहं स्तम्भोपरि निर्मीयेत तर्हि अत्युत्तमं स्याद् यतः पूर्वोक्तलाभातिरिक्तं तदधोऽपि सभ्यग्वातप्रविचरणं भवेदिति।

भूमि के गीलेपन एवं भूमिगत वायु से रक्षा के लिये उपपीठ (मकान की कुर्सी) बनाना चाहिये। जो पृथ्वी के धरातल से पर्याप्त ऊँचा हो। यदि घर खम्भों के ऊपर बनाना जाय तो बहुत उत्तम हो क्योंकि इससे पूर्वोक्त लाभों के अतिरिक्त नीचे से भी अच्छी प्रकार वायु का आवागमन होगा।

---

*अधिष्ठानस्य चावस्तादुपपीठं प्रयोजयेत्।
रक्षार्थमुन्नतार्थञ्च शोभार्थं तत्प्रवक्ष्यते॥ (म० म० अ० १३)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भित्तिः

सामान्यत इष्टिकाभिः प्रस्तरैः, समिधा, मृत्तिकया च विरच्यते । इष्टिकाः छिद्रमयीत्वाज्जलं सम्यगाकर्षन्ति, एवं मृत्तिकाऽपि । तथा वायुरप्यावारपारे गच्छत्यतोऽस्याउभयदिशि प्रास्तरः कार्यः । प्रत्यब्दमेकदावश्यं सुधाधौता कार्या । मृद्भितिरपि श्रेष्ठमृत्तिकागोमयादिभिः प्रलेप्या । भित्तेरधस्तलसन्निहितभागानांनिर्माणावसरे तत्संस्कारकद्रव्येषु कश्चिदप्रवेश्य पदार्थः सम्मेलनीयो यतो भूभ्यार्द्रता छिद्रद्वारा न प्रविशेत् । द्वितलकगृहेषु द्वितीयखण्डीयापेक्षया प्रथमखण्डीया भित्तिः स्थूलतरा कार्या ।

भीत साधारणः ईंट पत्थर समिधा (लकड़ी) और मट्टी से बनायी जाती है । ईंट छिद्रमयी । (सुपिर) होने के कारण जल को अच्छी तरह आकृष्ट करती (सोखती) है । इसी प्रकार मिट्टी भो जल को सोखती है एवं हवा भी इसके आर पार जाती है । अतः इसके (दीवाल के) दोनों ओर पलस्तर करना चहिए । इसमें प्रति वर्ष एक बार अवश्य चूना से सफेदी करना चहिए । मिट्टी की दिवाल भी अच्छी मिट्टी और गोबर आदि से लीप देना चाहिए । दीवाल के चिकने हिस्सों के निकट की जमीन में उसके निर्माण काल में ही उसके बनाने वाले द्रव्यों में कोई अप्रवेश्य पदार्थ (सीमेंट चूना आदि) मिला देना चहिए । जिससे जमीन का गीलापन छिद्रों द्वारा दीवाल में न प्रवेश करे । दो मंजिले मकानों में दूसरे मंजिल की अपेक्षा पहले मंजिल की दीवाल अधिक मोटी बनाना चाहिये ।

द्वारवातायनानि

प्रत्येककोष्ठिकायाम् एकं द्वारं तथैकं वातायनं भवेत् । द्वारं न्यूनातिन्यूनं हस्तचतुष्टयोन्नतं द्विहस्तविस्तृतं च कार्यम् । वाता

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

यनं तद्दिशि स्यात् यद्दिशा वायुरागच्छति । तत्क्षेत्रफलं कोष्ठिका-क्षेत्रफलत्य दशमांशं भवेत् ।

प्रत्येक कोष्ठिका (कोठरी या कमरे) में एक द्वार एवं एक जँगला होना चाहिये । द्वार न्यूनतम चार हाथ ऊँचा और दो हाथ चौड़ा बनाना चाहिए । जँगला या खिड़की उसी दिशा में होना चाहिये जिस दिशा से वायु आती हो । उसका क्षेत्रफल कोठरी के क्षेत्रफल का दसवां भाग ($\frac{1}{10}$) होना चाहिये ।

तलम् (फर्श)

एतदप्रवेश्यपदार्थैं रचनीयं यद्धि सुखं निर्मलीकर्तुं शक्यं स्यात् । तत् प्रायः प्रस्तरेष्टिकाखर्परसुधाशर्करादिभिर्निर्मीयते ।

यह अप्रवेश्य पदार्थों से बनाना चाहिये । जो सरलता से साफ किया जा सके । प्रायः पत्थर, ईंट, खर्पर (चौड़ी पतली ईंट) और सुधा, शर्करा (सीमेंट) आदि से बनाया जाता है ।

गृहवितानम् (छत)

द्विविधं भवति समतलं निम्नगञ्चेति । समतलवितानेऽपि किञ्चिन्निम्नगत्वमवश्यं करणीयं यतो वार्षिकं जलं प्रोह्याऽधोनिर्गच्छेत् । निम्नगविताननिर्माणार्थं खर्पराणि, कासदर्भशरादि-खरविशेषाः लौहपत्रादीनि च प्रयुज्यन्ते येषु सीता वत्पङ्क्तयः स्युः ।

दो प्रकार का होता है—समतल और ढालुआ । समतल छत में भी कुछ ढालुवापन अवश्य रखना चाहिये, जिससे वर्षा का जल बहकर नीचे निकल जाय । ढालुवा छत बनाने में खपड़ा (नरिया) कास कुश सरपत आदि विशिष्ट प्रकार के खर प्रयुक्त होते हैं, तथा लौहपत्र (टीन लोहे की चद्दरें) आदि द्रव्य प्रयुक्त होते हैं जिनमें कि हलकृत रेखा के समान पंक्तियाँ (नालियाँ) बनी होती हैं ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पर्णखरशष्पादीनां वितानं (छप्पर) यद्यपि शीतलं, शुष्कं तथा प्रकाशवातागमनार्हं स्वास्थ्याय हितकरञ्च भवति। तथापि तत्र सर्पपक्षिकीटादयः स्वगृहं कृत्वा निवसन्ति तथा अग्नेरपि-भयं विशेषेण भवति। लौहादीनां वितानं तु ग्रीष्मकालेऽत्युष्णं जायते।

पत्ता, खर और घास आदि का वितान (छप्पर) यद्यपि ठण्ढा, सूखा, प्रकाश और वायु के आगमन योग्य तथा स्वास्थ्य के लिये हितकर होता है। लेकिन उनमें साँप, पक्षि और कीड़े आदि अपना घर बना कर रहते हैं। तथा अग्नि का भी विशेष भय रहता है। लोहे टीन आदि की छत गर्मी के दिनों में अत्यन्त उष्ण हो जाती है।

वितानेष्वभितः सूक्ष्मप्रणाल्यः कार्याः। यत्र जलमेकत्री-भवितुं शक्नुयात्। तथा प्रणालका अपि स्युः यैः तज्जलं सद्योऽधो निर्गच्छेत्।

छतों में चारों तरफ छोटी नालियाँ बनानी चाहिये। जहाँ पर जल इकट्ठा हो सके। तथा पनाले भी हों जिनसे छोटी नालियों द्वारा वह इकट्ठा जल तुरन्त नीचे चला जाय।

प्रणालकनिर्माणे एतदवधार्यं यत्ते भित्तौ संलग्ना न भवेयुः। किन्त्वग्रे निर्गता भवेयुः अन्यथा भितिरार्द्रतां प्राप्य सत्वरं नष्टा भवितुं शक्नोति। वितानसन्निकटे दूषितवायुनिष्कासनार्थं झरोखाः, प्रकाशागमनार्थं प्रकाशकाश्च भवेयुः।

पनाला बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि वे दीवाल में सटे न हों। किन्तु आगे निकले हों। नहीं तो दीवाल गीलापन प्राप्त कर शीघ्र नष्ट हो सकती है। छत के पास दूषित वायु निकालने के लिये, झरोखे एवं प्रकाश आने के लिए प्रकाशक (रोशनदान) होने चाहिए।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

महानसम्

भोजनगृहं प्रस्रावचर्चोगृहयोः सन्निहिते न निर्माप्यम्।
तथैवम्प्रबन्धः कार्यो यथा धूमः सर्वगृहेषु न प्रसरेत्।
धूमनिर्गमनार्थं महानसवितानेऽनेके छिद्राः कार्याः।
आग्नेय्यां दिशिकर्तव्यमावासस्य महानसम्।
गवाक्षजालमार्गाढ्यमर्धभित्त्युपलेपितम् ॥
चुल्ली तत्र प्रकर्तव्या पूर्वपश्चिममायता।❀

[क्षे० कु०]

रसोई घर मूत्र और पुरीष घर (पेशावखाना और पैखाना) के पास नहीं बनाना चाहिये। तथा इस प्रकार का प्रबन्ध करना चाहिये जिससे धुआँ सब घरों में न फैले। धुआँ निकलने के लिए रसोई घर की छत में अनेक छेद बनाने चाहिये।

घर में आग्नेय (पूर्व-दक्षिण कोण) दिशा की ओर झरोखा और जालीदार दरवाजा से युक्त एवं अप्रवेश्य (सीमेंट मुजायक आदि) द्रव्यों से फर्श से ऊपर आधी लीपी दीवाल वाला रसोई घर बनाना चाहिये। वहाँ पर पूरब पश्चिम लम्बा चूल्हा बनाना चाहिये।

वर्चोगृहं प्रस्रावगृहञ्च

वर्चःप्रस्रावयोर्गृहे सदनस्यैकतटे निर्माप्ये। तयोरधस्तले भित्तयश्चाप्रवेश्यपदार्थैः सीमेण्टादिभिः कार्याः। ते च सर्वदा स्वच्छीकार्ये यतो दौर्गन्ध्यं नाऽऽगच्छेत्।

अन्यानिगृहाणि

❀ स्नानादिपाकशयनास्त्रभुजे च धान्य
भाण्डारदैवतगृहा दिशि पूर्वतः स्युः।
तन्मध्यतस्तु, मथनाज्यपुरीषविद्याऽ–
भ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम ॥ (गृ० भू०)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पाखाना और पेशाबखाना घर के एक किनारे बनाना चाहिये। उनकी फर्श एवं दीवालें सीमेंट आदि अप्रवेश्य पदार्थों से बनानी चाहिये, उन्हें सर्वदा स्वच्छ रखना चाहिये जिससे दुर्गन्धि न आये।

सूतिकागारम्

अरिष्टं ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राणां श्वेतरक्तपीतकृष्णेषु भूमिप्रदेशेषु विल्वन्यग्रोधतिन्दुकभल्लातकनिर्मितं सर्वागारं यथासंख्यं तन्मयपर्यङ्कमुपलिप्तभित्तिं सुविभक्तपरिच्छदं प्राग्द्वारं दक्षिणद्वारं वाष्टहस्तायतं चतुर्हस्तविस्तृतं रक्षामङ्गलसम्पन्नं विधेयम्।

[सु० शा० अ० १०]

प्रसव घर—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लिए क्रमशः सफेद लाल पीली और काली जमीन के प्रदेश में हो। क्रमशः बेल, बरगद, तेंद, और मिलावे की लकड़ी से सारा प्रसूति घर बनाना चाहिये। उसमें क्रमशः बेल आदि ही की लकड़ियों का पलंग हो। दीवाल लीपी या सीमेण्ट आदि से पलस्तर की हुई हो। वहाँ अच्छी तरह वर्गीकृत सामग्रियाँ रक्खी हों। पूर्व या दक्षिण ओर द्वार हो। प्रसव का कमरा आठ हाथ लम्बा, चार हाथ चौड़ा रक्षा सामग्री (अभिमन्त्रित सरसों तथा औषध आदि) एवं मंगल सामग्री (पुष्प आदि) से युक्त होना चाहिये।

कुमारागारम्

वास्तुविद्याकुशलः प्रशस्तं रम्यमतमस्कं निवातं प्रवातैकदेशं दृढमपगतश्वापदपशुदंष्ट्रिमूषिकपतंगं सुसंविभक्तसलिलोदूखलमूत्रवर्चःस्थानस्नानभूमिमहानसमृतुसुखं यथर्तुशयनासनास्तरणसम्पन्नं कुर्यात्तथा सविहितरक्षाविधानबलिमंगलहोमप्रायश्चित्तं शुचिवृद्धवैद्यानुरक्तजनसंपूर्णमितिकुमारागारविधिः।

[च० शा० अ० ८]

गृहविद्याविशारद जन श्रेष्ठ, सुन्दर, अन्धकार रहित, निवात (जहाँ तेज हवा न जाती हो), किन्तु जिसके एक ओर अच्छी तरह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

हवा आने का मार्ग हो, मजबूत, कुत्ता, शृङ्गाल आदि तथा पशु, दन्तधारी हिंसक जन्तु, चूहा और कीट पतंग से रहित, अलग-अलग जल, उलूखल रखने के स्थान, मूत्रस्थान, पुरीषस्थान, स्नानागार और रसोईघर से युक्त, ऋतु के अनुसार सुखदायी, ऋतु के अनुसार शयन-आसन बिछौना से सम्पन्न कुमारागार बनाये तथा वहाँ रक्षाविधान, बलि, मंगल होम और प्रायश्चित्त आदि अच्छी तरह से हुए हों। वह पवित्र, (स्वच्छ) वृद्ध वैद्य और भक्त जनों से युक्त हो। यही कुमारागार निर्माण की विधि है।

वार्षिकं जलं गृहसमीपे नैकत्रीभवेदेतदर्थं तस्य चतुर्दिक्षु पाषाणेष्टकादिभिः कुट्टिमं कार्यम्। तथा तत्रत्यजलनिर्गमनार्थमभितः प्रणाली निर्माप्या यद्द्वारोदकं नागरिकवृहन्नालायामन्यत्र वा सुदूरे निर्गच्छेत्।

वर्षा जल घर के समीप इकट्ठा न हो इसलिये उसके चारों दिशाओं में पत्थर और ईंट आदि से फर्श बनाना चाहिये और उसके चारो ओर जल निकालने के लिये नाली बनानी चाहिये, जिसके द्वारा जल नागरिक वृहन्नाला (म्युनिस्पैलिटी के बड़े नाले) में अथवा अन्यत्र सुदूर निकल जाय।

गृहभूशुद्धिः

भूशुद्धिर्मार्जनाद्दाहात्कालाद्गोक्रमणात्तथा।
सेकादुल्लेखनाल्लेपाद् गृहं मार्जनलेपनात्॥ (या०व०)

झाड़ने, जलाने, कुछ समय बीतने, गायों के चलने, सींचने, छीलने एवं लीपने से पृथ्वी की शुद्धि होती है। घर की शुद्धि धोने पोछने एवं लीपने से होती है।

गोशालाऽश्वशाले

इमे गृहाभ्यन्तरे गृहातिसन्निकटे वा न निर्माप्ये तत्रत्यमल मूत्रयोर्भूमौप्रवेशाद्गृहिणामस्वास्थ्यकरत्वात्। आवासान्न्यूनातिन्यूनं शतस्फीतदूरतो निर्माप्ये। तदभितः पञ्चदशस्फीतविस्तृत

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्थानं रिक्तं कार्यम्। एतयोरुच्चता द्वादशस्फीततो न्यूना न कार्या। एकगवे द्वादशश्चस्फीतायामं स्फीतचतुष्टयविस्तृतं स्थानं विधेयम्। एकाश्वार्थन्तु द्वादशस्फीतायामं षट्स्फीतविस्तृतं स्थानं करणीयम्। एतयोरधिष्ठानं समीपभूमितलादेकस्फीतोच्चकं पाषाणशर्करासीमेण्टादिनिर्मितं निम्नगञ्च कर्तव्यम्। एका प्रणाली कार्या यतो मूत्रादिकं तद्द्वारा मलपथे गत्वा सुदूरे निर्गच्छेदथवा ततो न्यूनातिन्यूनतो दशस्फीतदूरे सञ्चयनगर्तमेकं कार्यं यत्र मूत्रादिकमेकत्रीभवेत्। ततश्च संगृह्य सुदूरे ग्रामाद्बहिर्निक्षिपेत्। सूर्यप्रकाशवातागमनार्थमपि सुप्रबन्धः कार्यः। वितानमपि वर्षाघर्माक्रमणसंरक्षकं स्यात्। निर्मलीकरणार्थमपि सर्वदा ध्यानं देयम्। प्रत्यहं वारद्वयं जलेन मार्जनीयम्। गोमयादिकं सर्वदा बहिष्कार्यम्। वृषालय आवासेभ्यो दूरे पशुशालातः पृथङ्निर्मातव्यः। पशुशालासु दिनचतुष्टयान्ताधिकंभद्यं वृषादिकं न स्याप्यम्। पशुभ्यो निर्मलं जलं पानार्थं देयम्। पशुभृत्याः पशुशालावितानोपरि शयनार्थं न कदाप्याज्ञाप्याः।

इन दोनों को गृह में अथवा गृह के अत्यन्त निकट नहीं बनाना चाहिये। क्योंकि वहाँ का मलमूत्र पृथ्वी में प्रविष्ट होकर गृहवासियों के लिये रोगकारक होगा। इन्हें घर से न्यूनतम १०० फीट दूर बनाना चाहिये। उसके चारों ओर १५ फीट स्थान खाली रखना चाहिये। इन दोनों की ऊँचाई १२ फीट से कम नहीं करनी चाहिये। एक गाय के लिये १२ फीट लम्बा और ४ फीट चौड़ा स्थान बनाना चाहिये। एक घोड़े के

केचिद्विद्वांस एकपशवे ८ स्फीतायामं ४ स्फीतविस्तृतं तथैकाश्वाय ९ स्फीतायामं ५ स्फीतविस्तृतं स्थानं मन्यन्ते। तथाऽऽवासात् २० स्फीतदूरेऽपि पशुशालाश्वशाले निर्माप्य इति कथयन्ति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

लिये १२ फीट लम्बा और ६ फीट चौड़ा स्थान बनाना चाहिये। इन दोनों का धरातल समीपस्थ भूमि के धरातल से एक फीट ऊँचा पत्थर, बालू, सीमेण्ट आदि से कुछ ढालुआ बनाना चाहिए। एक नाली बनानी चाहिये जिससे मूत्र आदि उसके द्वारा मलपथ में जाकर दूर निकल जाय। अथवा उससे न्यूनतम १० फीट दूर मूत्रादि को इकट्ठा करनेवाला एक गड्ढा बनाना चाहिये जिसमें मूत्र आदि इकट्ठा हो। फिर उसे इकट्ठा कर दूर गाँव के बाहर फेकना चाहिये। सूर्य प्रकाश और वायु के आगमन के लिये भी अच्छा प्रबन्ध करना चाहिये। छत भी वर्षा और घाम के आक्रमण से रक्षा करनेवाला हो। उनको साफ करने के लिए भी सर्वदा ध्यान देना चाहिये। प्रतिदिन दो बार जल से धोना चाहिये। गोबर आदि सर्वदा बाहर रखना चाहिये। भूसा रखने का घर-घर से दूर पशुशाला से अलग बनाना चाहिये। पशुशाला में चार दिन से अधिक खाद्य भूसा आदि नहीं रखना चाहिये। पशुओं को पीने के लिये स्वच्छ जल देना चाहिये। पशुओं के नौकरों को पशु-शाला की छतपर सोने के लिये कभी आज्ञा नहीं देनी चाहिये।

जात्याद्यनुसारेण ग्रामादौ वासस्थाननिर्माणम्

गोशाला दक्षिणतश्चोत्तरदेशे तु पुष्पवाटी स्यात्।
पूर्वद्वारे वापि पश्चिमतस्तापसावासम्॥
सर्वत्रैव जलाशयमिष्टं वापी च कूपं च।
वैश्यादेर्दक्षिणतः*परितः सदनंतु शूद्राणाम्॥
प्राच्यां वाप्युत्तरतो गेहं कुर्यात्कुलालानाम्।
तत्रैव नापितानामन्यत्कर्मोपयुक्तानाम्॥

---

*—वैश्यक्षत्रियविप्राणां निवासस्थानं दक्षिणपूर्वोत्तरदिक्षु क्रमेण बोद्धव्यम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मत्स्योपजीविनां स्याद्वासो वायव्यदेशे तु ।
पश्चिमदेशे मांसैरुपवृत्तीनां निवासः स्यात् ॥
तैलोपजीविनां चैवोत्तरदेशे गृहश्रेणिः ।
ग्रामात्किञ्चिद्दूरे पावकदेशेऽथवा वायौ ॥
वासः स्यात्स्थपतीनां शेषाणां तत्र कर्तव्यम् ।
तस्मात्किञ्चद्दूरे रजकादीनां निवासः स्यात् ॥
चाण्डालकुटीराणि पूर्वायां क्रोशमात्रे तु ।
प्रागुत्तरदिशि दण्डैः*पञ्चशतैः स्याच्छ्वावासम् ॥

[मयमते अ० ९]

गाँव के दक्षिण गोशाला, उत्तर पुष्पवाटिका, पूर्व या पश्चिम तपस्वियों का निवास होना चाहिये । जलाशय, वापी और कुआँ सभी जगह (कहीं भी उचित स्थान पर) हो सकता है । वैश्यों का दक्षिण, क्षत्रियों का पूर्व, ब्राह्मणों का उत्तर एवं शूद्रों का निवास उनके चारो दिशाओं में होना चाहिये । पूर्व या उत्तर ओर कोहारों के घर बनाने चाहिये । वहीं नाइयों या अन्य कर्मोपयोगी लोगों का निवास हो । मछली व्यवसाय वालों (मल्लाह आदिकों) का वायव्य दिशा (उत्तर पश्चिम कोण) में एवं मांसोपजीवी (चिकवा, कसाई) लोगों का निवास पश्चिम में होना चाहिये । तेलियों के घर उत्तर दिशा में हों । ग्राम से कुछ दूर अग्निकोण (पूर्व दक्षिण कोण) अथवा वायव्यकोण (पश्चिम उत्तर कोण) में स्थपतियों (राज) का एवं शेष (लोहार आदि) के भी निवास वहीं बनाने चाहिये । उससे कुछ दूर धोबी आदि (छीपी रंगरेज) के निवास हों । चाण्डालों के मकान पूर्व दिशा में गाँव से एक कोस पर बनने चाहिये । पूर्व-उत्तर

---

* यवोदरैरंगुलमष्टसंख्यैर्हस्तोऽङ्गुलैः षड्गुणितैश्चतुर्भिः ।
हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह दण्डः

[लीलावती]

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

(ईशान) दिशा में पाँच सौ दण्ड (२००० हाथ अर्थात् १००० गज) पर शव के रखने का घर बनावे ।

नगरम्

राष्ट्रस्य मध्यभागे सज्जनबहुले नदीसमीपे च ।
नगरं केवलमथवा राजगृहोपेतराजधानी वा ॥
दिक्षु चतुर्द्वारयुतं गोपुरयुक्तं तु सालाढ्यम् ।
क्रयविक्रयकैर्युक्तं सर्वजनावाससमसङ्कीर्णम् ॥
सर्वसुरालयसहितं नगरमिदं केवलं प्रोक्तम् ।
प्रत्यगुदग्दिशि गहना परितः साला बहिः सपांसुचया ॥
परितः परिखा बाह्ये शिविरयुताऽनेकमुखरक्षा ।
पूर्वायां दक्षिणतश्चाभिमुखा राजबलयुक्ता ॥
उन्नतगोपुरयुक्ता नानाविधमालिकोपेता ।
सर्वसुरालयसहिता नानागणिकान्विता बहूद्यानाः ॥
हस्त्यश्वरथपदातिबहुमुख्या सर्वजनयुक्ता ।
द्वारोपद्वारयुताऽभ्यन्तरतोऽनेक जनवासा ॥
या नृपवेश्मसमेता सा कथिता राजधानीति । [म०म०अ०१०]

राष्ट्र के मध्य भाग के सज्जन बहुल प्रान्त में नदी के किनारे केवल-नगर अथवा राजमहल से युक्त राजधानी बनानी चाहिये, जिसके चारो दिशाओं में चार द्वार और साला (चहारदीवारी) से युक्त गोपुर (प्रधान द्वार) हो, जो खरीदने, बेचने के व्यापार से युक्त हो । सभी प्रकार के मनुष्यों के घरों से युक्त और असंकीर्ण (अर्थात् न सटा हुआ बरन् फैला हुआ) हो तथा सभी प्रकार के देवमंदिरों से युक्त हो । ऐसा केवल (राजधानी रहित) नगर बनाना चाहिये ।

जिसके पश्चिम, उत्तर दिशा में जंगल या घनी बस्ती हो, चारों ओर चहारदीवारी तथा उसके बाहर चारों ओर मिट्टी व धूलि का ढेर हो । फिर उसके चारों ओर खाई (जलयुक्त) हो । बाहर शिविरयुक्त

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अनेक प्रकार से मार्ग की रक्षा व्यवस्था हो। पूर्व और दक्षिण दिशा में सम्मुख प्रधान राजसेना रहती हो। ऊँचे फाटक (प्रधान द्वार) अनेक प्रकार की मालिकाओं (मेहरावों) से युक्त हो। जो सभी प्रकार के देवमन्दिरों तथा अनेक वेश्याओं से युक्त, बहुत से उद्यानों वाली, हाथी, घोड़ा, रथ एवं पैदल चलनेवालों से भरी हुई, सभी प्रकार के मनुष्यों से युक्त, द्वारों और उपद्वारों से सुशोभित, भीतर अनेक मकानों वाली, राजमहल से युक्त हो ऐसी नगरी राजधानी होनी चाहिये।

दुर्गाणि

गिरिवनजलपङ्केरिणदैवतमिश्राणि सप्त दुर्गाणि।
गिरिमध्यं गिरिपार्श्वं गिरिशिखरं पार्वतं दुर्गम्॥
अजलं तरुवनगहनं वनदुर्गं तदुभयं तु मिश्रं स्यात्।
दैवं तु सहजदुर्गं पङ्कयुतं पङ्कदुर्गं स्यात्
नद्यब्धिपरिवृतं यज्जलदुर्गं निर्वनोदमीरिणं*स्यात्।
अक्षयजलान्नशस्त्रं ह्यतिविपुलोत्तुङ्गघनसालम्।
सर्वं हि दुर्गजालं सप्राकारं त्वनेकमुखरक्षम्।
वहिरुदकं रहितवनं छन्नपथं दुष्प्रवेशं च॥
गोपुरमण्डपयुक्तं सोपानच्छन्नमच्छिन्नम्।
द्वाराणि मण्डपसभाशालाकाराणि कार्याणि॥
प्राकाराश्चेष्टिकया द्वादशहस्तोच्छ्रिताहीनाः।
उत्सेधार्धविशाला मूले भित्तिः ससञ्चारा†॥
सर्वस्याभ्यन्तरतः पांसुचयोपर्यनेकयन्त्रयुतम्।
परितः परिखोपेतं पांसुचये संहताट्टालम्॥
परितः शिविरोपेतं नानाजनवाससङ्कीर्णम्।
नृपभवनसभोपेतंहस्त्यश्वरथपदातिर्वहुमुख्यम्।

---

* ईरिणं शून्यमूषरम् (अमरः) † गुप्तमार्ग (सुरंग) सहितेत्यर्थः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

धान्यैस्तैलैः क्षारैः सलवणभैषज्यगन्धविषम्।
लोहाङ्गारस्नायुविषाणवेणिवन्धनैर्युक्तम् ॥
तृणचर्मकारयुक्तं सवल्कलं सारदारुयुतम्।
दुर्गं दुर्गमसुक्तं दुर्लङ्घ्यं दुरवगाहं च ॥
रक्षार्थं च जयार्थं ह्यरिभिरभेद्यं च दुर्गमिष्टं स्यात्।

[म० म०]

गिरि, वन, जल, पंक, ईरिण, दैवत और मिश्र ये सात प्रकार के दुर्ग होते हैं। पहाड़ के मध्य, पहाड़ के पार्श्व और पहाड़ की चोटी पर बने हुए दुर्ग को पार्वत (गिरि) दुर्ग कहते हैं। निर्जल एवं वृक्ष वन से घना वनदुर्ग है। गिरि दुर्ग एवं वनदुर्ग दोनों के लक्षणों से युक्त मिश्रदुर्ग होता है। प्राकृतिक दैव (दैवत) दुर्ग तथा चारों ओर से पङ्कमय स्थल होने से पंकदुर्ग होता है। नदी या सागर से घिरा हुआ जलदुर्ग होता है। वन और जल रहित ऊसर शून्य स्थल में बना ईरिण दुर्ग होता है। ये सभी प्रकार के दुर्ग अक्षय जल-अन्न-शस्त्रयुक्त, बहुत चौड़ी ऊँची मोटी, ठोस मजबूत चहारदीवारी, खाईं और अनेक प्रकार की प्रधान रक्षा से युक्त होने चाहिये। उनके बाहर (खाईं में) जल हो, वह वृक्ष रहित हो। मार्ग ढका हो, दुष्प्रवेश हो, गोपुर मण्डप युक्त हो, सीढ़ी से युक्त हो, कहीं से टूटा-फूटा न हो। उसमें अनेक द्वार—मण्डप तथा सभाभवन के आकार* के बनाने चाहिये। चहारदीवारी ईंटे की और १२ हाथ से कम ऊँची न हो।

उसकी ऊँचाई की आधी चौड़ी नींव हो, वह संचार (सुरंग) युक्त हो और चारों ओर भीतर धूलि मिट्टी का ढेर (धूहा) होना चाहिये। उसके ऊपर अनेक यन्त्र लगे होने चाहिये। चारों तरफ खाईं एवं धूलि मिट्टी की राशि के ऊपर अटारी होनी चाहिए।

चारों ओर शिविरों (सेना के पड़ाव) से युक्त और अनेक मनुष्यों के निवास से व्याप्त हो। राजप्रासाद और सभागृह से युक्त, हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल सेना से भरा हो। अन्न, तैल, क्षार, नमक, औषधि, गन्ध द्रव्य,

---

* अनेक द्वार, मण्डप, सभाभवन और कारागार दुर्गके अन्दर बने हों ऐसा भी अर्थ होता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विष, लोहादि धातु, अंगार (कोयला), स्नायु (ताँत) विषाण, (सींग), वांस, इन्धन से युक्त, तृण, चर्मकार से युक्त, वल्कल (छाल), सारवाली लकड़ी (लकड़ी की हीर) साखू शीशम आदि से युक्त हो। ऐसा दुर्गम दुर्लंघ्य और दुरवगाह दुर्ग कहा गया है। जो कि रक्षा और जयके लिये दुश्मनों द्वारा अभेद्य होना चाहिये।

पण्यवीथिका

सार्वजनिकविपणिः प्रधानमार्गतटे स्यात् यत्र हि सर्वे जनाः सुखं गन्तुं शक्नुयुः। तन्मुखं सरकदिश्येव स्यात्। गोधूमादिधान्यानां मिष्टपक्वान्नानां च विपणिरपि तन्मार्गतट एव स्यात्। खाद्यवस्तूनि मिष्टपक्वान्नादीन्याच्छादितकाचपात्रे रक्षितव्यानि। प्रधानमार्गीयद्वारद्वयातिरिक्तं शेषदिशोरपि द्वारं कार्यम्। फलशाकादिविपणेः पृथक् सम्बद्धाच मांसविपणिर्भवेत्। अस्या नैर्मल्यार्थं विशेषध्यानं देयम्। प्रत्येकापणाग्रे गमनागमनार्थं न्यूनातिन्यूनं हस्तचतुष्टयविस्तृतो मार्गः स्यात्।

सार्वजनिक बाजार प्रधान मार्ग के किनारे होना चाहिये जहाँ पर सभी मनुष्य सरलता से जा सकें। उसका मुख सड़क की ओर ही हो। गेहूँ आदि अन्नों एवं मधुर पक्वानों का बाजार भी उसी मार्ग में किनारे हो। मधुर पक्वान्न मिठाइयाँ आदि खाद्य-वस्तुएँ ढके हुए काँचे के पात्र में सुरक्षित रखनी चाहिये। प्रधान मार्ग वाले दो द्वारों के अलावा शेष दिशाओं में भी द्वार बनाना चाहिये। फल और शाक आदि के बाजार से अलग पर उससे सटा हुआ मांस का बाजार हो। इसकी स्वच्छता के लिये विशेष ध्यान देना चाहिये। प्रत्येक बाजार के आगे आवागमन के लिये न्यूनतम चार हाथ चौड़ा मार्ग हो।

"मयमुनिलिखितं नगरान्तरापणकविधानम्"

परितो रथपथयुक्तं मध्ये वणिजां गृहश्रेणी।
तद्दक्षिणतः पार्श्वे गेहं स्यात्तन्तुवायानाम्॥
उत्तरतस्तद्वासावलिकं स्याच्चक्रिकाणां तु।
कर्मोपजीविनां स्याद्वासो रथपथ्यनेकानाम्॥

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

ब्रह्मावृतपथमेकं तत्रान्तरापणं कार्यम्।
ताम्बूलादिफलं च प्रोक्तं सारान्वितं द्रव्यम्॥
ईशानादिमहेन्द्रद्वारान्तकं चान्तरापणकम्।
तत्रैव मत्स्यमांसं शुष्कं शाकञ्च विज्ञेयम्॥
माहेन्द्राद्यग्न्यन्तं भक्ष्यं भोज्यं च निर्दिष्टम्।
अग्न्यादिक्षतगृहपर्यन्तं च तत्र भाण्डानि॥
तस्मान्निर्ऋतिपदान्तं कन्सादिकमत्र विज्ञेयम्।
स्यात्पुष्पदन्तभागान्तं पितृभागादिशस्त्राणि॥
तस्मात्समीरणान्तं तण्डुलधान्यादिकं च कटम्।
स्याद्भल्लाटपदान्तं वाय्वादि वस्त्रकादीनाम्।
तत्रैव लवणादि द्रव्यं तैलादि भैषज्यम्॥
तस्मादीशपदान्तं गन्धं पुष्पादिकं विहितम्।
एवं नवान्तरापणमुदितं परितो मध्ये तु॥
अभ्यन्तरगतमार्गेष्वथ रत्नं हाटकं वस्त्रम्।
परितः सर्वजनालयमुदितं किञ्चित्ततो दूरे॥
नगराद्द्विशतं दण्डं नीत्वा प्राच्यांतु वाऽऽग्नेय्याम्।
चाण्डालकुटीराणि तत्रैव तु कोलिकानां च॥
अस्मिन् सर्वमनुक्तं ग्रामे यथा तथा विहितम्। (मयमते अ०१०)

मय मुनि के मत के अनुसार नगरापणक (बाजार) बनाने की विधि यह है—चारों ओर सवारी चलने योग्य अच्छी चौड़ी सड़कें हों, बीच में दुकानदारों का गृह, उसके दक्षिण भाग के एक पार्श्व में जुलाहों का घर, उत्तर भाग में कुम्हारों का गृह और अनेक प्रकार का काम, कारीगरी से अपनी जीविका करनेवालों का आवास भी होना चाहिये। एक भाग (पथ) ब्राह्मणों के गृहों से आवृत होना चाहिए। नगर के भीतर बाजार हो, वहाँ ताम्बूल और फल की दूकानें तथा सारयुक्त (काष्ठादि) वस्तु की दूकानें हो। ईशान कोण से पूर्व के मध्य तक की दूकानों में मछली, मांस,

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

एवं सूखे वस्तु शाक, तर्कारी की दूकान हो। पूर्व के मध्य से अग्नि कोण तक खाने पीने की सामग्री की दूकान हो। अग्निकोण से दक्षिण मध्य तक मिट्टी के पात्र और दक्षिण से नेऋत्य कोण तक काँसा पीतल आदि पात्र की दुकानें, एवं नैऋत्य कोण से पश्चिम मध्य तक पिण्डदारादिका सामान और अस्त्र-शस्त्र की दुकानें, पश्चिम मध्य से वायव्य कोण तक चावल, दाल, आटा सब अन्न और चटाई आदि की दुकानें, वायव्य कोण से उत्तर मध्य तक वस्त्र, नमक, तेल, दवा आदि की दुकानें, उत्तर मध्य से ईशान कोण तक गन्ध-इत्र, पुष्प आदिकी दुकानें होनी चाहिये। इस तरह नगर के अंदर चारों ओर नव बाजार होनी चाहिए। नगर के मध्य भाग के भीतरी भागों पर रत्न, सुवर्ण, वस्त्र आदि की दुकानें होनी चाहिए। बाजार के चारो ओर कुछ दूर पर सब लोगों का वास-स्थान होना चाहिये। नगर से ४०० गज की दूरी पर नैर्ऋत्य अथवा अग्नि कोण में चाण्डालों (महत्तरों) का गृह और वहीं डोलियों (सुवर पालनेवालों) का भी गृह होना चाहिये।

इस बाजार के निर्माण के प्रकरण में जिनके विषय में नहीं कहा गया है उनका घर व दूकान ग्रामनिर्माणवत् समझना चाहिये।

गोधूमादिमिष्टान्नादिविक्रयगृहेषु प्रकाशवातागमनार्थं द्वाराः भित्तौ वितानेच कार्याः। अधिष्ठानादिकं दृढं तथाऽप्रस्तेयवस्तुभिः सुरचितं स्यात्। आपणाग्रे विरामदा निर्माप्याः। यतो ग्राहकाः सुखं प्राप्नुयुः। अत्र जलस्य मलपथस्य च सुप्रबन्धः कार्यः प्रत्येकापणानां चतुर्दिक्ष्वेका प्रणाली भवेत्। या विपणेर्वाह्यवृहन्मलपथे संगता स्यात्। दुर्गन्धिपदार्थमलसङ्कराश्च सन्निहितोचितस्थानेषु साच्छादनानि पात्राणि रक्षितव्यानि। तानि प्रतिदिवसं वारद्वयं रिक्तानि कर्तव्यानि। मार्गात्किञ्चिद्दूरे चापणिकानां मलमूत्रोत्सर्जनस्थानान्यपि स्युः। येषां शुद्धिर्दिवा वारद्वयमवश्यं कार्या। आपणानां, तत्सम्मुखभूमीनां, राजमार्गस्य

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

वीथिकानाञ्च स्वच्छता प्रत्यहं निरन्तरं विधेया। विपणेर्निरीक्षा नगरसभायाः स्वास्थ्यनिरीक्षकाधीना स्यात्।

जीर्णाः शीर्णाः कथमपि स्वास्थ्यहानिकारकाः पदार्था विपणौ विक्रयार्थं नाऽऽज्ञा देया तदधिकारिभिः।

गेहूँ आदि एवं मिष्ठान्न आदि की दुकानों में प्रकाश और वायु के आगमन के लिये दीवाल तथा छत में झरोखे बनाने चाहिये। फर्श आदि मजबूत और अप्रवेश्य वस्तुओं से सुन्दर बनाना चाहिये। दुकान के आगे बरामदा बनाना चाहिये। जहाँ ग्राहकों को सुख मिले। वहाँ जल एवं मलमार्ग का सुप्रबन्ध करना चाहिये। प्रत्येक बाजार के चारों ओर एक नाली होनी चाहिये जो बाजार के बाहरी वृहन्मलपथ में मिली हो। दुर्गन्धित पदार्थ एवं कूड़ा के लिये नजदीक उचित स्थान में ढक्कनयुक्त पात्र रखने चाहिये। उनको प्रति दिन दो बार खाली कर देना चाहिये। मार्ग से कुछ दूर व्यापारियों के मल-मूत्र त्याग के स्थान भी हों, जिनकी शुद्धि दिन में दो बार अवश्य करनी चाहिये। दुकानों, उनके सामने की जमीनों, राजमार्ग और गलियों की स्वच्छता प्रतिदिन बराबर करनी चाहिये। बाजार का निरीक्षण नगर-सभा (म्युनिस्पैलिटी) के स्वास्थ्य-निरीक्षक के अधीन हो। उसके अधिकारियों द्वारा पुराने सड़े गले स्वास्थ्य-हानिकारक पदार्थों को बाजार में बिक्री के लिए आज्ञा नहीं देनी चाहिये।

विद्यालयः

निष्प्रत्यूह एकान्तस्थाने भूपृष्ठादेकस्फीतोच्चैरायताकारमतमस्कं प्रवातैकदेशं ग्रातायनादिसन्पन्नमभितो निम्नगातलं विद्यालयभवनं निर्मातव्यम्। तस्य परित एका प्रणाली कार्या या वृहन्मलपथे संगता स्यात्। विद्यालयमध्य एकं समितिभवनं कार्यं तथाऽन्यानि गृहाणि एकपङ्क्तौ भवेयुः। गृहाग्रे विरामदाऽवश्यं स्यात्। प्रतिच्छात्रं द्वादशवर्गस्फीतस्थानमावश्यकम्। प्राय एकं गृहं ३० स्फीतायामं २० स्फीतविस्तृतं १४ स्फीतोन्नतञ्च विधेयम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

श्रविष्ठानमप्रवेश्यपदार्थैः प्रस्तरेष्टकादिभिर्निर्माप्यम्। गृहविता-नमपि दृढं रचनीयम्। उपविश्याध्ययनार्थं मञ्चिकाः, पुस्तकरक्ष-णार्थं च मेजकानि स्युः। नित्यं विद्यालयः स्वच्छीकार्यः।

निरापद, एकान्त, स्थान में पृथ्वी के धरातल से कम से कम एक फीट ऊन्च, आयताकार, अन्धकार रहित, एक ओर से प्रवात आने योग्य खिड़की आदि वातमार्गों से युक्त, चारों ओर निम्म (ढालू) भूमि से युक्त विद्यालय बनाना चाहिये। उसके चारों ओर एक नाली हो जो वृहन्मलपथ से जुड़ी हो। विद्यालय के मध्य में एक सभा-भवन बनाना चाहिये। एवं अन्यान्य गृह एक पंक्ति में हों। घर के आगे बरामदा अवश्य हो। प्रत्येक छात्र के लिये १२ वर्गफीट स्थान आवश्यक है। प्रायः एक घर (हाल) ३० फीट लम्बा, २० फीट चौड़ा और १४ फीट ऊँचा बनाना चाहिये। फर्श—पत्थर, ईंट, सीमेंट आदि अप्रवेश्य पदार्थों से बनाना चाहिये। घर की छत भी मजबूत बनानी चाहिये। बैठकर पढ़ने के लिये दरियों और पुस्तकों की रक्षा के लिए मेजें हों। विद्यालय को प्रति-दिन स्वच्छ करना चाहिए।

अर्थाभावादादर्शविद्यालयनिर्माणाशक्तौ घनच्छायवृक्षतले ऊर्ध्वतैकोन्नतःसुविस्तृतश्चत्वरो निर्माप्यः, तदुपर्यध्यापनीय विद्यार्थिनां मञ्चिकाद्यभावे कटस्योपयोग आसनार्थं कार्यः। ग्रीष्मावस्थायां लिखनपठनसमय एकजान्वधः पातयित्वा द्वितीयजानून्नतीकृत्वोपविशेत्। तदुपरि पुस्तकं संरक्ष्य लिखेत्प-ठेच्च। एवं पृष्ठवंशास्थीनि सरलानि तिष्ठन्ति तथा वक्षस उदरस्य चावयवा अनुचितभारतः संरक्षिता भवन्ति। विद्यालये प्रस्रवणस्य मलमूत्रत्यागस्थानस्य च यथाविधि प्रबन्धः कार्यः।

धनाभाव से आदर्श विद्यालय के निर्माण में असमर्थता होने पर घनी छाया वाले वृक्ष के नीचे एक फीट ऊँचा खूब विस्तृत चबूतरा बनाना चाहिए। उसके ऊपर पढ़ाये जाने वाले विद्यार्थियों के बैठने के

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

लिए कुर्सी के अभाव में चटाई का उपयोग करना चाहिए। इस अवस्था में लिखने-पढ़ने के समय एक जानु नीचे रख कर दूसरी जानु (घुटना) ऊँची कर बैठना चाहिये। उसके ऊपर पुस्तक रख कर लिखे या पढ़े। ऐसा करने से पृष्ठ-वंश (रीढ़) की अस्थियाँ सीधी रहती हैं और छाती-उदर के अंग अनुचित भार से सुरक्षित रहते हैं। विद्यालय में पेय जल एवं मल-मूत्र त्याग-स्थान का भी विधानानुसार प्रबन्ध करना चाहिये।

छात्रावासः

छात्रावासः समस्तगृहगुणसम्पन्नो विधेयः। अस्य द्वार मुत्तरदिशि दक्षिणदिशि वा कार्यम्। अस्य प्रत्येकं कुटीरमेवं स्याद् यत्प्रत्येकच्छात्रार्थं ५० वर्गस्फीतस्थानमागच्छेत्। प्रतिच्छात्रमेका काष्ठपट्टी (तख्ता), एक मञ्चिका (कुर्सी), एकं मेजकम् तथाचैका कुड्यागारिका (एलमारी), पुस्तकरक्षणार्थं प्रदेया। प्रकाशस्योत्तमः प्रबन्धः कार्यः। हिन्दू यवनेशायिनां भोजनालयः पृथक्पृथक् कार्यः। विद्यालय सीम्नि स एव आपणिको मिष्ठान्नादिविक्रयार्थमागन्तुं शक्नुयाद् यो विद्यालयाधिकारिणा वैद्येन तद्वस्तूनि परीक्ष्याज्ञापित स्यात्।

छात्रावास सभी गृह-गुणों से सम्पन्न हो। इसका द्वार उत्तर या दक्षिण दिशा में बनाना चाहिए। इसका प्रत्येक कमरा इस प्रकार हो जिससे प्रत्येक छात्र के लिए ५० वर्ग फीट स्थान हो जाय। प्रत्येक छात्र के लिए एक काष्ठ-पट्टी (लकड़ी की चौकी), एक कुर्सी, एक मेज एक आलमारी पुस्तक रखने के लिए देनी चाहिए। प्रकाश का उत्तम प्रबन्ध करना चाहिए। हिन्दू 'मुसलमान एवं ईसाइयों का भोजनालय अलग-अलग बनाना चाहिए। विद्यालय की सीमा में वहीं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

व्यापारी मिठाई आदि बेचने के लिये आ सके जो विद्यालयाधिकारी वैद्य द्वारा वस्तुओं की परीक्षा करने के बाद आज्ञप्त हो।

विद्यार्थिनां स्वास्थ्योपदेशः

प्रत्येकाध्यापकाः अवगतस्वस्थवृत्ता भवेयुः। यतस्ते छात्रानुपदिश्य सदाचाराभ्यासिनः कर्तुं शक्नुयुः। छात्रैः प्रत्येककार्यं सदा नियमतः कार्यम्। शरीरावयवा वस्त्राणि च निरन्तरं सुशुद्धान्येव भवेयुः। तमाखुसिगरेटप्रभृतीनां केषाञ्चिदपि मादकद्रव्याणां सेवनं न कदापि कार्यम्। बालविवाहोऽवरोधनीयः विवाहिताविवाहितच्छात्रौ नैकत्र निवसेताम्। छात्राणां स्वास्थ्यपरीक्षा सदा कार्या। संक्रामकरोगाक्रान्तच्छात्रस्तावद्विद्यालयात्पृथक् कार्यो यावत्प्रमाणितं न स्याद् यदयं नीरुजः संक्रमणभयरहित इति। छात्रैर्व्यायामो विविधः निरन्तरं कार्यः। ब्रह्मचर्यधारणार्थं सदा प्रयतनीयम्। व्यायामशाला, कंदुकक्रीडनक्षेत्रञ्चावश्यं भवेत्।

प्रत्येक अध्यापक स्वस्थवृत्त के जानने वाले हों। जिससे वे छात्रों को उपदेश देकर सदाचारशील व स्वस्थ बनाने में समर्थ हों। छात्रों को प्रत्येक कार्य सर्वदा नियम से करना चाहिये। शारीरिक अंग और वस्त्र सर्वदा अत्यन्त शुद्ध रहें। तमाखू सिगरेट आदि किसी मादक द्रव्य का सेवन कभी नहीं करना चाहिये। बाल-विवाह रोकना चाहिए। विवाहित एवं अविवाहित छात्र एक जगह न रहें। छात्रों की स्वास्थ्य-परीक्षा सर्वदा करनी चाहिए। संक्रामक रोग से पीड़ित छात्र को तबतक विद्यालय से अलग रखना चाहिए जबतक वह प्रमाणित न हो जाय कि वह निरोग और संक्रमण के भय से रहित है। छात्रों को निरन्तर विविध-भाँति के व्यायाम करने चाहिये। ब्रह्मचर्य धारण के लिए सर्वदा प्रयत्न करना चाहिये। व्यायाम-शाला और गेंद खेलने का मैदान अवश्य हो।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

चिकित्सालयः

चिकित्सालयस्य स्थानं समुन्नतं शुद्धं रोगिसमागमनसुखञ्च भवेत्।

अतो यथासम्भवं राजमार्गे तत्सन्निकटे वा स्वास्थ्यप्रदे विवृतस्थले कुर्यात्। वस्तुतो विंशतिरोगिणां शिष्टरार्थमेकैकइं स्थानमुचितम्। परन्त्वशक्तौ चत्वारिंशद्रोगिभिष्टरेभ्योऽधिकं शिष्टरं न कदापि शिष्टरणीयम्। आतुरालयः एकतलकः श्रेष्ठतरः। अधिकस्थानाऽभावे द्वितलकोऽपि निर्मातुं शक्यते। एवं सति रोगिपरीक्षागृहं कार्यालयादिकं च निम्नतलक एव स्यात्। आतुरगृहञ्चोपरितलके कुर्यात्।

साधारणतश्चिकित्सालयस्य त्रयः खण्डा भवन्ति शासकखण्डो बाह्यरोगिखण्ड आन्तरिकरोगिखण्डश्चेति।

चिकित्सालय का स्थान ऊँचा, शुद्ध एवं रोगियों के सुखपूर्वक आगमन योग्य हो। इसे यथासम्भव राजमार्ग पर अथवा उसके निकट स्वास्थ्यप्रद खुले स्थान में बनाना चाहिये। वास्तव में बीस रोगिशय्या के लिये एक एकड़ स्थान उचित है। परन्तु असमर्थ होने पर इतने स्थान में चालीस रोगिशय्या से अधिक शय्या कभी नहीं लगानी चाहिये। आतुरालय एक मंजिला ही श्रेष्ठ है। अधिक स्थानाभाव में दो मंजिला भी बना सकते हैं। ऐसा होने पर रोगि-परीक्षा-गृह और कार्यालय आदि निचले मंजिल में ही हों। रोगियों का स्थान ऊपरी मंजिल में करना चाहिये। साधारणतः चिकित्सालय के तीन खण्ड होते हैं—शासक-खण्ड, बाह्य रोगि-खण्ड एवं आन्तरिक रोगि-खण्ड।

शासकखण्डः

अत्र प्राणाचार्यस्य तत्सहायकानां च कर्मचारिणां गृहाणि, भोजनालयः, वस्तुगृहादीनि च गण्यन्ते। परिचारिकाणांतु वास-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्थानानि प्रायः पृथग्भवन्ति। एकगृहाद् द्वितीयगृहपर्यन्तं सुदृढमार्गो भवेत्। ततःकिञ्चिद्दूरे रजकगृहं निर्मातव्यम्। यत्र वस्त्रप्रक्षालनार्थमेको जलाशयः (पुष्करिणी) कतिपयशिलाखण्डाश्च स्युः। तत्र च लघुकुटीरद्वयं तथैका खपरैटिनान्यतरादिविरामिदा विवृता स्यात्। यत्रैकस्मिन् कुटीरे मलिनवस्त्राणि, द्वितीये च प्रक्षालितवस्त्राणि निधातव्यानि। वर्षाकाले विरामदायां वस्त्राणि शोषणीयानि।

इसमें प्राणाचार्य (प्रधान वैद्य), उसके सहायकों एवं कर्मचारियों के घर, भोजनालय और वस्तुगृह (स्टोर रूम) गिने जाते हैं। नौकरों के वासस्थान प्रायः अलग होते हैं। एक घर से दूसरे घर तक मजबूत मार्ग हो। उसके कुछ दूर पर धोबी का घर बनाना चाहिए। जहाँ वस्त्र धोने के लिए एक जलाशय (पुष्करिणी) और कुछ पत्थर के टुकड़े हों। वहाँ पर दो छोटे कमरे तथा एक खपरैल या टीन में से किसी से छाया हुआ, खुला बरामदा हो। जिसमें एक कोठरी में मलिन वस्त्र और दूसरी में धोये हुए वस्त्र रखने चाहिए। वर्षाकाल में बरामदे में वस्त्र सुखाने चाहिये।

बाह्यरोगिखण्डः

अत्र वातायनादिगुणसम्पन्नं स्वच्छं, रोगिव्यवस्थाद्युल्लेखार्हं, स्त्रीपुंसोरुपवेशनार्थं पृथक्पृथक् स्थानं, भैषज्यवितरणगृहं, क्षणोपचारभवनञ्च पृथक्पृथक् कार्यम्। रोगिणां विशेषपरीक्षणार्थं तत्सुप्रकाशितगृहस्यैकभागे जवनिकातिरस्कृतैका काष्ठमयी सुनम्रता शय्या भवेत्। शस्त्रक्रियाभवनञ्च तत्स्थाने स्याद्यत्र सर्वतःप्रकाशः समागच्छेत्, धूलिः कथमपिनाऽऽगन्तुं शक्नुयात्। उत्तरदक्षिणदिशोर्भित्तीनां कपाटा वातायनानि च काचमयानि सुष्ठुतः सम्यक् प्रकाशः तिष्ठेत्। परन्त्वातुरोपरि शस्त्रचकित्सकोपरि च स्पष्टसूर्यकरापातो न भवेदेवमुपायः सदा कार्यः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अस्य तलं श्लक्ष्णकठिनकान्तिमत्प्रस्तरेण (यथा संगमर्मराख्येन) निर्मितं स्यात् । तत्सन्निहितभित्तयो न्यूनातिन्यूनतः पञ्चस्फीतावतान्ताः सुश्लक्ष्णाः कान्तिमत्यश्च कार्याः । अस्मिन्नागारे कोऽप्यनावृतशरीरः सन्नाऽऽगन्तुं प्राप्ताज्ञो भवेत् । अत्रैका सोपानपरम्परा (Gallery) स्यात् । यस्याः सोपानानि बहिर्विरामदादिशि गच्छेयु र्यतो ये विद्यार्थिनः सेवायां न संलग्नाःसन्ति तेऽत्राऽऽगत्य शस्त्रक्रियांसमवलोकेरन् शवगृहं शवपरीक्षाभवनञ्चातुरालयादुपयुक्तदूरे निर्माणीयम् ।

यहाँ खिड़की आदि गुणों से सम्पन्न, स्वच्छ, रोगि-व्यवस्था आदि लिखने का घर; स्त्री-पुरुषों के बैठने के लिए अलग-अलग स्थान, औषधि वितरण-गृह और व्रणोपचार भवन (ड्रेसिंग रूम) अलग-अलग बनाना चाहिए । रोगियों की विशेष परीक्षा के लिए उस प्रकाशित घर के एक भाग में पर्दा द्वारा ढकी हुई एक ऊँची लकड़ी (पाये) की शय्या हो । शस्त्रकर्मागार उस स्थान में हो जहाँ पर्याप्त प्रकाश आता हो । किसी प्रकार भी धूलि न आ सके । उत्तर और दक्षिण दिशाओं की दीवालों में काचयुक्त दरवाजे और वातमार्ग हों, जिससे वहाँ अच्छी तरह प्रकाश रहे । परन्तु सदा ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे रोगी और शस्त्र-चिकित्सक के ऊपर स्पष्टतः सूर्य की किरणें न पड़ें । इसका फर्श चिकने, कठोर, चमकयुक्त पत्थर (जैसे संगमर्मर) से बना हो । उसके पास की दीवालें न्यूनतम पाँच फीट की ऊँचाई तक अत्यन्त चिकनी और चमकीली बनानी चाहिए । इस घर में बिना शरीर ढके हुए (नग्न) किसी को भी आने की आज्ञा न मिलनी चाहिए । यहाँ एक सोपानपरम्परा (गैलरी) होनी चाहिये । जिसकी सीढ़ियाँ बाहर बरामदा की दिशा में गयी हों । जिससे जो छात्र सेवा में न लगे हों वे यहाँ आकर शस्त्रक्रिया देखें । शव-गृह और शव-परीक्षा-गृह आतुरालय से उपयुक्त दूरी पर बनाना चाहिए ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आन्तरिकरोगिखण्डः

आतुरालयस्य रोगिगृहाण्यायताकाराणि रचनीयानि। येषां प्रतिदिक्षु विरामदा भवेयुः। रोगिगृहयोर्मध्ये न्यूनातिन्यूनं तदौन्नत्याद्द्विगुणमान्तर्य्यं स्यात्। पुरुषेभ्यः स्त्रीभ्यश्च पृथक्पृथग्रोगिगृहं भवेत्। वस्तुतः प्रत्येकरोगिगृहं २४-३० स्फीतविस्तृतं, १२-१५ स्फीत समुन्नतं, तावच्चायतं कार्यं यावत्प्रत्येकरोगिणाधिष्ठानस्य १२ वर्गस्फीतस्थानं वायोश्च १२०० घनस्फीतस्थानं लभ्येत्। विशेषतः तदेदमत्यावश्यकं यदा रोगिगृहे विद्यार्थिनः परिचारिकाश्च कार्यं कुर्युः। न्यूनातिन्यूनतःप्रतिरोगि स्थानं ६० वर्गस्फीतमितं ८१० घनस्फीतमितञ्चावश्यं स्यात्। अत्र वातायनानि मिथः सम्मुखे कार्याणि। तानि च रीतिलौहान्यतर सूक्ष्मतन्तुजालोपगुम्फितानि स्युः। यतस्तत्र मक्षिकामशकादयो नाऽऽगन्तुं शक्नुयुः। रोगिगृहेषु सुखं वातप्रविचरणार्थं प्रायो वातायनानि अनावृतानि स्युः। सम्मुखस्थत्वाद्वातप्रवाहः सदा तिष्ठति। परन्त्वेतावत्तयाप्येवं प्रबन्धः कार्यः यच्छुद्धनवीनवायुः अन्तःपथनलिकाद्वारा गृहे समागच्छेत्, अशुद्धवायुश्च वितानसन्निहितप्रकाशकगवाक्षद्वारा बहिर्गच्छेदिति। विशेषतो वर्षर्तौ शीतकाले च यदा वातायनान्यावृतानि भवन्ति तदाऽयम्प्रबन्धो बहूपयोगी। या नलिका शुद्धनवीनवाताऽऽगमनार्थं निर्मीयन्ते ता विष्टरतोऽधःस्था भवेयुः। यतो वाताक्रमणं सहसा भाभूत्। सम्भवतः प्रतिरोगं गृहं पृथक् पृथग्भवेत्। अशक्तौ त्वसंक्रामक रोगिण एकगृहेऽपि रक्ष्यन्ते प्रायेण। प्रत्येकरोगिगृहे २५-३२ शय्या भवेयुः। परन्तु मुख्यगृहे चत्वारिंशद्रोगिणामपि निवासोऽनिन्द्यः। शय्याशिरोभागा भित्तिदिशि स्थाप्याः। विष्टराणामुभयोः पंक्त्योर्मध्ये न्यूनातिन्यूनं ११ स्फीतविस्तृत एको मार्गः स्यात्। वातायनयोर्मध्यस्थले प्रत्येकशय्या स्थापनीया। अस्य

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्थलस्य विस्तारो न्यूनातिन्यूनं शय्याविस्तारापेक्षयैकस्फीताधिको भवेत्। अत्र शय्याद्वयमपि स्थापयितुं शक्यते तत्र चेन्मिथः स्फीतत्रयस्यान्तर्य्यं स्यात्। उत्तरभारत इत्यप्यावश्कं यच्छीतकाल आतुरगृहस्योष्णीकरणार्थं कश्चित्प्रबन्धः क्रियेत। एतदर्थं हसन्तिकानामुपयोगोऽतिश्रेष्ठः। उष्णकाले शीतलता प्रापणार्थं विद्युद्व्यजनं वस्त्रादिव्यजनापेक्षया श्रेष्ठतरम्। मुख्य रोगिगृहात् किञ्चिद्दूरे एककोणे स्त्रीभ्यः पुरुषेभ्यश्च पृथक्पृथक् पुरीषोत्सर्जनगृहं स्नानशाला च रचनीया। तत्र दशस्फीतायतश्चैकोमार्गः समवितानः मुख्यरोगिगृहसम्बद्धः कार्यः

आतुरालय के रोगि-गृह (वार्ड) आयताकार बनाने चाहिए जिनकी प्रत्येक दिशा में बरामदा हो। दो रोगिगृह के बीच में न्यूनतम अन्तर उनकी ऊँचाई से दूना हो। पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए अलग-अलग रोगि-गृह हों। वास्तव में प्रत्येक रोगि-गृह चौबीस-तीस फीट चौड़ा एवं बारह-पन्द्रह फीट ऊँचा हो। वह इतना लम्बा बनाना चाहिए जितने से प्रत्येक रोगी के रहने के लिए १२ वर्गफीट स्थान और वायु को १२०० घनफीट स्थान प्राप्त हो। यह विशेषतः उस समय अत्यावश्यक है जहाँ रोगि-गृह में विद्यार्थी और परिचारक दोनों कार्य करते हों। प्रति रोगी के लिए न्यूनतम स्थान ६० वर्गफीट और ८१० घनफीट अवश्य हो। यहाँ पर वातमार्ग (खिड़कियाँ) परस्पर आमने-सामने बनानी चाहिये। वे पीतल या लोहे में से किसी के सूक्ष्म तारों की जाली से नथी हों। जिससे वहाँ मक्खी और मच्छर आदि न आ सकें। रोगिगृहों में सरलता से वायु संचार के लिए वातायन खुले रखने चाहिये। उनके सम्मुख होने से सर्वदा वायु प्रवाहित होती रहती है। परन्तु ऐसा होने पर भी यह प्रबन्ध इस प्रकार करना चाहिये जिससे शुद्ध और ताजी वायु अन्तःपथ-नलिका द्वारा गृह में आये और अशुद्ध वायु छत में स्थित रोशनदान, झरोखे द्वारा बाहर चली जाय। विशेषतया वर्षा ऋतु एवं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शीतकाल में जब वातायन खुले रहते हैं तो यह प्रबन्ध अति उपयोगी होता है। जो नलिकायें शुद्ध और ताजी वायु आने के लिये बनायी जायँ वे रोगिशय्या के नीचे स्थित हों, जिससे एकाएक तेज वायु न आ सके। यथासम्भव प्रत्येक प्रकार के रोग के लिये अलग-अलग घर हों। असमर्थ होने पर प्रायः संक्रामक रोगियों के लिए एक घर सुरक्षित रक्खा जाता है। प्रत्येक रोगिगृह में चौबीस-बत्तीस रोगिशय्या हों, परन्तु प्रधान घर में चालीस रोगियों का निवास भी अनिन्द्य है। शय्या का सिरहाना दीवाल की दिशा में रखना चाहिये। शय्याओं की दोनों पंक्तियों के बीच न्यूनतम ११ फीट चौड़ा एक रास्ता हो। वातायनों के मध्य में प्रत्येक रोगि-शय्या रखनी चाहिये। इस स्थान की चौड़ाई शय्या की चौड़ाई से न्यूनतम एक फीट अधिक हो। यहाँ दो शय्या भी रक्खी जा सकती हैं, पर वहाँ उनके बीच में तीन फीट का अन्तर हो। उत्तर भारत में यह भी आवश्यक है कि शीतकाल में रोगिगृह को उष्ण करने का कोई प्रबन्ध किया जाय। इसके लिए हसन्तिकाओं (बोरसी, निहाई) का उपयोग बहुत अच्छा है। उष्णकाल में शीतलता प्राप्त करने के लिये वस्त्र और ताड़ आदि के पंखों की अपेक्षा बिजली का पंखा अधिक श्रेष्ठ है। रोगि-गृह से कुछ दूर एक कोने में स्त्री और पुरुषों के लिये अलग-अलग पाखाना और स्नान-गृह बनाना चाहिये। वहाँ मुख्य रोगी-गृह से सम्बन्ध जोड़ने वाला १० फीट चौड़ा छतयुक्त मार्ग बनाना चाहिये।

परिचारिका*गृहम्

इदं मुख्यगृहसम्बद्धैककोणे स्यात्। अत्र चैकं वातायनं रोगिनिरीक्षणार्थं रोगिगृहसम्मुखं कार्यम्।

---

* केचिद्विद्वांसः परिचारिकानियोजनमनुचितं मन्यन्ते तत्स्थाने परिचारका एव स्युः।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

परिचारिका (नर्सों) का गृह प्रधान रोगि-गृह से सम्बद्ध एक कोने में हो। यहाँ पर एक खिड़की रोगि-गृह के सम्मुख रोगियों के निरीक्षण के लिए होनी चाहिये।

शवगृहं शवपरीक्षाभवनञ्च

एतदर्थमेवम्भूतं स्थानं निर्णेतव्यं यद्रोगिगृहेभ्य उपयुक्त-दूरस्थं भवेद्।

मुर्दाघर और मुर्दा के परीक्षणार्थ रखने के घर के लिये ऐसा स्थान निश्चित करना चाहिये जो रोगिगृहों से उपयुक्त दूरी पर स्थित हो।

संक्रामकरोगिगृहम्

आतुरालयात् पृथक् पर्याप्तदूरे भवनमेकं निर्मातव्यं यत्संक्रामकरोगिणां निवासार्थं स्यात्। तत्र पृथक्पृथग्रोगानुसारेण पृथक्पृथग्गृहं कार्यम्। विसूचिकादिरोगार्ताः सन्दिग्धरोगिणश्च तत्रैव रक्षणीयाः।

आतुरालय से अलग पर्याप्त दूरी पर एक भवन बनाना चाहिए। जो संक्रामक रोगियों के निवास के लिए हो। वहाँ अलग-अलग रोगों के अनुसार अलग-अलग घर बनाना चाहिए। विसूचिका (हैजा) आदि के एवं सन्देहास्पद रोगियों को वहीं रखना चाहिये।

विशिष्टगृहाणि

धनिका, ये आतुरालये पृथक् स्थित्वाऽऽरोग्यकामाः, तेभ्यो भवेयुः। तत्र निवासकुटीरपाकशालास्नानशालाशौचालयादीनां पूर्णप्रबन्धः कार्यः। एतान्येकभूखण्ड एव निर्मातव्यानि। परन्तु गृहद्वयमध्ये भित्तिव्यवधानमवश्यं स्यात्। साधारणरोगिगृहादेतानि पृथक्स्युः।

जो धनवान आतुरालय में अलग रहकर आरोग्य की इच्छा करते हैं उनके लिए विशेष गृह (काटेज वार्ड) होते हैं। वहाँ निवास-गृह,

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रसोई घर स्नानागार और शौचालय आदि का पूरा प्रबन्ध करना चाहिये। ये जमीन के एक ही टुकड़े में बनाये जाने चाहिए, परन्तु दो घरों के बीच में दीवार की रुकावट अवश्य हो। साधारण रोगिगृह से ये अलग हों।

अधिष्ठानादीनि

रोगिगृहशस्त्रक्रियाभवनशवभवनादिषु तलमेवम्भूतं श्लक्ष्ण-मौषन्निम्नगञ्च कार्यं यज्जलं गृहसम्बद्धनालिकायां सुखं-निर्गच्छेत्। अधिष्ठानं सर्वतः समं भवेत्। तच्च मर्मराख्यप्रस्त-रादिभिरप्रवेश्यपदार्थैः रचनीयम्। गृहाभ्यन्तरिककोणा अर्ध-वृत्ताकारा भवेयुः। भित्तीनामाभ्यन्तरिक भागा अधिष्ठानाद्विता-नपर्यन्तं सुश्लक्ष्णीकार्याः। यतः सुखं प्रक्षाल्याः स्युः। द्वारदेहली तलापेक्षयोन्नता माभूत्। यतः पादाघातशङ्का न स्यात्। द्वारक-पाटफलकानि पृथुकानि वैषम्यरहितानि भवेयुः। तन्मध्यस्थ-स्य निम्नोन्नतत्वेन तत्र धूलिस्थित्या मालिन्यमापद्यते। द्वार-मध्यविस्तारो हस्तत्रयान्न्यूनो न भवेत्। यतः प्रापिका (Strature) सुखं नेतुं शक्येत।

रोगिगृह, शस्त्र-कर्म भवन और शव-भवन आदि में फर्श ऐसा चिकना और कुछ ढालुआ बनाना चाहिये जिससे जल गृह-सम्बद्ध-नलिका में सरलता से निकल जाय। फर्श सब जगह समान (ऊबड़खाबड़ नहीं, और एक सी) हो। उसे संगमर्मर नामक पत्थर, सीमेंट आदि अप्रवेश्य पदार्थ से बनाना चाहिये। गृह के भीतरी कोने अर्धवृत्ताकार हों। फर्श से लेकर छत तक दीवालों के भीतरी भागों को अत्यन्त चिकना करना चाहिए, जिससे वे सुखपूर्वक धोयी जा सकें। दरवाजे की देहली (चौखटा) फर्श की अपेक्षा ऊँची न हो, जिससे पैर में ठोकर लगने का सन्देह न हो। दरवाजे के किवाड़ के तख्ते मोटे और विषमता रहित हों। क्योंकि उसके मध्य में नीचाई ऊँचाई होने से वहाँ धूलि रुकने से

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

गन्दगी पैदा होती है। द्वार के मध्य की चौड़ाई तीन हाथ से कम न हो जिससे प्रापिका (स्ट्रेचर) सुखपूर्वक लायी जा सके।

वस्तूनि

रोगिगृहेषु तावन्त्येव बस्तूनि रक्षणीयानि यावन्ति रोगिणां परिचारकाणाञ्चात्यन्तावश्यकानि भवेयुः। व्यर्थं वस्तुजातं कदापि न स्थापयेत्।

रोगिगृहों में उतनी ही वस्तुयें रखनी चाहिये जितनी रोगियों और परिचारकों के लिए अत्यन्त आवश्यक हों; व्यर्थ वस्तुओं का समूह कभी न रक्खे।

शय्याः

लौहतारगुम्फिताः सार्धषट्स्फीतायताः ३ स्फीतविस्तृताश्च भवेयुः। शणमुञ्जाद्यन्यतमरज्जुगुम्फितासु शय्यासु मत्कुणा भृशमुत्पद्यन्ते।

लोहे के तारों से बीनी हुई साढ़े ६ फीट लम्बी और ३ फीट चौड़ी हों। सन, मूँज आदि में से किसी की रस्सियों से बीनी हुई शय्याओं में खटमल बहुत उत्पन्न होते हैं।

विशेषः

चिकित्सालये सर्वाणि वस्तुजातानि स्वच्छीकरणसुखान्येव रक्षितव्यानि।

प्रतिदिवसं प्रातः सायं कासीसाद्यन्यतमनिष्कीटकघोलद्रावाऽऽस्तुरालयतलं मार्जनीयम्।

रोगिणां वस्त्राणि सदा निर्मलीकार्याणि।

चिकित्सकपरिचारिकादिभिरातुरस्पर्शनान्तरं सद्यो हस्तौ जन्तुघ्नद्रवेण प्रक्षालनीयौ। एतदर्थं द्रवपूरितपात्रं बहिर्विरामदायां सततं रक्षणीयम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नाडीं दृष्ट्वा तु यो वैद्यो हस्तप्रक्षालनं चरेत् ।
दोषशान्तिर्भवेत्तस्य गंगास्नानफलं लभेत् ॥

चिकित्सालय में सभी वस्तुयें सुख पूर्वक स्वच्छ करने योग्य ही रखनी चाहिए ।

प्रति दिन प्रातः सायम् कासीस आदि किसी क्रिमिनाशक घोल द्वारा आतुरालय का फर्श साफ करना चाहिये ।

रोगियों के वस्त्र सर्वदा स्वच्छ रखना चाहिए । चिकित्सक और परिचारक आदि जनों को रोगी को छूने के बाद तुरन्त क्रिमिनाशक द्रव से हाथों को धो डालना चाहिये । इसके लिए द्रव से भरा बर्तन बाहर बरामदा में सर्वदा रखना चाहिये । प्राचीन आचार्यों ने कहा भी है—

नाड़ी देखकर जो वैद्य हस्त प्रक्षालन करता है । उसकी दोषशांति होती है और वह गंगा-स्नान का फल प्राप्त करता है ।

संक्रामकरोगिगृहसम्बंधिनियमाः

संक्रामकरोगिगृहे चिकित्सकादय आच्छादितशरीरावयवाः प्रविशेयुः । वहिर्गमनसमये च हस्तौ सम्यक् प्रक्षालयेयुः ।

परिचारकाः स्ववस्त्रपरिवर्तनादन्तरेण न काऽपि ततो वहिर्गच्छेयुः । परिधानवस्त्राणि कार्पासमयान्येव भवेयुः । रोगिणां निरीक्षणार्थं ये तत्सम्बन्धिनः तत्र समागच्छेयुः, तेऽप्याच्छादितशरीरा एव प्रविशेयुः । निर्गमनकाले तु हस्तमुखौ प्रक्षालयेयुः ।

यैः सह दानादानव्यवहारः स्यात् ते चिकित्सालयसीम्नो वहिर्गन्तुं नाऽऽज्ञाप्याः ।

मुक्तरोगा जना उष्णोदकस्नाता निर्मलाम्बराः सन्त आतुरालयात्पृथक् कार्याः ।

संक्रामक रोगिगृह में चिकित्सक आदि शरीर के अंगों को ढककर प्रवेश करें और बाहर जाते समय हाथों को अच्छी तरह धो लें ।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

परिचारक अपना वस्त्र बिना बदले वहाँ से कहीं बाहर न जायँ। पहनने के कपड़े कपास के (सूती) ही हों। रोगियों को देखने के लिये उनके जो सम्बन्धी वहाँ आयें वे भी अपना शरीर ढके हुए ही प्रवेश करें। निकलते समय हाथ मुँह धो लें।

जिनके साथ लेन देन का व्यवहार हो उन्हें चिकित्सालय की सीमा के बाहर जाने की आज्ञा न देनी चाहिये।

रोगमुक्त जन उष्णोदक से स्नान कराकर निर्मल वस्त्र पहना कर आतुरालय से अलग किये जायँ।

मलसंकरादिदूरीकरणविधयः

सङ्करकिट्टभेदाद् द्विविधं मलं भवति।

सङ्करमले-गृहस्य पांसुभस्ममृत्तिकाखाद्यपदार्थावयवादीनि, गोशालाश्वशालाविपणिराजमार्गवीथिकाकार्यालयादीनां शुष्कमलानि च गण्यन्ते।

किट्टमले—पुरीषमूत्रादिकं शौचालयस्नानशालामहानसादि गृहमार्जनजलमन्यद् मलिनं जलं च गण्यते।

पूर्णस्वास्थ्यप्रदकरणार्थं नगरस्य सर्वप्रकारकमलानां बहिः क्षेपणस्य समुचितप्रबन्धः कार्यः।

संकर और किट्ट भेद से मल दो प्रकार का होता है। संकर मल में घर की धूलि राख मिट्टी खाद्य पदार्थों के हिस्से आदि; गोशाला, अश्वशाला बाजार राजपथ गली और कार्यालयों के सूखे मल गिने जाते हैं।

किट्ट मल में पुरीष मूत्र आदि, शौचालय स्नान घर रसोई आदि घरों को साफ करने वाला जल और अन्य मलिन जल गिना जाता है।

नगर को पूर्ण स्वास्थ्यप्रद करने के लिये, सब प्रकार के मलों को बाहर फेंकने का समुचित प्रबन्ध करना चाहिये।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सङ्करमलस्यदूरीकरणम्

प्रथमतः सङ्करः पात्रे निक्षेपणीयः । पात्रञ्चैतद् गृहात् किञ्चिद्दूरे जनसमागमनसुखेऽधिकावकरप्राप्तिस्थले वर्षा†वाताभ्यां सुरक्षितेप्रस्तरेष्टिकानिर्मित एकस्मिन् चत्वरे स्थाप्यम् । चात्वरिकमलिनजलनिर्गमनार्थमेका नाली भवेत् । अवकरपात्रं द्विविधं भवति चलमचलञ्चेति । चलपात्रं वृत्ताकारं लौहपत्र निर्मितं विवृतमुखद्वयमितस्ततोनेयं स्वच्छीकरणसुखञ्च भवति । अचलपात्रं तु वर्गाकारमिष्टिकानिर्मितमन्तःश्लक्ष्णं (कृत सीमेन्टं) स्वच्छीकरणकृच्छ्रमनेयञ्च भवति ।

अवकरपात्रं दिवैकदाऽवश्यं निर्मलीकार्यम् । आवश्यकता नुसारेणानेकावरपात्राणि नगरे सर्वत्र स्थापनीयानि । प्रति सहस्रमनुष्यंपात्रैकमलम् । सुखं निर्मलीकरणार्थं बृहदवकरपात्रा पेक्षया लघुपात्राणि श्रेष्ठतराणि ।

यदि सम्भवतः प्रतिगृहद्वारसन्निकटे लघ्ववकरपात्रं साच्छादनं स्थाप्येत तर्ह्यत्युत्तमं भवेत् ।

पहले संकर मल को एक पात्र में रखना चाहिये। इस पात्र को घर से कुछ दूर मनुष्यों को सुखपूर्वक जाने योग्य अधिक कतवार प्राप्त होने के स्थान में वर्षा और वायु से सुरक्षित पत्थर, ईंट से बने हुए एक चबूतरे पर रख देना चाहिये। चबूतरे के गन्दे जल को निकालने के लिए एक नाली हो। कतवार रखने का पात्र दो प्रकार का होता है चल और अचल। चल पात्र गोल आकार का, लोहे की चद्दर या टीन से बना और दोनों ओर मुँह खुला होता है। जहाँ-तहाँ ले जाने योग्य एवं

† वृष्टितोरक्षार्थं चत्वरोपर्येकं वितानं कार्यम् ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

सरलता से स्वच्छ करने लायक होता है। अचल पात्र ईंट आदि से बना, भीतर चिकना (सीमेण्ट प्लास्टर से युक्त) वर्गाकार, कठिनता पूर्वक साफ करने योग्य और जहाँ-तहाँ न लेजाने लायक होता है।

कूड़ा के पात्र को दिन में एक बार अवश्य साफ करना चाहिये। आवश्यकतानुसार नगर में सब जगह अनेक कतवार के पात्र रखने चाहिये। प्रति एक हजार मनुष्यों के लिये एक पात्र पर्याप्त है। सरलता पूर्वक साफ करने में कतवार के बड़े पात्रों की अपेक्षा छोटे पात्र अच्छे होते हैं।

यदि सम्भव हो तो प्रत्येकगृहद्वार के निकट कतवार का छोटा पात्र ढक्कन सहित रक्खा जाय तो अत्युत्तम हो।

पात्रस्थापितं मलं प्रज्वालनद्वारा प्रपूरणद्वारा चेतिप्रकारद्वयेन दूरीक्रियते।

(१) प्रज्वालनम्*—मलनाशनस्योत्तमो विधिरयम्। किंतु वर्षर्तावेषा क्रिया सम्यङ् न भवति। भस्मीभूतः सङ्करोऽल्पत्वादल्पव्ययेन सुखं च वोढुं शक्यते। तद्भस्म मार्गादिनिर्माणार्थमुपयुज्यते।

(२) प्रपूरणम्—अस्मिन् विधौ संकर आच्छादितशकटेनोत्थाप्य नगराद् बहिर्नीयते। तच्च प्रगर्ते पूर्यते। कदाचिन्नगरेऽपि निम्नस्थलप्रपूरणार्थमुपयुज्यते। साच पूरितभूमिः इत्युच्यते। न्यूनातिन्यूनं विंशतिवर्षपर्यन्तमावासार्थमनुपयोज्या भवत्येषा। नास्त्ययमुत्तमो विधिः।

यतः पूरितभूमिः सन्निहितजलं दूषयितुं शक्नोति। तत्र मशक मक्षिकादिक्षुद्रजन्तवः मूषकादयश्च बहुधा निवसन्ति। मालिन्यमपि सदा तिष्ठति अत एवंविधाभूमिरसन्निहितजलाशया नगरा-

* अद्यत्वे एका भ्राष्ट्री प्रचलितास्ति। तत्रावकरं निधाय किञ्चित्कोकिलाग्निद्वारा प्रज्वाल्य भस्मीक्रियते।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

द्वहिर्नातिदूरे भवेत्। यावत् पूर्यमाणभूमिः समतला न स्यात्तावत् क्रमशोवकरस्य स्फीतद्वयोत्सेधस्तरोपरि मृत्तिकायाः षट्स्फीतोच्छ्रयः स्तरो विस्तार्यः, यत्र च हलद्वारा शाकादिकमुत्पादयितुं शक्यते।

ग्रामे तु जनाः संकरं स्वगृहद्वारसंविध एव निक्षिपन्ति। अनारोग्यकरमेतत् ग्रामाद्वहिरेव निक्षेपणीयः। किञ्चित्कालानन्तरं क्षेत्रे प्रक्षेप्य हलं प्रचाल्य कृषिः कार्या।

पात्र में रक्खे गये मल को दो प्रकार से दूर किया जाता है। प्रज्वालन द्वारा और दूसरा प्रपूरण द्वारा।

१--प्रज्वालन--यह मल नाशक को उत्तम विधि है। लेकिन वर्षा ऋतु में यह क्रिया अच्छी तरह नहीं हो पाती। राख हुआ सङ्कर मल थोड़ा होने के कारण थोड़े व्यय से सुखपूर्वक ढोया जा सकता है। यह राख मार्ग आदि बनाने में उपयुक्त होती है।

२--प्रपूरण--इस विधि में संकर मल को ढकी हुई गाड़ी द्वारा उठा कर शहर से दूर ले जाते हैं और वह गड्ढा में भरा जाता है। कभी-कभी नगर में भी नीची जमीन को भरने में उपयुक्त होता है। वह जमीन पूरित भूमि (पटाव की जमीन) कही जाती है। यह जमीन न्यूनतम बीस वर्ष के बाद घर बनाने के लिये उपयोगी होती है। यह विधि उत्तम नहीं है।

क्योंकि पूरित भूमि निकट के जल को दूषित कर सकती है। वहाँ मच्छर, मक्खी आदि छोटे जीव और चूहे आदि प्रायः रहते हैं। गन्दगी भी सर्वदा रहती है। इसलिये इस प्रकार की जमीन जलाशय से दूर, नगर के बाहर कम दूरी पर हो। जब तक पटाव की जमीन समतल न हो जाय तब तक क्रमशः कतवार की दो फीट ऊंची सतह पर मिट्टी की छ फीट ऊंची सतह बिछानी चाहिये। जहाँ पर हल के द्वारा शाक तरकारी आदि उत्पन्न किया जा सके। ग्रामीण-जन संकर मल को

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

अपने गृह-द्वार के पास ही फेंकते हैं। यह अस्वास्थ्यकर है। ग्राम के बाहर ही फेंकना चाहिए। कुछ समय के बाद उसे खेत में फेंक कर हल चला कर खेती करनी चाहिए।

किट्टमलस्य दूरीकरणम्

किट्टमलस्य दूरीकरणार्थं द्वौ विधी स्तः। सञ्चयविधिः जलवाहनविधिश्चेति।

किट्ट मल को दूर करने के लिए दो विधियाँ हैं--सञ्चय विधि और जलवाहन विधि।

(१) सञ्चयविधिः

चाण्डालयोषितस्तास्ताम्रायः सीसभूषणाः सर्वाः।
पूर्वाह्णे मलमोक्षक्रियोद्यता ग्राममाविश्य॥
[म० म० अ० ३]

ये सभी चाण्डाल (मेहतरों) की स्त्रियाँ ताम्र लोहा और सीस (नाग) के आभूषण पहन कर पूर्वान्ह में मल दूर करने के लिये तैयार हो गाँव नगर में जायें।

अस्मिन् विधौ चाण्डालः प्रत्येकं गृहं गत्वा शौचालयं निर्मलीकरोति। मलं च शकट्यां निधाय नगराद्बहिर्नयति।

इस विधि में चाण्डाल प्रत्येक घर जाकर शौचालय को साफ करता है और मल को गाड़ी पर रखकर नगर से बाहर ले जाता है।

शौचालयः—गृहेषु व्यक्तिभ्यो निर्मीयते। अयं गृहाधस्तले निवासकुटीरान्न्यूनातिन्यूनं ६ स्फीतान्तरे, तथा कूपाद्यन्यतम जलाशयात् ४० स्फीतान्तरे भवेत्। अस्य तलं प्रस्तरसीमेण्टाद्य प्रवेश्यपदार्थैर्निर्मातव्यम्। तच्च भूतलादर्धस्फीतोच्चकं स्यात्। भित्तयोऽपिश्लक्ष्णाः प्रस्तरसीमेण्टान्यतरनिर्मिताः स्यु। अत्रैको गवाक्षो भवेत्। यतः कपाटावरणादपि शुद्धवायुरागच्छेत्। मल-पात्रस्थानमपि सीमेण्टप्रस्तररचितं स्यात्। तदधिष्ठानं नागरिक-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नालीदिशि किञ्चिन्निम्नगं भवेत् । यतो मूत्रादिकं स्वयमेव नाल्यां निर्गच्छेत् । मलपात्रस्थानस्य बाह्यद्वारमेतावद्विघृतं स्याद्येन चाण्डालो निर्बाधं निर्मलीकर्तुं शक्नुयात् । स्वच्छता दिवा वारद्वयं कार्या । मलपात्रस्थानस्य व्यासः ९ पर्वकादनधिकः, उत्सेधः ६ पर्वकादन्यूनः स्यात् । मलमूत्रार्थं पृथक्पृथक् पात्रंꣳ स्याच्चेत्तर्ह्यत्युत्तमता भवेत् । एवं सति मूत्रकणोत्पतनं शीघ्रं च न भवति । तथा मलस्य दहने खातप्रपूरणे वा सौकर्यं सम्पद्यते ।

शौचालय घरों में व्यक्तियों के लिए बनाया जाता है । यह घर के निचले मंजिल में निवास-गृह से न्यूनतम ६ फीट दूर एवं कूप आदि किसी जलाशय से ४० फीट दूर हो । इसका फर्श पत्थर, सीमेंट आदि अप्रवेश्य पदार्थों से बनाना चाहिए । जो पृथ्वी के धरातल से आधा फीट ऊँचा हो । दीवालें भी चिकनी, पत्थर, सीमेंट आदि किसी पदार्थ से बनी हों । यहाँ एक झरोखा हो, जिससे किवाड़ बन्द कर देने पर भी शुद्ध वायु आये । मलपात्रस्थान भी सीमेंट या पत्थर से बनाया हुआ हो । उसका फर्श नगर की नाली की दिशा में कुछ ढालुआ हो । जिससे मूत्रादि स्वयं बहकर नाली में निकल जाय । मलपात्र के स्थान का बाहर द्वार इतना खुला हो जिससे चाण्डाल आसानी से साफ कर सके । इसकी सफाई दिन में दो बार करनी चाहिए । मलपात्र के स्थान की गोलाई ९ पर्व (१२ अंगुल) से अधिक न हो । ऊँचाई ६ पर्व (८ अंगुल) से कम न हो ।

मल और मूत्र के लिए यदि अलग-अलग पात्र हों तो उत्तम है । ऐसी अवस्था में मूत्र-बिन्दुओं का उछलना और पुरीष का सड़ना नहीं होता है, मल के जलाने या गढ्डा में भरने में सरलता होती है ।

सामान्यवर्चोगृहम्–सर्वसाधारणजनार्थं निर्मीयते । यदस्थायि

ꣳ अद्यत्वे पात्रमेवम्भूतं निर्मितं यत्र मूत्रकणा नोत्पतन्ति ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

स्थायि चेति द्विविधं भवति। अस्थायि, सम्मेलनोत्सवादौ प्रयुज्यते। स्थायि वर्चोगृहं जनावासतः २० स्फीतादधिकान्तरे, कूपादिजलाशयात् ५० स्फीतादधिकान्तरे च भवेत्, एतत् समुन्नतकठोरस्थले लौहपात्रैरिष्टिकाभिर्वा निर्माप्यम्। प्रत्येकवर्चोगृहे गोपनार्थमेको द्वारकपाटः, शौचाय जलपात्ररक्षणार्थमेकं विशेषस्थानं च स्यात्। शुद्धवातागमनार्थं कपाटोपरिभागे छिद्राणि जालकानि वा भवेयुः। पुरीषमूत्रार्थं पृथक् पृथक् पात्रं † लौहश्लक्ष्णचीनीयमृत्तिकान्यतरनिर्मितं स्यात्। स्त्री-पुरुषेभ्यः पृथक्पृथग्वर्चोगृहाणि स्युः। वसत्यनुसारेण प्रति त्रिंशन्मनुष्यमेकं वर्चोगृहं स्यात्। तच्च दिवाऽऽऽनेकवारं निर्मलीकार्यम्। एकत्रीकृतं मलमेकस्मिन् लौहनिर्मिते साच्छादने वृहत्पात्रे निधातव्यम्। तच्च दिवा वारद्वयं मलशकट्यां निक्षिप्यनगराद्बहिर्नीत्वा खातादौ प्रपूरणीयम्। मलनिधानपात्रं सदा स्वच्छीकार्यम्। वर्चोगृहस्याभ्यन्तरे तत्पृष्ठभित्तिसंल्लग्नाश्च नाल्यो भवेयुः। या नगरस्य वृहन्मलपथेन सम्बद्धाः स्युः। मलपथाभावे इष्टिकासीमेण्टरचितमेकं क्षुद्रगर्तं कार्यं यत्र मूत्रादिकमेकत्रीभवेत् तन्मलद्रवं दिवा वारद्वयं नगराद्बहिर्नियतस्थले प्रक्षेप्यम्।

सामान्य पुरीष गृह सर्वसाधारण मनुष्यों के लिए बनाया जाता है जो अस्थायी और स्थायी दो प्रकार का होता है। अस्थायी मेला एवं उत्सव आदिमें प्रयुक्त होता है। स्थायी पुरीषगृह मनुष्यों की बस्ती से बीस फीट से अधिक दूरी पर और कुआँ आदि जलाशय से ४० फीट से अधिक दूरी पर हो। ऊँची और कठिन भूमि में लोहे की चद्दर या ईंट आदि से बनाना चाहिए। प्रत्येक पुरीष गृह में शरीर न दिखायी पड़ने के लिए एक द्वार का किवाड़ा हो और शौच निमित्त ले गये जलपात्र को

† कोलतारेण प्रतिमासं प्रलिप्तं कार्यम्!

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

रखने के लिए एक विशेष स्थान हो। शुद्ध वायु आने के लिए किवाड़ के ऊपरी भाग में छिद्र अथवा जालियाँ हों। पुरीष और मूत्र के लिए लोहे और चिकनी चीनी मिट्टी में से किसी से बना हुआ अलग-अलग पात्र होना चाहिए। उसे दिन में कई बार साफ करना चाहिए। एकत्र किया हुआ मल लोहे से बने हुए ढक्कन युक्त एक बड़े पात्र में रखना चाहिए। उसे दिन में दो बार मल की गाड़ी में डालकर नगर से बाहर ले जाकर गड्ढे आदि में भरना चाहिए। मल रखने का पात्र सर्वदा साफ करना चाहिए पुरीषगृह के भीतर उसकी पिछली दीवाल से लगी हुई नालियाँ हों। जो नगर में वृहन्मलपथ से सम्बद्ध हों। मल-पथ के अभाव में ईंट सीमेण्ट आदि से बना हुआ एक छोटा गड्ढा बनाना चाहिए जहाँ मूत्र आदि इकट्ठा हो। उस मलद्रव्य को दिन में दो बार नगर से बाहर निश्चित स्थल में फेंकना चाहिए।

मलशकटिः—इयं वेल्लनाकारा लौहनिर्मिता साच्छादना भवति। अन्याप्येका भवति यत्र मलपात्राण्येव सन्निधाय नगरा द्बहिर्नीयन्ते। सा 'पात्रशकटिः' इत्युच्यते। लघुवर्चोगृहार्थश्रेष्ठतरेयम्। यतः शकट्यां पुरीषभरणाद्यदौर्गन्ध्यमुत्पद्यते तन्मलपात्राणां स्थापने न भवति। शकट्यां मलभरणस्य समयो रात्रौ ९ वादने सुप्रात र्वा भवेत्। मन्दगतिकशकटयपेक्षया द्रुतगतिका श्रेष्ठतरा।

यह लोहे से बनी हुई वेलनाकार ढक्कन युक्त होती है। एक दूसरी भी होती है जिसमें मल-पात्रों को ही रखकर नगर से बाहर ले जाया जाता है। उसे 'पात्रशकटी' कहते हैं। छोटे पुरीष-गृह के लिए यह श्रेष्ठ है। क्योंकि गाड़ी में मल भरने में जो दुर्गन्ध उत्पन्न होती है वह केवल मलपात्र के रख देने में नहीं होती। गाड़ी में मल भरने का समय ९ बजे या अत्यन्त प्रातः काल (खूब सबेरे) हो। धीमी चाल वाली गाड़ी की अपेक्षा तेज गति वाली गाड़ी अच्छी होती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-C

किट्टमलस्यान्तिमो निक्षेपः

एकत्रीभूतस्य मलस्य निक्षेपणार्थं त्रयो विधयः सन्ति, खात-प्रपूरणं गर्त्तप्रपूरणं प्रज्वालनञ्चेति ।

खातप्रपूरणम्—सर्वोत्तमविधिरयमेव यन्मलं खाते प्रपूर्य किञ्चित्कालं भूमावधिवासयेत् । ततः खादरूपत्वेनापद्यमानंतत् कृषकेभ्योदद्यात् । खातभूमितलमार्द्रं जलपूर्णं वा न भवेत्। किन्तु सन्निहितभूमितलात्किञ्चिदुन्नतं शुष्कं च स्यात्। यतस्तत्र जलं न कदाप्येकत्रीभवितुं शक्नुयात्। एवम्भूताया भूमेरप्राप्तौ-भूतलं स्वयमेव मृत्तिकया समुन्नतीकार्यम् । पूरणार्थंमृत्तिका-ग्रहणार्थं सन्निकट एवैकं गर्तं खननीयम्। यत्र स्थितेन वार्षिक जलेन मलशकटिर्मार्जनीया । इयं खातभूमिर्नगराद्बहिर्न्यूनाति-न्यूनतः ३०० दण्डान्तरे, पेयजलाशयात् १५० दण्डान्तरे चावा-तमुखायां दिशि रहसि भवेत् । इमां समतलां कृत्वा द्वादशभागेषु विभजेत् । प्रत्येक भागो मासैकस्य मलप्रपूरणायालं स्यात् । या भूमिः खातार्थमेकदा प्रयुक्ता स्यात् सा वर्षद्वयं यावत् तदर्थं नोपयोज्या ।

इकट्ठे हुए मल को निक्षेपण करने के लिये तीन विधियां हैं—खात प्रपूरण, गर्त्तप्रपूरण और प्रज्वालन ।

खातप्रपूरण :—यही सर्वोत्तम विधि है । इसमें मल को गड्ढे में भरकर कुछ समय तक पृथ्वी में रख देते हैं । फिर उसके खाद रूप में आ जाने पर किसानों को दे दिया जाता है । गड्ढे का फर्श गीला या जल पूर्ण न हो । बल्कि निकट की भूमि से कुछ ऊँचा और सूखा हो। जिससे वहाँ जल कभी भी इकट्ठा न हो सके । इस प्रकार की भूमि न मिलने पर स्वयं जमीन को मिट्टी से पाट कर ऊँची कर लेनी चाहिए । पाटने वाली मिट्टी लेने के लिए निकट ही एक गड्ढा खोद लेना चाहिए । जिसमें स्थित वर्षा जल से मल-शकटी धोई जा सके । यह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

खातभूमि नगर से बाहर न्यूनतम ३०० दण्ड (१ दण्ड = ४ हाथ = २ गज) दूर और जल के आशय से १५० दण्ड दूर अवात-मुख (जिधर से वायु न बहती हो) दिशा में एकान्त में हो। इसको समतल कर १२ भागों में बाँट दे। प्रत्येक भाग एक महीने का मल भरने के लिये पर्याप्त है। जो भूमि गड्ढे के लिए एक बार प्रयुक्त हो चुकी हो वह दो वर्षतक इस कार्य के लिए उपयोग में नहीं आनी चाहिए।

खातपूरणप्रकाराः

(१) गभीरखातपूरणविधिः—अत्र खातानि २ स्फीत विस्तृतानि, २ स्फीतगभीराणि च खन्यन्ते। यानि सरलसमानान्तररेखासु परस्परं स्फीतद्व्यान्तर्ये भवन्ति। यत्र ८ पर्वतः १२ पर्वगाम्भीर्यान्तं मलमूत्रेणापूर्योपरिखनितमृत्तिका प्रक्षिप्यते। खातपूरितं मलं ६ मासानन्तरमहानिकरं जायते। ततः खाद-रूपत्वेनापद्यमानं तत् कृषकेभ्यो दीयते। परन्तु विक्रयणात्पूर्वं निखन्य परीक्षणीयं यत्खातपूरितपदार्थाः शुष्का दौर्गन्ध्यरहिताः सन्ति नवेति। समयोऽयं यदस्य खातपूरितपदार्थस्य परिवर्तने लगति, प्रत्येकभूमिप्रकृत्योपर्याश्रितः।

खातार्थं प्रतिसहस्रमनुष्यं तृतीयांशैकड़स्थानस्य प्रतिवर्ष-मावश्यकता भवति।

एवं मूत्रमपि खाते प्रपूरणीयं भूतले वा प्रक्षेपणीयम्। भूत-लस्य खण्डचतुष्टयं कृत्वा प्रत्येकखण्डे प्रतिसप्ताहं पर्याय क्रमेण मूत्रं प्रक्षेप्यम्। द्वितीयवारे भूतलखण्डे हलं प्रचाल्य पुनः प्रक्षेप्तव्यम्।

गम्भीरखातपूरण विधि—इसमें गड्ढे २ फीट चौड़े और २ फीट गहरे खने जाते हैं। जो सीधी समानान्तर रेखा में परस्पर २ फीट की दूरी पर होते हैं। जिसमें ८ पर्व (८ इञ्च) से १२ पर्व (१२ इञ्च) की गहराई तक मल-मूत्र से भर कर खनी हुई मिट्टी

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

छोड़ दी जाती है। गड्ढे में भरा हुआ मल ६ मास के बाद हानिकर नहीं रह जाता। तब खाद बन जाने पर वह किसानों को दिया जाता है। परन्तु विक्रय के पूर्व खन कर परीक्षा कर लेनी चाहिए कि गड्ढे में भरी हुई चीजें सूखी और दुर्गन्धि रहित हो गई हैं या नहीं। जो समय खाद में भरे हुए पदार्थों के परिवर्तन में लगता है वह प्रत्येक जमीन की प्रकृति पर आश्रित है। प्रति हजार मनुष्यों के मल की खाद के लिए प्रत्येक वर्ष $\frac{1}{3}$ एकड़ भूमि की आवश्यकता होती है।

इसी प्रकार मूत्र को भी गड्ढे में भरना चाहिए अथवा पृथ्वी पर गिरा देना चाहिए। जमीन के टुकड़े का ४ भाग कर प्रत्येक भाग में प्रत्येक सप्ताह बारी-बारी से मूत्र छोड़ना चाहिए। दूसरी बार उस भाग पर हल चला कर पुनः मूत्र छोड़ना चाहिए।

(२) अगभीरखातपूरणविधिः—अत्र खातं २ स्फीतविस्तृतं ६ पर्वगम्भीरं खन्यते। खातयोः पंक्तिद्वयमध्यस्थले स्फीतैकस्यान्तर्य्यं भवति। द्विपर्वगम्भीरं मलेनाऽऽपूर्य खातस्य शेषभागः शुष्कमृत्तिकया प्रपूर्यते। अत्र भूमौ कृषिः क्रियते। खादातिशयेन ये पदार्था उत्पद्यन्ते तेऽत्र सुतरां भवन्ति। अस्मिन् विधौ गभीरखातापेक्षया चतुर्गुणं [प्रतिसहस्रमनुष्यं १, १।३ एकड़] स्थानं लगति। नास्त्ययमुत्तमो विधिः। यतो मक्षिकादयो बाहुल्येन समुद्भवन्ति। यत्र देशे च जलाभावाद्वृक्षवातः प्रवहति तत्र तद्भूमौ जलमपि प्रक्षिप्यते। यतो वात्या तत्रस्थं खादमलांशं बहिर्न समीरयेत्।

अगभीर खात पूरण विधिः—इसमें गड्ढा २ फीट चौड़ा और ६ इञ्च गहरा खना जाता है। गड्ढों की दो कतारों के बीच में १ फीट का अन्तर रहता है। गड्ढे का दो इञ्च भाग मल से भर कर बाकी हिस्सा सूखी मिट्टी से भरा जाता है। इस भूमि में खेती की जाती है। अधिक खाद से जो पदार्थ उत्पन्न होते हैं वे इसमें बहुत होते हैं।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इस विधि में गंभीर खात की अपेक्षा चौगुना (१¼ एकड़ प्रत्येक हजार मनुष्यों के लिए) स्थान लगता है। यह उत्तम विधि नहीं है। क्योंकि इसमें मक्खियाँ आदि अधिकता से उत्पन्न होती हैं। जिस देश में जलाभाव से रूक्ष वायु बहती है वहाँ इस भूमि में जल भी छोड़ा जाता है। जिससे वायु के वेग से वहाँ की खाद का मलांश बाहर नहीं आता।

(३) तृतीयो विधिः—* अत्र १६ स्फोतायामं ५ स्फीत-विस्तारम् १ स्फीतगभीरं च खातं खन्यते। द्विखातयोरन्तरालं ६ पर्वकं भवति। खातेभ्यो या मृत्तिका निष्कास्यते सा चूर्णी क्रियते। खातेषु मूत्रादिद्रवयुक्तमलं निःक्षिप्योपरि सा चूर्णरूपा मृत्प्रक्षिप्यते। एवं मलद्रवांशः तत्क्षणं विशुष्यति। अतस्तत्र मक्षिकादयो नोत्पद्यन्ते। द्रवयुक्तमलप्रपूरणाय विधिरयमत्युत्तमः। अस्यां भूमौ तमाखोरालुकानां चौत्पत्तिः सुतरां भवति। तत्र च प्रायः ४ वर्षपर्यंतं खादप्रक्षेपणस्यावश्यकता न भवति।

तीसरी विधि—इस विधि में १६ फीट लम्बा, ५ फीट चौड़ा और १ फीट गहरा गड्ढा खोदा जाता है। दो गड्ढों के बीच ६ इञ्च का अन्तर होता है। गड्ढों से जो मिट्टी निकाली जाती है वह चूर्ण कर ली जाती है। गड्ढों में मूत्रादिद्रवयुक्त मल छोड़कर ऊपर वही चूर्ण की गयी मिट्टी छोड़ी जाती है। इस प्रकार मल का द्रवांश उसी क्षण सूख जाता है। इससे वहाँ मक्खियाँ आदि नहीं उत्पन्न होतीं। द्रवयुक्त मल भरने के लिये यह विधि अत्यन्त उत्तम है। इस जमीन में तमाखू और आलू आदि की उत्पत्ति बहुत होती है। वहाँ प्रायः ४ वर्ष तक खाद फेंकने की आवश्यकता नहीं होती।

(४) चतुर्थो विधिः†—अयमपि तदैवोपयुज्यते यदा मलं

* यौर्नहिलमहाशयेन बरेलीनगरे प्रथमतो विधिरयमुपयोजितः।
† विधिरयंप्रयागे प्रयुज्यते।

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha. CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मूत्रेण मलिनोदकेन च समन्वितं भवति। प्रथमत एकं १६ स्फीतायतं ५ स्फीतविस्तृतं च स्थानं माप्यते। ततस्तदुपरि २-३ पर्वकं गभीरं खनित्वाऽगभीरखातमिव निर्मीयते। तत्खाततल मृत्तिका ९ पर्वकमभितः खनित्वा छिद्रमयी क्रियते। ततस्तत्र मलमूत्रादिकं निक्षिप्यते। मलद्रवांशः सत्वरं विशुष्यति। किट्टांशश्चोपरि सन्तिष्ठते। तदुपरि ३ पर्वकं मृद् विस्तार्यते। अत्र हलप्रचालनं विनैव शष्पादीनां कृषिःकार्या। अस्मिन् विधौ मलं प्रायः सप्ताहात् पूर्वमेव विघट्टते। एतदर्थमगभीरखातापेक्षया चतुर्गुणा भूमिः स्यात्। अत्र ४-५ वर्षपर्यन्तं पुनः खादप्रक्षेपणस्यावश्यकता न भवति, परन्त्वत्र मक्षिकादय उत्पद्यन्ते। यदि तत्र निर्वापितं चूर्णं प्रक्षिप्येत तर्ह्ययं दोषोऽपगम्यते।

चौथी विधिः—यह विधि भी उसी समय प्रयुक्त होती है जब मल मूत्र और गन्दे जल से युक्त रहता है। पहले ही १६ फीट लम्बा और ५ फीट चौड़ा स्थान नाप लिया जाता है। उसमें २-३ इंच गहरा गड्ढा खनकर अगभीर खात के समान बनाया जाना है। उस गड्ढे के फर्श की मिट्टी ९ पर्व (१२ अंगुल) तक खनकर छिद्रयुक्त बना ली जाती है। फिर उस गड्ढे में मलमूत्र आदि छोड़ा जाता है। मल का द्रव अंश तुरन्त सूख जाता है। उसके ऊपर ३ पर्व (४ अंगुल) मिट्टी बिछा दी जाती है। वहाँ बिना हल चलाये ही घास आदि की खेती करनी चाहिये। इस विधि में मल प्रायः एक सप्ताह के पूर्व ही विघटित हो जाता है। इसके लिये अगभीरखात की अपेक्षा चौगुनी भूमि होनी चाहिये। यहाँ ४ वर्ष तक पुनः खाद फेंकने की आवश्यकता नहीं होती। परन्तु इसमें मक्खियाँ आदि उत्पन्न होती हैं। यदि इसमें बुझा हुआ चूना छोड़ दिया जाय तो यह दोष चला जाता है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गर्तप्रपूरणम्

अद्रवाणामीषद्द्रवयुक्तानां वा मलानां निक्षेपणार्थं प्रकारान्तरमेतत्। प्रायेणात्रगर्तं २० वर्गस्फीतक्षेत्रफलकं ४ स्फीत गभीरं च खन्यते। तच्च मलेन प्रपूर्यते। मलप्रपूरणकाले मध्ये मध्ये मृत्तिकास्तरोऽपि विष्टरणीयः। तथा गर्तोपर्यप्येकस्फीतोन्नता मृत्तिका प्रक्षेप्या। एवंकृते त्रिमासानन्तरं खादायोपयोज्यं जायते। परन्तु चिरकालस्थित्या तदुत्पादकशक्तिर्विनष्टा भवति। गर्तमिदं निवासस्थानाज्जलाशयाद्वा १५० दण्डाभ्यन्तरे न खननीयम्। यस्मिन् मलमूत्रं मलिनजलं च सम्मिलितं भवति तत् सूर्यतापेन क्षुब्धं भूत्वा विघट्टते। दौर्गन्ध्यञ्चातनोति। यदा च बहु शुष्कं जायते यथा विघटनजन्यदूषितवायुना स्वोत्पादकशक्तिं परित्यजति। सुप्राचीनो विधिरयम्। यत्र चाण्डाला गृहे गृहे गत्वा मलं समाहृत्य स्वयं निक्षिपन्ति तत्रायमुपयुज्यते। अस्मिन् विधौ यदि सुसावधानता न क्रियेत तर्हि न स्यादस्य सन्तोषजनकत्वम्।

द्रवरहित अथवा कुछ द्रवयुक्त मलों को फेंकने के लिये यह दूसरा प्रकार है। प्रायः इसमें १० वर्ग फीट क्षेत्रफल का और ४ फीट गहरा गड्ढा खना जाता है। उसको मल से भरा जाता है। मल भरते समय बीच-बीच में मिट्टी की सतह भी बिछानी चाहिए। तथा गड्ढों के ऊपर भी एक फीट ऊँची मिट्टी डालनी चाहिए। ऐसा करने पर ३ मास के बाद खाद के उपयोग में आता है। परन्तु बहुत देर तक रहने से इसकी उत्पादक शक्ति नष्ट हो जाती है। यह गड्ढा निवास स्थान से या जलाशय से १५० दण्ड (१ दण्ड = ४ हाथ) के बीच में नहीं खनना चाहिए। जिसमें मलमूत्र और गन्दा जल सम्मिलित रहता है वह सूर्यताप से क्षुब्ध होकर विघटित होता है और दुर्गन्धि फैलाता है और जब बहुत सूख जाता है तब विघटन जनित दूषित वायु से

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अपनी उत्पादक शक्ति त्याग देता है। यह विधि अत्यन्त प्राचीन है। जहाँ पर मेहतर घर घर जाकर मल लेकर स्वयं फेंकते हैं वहाँ यह उपयुक्त होती है। इस विधि में यदि अत्यन्त सावधानी न की जाय तो यह सन्तोषजनक नहीं होती।

प्रज्वालनम्

विधिरयं यत्र द्रवाद्रवयोर्मलयोः पृथक् पृथक् सञ्चयः क्रियते, शुष्ककाष्ठंचबहु समुपलभ्यते, वर्षा च स्वल्पा भवति तत्र प्रयुज्यते। प्रज्वालनस्थानं नगराद् बहिः समीप एव भवेत्। तत्रैकं शुष्ककाष्ठसंरक्षणार्थं गृहमपि स्यात्। प्रज्वालनार्थं काष्ठं स्वल्पं स्वल्पं शनैः शनैः प्रक्षेप्यम्। तत्र चैकः चाण्डालः सर्वदा तिष्ठेत्। सार्वजनिकवर्चोगृहसमीपे, मलशकटिनिवेशस्थानेऽपि प्रज्वाल्यते।

यह विधि वहीं प्रयुक्त होती है जहाँ द्रव और द्रवरहित मल का अलग-अलग सञ्चय किया जाता है, सूखी लकड़ी बहुत मिलती है और वर्षा थोड़ी होती है। प्रज्वालनस्थान नगर के बाहर समीप ही होता है। वहाँ सूखी लकड़ी रखने के लिए घर भी हो। जलाने के लिए एक घर भी हो। जलाने के लिए थोड़ी-थोड़ी लकड़ी धीरे-धीरे छोड़नी चाहिए। वहाँ एक मेहतर सर्वदा रहे। सार्वजनिक पुरीष गृह के पास, मल की गाड़ी रखने के स्थान में भी मल जलाया जाता है।

मूत्रालयः

प्रायो जनाः स्वभावतः नगरे वीथिकासु गृहभित्तिपृष्ठभाग एव मूत्रयन्ति। यतः यत्र जनतागमनागमनबाहुल्यं स्यात्तत्रोपयुक्तस्थानेषु मूत्रालयानां प्रबन्धः कार्यः। जनैरपि तत्रैव मूत्रोत्सर्जनं कार्यं नान्यत्र क्वापि।

अद्यत्वे द्विविधो मूत्रालयो निर्मीयते। दृढ़श्लक्ष्णतलो

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पर्यंकश्चत्वरः क्रियते। तत्तटादधो मूत्रणपात्रं निधीयते। चत्वरो-पर्युपविश्य मूत्र्यते। यदा मूत्रपात्रं परिपूर्णं जायते तदा तदपनीय द्वितीयं रिक्तं पात्रं निधीयते। एकत्रीभूतं मूत्रं खाते निक्षिप्यते।

(२) उपर्यधः क्रमेण पात्रद्वयं स्थाप्यते। उपरितने पात्रे छिद्रं भवति यदुपरि काष्ठचूर्णं [बुरादा] प्रक्षिप्य मूत्र्यते। सर्वं मूत्रमधः प्रस्रुतं भवति। यदा कदा काष्ठचूर्णं परिवर्तनीयम्। स्वास्थ्यदृष्ट्या श्रेष्ठतरोऽयम्।

नगरों में प्रायः लोग स्वभावतः गलियों में घर की दीवाल के पिछले भाग में ही पेशाब करते हैं। इसलिये जहाँ पर जनता का गमन, आगमन अधिकता से होता हो वहाँ उपयुक्त स्थान में मूत्रालयों का प्रबन्ध करना चाहिये। मनुष्यों को भी वहीं पेशाब करना चाहिये, अन्यत्र कहीं नहीं।

आजकल दो प्रकार का मूत्रालय बनाया जाता हैं।

(२) मजबूत और चिकने फर्शपर एक चबूतरा बनाया जाता है। उसके किनारे नीचे मूत्रण पात्र रक्खा जासा है। चबूतरे पर बैठकर पेशाब किया जाता है। जब मूत्रपात्र भर जाता है तो उसे हटाकर दूसरा खाली बर्तन रक्खा जाता है। इकट्ठा हुए पेशाब को गढ़े में फेंक दिया जाता है।

(२) क्रमशः ऊपरी पात्र में छिद्र होता है जिसके ऊगर काष्ठ का चूर्ण (बुरादा) डालकर पेशाब करते हैं। सभी मूत्र नीचे छन जाता है। कभी-कभी काष्ठचूर्ण को बदल देना चाहिये। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह विधि अच्छी है।

प्रणाल्यः

संचयविधौ स्नानशालादीनां मलिनं जलं नगरसभाद्वारा निर्मिताभिः प्रणालीभिरेकत्रीं भवति। एताः प्रणाल्यः प्रस्तरादिना

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

केनचिदनाचूषकपदार्थेनागभीराः सरकतटाभ्यां सहैव निर्मीयन्ते। प्रायो बालकादयः तत्रैव मलमूत्रादिकं त्यजन्ति। अतो दिवा वारद्वयं तच्छुद्धिरवश्यं कार्या। तदेकत्रीभूतं मलिनं जलमन्ततो नद्यां सम्मेल्यते। परन्तु यदि नलकेन कुल्याकेदारद्वारा वा यथासम्भवं क्षेत्रे प्रक्षिप्येत तर्हि सुतरामन्नोत्पत्तिः स्यात्। एतेन मन्दगत्या सिच्यमानोषराभूमिरप्युर्वरा जायते।

संचय विधि में स्नानागार आदि का मैला जल नगर सभा द्वारा बनायी गयी नालियों द्वारा इकट्ठा होता है। ये नालियाँ पत्थर आदि किसी अप्रवेश्य पदार्थ से सड़क के दोनों किनारों से सटी हुई कम गहरी बनायी जाती हैं। प्रायः बालक आदि वहीं पाखाना पेशाब करते हैं। इसलिये दिन में दो चार बार उसकी शुद्धि अवश्य करनी चाहिये। वह इकट्ठा हुआ मैला जल अन्त में नदियों में मिल जाता है। परन्तु यदि नलकों या नाली और क्यारी द्वारा यथासम्भव खेत में डाला जाय तो बहुत अन्न की उत्पत्ति हो। इससे धीरे-धीरे सींची जाने पर ऊसर जमीन भी उपलाऊ हो जाती है।

(२) जलवाहनविधिः

सञ्चयविधौ मलमूत्रादिकं किञ्चित्कालमेकत्रीक्रियते। पश्चाद् बहिर्निक्षिप्यते। अतोऽनेकाः क्षतयः सम्भवन्ति। (१) एकत्रीभूतं मलं समाच्छादितं सत् सुरक्षितं न स्याच्चेत्तर्हितत्र मक्षिका अण्डानि दातुं शक्नुवन्ति। (२) अनेकवृषभशकटिचाण्डालादीनां नियुक्त्या व्ययाधिक्यं भवति। (३) सङ्करमलनिक्षेपणं चाण्डालाश्रितं, परन्तु सुप्रबन्धेनाऽपि चाण्डालाः प्रायेण यदा कदा कार्यं परित्यजन्ति। अतः सर्वप्रकारेणापि जलवाहनविधिः श्रेष्ठतरो मन्यते। यतोऽत्र मलमूत्रादिकनिक्षेपणं पराश्रितं न भवति। परन्त्वयं विधिस्तत्रैव व्यवह्रियते यत्र जलाधिक्यं भवेत्। अतः सर्वनगरे नोपयोक्तुं शक्यते।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

संचय विधि में मलमूत्र आदि कुछ समय तक इकट्ठा किया जाता है। बाद में बाहर फेंका जाता है। इससे अनेक हानियाँ होती हैं। १—इकट्ठा हुआ मल अच्छी तरह ढका हुआ सुरक्षित न हो तो वहाँ मक्खियाँ अण्डे दे सकती हैं। २—अनेक बैलगाड़ी और मेहतर आदिकों को रखने से व्यय अधिक होता है। ३—संकर मल का फेंकना चाण्डाल पर निर्भर है। परन्तु उत्तम प्रबन्ध से भी चाण्डाल प्रायः कभी-कभी कार्य त्याग देते हैं। इसलिए सभी प्रकार से जलवाहन विधि बहुत अच्छी है। क्योंकि इसमें मलमूत्रादि का फेंकना दूसरे पर निर्भर नहीं रहता। परन्तु यह विधि वहीं प्रयुक्त होनी है जहाँ अधिक जल हो। इसलिए सभी नगरों में नहीं उपयोग की जा सकती।

साधनानि

जलवाहनविधौ मुख्यसाधनानि चत्वारि भवन्ति—जलसंवाहकमलपात्रं किट्टनलो गृहमलपथः किट्टवाहश्चेति।

जलवाहन विधि में मुख्य साधन चार होते हैं :—(१) जलसंवाहक मलपात्र, २—किट्टनल, ३—गृहमलपथ, ४—किट्टवाह।

जलसंवाहकमलपात्रम्

एकस्मिन् कुटीरे मलमूत्राद्यर्थं यन्त्रविशेषस्य प्रबन्धो भवति। तत्र मलवाहनार्थमेकं लघु जलसञ्चयन (हौज) मप्यपेक्ष्यते। यत्र मलमुत्सृज्यते तद् 'जलसंवाहकपात्र' मिति निगद्यते। एतदप्रवेश्यपदार्थैः श्लक्ष्णप्रस्तरचीनीयमृतिकादिभिर्निर्मितं पर्याप्त-जलाधारकमनुत्पतनीयोदकं च स्यात्। अस्य स्थानं गृह-स्यैकतटे मुख्यभित्तेर्वहिः किञ्चिद्दूरे वा क्रियते। किन्तु तेन सहै-कवीथिकाद्वारा गृहसम्बन्धो भवेत्। शौचालयस्य भित्तयः श्लक्ष्णाः सीमेन्टादिनिर्मिताः स्युः अनेकतलकसदने प्रातिखण्डि-कानि वर्चोगृहाणि मिथो नीचैरुपरिक्रमेण भवेयुः। तेषां तलानि प्रस्तरसीमेन्टनिर्मितानि मध्यस्थमलपात्रं प्रत्यभितो निम्नगानि

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्युः। पादरक्षणार्थं मलपात्रस्योभयदिशि तत्समतले पादपीठे निर्मीयेते। वर्चोगृहस्य क्षेत्रफलं ६ वर्गस्फीतान्न्यूनं न कदापि कार्यम्।

एक कमरे में मलमूत्र आदि के लिए एक विशिष्ट यन्त्र का प्रबन्ध होता है। वहाँ मल बहाने के लिए छोटा जलसंचयन (हौज) भी होना चाहिए। जहाँ पर मल छोड़ा जाता है वह 'जलसंवाहक पात्र' कहा जाता है। वह चिकने पत्थर और चीनी मिट्टी आदि अप्रवेश्य पदार्थों से बना हुआ पर्याप्त जल रखने योग्य एवं छटककर पानी न गिरने योग्य होता है। इसका स्थान घर के एक कोने में मुख्य दीवाल के बाहर या कुछ दूर बनाया जाता है। परन्तु एक गली द्वारा उस घर का संबंध रहता है। शौचालय की दीवालें सीमेण्ट आदि से बनी चिकनी हों। कई मंजिल में पुरीषगृह परस्पर नीचे ऊपर के क्रम से रहे। इनका फर्श पत्थर सीमेण्ट आदि से बना हुआ मध्यस्थ मल पात्र के चारों ओर ढालुआ होना चाहिये। मलपात्र के दोनों ओर समतल भूमि पर पैर रखने के लिये दो पादपीठ बनाये जाते हैं। पुरुषगृह का क्षेत्रफल ६ वर्गफीट से कम कभी नहीं करना चाहिए।

जलसञ्चयनम्—मलपात्रशोधनार्थं वर्चोगृहे यल्लघुजलसञ्चयनमपेक्ष्यते तन्मलपात्रात् ५—८ स्फीतोच्चतायां भित्तिसंल्लग्नं स्यात्। इदं लौहप्रस्तरयशदान्यतमनिर्मितं साच्छादनं भवेत्। यतः धूलिमक्षिकामशकादयः तत्र न समाविशेयुः। अस्मिन् १५ सेटकं जलमागच्छेत्। तथा चैतन्मलपात्रस्य पृष्ठभागीयतटेन सहैकसीसकनलिकाद्वारा संयुक्तं स्यात्। अस्या नालिकाया व्यासः २-३ अङ्गुलिमितो भवेत्। अस्या पेयजलसंचयने सह सम्बन्धो न कार्यः। अस्मिन् जलसञ्चयने गुप्तद्वारमेकं भवति। यदाऽस्यशृङ्खलाऽऽपतति ततो जलवेगेन सह मलमधः किट्टनलादिद्वारा निर्गच्छति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जल संचयन :—मल पात्र को धोने के लिये पुरीषगृह में जो छोटा जलसंचयन पात्र होता है वह मल पात्र से ५-८ फीट की ऊँचाई पर दीवाल से सटा हुआ हो। यह लोहा पत्थर और यशद (जस्ता) में से किसी से बना हुआ ढक्कन युक्त हो। जिस से धूलि मक्खी एवं मच्छर आदि उसमें न घुसें। इसमें १५ सेर जल आता है तथा यह एक सीसे की नली द्वारा मलपात्र के पिछले किनारे से संयुक्त होता है। नली का व्यास २-३ अंगुल हो। इसका सम्बन्ध पेयजल के संचय से नहीं करना चाहिए। इस जल-संचयन में एक गुप्त द्वार होता है। जिससे जब इसकी सिकड़ी खींची जाती है तो जलसंचयन में स्थित सभी जल नीचे के मलपात्र में एकाएक गिरता है। तब जल के वेग के साथ मल किट्टनाली द्वारा निकल जाता है।

विपाशः—दूषितवायुदौर्गन्ध्यावरोधार्थं मलपात्रतत्सबद्ध किट्टनलयोर्मध्ये एको विपाशः संयोज्यः। यः किञ्चिज्जलसञ्चयमपि कर्तुं शक्नुयात् तथा मलपात्रं प्रति दूषितवातागमनमप्यवरुन्ध्यात्। अयं वक्रनलिकाकारो भवति। यत्र किञ्चिज्जलमवरुद्धं सत् तिष्ठति। तदेवोदकं दूषितवायुं गृहे न प्रवेशयति। विपाशेन मलप्रवाहे बाधा न भवति इमे बहुप्रकारका भवन्ति, P. S. इत्याकारकौ श्रेष्ठतमौ।

दूषित वायु की दुर्गन्धि रोकने के लिए मलपात्र और उससे सम्बद्ध किट्टनल के बीच में विपाश (साइफन ?) लगाना चाहिए। जो कुछ जल भी संचित कर सके। और मलपात्र में आनेवाली दूषित वायु का आगमन भी रोके। यह टेढ़ी नलिका के आकार का होता है। जिस में कुछ रुका हुआ जल रहता है। वही जल दूषित वायु को घर में नहीं प्रविष्ट होने देता। विपाश से मल बहने में भी बाधा नहीं होती। ये बहुत प्रकार के होते हैं। जिनमें P और S इस आकार वाले श्रेष्ठ होते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

किट्टनलः

यस्यैकं शिरो मलपात्रस्य विपाशेन सह, द्वितीयं च गृहमलपथेन सह संयोज्यते स किट्टनल उच्यते। सोऽयं सीसकलौहान्यतरनिर्मितो वलयाकारः ४ पर्वव्यासको भवति। अत्र वर्चोगृहमूत्रालययोरेव मलं प्रवहेन्नान्यत्। एष गृहस्य वाह्यभित्त्या साकं वहिरेव संलग्नः कार्यः।

जिसका एक सिरा मल-पात्र के विपाश और दूसरा मल-पथ से संयुक्त होता है वह किट्टनल कहा जाता है। यह सीसा और लोह आदि में से किसी से बना हुआ गोल ४ पर्व व्यास का होता है। इसमें पुरीषालय एवं मूत्रालय का ही मल वहे, दूसरा मल नहीं। इसे घर की बाहरी दीवाल के साथ बाहर ही जोड़ना चाहिए।

गृहमलपथः

यः किट्टनलीयं मलं किट्टवाहे प्रापयति स नलो गृहमलपथ इत्युच्यते। अस्य संधिस्थलं दृढं भवेद् यतः जलं न कदापि च्यवेत्। अस्याभ्यन्तरीयभागः समतलः चिक्कणश्च स्यात्। यतस्तत्र मलं नैकत्री भवेत्। सर्वाः शाखा या अत्र संयुक्ता भवेयुः, संयोगस्थले न्यूनकोणं रचयेयुः। स चास्य नलस्य प्रवाहदिशि स्यात्। किञ्चित्किञ्चिद्दूरेऽत्रैवम्भूतानि छिद्राणि कार्याणि यैरस्य निरीक्षणंकर्तुं शक्यं स्यात्।

गृहमलपथोऽयं प्रायेण प्रस्तरैश्चिक्कणमृत्तिकया वा निर्मीयते। अस्य संधयः सीसेनटेन संयोज्यन्ते।

मृदुभूमौ, तथा च यत्राधिकभारपतनसम्भावना स्यात्तत्र लौहेन निर्मातव्यः। तत्सन्धयस्तु सीसकेन संयोज्याः।

गृहमलपथः प्रस्तरखण्डानामप्रवेश्यस्तरेऽपि विष्ठरणीयः स्याद् यतस्तत्सन्धिविमुक्तिसम्भावना मा भूत्। स चैवम्भूतो निम्नगः

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कार्यो यत्तत्रस्थं मलं सुखं प्रोह्य निर्गच्छेत्। एष गृहादधो मध्य-भागाद्वा न गमनीयः। अस्य, किट्टवाहस्य च मध्ये संयुक्त एको विपाशः स्यात् यतो दौर्गन्ध्यं न आगन्तुं शक्नुयात्।

जो नल किट्टनल के मल को किट्टवाह में ले जाता है वह गृह-मल-पथ कहा जाता है। इसका जोड़ मजबूत होना चाहिए जहाँ से जल न चुये। इसका भीतरी भाग समतल और चिकना हो जिससे वहाँ मल न इकट्ठा हो। सभी शाखाएँ जो इसमें आकर मिलें वे जोड़ पर न्यूनकोण बनायें। वह कोण इस नल की प्रवाह दिशा में हो। थोड़ी थोड़ी दूर पर इसमें ऐसे छिद्र बनाने चाहिए जिनसे इसका निरीक्षण किया जा सके।

यह गृह-मल-पथ पत्थर या चिकनी मिट्टी (सीमेण्ट) से बनाया जाता है। इसका जोड़ सीमेण्ट से जोड़ा जाता है।

मुलायम जमीन में जहाँ इस पर अधिक भार पड़ने की सम्भावना हो, वहाँ इसे लोहे से बनाना चाहिए। उसके जोड़, सीसे से जोड़ने चाहिए।

गृह-मल-पथ पत्थर के टुकड़ों की अप्रवेश्य परत पर भी बिछाया जाता है जिससे उसके जोड़ों के छूटने की सम्भावना न हो। उसको इस प्रकार ढालुआ बनाना चाहिए जिससे उसमें स्थित मल सरलता से बाहर निकल जाय। इसे घर के नीचे या मध्यभाग से न जाना चाहिए। इसके और किट्टवाह के बीच में जुड़ा हुआ एक विपाश (साइफन) हो जिससे दुर्गन्धि न आ सके।

किट्टवाहः

यत्रानेकसदनानां मलानि गृहमलपथद्वाराऽगत्य वहन्ति स किट्टवाह इति निगद्यते। परीक्षणार्थमत्र श्वभ्रप्रवाहद्वाराणि निर्मीयन्ते। अयं किट्टवाहो द्विविधो भवति [१] वर्षाद्विजला-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

र्थम् [२] गृहस्य शेषमलार्थञ्च। कचिदेतौ पृथक्-पृथग् भवतः, क्वचित्तुद्विक्रियार्थमप्येक एव नलो भवति। एष प्रस्तरखण्डानामप्रवेश्यस्तरोपरि सरकतलादधो दशस्फीतगम्भीरे भूम्यन्तरे यथासम्भवं सरलरेखायां निमग्नःकार्यः। यतः किट्टप्रवाहे बाधा न भवेत्। अन्यैः सह संयोगस्थलेऽस्य संधिरीषत्तिर्यक् स्यात्। यतस्तत्र किट्टं नैकत्री भवितुं शक्नुयात्। अस्य निम्नगत्वं तथा वर्धनीयं यथा प्रवाहः प्रतिसार्धद्विविपलं ३ स्फीतगतिको भवेत्। यः किट्टवाहो २ स्फीतव्यासकः, स चीनीयमृत्तिकया लौहेन वा निर्मितो वर्तुलाकारो भवति। ततोऽधिकव्यासकस्तु सीमेण्टेन इष्टिकाभिर्वा निर्मितोऽण्डाकारको भवति। यस्य संकुचितं शिरोऽधःप्रवाहदिशि, विस्तृतं च शिरः उपरिष्टात् क्रियते।

व्यासेन यावदेव महान् किट्टवाहः स्यात्तावदेव तस्य निम्नगत्वन्यूनताया आवश्यकता भवति।

यदि किट्टवाहः १० स्फीतव्यासकः स्यात्तर्हि भूमितलं प्रतिक्रोशार्धं २ स्फीतं, यदि च ५ स्फीतव्यासकस्तर्हि ४ स्फीतनिम्नगं कार्यम्। एतावन्निम्नगत्वे किट्टवाहे मलं भूमेर्गुरुत्वाकर्षणशक्त्या वहति। यदि तावन्निम्नगत्वमसम्भवं स्यात्तदा किट्टं प्रेरण (Pump) शक्त्या प्रेरणीयम्।

जहाँ पर कई घरों का मल गृह-मल-पथ द्वारा आकर बहता है वह किट्टवाह कहा जाता है। परीक्षा करने के लिए इसमें श्वभ्र (गर्त), प्रवाह द्वार (मैनहोल में जाने का मार्ग) बनाते हैं। यह किट्टवाह दो प्रकार का होता है। (१) वर्षा आदि का जल बहने के लिए (२) घर का शेष मल बहाने के लिए। कहीं ये अलग-अलग होते हैं और कहीं दोनों काम वाला एक ही नल होता है। इसे पत्थर की अप्रवेश्य परत पर सड़क के नीचे जमीन की दस फीट गहराई में यथासम्भव सीधी रेखा में ढालुआ बनाना चाहिये। जिससे किट्ट के बहने में रुकावट न हो। अन्य

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नली के साथ इसके जोड़ पर कुछ तिरछा जोड़ हो, जिससे वहां किट्ट इकट्ठा न हो सके। इसका ढाल इस प्रकार बढ़ाते जाना चाहिए जिससे बहाव की गति प्रति ढाई विपल (१ सेकंड) में तीन फीट हो। जो किट्टवाह २ फीट व्यास का होता है वह चीनी मिटी या लोहे से बना हुआ गोल होता है। इससे अधिक व्यास वाला सीमेण्ट या ईंट आदि से बना हुआ अण्डाकार होता है। जिसका कम चौड़ा सिरा नीचे बहाव की दिशा में होता है और चौड़ा सिरा ऊपर रहता है। व्यास में जो किट्टवाह कितना ही बड़ा होगा उसके ढाल में उतनी ही कमी की आवश्यकता होती है।

यदि किट्टवाह १० फीट व्यास का हो तो भूमितल प्रति आधा कोस (मील) में दो फीट ढालू और यदि व्यास ५ फीट हो तो ४ फीट ढालू बनाना चाहिये। इतने ढाल में किट्टवाह में मल-भूमि की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से बहता है। यदि इतना ढाल बनाना सम्भव न हो तो किट्ट प्रेरण (पम्प) द्वारा मल को प्रेरित कर बहाना चाहिए।

श्वभ्रम्—किट्टवाहप्रवेशमार्गः श्वभ्रमुच्यते। एतानि दूरेदूरे विशेषतः किट्टवाहस्य संधिभागे गभीरलघुकुटीराणीवेष्टिकाभिर्निर्मीयन्ते। यन्मध्यतो बृहन्नाला (किट्टवाहः) याति। तत्स्थानाच्चैव तच्छाखा उद्भवन्ति। इमानि पर्याप्तविस्तृतानि कार्याणि। यतो निरीक्षणार्थं तथा शोधनार्थं मनुष्याः सुखं गन्तुमागन्तुं च शक्नुयुः। तदुपरि मार्गतले श्वभ्रप्रवेशद्वारकपाटं लौहनिर्मितं सजालकं विधेयम्। यतो वायोःसंचरणं तत्र सम्यग्भवेत्।

किट्टवाह के प्रवेश-मार्ग को श्वभ्र (मैनहोल) कहते हैं। ये दूर-दूर विशेषतः किट्टवाह के संधि भाग में गहरी छोटी कुटियों के समान ईंटों से बनाये जाते हैं। जिनके बीच से बड़ा नाला (किट्टवाह) जाता है। इसी स्थान से उसकी शाखाएँ उत्पन्न होती हैं। ये काफी चौड़े बनाए जाने चाहिए, जिससे देखने एवं उसको साफ करने के लिए

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

मनुष्य आसानी से जा आ सके। उसके ऊपर मार्ग पर लोहे से बना हुआ जाल युक्त श्वभ्र-प्रवेश-कपाट (ढक्कन) बनाना चाहिए जिससे उसमें अच्छी तरह वायु का संचार हो सके।

प्रवाहद्वारकम्—इदं प्रायेण किट्टवाहान्ते विधीयते। किट्टवाहप्रवाहे काचिद्बाधा न भवेत्, यदि च तत्र किमप्यवरुद्धं स्यात्तदप्यस्य साहाय्येन निर्गच्छेदेतदर्थमेतत् प्रयुज्यते। यदेदमावृतं क्रियते तदा समस्तकिट्टं पश्चात् परावर्तते। उद्घाटिते सति तत् संश्लिष्टमपि किट्टमभितः सवेगं सहसा वहिरायाति, एतदर्थं नलयुक्तानि वृहज्जलसंचयनान्यपि रक्ष्यन्ते। तद्द्वारा समस्तकिट्टवाहः स्वच्छीक्रियते। जलाशयाभावे कहार (भिश्ती) द्वारेणापि प्रबन्धोऽयं सम्पाद्यते। अर्थाच्छ्वभ्रद्वारा बहुजलं प्रक्षेप्य किट्टवाहः स्वच्छी क्रियते।

प्रवाह-द्वार यह प्रायः किट्टवाह के अन्त में बनाया जाता है। किट्टवाह के प्रवाह में कोई बाधा न हो और वहाँ यदि कुछ रुका हो तो वह भी इसकी सहायता से निकल जाय, इसीलिए यह प्रयुक्त होता है। जब यह बन्द कर दिया जाता है तो सारा किट्ट पीछे लौट जाता है। इसके खोल देने पर सटा हुआ मल भी चारों तरफ से एकाएक वेग से बाहर आता है। इसलिए नलयुक्त बड़े जलसंचय न भी रक्खे जाते हैं। उसके द्वारा सारा किट्टवाह स्वच्छ किया जाता है। जलाशय के अभाव में भिश्ती द्वारा भी यह प्रबन्ध सम्पन्न होता है। अर्थात् श्वभ्र के द्वारा बहुत जल डालकर किट्टवाह साफ किया जाता है।

किट्टवाहेषु वातप्रविचार :—किट्टवाहेषु तथाप्रबन्धो विधेयो यथा सम्यग्वातप्रविचरणं भवेत्। एतदर्थं प्रतिपंचाशद्धस्तान्तरे वातप्रविचारका (Ventilators) नियोजनीयाः। यतः किट्टविघटनादुत्पन्ना दुर्गन्धिवाता वहिर्निर्गन्तुं शक्नुयुः। एते प्रायो

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

लौहनिर्मिताः (धूतूसदृशाः) किट्टवाहसम्बद्धाः सन्निहितगृह-संलग्नाश्च भवन्ति। येषां द्वितीयं शिरः तद्गृहवितानोपरि समाप्तिमेति। तच्चैकजालिकाद्वारा समाच्छादितं भवति।

किट्टवाहों में वायु का आवागमन-किट्टवाहों में ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिससे अच्छी तरह वायु का आवागमन हो। इसलिए प्रति दो सौ हाथ की दूरी पर वातप्रविचारक (Ventilators) लगाना चाहिए। जिससे कीट के सड़ने से उत्पन्न हुई दुर्गन्धित वायु बाहर निकल सके। ये प्रायः लोहे के बने हुए (धुधुके के सामान) किट्टवाह से सम्बद्ध पास के घर से लगे होते हैं। इनका दूसरा सिरा उस घर की छत पर समाप्त होता है। वह एक जाली द्वारा ढका रहता है।

किट्टस्यान्तिमो निक्षेपः

जलवाहनविधिद्वारा यत्समग्रं किटटमेकत्रीभवति तस्यान्तिमनिक्षेपार्थं निम्नलिखितविधिषु कश्चिदेकः प्रयुज्यते—

(१) किट्टस्य समुद्रे सम्मेलनम्।
(२) नद्यां निपातनम्।
(३) शुद्धं कृत्वोपयोजनम्।
(४) क्षेत्रे प्रक्षेप्य खादनिर्माणम्। इति।

जलवाहन विधि के द्वारा जो सारा कीट इकट्ठा होता है उसके अंतिम निक्षेप के लिए निम्नलिखित विधियों में कोई एक प्रयुक्त होती है—

१—किट्टको समुद्र में डालना।
२—नदी में डालना।
३—शुद्ध करके अन्य उपयोग।
४—खेतों में डाल कर खाद बनाना।

[१]

समुद्रतटस्थानां नगराणां किट्टस्य निक्षेपार्थं समुद्रे सम्मे-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

लनमेव सर्वोत्तमः सरलश्चोपायः। परन्तु समुद्रस्यान्तस्तावद्गाम्भीर्येजलेऽधः सम्मेलनीयं यतस्तरङ्ग (ज्वारभाटा) समये किट्टं पुलिने न आगन्तुं शक्नुयात्।

समुद्र के किनारे के नगरों का किट्ट फेंकने के लिए समुद्र में उसे छोड़ना ही सर्वोत्तम और सरल उपाय है। परन्तु समुद्र के भीतर इतने गहरे जल में छोड़ना चाहिए जिससे लहर (ज्वार-भाटा) के समय कीट किनारे न आ सके।

[२]

यद्यपि विधिरयं सुप्रचलितोऽस्ति तथापि बहुहानिकारक एषः। यतो जनाः किट्टमिश्रितमपि नदीजलं गृहीष्यन्त्येव। अतो वसतितो दूरे, यथासम्भवं विशुद्धं कृत्वा सम्मेलनीयम्।

यद्यपि यह विधि बहुत प्रचलित है तथापि यह बहुत हानिकारक है। क्योंकि मनुष्य किट्ट मिश्रित नदी जल को भी लेते ही हैं। इसलिए आबादी से दूर जहाँ तक हो सके शुद्ध कर नदी में छोड़ना चाहिए।

[३]

किट्टस्य सेन्द्रियपदार्थानामपनयनमितिशुद्धेः तात्पर्यम्। अत्र त्रय उपायाः क्रियन्ते, अवस्थापनं प्रसादनम् प्रक्षेपणञ्चेति।

किट्ट में सेन्द्रिय पदार्थों का नाश करना ही शुद्धि का तात्पर्य है। इसके लिए तीन उपाय किए जाते हैं—अवस्थापन, प्रसादन और प्रक्षेपण।

तत्रावस्थापनम्–अस्मिन् विधौ द्रवकिट्टमिष्टिकासीमेंटरचिते जलाशये एकत्रीक्रियते। तत्स्थूलपदार्था अधस्तलं गत्वोपविशन्ति। उपरि च स्वच्छं जलं तिष्ठति। परन्तु वस्तुतोऽत्रापि पर्याप्तराशिका

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जीवाणवः सेन्द्रियपदार्थाश्च सम्भवन्त्येवातो हानिकरोऽयं विधिः। इदं पुनर्जन्तुघ्नद्रव्यद्वारा संशोधनीयम्।

इस विधि में द्रवकिट्ट ईंट सीमेंट से बने हुए जलाशय में इकट्ठा किया जाता है। उसके मोटे पदार्थ नीचे तलहटी में जाकर बैठ जाते हैं और ऊपर साफ जल रह जाता है। लेकिन इस विधि में भी जीवाणु और सेन्द्रिय पदार्थ पर्याप्त राशि में उत्पन्न होते हैं। इसलिए यह विधि हानिकारक है। इसे फिर क्रिमिनाशक द्रव्यों द्वारा शुद्ध करना चाहिए।

प्रसादनम्—अत्र द्रवकिट्टं भस्मांगारकस्तरेण शनैः शनैः प्रसाद्यते। द्रवांशः पूतः सन्नधो गच्छति। स्थूलांशस्तुस्तरोपर्येवैकं बृहत्स्तरं रचयन् अवतिष्ठते। नास्त्ययमपि सन्तोषजनकोविधिर्यतो निर्दोषीकरणार्थं प्रसादकस्तरो भूयोभूयः स्यच्छी क्रियते।

इस विधि में द्रवकिट्ट राख और कोयलों की परत से धीरे-धीरे साफ किया जाता है। द्रवांश छन कर नीचे जाता है। मोटा भाग परत के ऊपर ही एक मोटी परत बनाता हुआ रुक जाता है। यह विधि भी संतोषजनक नहीं है, क्योंकि साफ करनेवाली राख आदि की सतह (परत) को निर्दोष करने के लिए बारम्बार साफ करना पड़ता है।

प्रक्षेपणम्—अस्मिन्विधौ द्रवकिट्टे कतिपयरासायनिक पदार्थाः प्रक्षिप्यन्ते। यद्द्वाराऽवलम्बिताः पदार्थाः ससेन्द्रिया अधस्तलं गत्वोपविशन्ति। पुनरुपरिष्ठे शुद्धप्राये जलेऽन्य-द्रासायनिकं द्रव्यं प्रक्षिप्यते। तदुदकं च द्वितीयगर्ते नीयते। यत्रस्था अवशिष्टा अवलम्बितपदार्था अपि ह्यधो गच्छन्ति। जलं चोपरि शुद्धं तिष्ठति। तत्पुनः क्षेत्रसिञ्चनार्थं प्रयुज्यते, नद्यां वा निपात्यत इति।

Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

इस विधि में द्रव-किट्ट में कई रासायनिक पदार्थ छोड़े जाते है जिसके द्वारा सेन्द्रिय सहित अवलम्बित पदार्थ नीचे तलहटी में जाकर बैठ जाते हैं। फिर ऊपर वाले प्रायः शुद्ध जल में दूसरा रासायनिक द्रव्य छोड़ा जाता है। वह जल दूसरे गड्ढे में डाला जाता है। उसमें बाकी बचे हुए अवलम्बित पदार्थ भी नीचे चले जाते हैं। शुद्ध जल ऊपर रहता है। फिर वह खेत सींचने में प्रयुक्त होता है या नदी में छोड़ दिया जाता है।

निम्नाङ्कितरासायनिकद्रव्याण्युपयुज्यन्ते—

(१) चूर्णम् (सुधा)—इदं पञ्चसेटके किट्टे माषैकपरिमितं प्रयुज्यते।

निम्नांकित रासायनिक द्रव्य उपयुक्त होते हैं—

चूना—यह ५ सेर किट्ट में एक माशा प्रयुक्त होता है।

(२) स्फटिका—इयं ५ सेटके किट्टे ५ रक्तिमात्रोपयुज्यते।

फिटकिरी—यह ५ सेर किट्ट में ५ रत्ती प्रयुक्त होती है।

(३) चूर्णमिश्रितस्फटिका—एतत्प्रयोगः पृथक्पृथक्प्रयोगापेक्षया श्रेष्ठतरः। ५ सेटके किट्टे द्वयोर्मेलयित्वा ५ रक्तिकाः प्रक्षेप्याः।

चूना मिली फिटकिरी—चूना और फिटकिरी के अलग-अलग प्रयोग की अपेक्षा यह प्रयोग श्रेष्ठ है। ५ सेर किट्ट में दोनों मिला कर ५ रत्ती डालना चाहिये।

वस्तुतो रासायनिकद्रव्यद्वारा किट्टशोधनं भारतसदृशे उष्णदेशे ऽसन्तोषप्रदम्। ततोऽनावृततड़ागे पतितं किट्टं सत्वरं विघट्य दौर्गन्ध्यमातनोति। तथा किट्टद्रवांशोऽपि सेन्द्रियपदार्थैः रोग-जनकजीवाणुभिश्च रहितो न भवति। यदि द्रवो नद्यामपि निपात्येत, तथाप्यवशिष्टं स्थूलकिट्टं सद्रवत्वात् किञ्चित्कालं संशोष्यते, पश्चात् खादकर्मणि प्रयुज्यते।

वास्तव में रासायनिक द्रव्यों द्वारा किट्ट-शोधन भारत के समान उष्ण देश में सन्तोष-जनक नहीं है। क्योंकि बिना ढके हुए तालाब में पड़ा हुआ किट्ट जल्दी ही सड़कर दुर्गन्ध उत्पन्न करता है एवं किट्ट द्रव्य

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भी सेन्द्रिय पदार्थों एवं जीवाणुओं से रहित नहीं होता। यदि द्रव नदी में भी छोड़ा जाय तो भी अवशिष्ट स्थूल किट्ट द्रवयुक्त होने के कारण कुछ समय तक सुखाया जाता है। तत्पश्चात् खाद के लिये काम आता है।

[४]*

अस्मिन् विधौ किट्टे एवम्भूतानि रासायनिकद्रव्याणि प्रक्षिप्यन्ते यैः तत्रस्था अवलम्बितपदार्थाः शीघ्रमधो गच्छेयुः। उपरिष्ठद्रवद्वारा क्षेत्रं प्रसिच्यते। तथा स्थूलकिट्टमपि क्षेत्रे प्रक्षेप्य संशोष्य खादायोपयोज्यते।

क्षेत्रेषु समस्तकिट्टप्रक्षेपार्थमधिकभूमेरावश्यकता भवति। इयं च भूमिः छिद्रमयी स्यात्। यत्र च कठिना भवेत्तत्र खनित्वा बालुकाभस्मचूर्णानि मेलयित्वा सच्छिद्रा कार्याः। अत्र द्रववहनार्थं प्राणाल्यः कार्याः। सम्भवतः प्रतिसहस्रमनुष्यार्थमेकैकङ्गभूमिः पर्याप्ता। अत्रेक्षुशष्पगृञ्जनपलाण्ड्वादिशाकानि भृशमुत्पद्यन्ते। परन्त्वेवंविधे स्थले मशकादयः प्राय उत्पद्यन्ते तथा सन्निहितकूपोदकमपि दूषितं भवतीति दोषः।

इस विधि में किट्ट में इस प्रकार रासायनिक द्रव्य छोड़े जाते हैं जिससे उसमें स्थित लटकते हुए पदार्थ शीघ्र नीचे चले जायँ। ऊपरी द्रव से खेत सींचा जाता है और मोटा किट्ट भी खेत में फेंककर सुखाकर खाद के लिए उपयुक्त होता है।

खेतों में सभी किट्ट फेंकने के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता होती है। यह भूमि छिद्रमयी (पोली) हो। जहाँ जमीन कठिन हो वहाँ खोदकर बालू भस्म और चूर्ण (लकड़ी का बुरादा आदि) मिलाकर उसे छिद्र युक्त कर लेते हैं। इसमें द्रव बहने के लिये नाली का

---

* अद्यत्वेलोके पञ्चमोऽपि विधिरेकः प्रचलितोस्ति। यत्र वैज्ञानिकरीत्या कीटकुष्ठनिवारकस्तरसाहाय्येन किट्टस्य कीटाणुप्रतिकारं कृत्वोपयोगं कुर्वन्ति।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अच्छा प्रबन्ध करना चाहिये। सम्भवतः प्रतिहजार मनुष्यों के किट्ट के लिये एक एकड़ भूमि की आवश्यकता पर्याप्त है। इस भूमि में ईख, घास और शलगम प्याज आदि तरकारियाँ बहुत उत्पन्न होती हैं। परन्तु इसमें यह दोष है कि—इस प्रकार के स्थान में प्रायः मच्छर आदि उत्पन्न होते हैं एवं समीप के कुएँ का जल भी दूषित हो जाता है।

संक्रामकरोगाः

अद्यत्वे कालादिपरिणामवशाद् यावन्तः संक्रामकरोगाः प्रचरन्तो दरीदृश्यन्ते न तावन्तः पुरा आसुः। अतएव प्राचीनायुर्वेदेऽतिसंक्षेपतो वर्णनं समुपलभ्यते। नास्त्यत्र कश्चन संदेहो यदनेके रोगाः सन्त्येवंविधा ये मनुष्यान्मनुष्यं, पशुभ्यो मनुष्यं च संक्रामन्ति। तदेतत्संक्रमणंजीवाणूनां स्थितौ समाश्रितम्। जीवाणवः* स्वजीवनं प्राणिशरीराभ्यान्तरे तथा बहिर्निर्वहन्ति।

---

* आकृत्यनुसारेण जीवाणवस्त्रिविधा भवन्तिः—

(१) अणुकीटः—(Micrococci) विंदुसदृशाकारः।

(२) तनुकीटः—(Bacilli) शलाकाकारः।

(३) वक्रकीटः—(Shirilla or vibrons) वक्रः, कुण्डलाकारो वेति।

स्थित्यनुसारेणैते पुनर्द्विविधा उच्यन्ते :—

(१) जीविताश्रयिणः—ये जीवितप्राणिषु वनस्पतिषु वा स्वजीवनं यापयन्ति। एते प्रायेण रोगं जनयन्त्यतो 'रोगोत्पादका' इत्युच्यन्ते।

(२) मृताश्रयिणः—ये केवलमृतकान् सेवन्ते। एते न रोगमुत्पादयन्ति।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0, In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ते प्राणिशरीराभ्यन्तरं यदा प्रविशन्ति तदा पालिता असंख्यत्वं च प्राप्ता विषमुत्पादयन्ति। तद्विषं प्रतिरोगं भिन्नप्रकारकं भिन्नलक्षणकं च भवति। कतिचिद्रोगेष्वेकांगे, कतिपयेषु तु सर्वांगे विषमिदं प्रसरति। इमे जीवाणवस्तद्विषाणि वा रोगिणां मलमूत्रस्वेदादिद्वारा वहिर्निःसृज्य स्वस्थमनुष्येषु संक्रामन्ति। तथोक्तं भगवतासुश्रुतेन–

प्रसंगाद् गात्रसंस्पर्शान्निःश्वासात्सहभोजनात्।
सहशय्यासनाच्चापि वस्त्रमाल्यानुलेपनात्॥
कुष्ठं ज्वरश्च शोषश्च नेत्राभिष्यन्द एव च।
औपसर्गिकरोगाश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्॥

आजकल काल आदि के परिणाम के कारण जितने संक्रामक रोग प्रसरित होते हुए दिखायी पड़ते हैं उतने पहले नहीं थे। इसलिए प्राचीन आयुर्वेद में अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन मिलता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अनेक रोग ऐसे हैं जो मनुष्य से मनुष्य एवं पशुओं से मनुष्यों में संक्रमण करते हैं। यह संक्रमण जीवाणुओं की स्थिति पर निर्भर है। जीवाणु-प्राणी के शरीर के भीतर तथा बाहर अपना जीवन बिताते हैं। वे जब प्राणिशरीर के भीतर प्रविष्ट होते हैं तब वहाँ पल कर असंख्य हो जाते हैं और विष उत्पन्न करते हैं। वह विष प्रत्येक रोगों में विभिन्न प्रकार एवं विभिन्न लक्षण वाला होता है। यह विष कुछ रोगों में एकांग में एवं कई रोगों में सारे शरीर में फैलता है। ये जीवाणु

यदेते जीवाणवोऽभ्यासवशादुभयोर्जीवितमृतयोः सेवनशीला भवन्ति तदा 'उभयाश्रयिण' इति निगद्यन्ते।

ते पुनरपि द्विप्रकाराः—(१) वातकीटाः—एतेषां जीवनार्थमोषजनावश्यकता भवतीति। (२) निर्वातकीटाः—एषामोषजनावश्यकता न भवतीति।

ji Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

अथवा उनके विष रोगियों के मलमूत्र और पसीने आदि के द्वारा बाहर निकल कर स्वस्थमनुष्यों में संक्रमण करते हैं। जैसा भगवान सुश्रुत ने कहा भी है :—

मैथुन, अंग स्पर्श, निश्वास, सहभोजन, साथ में शयन एवं बैठने, वस्त्र माला और अनुलेपन द्वारा कुष्ठ ज्वर शोष नेत्राभिष्यन्द और औपसर्गिक (गर्मी, सूजाक आदि) रोग मनुष्य से मनुष्य में संक्रमित होते हैं।

अत्र ज्वरपदेनागन्तुका आन्त्रिकादिज्वरास्तथा च सन्ततादयो विषमज्वरा अवगन्तव्याः। औपसर्गिकरोगपदेन मसूरिका विसूचिकोपदंशादयो ज्ञेयाः

तथाहि सिद्धान्तनिदाने—

अथेदानीं प्रसिद्धा ये केचिदागन्तवो ज्वराः।
नानाविधविषोत्थानास्तान् वक्ष्यामः सविस्तरम्॥
विषं च तेषु प्रायेण भवेद् जीवाणुसम्भवम्।
***आन्त्रिको ग्रन्थिकश्चापि श्लेष्मकः सन्धिकस्तथा।**
यश्च श्वसनको नामाऽऽक्षेपको यश्च वक्ष्यते॥

तदेते कीटाणवो भूमौ जले पर्वते नगरे वायुमण्डले च प्रायः सर्वत्र सुदूरं प्रसृताः प्राप्यन्ते। तथाहि—

विषमज्वरकालज्वरोत्पादका एकविशेषप्रकारका जीविताश्रयिकीटाः, श्वसनकज्वरपूयमेहयोरणुकीटाः, ग्रन्थिकान्त्रिकश्लेष्मकज्वरयक्ष्मविसूचिकाकुष्ठोत्पादकाः तनुकीटाः, आवर्तकज्वरफिरङ्गयोश्चोत्पादका वक्रकीटाः सन्ति।

* आन्त्रिकज्वरः—Enteric Fever or Typhoid Fever, एण्टेरिक फीवर या टाइफायेडफीवर (मन्थरकज्वरः)।

ग्रन्थिकज्वरः—Plague प्लेग (वातालिका)।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0] In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

षडेते विषजा घोराः सर्वधातुप्रदूषणाः ।
ज्वराः स्युर्जानपदिकास्तथा काचनिका अपि ॥
मसूरिकाद्या ये चान्ये भूवायुजलदोषतः ।
काले काले प्रवर्तन्ते तेऽपि ज्ञेयास्तथाविधाः ॥
दण्डकाख्यो ज्वरो दुःखस्तथान्यः कर्णमूलिकः ।
द्वावेतौ स्वल्पविषजौ सुखसाध्यौ विदुर्बुधाः ॥
संक्रामन्ति च सर्वेषि श्वसनस्पर्शनादिभिः ।

इति

"सन्ततः सततोन्येद्यु स्तृतीयकचर्थुकाः ।
जीर्णः सततकोवाऽपि स्मृतः कालज्वरोऽधुना ॥
दंशमत्कुणसंक्रान्ता विज्ञेया विषमज्वराः !"

एते जीवाणवोऽतिसूक्ष्माः प्रायः केवलचक्षुषाऽदृश्या भवन्ति ।

यहाँ ज्वर शब्द से आगन्तुक तथा आन्त्रिक आदि ज्वर एवं सन्तत आदि विषम ज्वर जानना चाहिये । औपसर्गिक शब्द से मसूरिका विसूचिका और उपदंश आदि जानना चाहिये । जैसा सिद्धान्तनिदान में कहा है :—

श्लेष्मकज्वरः—Influenza इन्फ्लुयेंजा (श्लेष्मोल्वणसन्निपातः) ।
सन्धिकज्वरः—Rheumatic Fever रियुमेटिक् फीवरः ।
श्वसनकज्वरः—Pneumonia निमोनिया (कर्कटसन्निपातः) ।
आक्षेपकज्वरः-CerebroSpinal Fever सेरिब्रोस्पाइनल फीवर
मसूरिकाः—Small Pox, (स्मालपाक्स) ।
लघुमसूरिकाः—Chicken Pox (चिकनपाक्स) ।
रोमान्तिकाः—Measles (मीजल्स) ।
दण्डकज्वरः—Dengue डेंगू (सन्धिगसन्निपातः) ।
कर्णमूलिकज्वरः—Mumps. मम्प्स (पाषाणगर्दभः) ।
विषमज्वरः—Malaria. मलेरिया ।
कालज्वरः—Kala Azar. कालाजार (लाघरकः जीर्णसततज्वरो वा)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

इस समय अनेक प्रकार के विषों से उत्पन्न हुए जो आगन्तुक ज्वर प्रसिद्ध हैं उन्हें विस्तार पूर्वक कह रहे हैं। उनमें प्रायः जीवाणु से विष उत्पन्न होता है।

आन्त्रिक, ग्रन्थिक (वातालिका), श्लेष्मक, सन्धिक, श्वसनक और आक्षेपक ये सब धातुओं को दूषित करनेवाले विषोत्पन्न ६ भयंकर ज्वर हैं। इनमें कोई जनपदोध्वंस करनेवाले (मरक या महामारी) भी हैं और मसूरिका आदि जो दूसरे रोग पृथ्वी वायु एवं जल के दोष से हैं, समय-समय पर फैलते हैं, उनको भी उसी प्रकार विषजन्य जानना चाहिये। दुःखदायक दण्डक और दूसरा कर्णमूलिक ज्वर ये दोनों अल्पविष से उत्पन्न होने वाले तथा सुख साध्य जानने चाहिये। ये सभी श्वास और स्पर्श आदि से संक्रमण करते हैं।

"सन्तत, सतत, अन्येद्युष्क, तृतीयक, चातुर्थक और आजकल काला-जार के नाम से कहा जाने वाला पुराना सततक ज्वर ये विषम ज्वर दंश और खटमल से संक्रमित होते हैं।

ये जीवाणु अत्यन्त सूक्ष्म हैं अतः केवल आँख से प्रायः नहीं देखे जा सकते हैं।

'रक्तजा जन्तवोऽणवः, सौक्ष्म्यात्केचिददर्शनाः'

[अ० हृ०]

रक्त में उत्पन्न होने वाले क्रिमि अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं। अतः कई क्रिमि दिखाई नहीं पड़ते।

परन्तु अणुवीक्षणसहायेन चक्षुषा तु दृश्यन्त एव। एतेषां दैर्ध्यं तथा विस्तार एकपर्वणः पञ्चसहस्रतमांशतः पञ्चशततमांश-पर्यन्तं भवति। इमे वायौ, जले, भूमौ, मनुष्याणामितरप्राणिनां च त्वङ् मुखमहास्रोतःसु च समुपलभ्यन्ते।

परन्तु अणुवीक्षण यन्त्र की सहायता से वे आँखों द्वारा दिखायी

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पड़ते हैं। इनकी लम्बाई तथा घिस्तार एक इंच के पाँच हजारवें भाग से लेकर पाँचसौवें भाग तक होती है। ये वायु, जल, जमीन और मनुष्यों तथा अन्यान्य प्राणियों की त्वचा, मुख और महास्रोत में प्राप्त होते हैं।

यो मनुष्यः प्राणी वा केनचिद्विशेषसंक्रामकरोगेण समाक्रान्तः स्यात्, तस्य रुधिरलसीकासु तद्व्याधेर्विशिष्टजीवाणवः प्राप्यन्ते। ते च तच्छरीराद्बहिः उचितखाद्यादिप्रबन्धेन संरक्ष्य, परिवर्ध्य कस्यचित्स्वस्थप्राणिनः शरीरे प्रवेशिता भवेयुश्चेत्तर्हितत्प्राणिनि स एव रोग आविर्भवति यस्य ते जीवाणवः सन्ति।

जो मनुष्य या प्राणी किसी विशेष संक्रामक रोग से पीड़ित है, उसके रक्त और लसीका में उस व्याधि के विशिष्ट जीवाणु प्राप्त होते हैं। यदि वे उस शरीर से बाहर उचित भोजन आदि के प्रबन्ध से सुरक्षित कर और बढ़ाकर किसी स्वस्थ प्राणी के शरीर में प्रविष्ट करा दिए जायें तो उस प्राणी में वही रोग उत्पन्न होता है जिसका कि वह जीवाणु है।

सम्प्राप्तिकालः—शरीरे जीवाणुप्रवेशक्षणादारभ्य रोगविशेषलक्षणोद्भवपर्यन्तं यः कालः स एव सम्प्राप्तिकाल उच्यते। अयं भिन्नभिन्नरोगेषु भिन्नभिन्नप्रकारको भवति। अस्यामवस्थायां रोगी जनः स्वस्थमनुष्येषु भयावहो भवति।

शरीर में जीवाणु प्रवेशक्षण से प्रारम्भकर विशेष रोग के लक्षण की उत्पत्ति तक जो समय होता है वही सम्प्राप्तिकाल कहा जाता है। यह भिन्न-भिन्न रोगों में विभिन्न प्रकार का होता है। इस अवस्था में रोगी मनुष्य स्वस्थ मनुष्य के लिए भयास्पद होता है।

उपसर्जनकालः—रोगशान्तिक्षणाद्यावत्काल रोगी स्वस्थ मनुष्येषु तमेवरोगमुत्पादयितुं शक्नोति स उपसर्जनकाल इत्युच्यते। तद्यथा—

रोग नाम	सम्प्राप्तिकालः	उपसर्जनकालः
विसूचिका	१ होरातः ५ दिनपर्यन्तम्	सप्ताहद्वयम्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

आंत्रिकज्वरः	५ दिवसतः २० दिवसपर्यन्तम्		६ स०
ग्रंथिकज्वरः	३—१०	,,	३ स०
शीतला	१२	,,	६ स०
श्लेष्मकसन्निपातः	१—४	,,	२ स०

रोग शान्ति के क्षण से रोगी जितने समय तक स्वस्थ मनुष्यों में वही रोग उत्पन्न कर सकता है, उतने समय को उपसर्जन काल कहते हैं।

जैसे :—

रोगनाम	सम्प्राप्ति काल	उपसर्जन काल
विसूचिका	१ घण्टा से ५ दिन तक	२ सप्ताह
आन्त्रिक ज्वर	५ दिन से २० दिन तक	६ सप्ताह
ग्रन्थिक ज्वर	३ दिन से १० दिन तक	३ सप्ताह
शीतला	१२ दिन ,,	६ सप्ताह
श्लेष्मक सन्निपात	१ दिन से ४ दिन तक	२ सप्ताह

सक्रमणप्रकाराः

(१) खाद्यपेयादिद्वारा संक्रमणशीला रोगाः—आंत्रिकज्वर-विसूचिकातिसाराः।

(२) वायुद्वारा—मसूरिकारोमान्तिकायक्ष्मश्लेष्मकज्वराः।

(३) साक्षात्सम्बन्धेन—जलसंत्रासश्वधनुःस्तम्भोपदंशादयः।

(४) पिपीलिकाद्वारा—अतिसारविसूचिका ऽऽन्त्रिकज्वराः।

(५) मत्कुणद्वारा—कुष्ठकालज्वरत्वग्रोगाः।

(६) क्षुद्रपतंग (पिस्सू) द्वारा—ग्रंथिकज्वरः।

(७) मक्षिकाद्वारा—अतिसारप्रवाहिकाविसूचिकाऽऽन्त्रिक-ज्वरनेत्राभिष्यन्दाः।

श्वउन्मत्तश्वदंष्ट्या कृतेन क्षतेनाऽयं संजायते।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

(८) दंशमशकद्वारा—विषमज्वराः ।

(९) यूकाद्वारा—आवर्तकज्वरः ।

खाद्य पेय आदि के द्वारा संक्रमित होने वाले रोग—आन्त्रिक ज्वर, विसूचिका और अतिसार ।

वायुद्वारा—मसूरिका रोमान्तिका यक्ष्मा और श्लेष्मक ज्वर ।

साक्षात् सम्बन्ध से—जल सन्त्रास (पागल कुत्ता आदि के काटने से उत्पन्न रोग) धनुस्तम्भ (टिटनस) उपदंश आदि ।

पिपीलिका (चींटी) द्वारा—अतिसार विसूचिका आन्त्रिक ज्वर ।

खटमल द्वारा—कुष्ठ, कालाजार और त्वचा के रोग ।

क्षुद्र पतंग (पिस्सू) —वातालिका (प्लेग) ।

मक्खी द्वारा—अतिसार, प्रवाहिका, विसूचिका, आन्त्रिक ज्वर और नेत्राभिष्यन्द ।

दंशमशक द्वारा—विषम ज्वर ।

जूं द्वारा—आवर्त्तक ज्वर ।

संक्रमणप्रतिषेधोपायाः

तत्र अव्यापन्नानामोषधीनामपां चोपयोगः (कार्यः), तथा स्थानपरित्यागशान्तिकर्मप्रायश्चित्तमङ्गलजप-होमोपहारेज्याञ्जलिनमस्कार-तपोनियमदयादानदीक्षा-भ्युपगदेवताब्राह्मणगुरुपरैर्भवितव्यमेवं साधु भवति ।

(सुश्रुतः)

महामारी के समय में अविकृत औषधियों एवं जल का उपयोग करना चाहिये । स्थानत्याग, शान्ति कर्म, प्रायश्चित्त, मंगल, जप, होम, उपहार (बलि) यज्ञ, देवताओं को हाथ जोड़कर नमस्कार, तप, नियम, दया, दान, दीक्षा आदि करने से, और देवता ब्राह्मण और गुरु के पूजन से कल्याण होता है ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

(१) घोषणा

यदि संक्रामकरोगेण पीडितः कश्चिन्मनुष्यः स्यादथवा तेन कस्यचिन्मृत्युर्भवेत्तर्हिसद्यः स्थानीयारोग्यविभागाध्यक्षस्तद्विषये विज्ञाप्यः। यतः स शीघ्रं संक्रमणभयमपनेतुं शक्नुयात्।

यदि कोई मनुष्य संक्रामक रोग से पीड़ित हो अथवा किसी की मृत्यु हो जाय तो तुरन्त स्थानीय स्वास्थ्य विभाग के अध्यक्ष (हेल्थ आफिसर) को इसकी सूचना देनी चाहिये। जिससे वह शीघ्र संक्रमण के भय को दूर कर सके।

संक्रामकरोगातुराणां पृथग्रक्षणं संक्रमणप्रतिषेधाय साधुतमम्, तदर्थमुपायद्वयमवलम्बनीयम्।

संक्रामक रोग से पीड़ितों को अलग रखना संक्रमण रोकने के लिये सर्वश्रेष्ठ उपाय है। इसके लिए दो प्रकार के उपाय का सहारा लेना चाहिये।

[१] निवासगृहे एव पृथग्रक्षणम्—एतदर्थं निम्नाङ्किता नियमाः पालनीयाः—

१—यावच्छक्यं गृहस्योपरितले रोगी रक्षणीयः।

२—रोगिनिवासकुटीरेऽनावश्यकवस्तूनि न कदापि स्थापनीयानि।

३—तत्र वातायनान्यनावृतानि स्युः।

४—द्वारवातायनेषु केनचिज्जन्तुघ्नपदार्थेन व्याघ्रमावरकं (परदा) योजनीयम्।

५—रोगिपरिचारकातिरिक्तेन केनचिदप्यन्येन तत्र न गन्तव्यम्। कार्यकरणानन्तरं हस्तपादौ जन्तुघ्नद्रवेण सम्यक् प्रक्षाल्य, वस्त्रान्तरं परिधाय परिचारकेण बहिर्गन्तव्यम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

६—रोगिनिवासकुटीराद् वस्त्रभाजनादिकानि जन्तुघ्नपदार्थेन संशोध्य वहिर्नेतव्यानि ।

७—रोगिणोमलमूत्रष्ठीवनानि जन्तुघ्नद्रव्ययुक्तपात्रे प्रक्षेप्तव्यानि ।

[२] चिकित्सालये पृथग्रक्षणम्—अयं चिकित्सालयो नगराद्बहिरेकान्ते स्यात् । तत्र प्रतिसंक्रामकरोगं पृथक्पृथग्गृहं कार्यम् । यश्च रोगः सन्देहास्पदः तदर्थं पृथगेव गृहं भवेत् । प्रतिरोगिपर्याप्तस्थानादिप्रदानस्य सुव्यवस्था कार्या । चिकित्सालये रोगिणां प्रापणार्थं सुखदं द्रुतयानमावश्यकम् । यावच्छक्यं प्रतिरोगं पृथक्पृथग्वाहनस्य प्रबन्धः कार्यः । रोगिप्रापणानन्तरं तद्वाहनं जन्तुघ्नद्रवेण मार्जनीयम् । रोगिसम्बधीनि दूषितवस्त्रमलादीनि प्रज्वालनीयानि, जन्तुघ्नद्रवेण संशोधनीयानि वा यथासम्भवमिति ।

[१] निवास-गृह में ही अलग रखना । इसके लिये निम्नलिखित नियम पालन करने चाहिये—

क—यथाशक्ति घर का ऊपरी मंजिल में रोगी रखना चाहिये ।

ख-रोगी के कमरे में अनावश्यक वस्तुयें कभी नहीं रखनी चाहिये ।

ग—उसमें खिड़कियाँ खुली हों ।

घ—द्वार की खिड़कियों पर किसी क्रिमिघ्न पदार्थ से युक्त पर्दा डाल देना चाहिये ।

ङ—रोगी के परिचारक के अलावा दूसरे किसी को वहाँ नहीं जाना चाहिये । कार्य करने के बाद हाथ-पैर को क्रिमिघ्न द्रव से अच्छी तरह धोकर दूसरा वस्त्र पहन कर परिचारक को वहाँ से बाहर जाना चाहिये ।

च—रोगी के कमरे से वस्त्र और बर्तन आदि क्रिमिघ्न पदार्थों से शुद्ध कर बाहर ले जाना चाहिये ।

छ—रोगी के मल-मूत्र और थूक को क्रिमिघ्नद्रवयुक्त पात्र में फेंकना चाहिये ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

(२) चिकित्सालय में अलग रखना--यह चिकित्सालय शहर के बाहर एकान्त में हो। वहाँ प्रत्येक संक्रामक रोग के लिये अलग-अलग घर बनाना चाहिए। जो रोग सन्देह युक्त हो उसके लिये अलग ही घर होना चाहिये। प्रत्येक रोगी को पर्याप्त स्थान देने का अच्छा प्रबन्ध करना चाहिये। चिकित्सालय में रोगियों को लाने के लिये सुखदायक तेज सवारी (एम्बुलेस कार ?) आवश्यक है। यथाशक्ति प्रत्येक रोग के लिए अलग-अलग सवारी का प्रबन्ध करना चाहिए। रोगी को अस्पताल में लाने के बाद उस सवारी को क्रिमिघ्न द्रव से धो डालना चाहिए। रोगी के दूषित वस्त्र और मल आदि जला डालना चाहिए या सम्भव हो तो क्रिमिघ्न द्रव से शुद्ध करना चाहिए।

[३] उपदेशः

संक्रामकरोगप्रसारारम्भकाले एव स्वास्थ्यविभागाध्यक्षैरुपदेशप्रदपत्राणि तत्प्रान्तीयभाषायां मुद्राप्य वितरणीयानि। यत्र तत्सङ्क्रमणप्रतिषेधोपायाः पथ्यापथ्यादीनि च लिखितानि स्युः। तथेतस्ततः सर्वत्र तद्विषयकव्याख्यानानि कार्याणि।

संक्रामक रोग प्रसार के आरम्भ में ही स्वास्थ्य विभाग के अध्यक्ष द्वारा उपदेश प्रद पत्र (नोटिसें) उस प्रान्त की भाषा में छपवाकर बटवाना चाहिए जिनमें रोग के संक्रमण से बचने के उपाय, पथ्य और अपथ्य आदि लिखे हों तथा जहाँ-तहाँ सब जगह रोग के विषय में व्याख्यान कराने चाहिए।

[४] जीवाणुविनाशनम्

संक्रामकरोगीयजीवाणूनां विनाशकारकं द्रव्यं त्रिविधं भवति।

(१) जन्तुघ्नम् (रक्षोघ्नम्) इदं जीवाणून् मारयति।

(२) जीवाणुप्रतिरोधकम्--इदं जीवाणूनां वृद्धिं क्रियां चावरुणद्धि।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

[३] दौर्गन्ध्यनाशकम्—इदं दौर्गन्ध्यं नाशयति ।

संक्रामक रोग के जीवाणुओं का नाश करने वाले द्रव तीन प्रकार के होते हैं !

क—जन्तुघ्न (रक्षोघ्न)—यह जीवाणुओं को मारता है ।

ख—जीवाणु-प्रतिरोधक—यह जीवाणुओं की वृद्धि और कार्य को रोकता है ।

ग—दौर्गन्ध्य नाशक—यह दुर्गन्ध नष्ट करता है ।

तत् पुनः त्रिधा भवति, प्राकृतिकं भौतिकं रासायनिकं चेति ।

प्राकृतिकम्—स्वच्छवायुः सूर्यरश्मिश्चेति प्रकृत्यैव रोगकर-जीवाणून् विनाशयतः । सूर्यप्रकाशेनान्त्रिकज्वरयक्ष्मादीनां जीवाणवोऽत्यल्पकालेनैव म्रियन्ते ।

जीवाणु-नाशक द्रव्य दूसरे दृष्टिकोण से पुनः तीन प्रकार के होते हैं :—

प्राकृतिक—स्वच्छ वायु और सूर्य की किरणें । ये स्वभावतः रोग कारक जीवाणुओं का नाश करते हैं । सूर्य-प्रकाश से आन्त्रिक ज्वर और यक्ष्मा आदि के जीवाणु थोड़े ही समय में मर जाते हैं ।

भौतिकम्—इदं दहनस्वेदनभेदाभ्यां द्विविधं भवति ।

तत्र—[१] दहनम्—स्वल्पमूल्यकपदार्थानां व्यर्थवस्तूनां विषये श्रेष्ठतर उपायः । रोगिणां मलमूत्रादीन्यपि दहनीयानि ।

[२] स्वेदनम्—एतच्छुष्कार्द्रभेदाभ्यां द्विविधम् ।

१—शुष्कस्वेदनम्—उष्णवायुद्वारा*जीवाणवः सस्वाण्डका विनाश्यन्ते । एतच्चर्मरबरकाचनिर्मितवस्तूनां पुस्तकादीनां च विषये श्रेष्ठम् ।

२—आर्द्रस्वेदनम्—क्वथनवाष्पस्वेदभेदाद् द्विधेति ।

[क] क्वथनम्—सर्वप्रकारकजीवाणुविनाशार्थं श्रेष्ठतमो विधिरयम् । वस्त्रधातुपात्रकाष्ठनिर्मितवस्तूनां विषये भृशमुपयुज्यते

* एतदर्थं ११५ शतांशोष्णतोपयुक्ता ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

गृहतलादिकमपि तप्तोदकेन प्रक्षाल्य विनष्टजन्तुकी क्रियते। क्वथनार्थं होरैकमलम्।

[ख] वाष्पस्वेदः—अयमतिविश्वसनीय आशुकृच्च विधिः। एषः अक्वथनीयगुरुपदार्थेषु प्रायेणोपयुज्यते। यतो वाष्पं सर्वत्र प्रविशति।

भौतिक—यह दहन और स्वेदन भेद से दो प्रकार का होता है।

(१) दहन—स्वल्प मूल्य के पदार्थों एवं बेकार वस्तुओं के लिए श्रेष्ठ उपाय है। रोगियों के मल-मूत्र आदि भी जलाये जाते हैं।

(२) स्वेदन—यह शुष्क और आर्द्र भेद से दो प्रकार का होता है। शुष्क-स्वेदन—उष्ण वायु के द्वारा अण्डे सहित जीवाणु नष्ट किए जाते हैं। यह चमड़ा, रबड़ और काँच की वस्तुओं एवं पुस्तक आदि के लिए श्रेष्ठ है।

आर्द्रस्वेदन-क्वथन और वाष्प स्वेद के भेद से दो प्रकार का होता है।

(क) क्वथन (उबालना)—सभी प्रकार के जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए यह विधि श्रेष्ठ है। कपड़ा, धातु के बर्तन और लकड़ी से बनी वस्तुओं के लिए बहुत उपयोग में आता है। घर का फर्श आदि भी गरम पानी से धोकर जन्तुरहित किया जाता है। खौलाने के लिए एक घण्टा पर्याप्त है।

(ख) वाष्पस्वेद—यह अत्यन्त विश्वसनीय एवं शीघ्रता करने वाली विधि है। यह प्रायः अक्वथनीय द्रव्यों (रेशमी कपड़े, ऊनी कपड़े, रजाइयाँ आदि) में प्रयुक्त होती है क्योंकि वाष्प सब जगह प्रविष्ट हो जाती है।

रासायनिकम्—शुष्कं द्रवात्मकं वायवीयं चेति त्रिधा। तत्र शुष्के यथा—

चूर्णम्—नवीनं चूर्णं (सुधा) प्रायः पुरीषजीवाणुविनाशार्थं प्रयुज्यते तथा भित्तिपूपयुज्यते। निर्वापितं चूर्णमपि १ कूपोदक-जीवाणुविनाशाय १५ सेटकमितमलम्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

द्रवात्मके तु--पारदद्रवः, कर्पूरद्रवः सुरसाफणिज्झाकार्जकनिम्बपत्रादिक्रिमिसूदनव्याणां क्वाथाश्चोपयोज्याः ।

वायवीये तु--गन्धकेन, निम्बपत्रेण, सोमराजिकापत्रेण, देवदारुसर्जरसादिना च धूपनं क्रियते ।

तथाचाऽह महर्षिसुश्रुत :--

सर्षपारिष्टपत्राभ्यां सर्पिषा लवणेन च ।
द्विरन्हः कारयेद्धूपं दशरात्रमतन्द्रितः ॥

[सु० सू० अ० १९]

रासायनिक--यह तीन प्रकार का होता है--शुष्क, द्रवात्मक और वायवीय । जैसे--शुष्क में-नया चूना प्रायः पुरीष के जीवाणुओं को नाश करने के लिए प्रयुक्त होता है तथा दीवालों में उपयोगी होता है। बुझा हुआ चूना भी एक कुयें के जल के जीवाणुओं को नाश करने के लिए १५ सेर तक पर्याप्त है ।

द्रवात्मक में--पारद-द्रव, कर्पूरद्रव, तुलसी, दौना, वनतुलसी निम्बपत्र आदि क्रिमिनाशक द्रव्यों का क्वाथ प्रयुक्त होता है । वायवीय में-गन्धक, निम्बपत्र, कारीजीरी, धूप, राल और लोबान आदि से जीवाणु (रक्ष) से रक्षा के लिये धूपन (धूनी) किया जाता है । महर्षि सुश्रुत ने कहा भी है--

लगातार दस दिन तक निरलस होकर प्रतिदिन दो बार सरसों, निम्बपत्र और घी सेंधा नमक से क्षतव्रण पर धुँआ करना चाहिए ।

निर्जन्तुकीकरणविधिः

पुरीषं स्रावाश्च--आन्त्रिकज्वरे मलं मूत्रं च, विसूचिकायां वान्तद्रव्यम्, अतिसारसंग्रहण्योः पुरीषम्, यक्ष्मणि, फुप्फुसविकारान्तरे च ष्ठीवनम्, रोमान्तिकाश्लैष्मिकसन्निपातयोः नासागलस्रावाश्च सङ्क्रामका भवन्ति । अतो जन्तुघ्नद्रवयुक्तेषु केषुचिदप्रवेश्यपदार्थनिर्मितेषु पात्रेषु प्रक्षेप्य समाच्छाद्य रक्षणीयाः । १--३

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

होरानन्तरं जलाशयाद् दूरे पृथिव्यां गर्तं कृत्वा पाटनीयाः। समिधश्चूर्णानि मेलयित्वा प्रज्वालयेत्तर्हि अत्युत्तमता स्यात्।

आन्त्रिक ज्वर में मल-मूत्र, विसूचिका में वमन की हुई वस्तु, अतिसार संग्रहणी में पुरीष, यक्ष्मा और फुफ्फुस के विकारों में थूक कफ, रोमान्तिका श्लैष्मिक सन्निपात में नासिका और गले के स्राव संक्रामक होते हैं। इसलिए उन्हें क्रिमिनाशक द्रवयुक्त किसी अप्रवेश्य पदार्थ चीनी मिट्टी काचादि से बने हुए पात्र में डालकर ढक कर रखना चाहिए। १ से ३ घण्टे के बीच में जलाशय से दूर पृथ्वी में गड्ढा कर पाट देना चाहिए। यदि लकड़ी का चूरा मिलाकर जला दें तो और भी अच्छा।

वस्त्राणि-कार्पासवस्त्राणि जन्तुघ्नद्रवेषु प्रहरचतुष्टयं यावत्संरक्ष्य पश्चाद् घंटार्धं परिक्काथ्य संशोष्य धारणीयानि। पूयपुरीषदूषितानि च शोधनद्रव्यमिश्रितजलेन प्रक्षाल्य पश्चात्पूर्ववत् क्थनीयानि। कौशेयवसनानि तु सूर्यरश्मौ दिनत्रयं रक्षणीयानि। क्थनात्तानि विनश्यन्ति।

कपास के (सूती) वस्त्र क्रिमिघ्न द्रवों में ४ पहर तक रखकर फिर आधा घण्टा खौलाने के बाद सुखा कर पहनने चाहिए। पूय और पुरीष से दूषित वस्त्रों को शोधन द्रव्य-मिश्रित जल से धोकर फिर पूर्ववत् खौलाना चाहिए। रेशमी वस्त्रों को सूर्य की किरणों में तीन दिन तक रखना चाहिए। खौलाने से वे नष्ट हो जाते हैं।

शवः—संक्रामकरोगेण मृतानां शवाः श्मशानप्रापणात्पूर्वं जन्तुघ्नद्रवाक्तेन वस्त्रेण संवेष्टनीयाः।

संक्रामक रोग से मरने वालों के शवों को श्मशान ले जाने के पूर्व क्रिमिनाशक द्रव से भीगे वस्त्र से लपेट देना चाहिए।

गृहम्-कीटाविष्टं गृहमशेषं जन्तुघ्नद्रवेण प्रक्षालनीयं जन्तुघ्नद्रव्येण वा धूपनीयम्। एतदवस्थायां निष्कीटनप्रकारो रोगप्रकृ-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

त्याश्रितः। यथा--विसूचिकायां मलमूत्रवमनविषये तथा तद्दूषितपदार्थेषु ध्यानं देयम्। ग्रंथिकसन्निपाते मूषकमत्कुणाखुमक्षिकानां नाशविषये, विषमज्वरे दंशमशकानां नाशने च विशेषध्यानं देयमित्यादि।

क्रिमियुक्त समस्त घर को क्रिमिनाशक द्रव से धोना चाहिए अथवा क्रिमिनाशक द्रव्य से धूपित करना चाहिए। इस अवस्था में निर्जन्तुकरण रोग-प्रकृति पर निर्भर है। जैसे विसूचिका में मल-मूत्र और वमन के विषय में तथा उनसे दूषित पदार्थों पर ध्यान देना चाहिए। प्लेग में चूहा खटमल और चूहे की मक्खियों (पिस्सुवों) के नाश पर एवं विषम ज्वर (मलेरिया) में डाँस और मच्छरों के नाश पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

रोगप्रतिरोधक्षमता

यद्यपि रोगोत्पादकजीवाणवः प्रायेण वायौ जले खाद्येषु च विद्यमाना भवन्ति। अतः प्राणिनः सदैव तदाक्रमणभययुक्ता निवसन्ति। तथापि कतिपयजना एव संक्रामकरोगेण ग्रस्ता भवन्ति न तु सर्वे। अत्र हेतुः--तेषां "रोगप्रतिरोधक्षमता" इत्येव। सा क्षमता तदवस्थाया नाम यत्र शरीरावयवेषु रोगोत्पादकजीवाणुसमाक्रमणावरोधिका शक्तिरागच्छति। इयं शक्तिः स्वाभाविकोपार्जिता चेति द्विधा।

यद्यपि रोगोत्पादक जीवाणु प्रायः वायु, जल और खाद्य द्रव्यों में विद्यमान रहते हैं, इसलिए प्राणी सर्वदा उनके आक्रमण-भय से युक्त रहते हैं। फिर भी कुछ मनुष्य ही संक्रामक रोग से पीड़ित होते हैं, सब नहीं पीड़ित होते। इसमें उनकी "रोग-प्रतिरोध-क्षमता" ही कारण है। यह क्षमता उस अवस्था का नाम है जिसमें शारीरिक अंगों में रोगोत्पादक जीवाणुओं का आक्रमण रोकने की शक्ति आती है। यह शक्ति स्वाभाविक और उपार्जित दो प्रकार की होती है।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

स्वाभाविकशक्तिः—स्वभावत एव मनुष्येषु पशुषु च प्राप्यते, यया क्रीटावेशिरोगप्रभावः पराभूयते। इयं सापेक्षा भवत्यतः परिस्थितिपरिवर्तनेन सम्भवोऽस्ति प्राणी रोगग्रस्तः स्यात्। यथा—स क्षुधार्तः, श्रान्तः, अपथ्यसेवी, शैत्योष्ण्याभिभूतः, दूषितवायुसेवी च स्यात्तदेति।

स्वाभाविक शक्ति—स्वभाव से ही मनुष्यों और पशुओं में प्राप्त होती है, जिससे क्रिमियों के प्रवेश होने से उत्पन्न रोग का प्रभाव पराजित (नष्ट) होता है। यह सापेक्षा (कारण पर निर्भर) होती है। अतः सम्भव है कि बदली हुई परिस्थिति में प्राणी रोग-ग्रस्त हो जाय। जैसे कि वह जब भूखा, थका, अपथ्य सेवन करनेवाला, शीतलता या उष्णता से पीड़ित और दूषित वायु का सेवन करने वाला हो तब।

उपार्जितशक्ति :—इयं कृत्रिमोपायैरुत्पाद्यते। सा च सक्रिया निष्क्रिया चेति द्विप्रकारका भवति।

सक्रियक्षमता—तद्रोगप्रथमाक्रमणानन्तरं रोगमुक्तावस्थायां प्राप्यतेऽथवाकृत्रिमक्षते जीवाणुविषं समावेश्य समुत्पाद्यते। यथा शीतलाग्रंथिकज्वरादौ।

निष्क्रियक्षमता—कुतश्चित्प्राणितः प्राप्तस्य प्रतिविषस्य जन्तुघ्नरक्तद्रव (सीरम) स्य शरीरान्तःप्रवेशात् प्राप्यते। सोऽयं प्रायेणाश्वात् समुपलभ्यते।

मनुष्येषु सीरमनिर्माणार्थं किमपि विशिष्टप्रयत्नं न क्रियतेऽत इयं क्षमता निष्क्रियेति निगद्यते।

उपार्जित शक्ति—यह बनावटी उपायों से उत्पन्न की जाती है। यह सक्रिय और निष्क्रिय दो प्रकार की होती है।

सक्रिय क्षमता (टीका)—उस रोग के आक्रमण के बाद रोगमुक्तावस्था में प्राप्त होती है या बनावटी क्षत में जीवाणु विष को प्रविष्ट करा कर उत्पन्नकी जाती है। जैसे शीतला और प्लेग आदि में। निष्क्रिय क्षमता-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

किसी प्राणी से प्राप्त प्रति-विष क्रिमिनाशक रक्तद्रव (सीरम) को शरीर के भीतर प्रविष्ट करने से प्राप्त होती है। यह रक्तद्रव प्रायः घोड़े से प्राप्त होता है।

मनुष्यों में सीरम बनाने के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया जाता इसलिए इस क्षमता को निष्क्रिय कहते हैं।

उभयोरान्तर्यम्

सक्रियक्षमतायां रोगप्रतिरोधकशक्त्युत्पादने कालातिशयः निष्क्रियक्षमतायां तु स्वल्पकालो लगति। सक्रियक्षमतायां रोगप्रतिरोधकशक्तिरधिककालपर्यन्तं तिष्ठति, निष्क्रियक्षमतायां तु स्वल्पकालमेव। सक्रियक्षमता रोगप्रतिषेधकस्वरूपे प्रयुज्यते न तु चिकित्सास्वरूपे परन्तु निष्क्रियक्षमता चिकित्सास्वरूपे प्रयुज्यते न तु प्रतिषेधकस्वरूपे।

सक्रिय क्षमता में रोग प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न करने में बहुत समय लगता है। निष्क्रिय क्षमता में कम समय लगता है। सक्रिय क्षमता में रोग रोकने की शक्ति अधिक समय तक रहती है। निष्क्रिय क्षमता में थोड़े समय तक रहती है। सक्रिय क्षमता रोग प्रतिषेधक स्वरूप में प्रयुक्त होती है, चिकित्सा रूप से नहीं। परन्तु निष्क्रिय क्षमता चिकित्सा रूप में प्रयुक्त होती है, रोग प्रतिषेधक रूप में नहीं।

कतिपयविशिष्टसंक्रामकरोगाणां वर्णनम्

कुष्ठरोगः (Leprosy)

अयं विशेषप्रकारकजीवाणुद्वारा सञ्जायते। साक्षात्संबन्धेनैवायं संक्रामति। मक्षिकामशकमत्कुणादिद्वाराप्येषः संक्रामतीत्येके। कुष्ठसंक्रमणावरोधार्थं निम्नाङ्किता उपाया अवलम्बनीयाः—

(१) नगराद्बहिः कुष्ठभवनं निर्मापणीयं यत्र सर्वे कुष्ठिनो

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

निवसेयुः। तत्रैव चिकित्सामपि कारयेयु । निम्नाङ्कितव्यापारार्थं न कदाप्याज्ञाप्यास्ते—

१—वीथिकासु गत्वा भिक्षाटनम् ।
२—रजकस्य कर्मकरणम् ।
३—नापितस्य कर्मकरणम् ।
४—खाद्यवस्तूनां वस्त्राणां च विक्रयणम् ।
५—कस्यचिदपि प्रकारस्यापणस्योद्घाटनम् ।
६—वेश्यावृत्त्या द्रव्योपार्जनम् ।
७—सेवाकरणम् ।
८—सार्वजनिककूपोपरि स्नानादिकरणमित्यादि ।
अत्र कृमिघ्नरक्तशोधकद्रव्याणां सेवनं सदा कार्यम् ।

यह विशेष प्रकार के जीवाणु द्वारा उत्पन्न होता है। यह साक्षात् सम्बन्ध से ही संक्रमण करता है। कुछ लोग कहते हैं कि मक्खी, मच्छर और खटमल द्वारा भी यह संक्रमण करता है। कुष्ठ के संक्रमण को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिये :—

नगर के बाहर कुष्ठ भवन बनाना चाहिए। जहाँ पर सभी कुष्ठी निवास करें। वहीं चिकित्सा भी करायें। निम्नांकित कामों के लिए उन्हें कभी आज्ञा नहीं देनी चाहिए ।

१—गलियों में जाकर भिक्षा माँगना ।
२—धोबी का काम करना ।
३—नाई का काम करना ।
४—खाद्य सामग्री और वस्त्रों का बेंचना :
५—किसी भी प्रकार की दूकान खोलना ।
६—वेश्या वृत्ति से द्रव्य कमाना ।
७—सेवा कार्य ।
८—सार्वजनिक कुयें पर स्नान आदि करना ।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इसमें क्रिमिनाशक और रक्त-शोधक द्रव्यों का सदा सेवन करना चाहिए।

विषमज्वरः (Malaria)

रोगोऽयं वायुमण्डलस्योष्णार्द्रत्वे प्रायः सम्भवति। नदी-सरस्तटेषु, आर्द्रभूमौ, निम्नभूमिष्ठप्रदेशे च बाहुल्येन सञ्जायते। भारतवर्षे सवितरि दक्षिणायने प्रायेण भवति।

अस्योत्पत्तेः कारणं जीवाणुविशेषाः त्रिप्रकारका भवन्ति। तत्र द्वौ तृतीयकचतुर्थकोत्पादकौ मृदुकर्माणौ, तदितरोत्पादकश्च तृतीयः तीव्रकर्मा भवति।

इमे जीवाणवो मनुष्यशरीरं प्रविश्य रुधिरेषु तिष्ठन्ति। यदा मशकाः (प्रायोदीर्घशूकाः) तद्रुधिरं चूषयन्ति तदा ते जीवाणवो रुधिरद्वारा तच्छरीरे गत्वामाशयेलालाग्रन्थिषु च तिष्ठन्ति। यदा ते विषमज्वरकीटाक्रान्तमशका अन्यमनुष्यान् दंशयन्ते तदा तत्तद्वारा तन्मनुष्यशरीरे ते जीवाणवः प्रविश्य ज्वरमुत्पादयन्ति। विषमज्वरप्रतिषेधार्थं निम्नलिखितविषये ध्यानं देयम्—

(१) मशकदंशाद्रक्षणम्।
(२) मशकविनाशनम्।
(३) चिकित्सा।
(४) शिक्षा।

यह रोग प्रायः वायुमण्डल की गर्मी सर्दी में उत्पन्न होता है। नदियों तालों के किनारे, गीली भूमि वाले स्थलों में अधिक उत्पन्न होता है। भारतवर्ष में प्रायः सूर्य के दक्षिणायन होने पर होता है।

इसकी उत्पत्ति के कारण विशिष्ट जीवाणु तीन प्रकार के होते हैं। उनमें दो तृतीयक और चातुर्थक को उत्पन्न करनेवाले मृदुकर्मा होते

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

हैं। इन दोनों से भिन्न एकाहिक आदि विषमज्वर को उत्पन्न करने वाला तीसरा जीवाणु तीव्र कर्मा होता है।

ये जीवाणु मनुष्य के शरीर में प्रविष्ट होकर रक्त में ठहरते हैं। जब मच्छर (प्रायः लम्बे दंश वाले) उस रक्त को चूसते हैं तो वे जीवाणु रक्त द्वारा उसके शरीर में जाकर आमाशय और लाला ग्रन्थियों में ठहर जाते हैं। जब वे विषमज्वर कीट से आक्रान्त मच्छर दूसरे मनुष्यों को काटते हैं तो क्षत के द्वारा उस मनुष्य के शरीर में वे जीवाणु प्रविष्ट होकर ज्वर उत्पन्न कर देते हैं।

विषम ज्वर रोकने के लिए निम्नलिखित विषयों पर ध्यान देना चाहिए :—

१—मच्छर काटने से रक्षा।

२—मच्छरों का नाश।

३—चिकित्सा।

४—शिक्षा।

वासस्थानमुच्चस्थले पङ्करहिते च निर्मेयं यतो मशकाः तत्र न गन्तुं शक्नुयुः। गृहविरामदासु जालकमभितः संयोजनीयम्। शयनागारमुपरितले स्यात्। शय्याचतुर्दिक्षु 'मशकहरी' सम्बंधनीया। गृहमार्गादिकं नित्यं स्वच्छीकार्यं, मलसंकरादिकं वहिः प्रक्षेप्यम्। गर्तादिकं प्रपाट्योन्नतीकार्यम्। क्वचिदपि गृह भागे मार्गादौ वा क्षुद्रगर्तेषु जलमेकत्र न तिष्ठेदिति सदा ध्यानं देयम्। तमाखुपत्रदेवदारुगंधकादीनां च धूपनं कार्यम्। मृत्तैल-कर्पूररसोनगंधेनापि मशका विनश्यन्ति। जलेविषमज्वरजीवाणु-वाहका मशका अण्डं ददत्यतस्तद्विनाशार्थं मत्स्याः प्रक्षेप्या अथवा मृत्तैलं तत्र सर्वत्र विष्टरणीयम्। यतः साण्डा मशका विनष्टा भवेयुः।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सोने का कमरा ऊपरी मंजिल में हो। शय्या के चारो ओर मसहरी लगानी चाहिए। गृह मार्ग आदि रोज साफ करना चाहिए। कतवार आदि बाहर फेंकना चाहिए। गड्ढा आदि पाटकर ऊँचा करना चाहिए। कहीं भी घर के किसी हिस्से या मार्ग आदि में, गड्ढों में जल इकट्ठा न होने पाये, इस ओर सदा ध्यान देना चाहिए। तमाखू का पत्ता देवदारू, धूप और गन्धक, लोबान आदि की धूनी देनी चाहिए। मिट्टी के तेल, कपूर और लशुन की गन्ध से भी मच्छर नष्ट होते हैं। जल में विषम ज्वर के जीवाणु को वहन करने वाली मच्छरी अण्डे देती हैं इसलिए उसको नाश करने के लिए उसमें मछलियाँ छोड़नी चाहिए अथवा उसमें सब जगह मिट्टी का तेल फैला देना चाहिए, जिससे अण्डे सहित मच्छर नष्ट हो जायँ।

आयुर्वेदशास्त्रोक्ताः तुलसीपत्रस्वरसार्ककलिकाकुक्कुरुट्टुप-ल्लवकल्कमृत्युंजयवटीविषमज्वरान्तकलौहज्वरांकुशादीनां प्रयोगः कार्यः। अद्यत्वे महातिक्ता (सिनकोना, कुनयन) इत्यस्य तथा नायिसत्वस्य सप्तपर्णत्वक्करञ्जबीजयोश्च प्रयोगोऽतिलाभप्रदो दृश्यते। एतानि जीवाणून् मारयन्ति, पूर्वमेवसेवनादवरोधयन्ति च।

सर्वत्र विषमज्वरसम्बन्धिवृत्तिविषये व्याख्यानं कार्यम्। यतः सर्वजनाः पथ्यापथ्ये ज्ञात्वा स्वरक्षां कर्तुं शक्नुयुः।

आयुर्वेद शास्त्र में कहे हुए तुलसी पत्र का रस, मदार की कली, कुकरौंधा के पत्ते का कल्क, मृत्युञ्जय वटी, विषमज्वरान्तक लौह और ज्वरांकुश आदि का प्रयोग करना चाहिए। आज कल महातिक्ता (कौनीन, सिनकोना) तथा नयी बूटी के सत्व, छतिवन की छाल और कांटा करंज के बीजों का प्रयोग बहुत लाभप्रद दिखायी पड़ रहा है। ये सब जीवाणुओं को नष्ट करते हैं और पहले से ही सेवन करने से उनको रोकते हैं।

सब जगह विषमज्वर सम्बन्धी वृत्त के विषय में व्याख्यान कराना चाहिए, जिससे सभी मनुष्य पथ्य और अपथ्य जानकर अपनी रक्षा कर सकें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

कालज्वरः (Kala-Azar)

अस्य कारणं जीवाणुविशेषाः सन्ति ये प्लीह्नि बाहुल्येन निवसन्ति। यकृति रुधिरस्रोतःस्वपि प्राप्यन्ते। एषां सङ्क्रमणं मत्कुणमशकद्वारा रोगितः स्वस्थपुरुषेषु भवति।

इसके कारण विशिष्ट जीवाणु होते हैं जो प्लीहा में अधिकता से निवास करते हैं। यकृत् में रक्त-स्रोतों में भी पाये जाते हैं। इनका संक्रमण खटमलों तथा मच्छरों द्वारा रोगियों से स्वस्थ्य पुरुषों में होता है।

रोगिणः परिवारात्पृथग्रक्षणीयाः। गृहवस्त्रादिकं सम्यकनिर्जन्तुकं कार्यम्। मत्कुणाः खट्वाभित्तिच्छिद्रभूतलच्छिद्रादिषु साण्डा निवसन्ति ते तथा मशका विविधौषधौष्णोदकादिद्वारा मारणीयाः। गृहे देवदारुगन्धकादिभिर्धूपनं कार्यम्।

रोगियों को परिवार से अलग रखना चाहिए। गृह और वस्त्र आदि को अच्छी तरह क्रिमिरहित करना चाहिए। खटमल अपने अण्डों सहित खटिया, दीवाल के छिद्रों और जमीन के छेदों में रहते हैं। उनको तथा मच्छरों को भाँति भाँति की औषधियों एवं गरम जल द्वारा मारना चाहिए। घर में देवदारु और गन्धक आदि से धूनी देनी चाहिए।

वातालिका (ग्रन्थिकज्वरः Plague)

रोगस्यास्य कारणमेको विशेषप्रकारकःजीवाणुर्वर्तते। वस्तुतः मूषकाणां गदोऽयं मनुष्याणां तु गौणरूपः*। मूषकाणां मक्षिकासु (पिस्सुषु) स जीवाणुः प्रविश्य तदामाशये वृद्धिं प्राप्नोति। ता आखुमक्षिकाः पृथुकाः पक्षरहिता उच्छलनशीला अप्रियप्रकाशाश्च भवन्ति। किंतु भूतलाद् द्विहस्तोच्छ्रयादधिकं नोच्छलितुं शक्नुवन्ति। ता मक्षिका रक्तचूषणार्थं मूषकान् दंशन्ति अतः जीवाणवः प्रविश्य रोगमुत्पादयन्ति ते च म्रियन्ते। एवं मूषकेषु रोगोऽयं प्रसरति। मूषका अस्मिन् गृहे निवसंति तद्गृह-

* भेलपाराशर संहितयोरित्थमेव वर्णनमस्ति।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वासिमनुष्यानपि ता मक्षिका दंशन्ति तत्रैव पुरीषमप्युत्सृजन्ति। यदा ते मनुष्याः कण्डूयन्ते तदा तत्पुरीषस्था ग्रंथिकज्वरजीवाणवः तद्दशनक्षतद्वारा शरीरांतः प्रविश्य सज्वरां वंक्षणकक्षालसीकाग्रंथीनां वृद्धिं कुर्वन्ति।

इस रोग का कारण एक विशिष्ट प्रकार का जीवाणु होता है। वस्तुतः यह रोग चूहों का है, मनुष्यों में तो यह अप्रधान रूप से है। चूहों की मक्खियों में यह जीवाणु प्रविष्ट होकर उनके आमाशय में बढ़ता है। चूहे की ये मक्खियाँ चिपटी, पंखरहित, उछल (फुदक) कर चलने वाली और प्रकाश से द्वेष करने वाली होती हैं, परन्तु पृथ्वीतल से २ हाथ से अधिक नहीं उछल सकती। वे मक्खियाँ रक्त चूसने के लिए चूहों को काटतीं हैं। इनसे उनमें जीवाणु प्रविष्ट होकर रोग उत्पन्न कर देते हैं। वे चूहे मर जाते हैं। इस प्रकार चूहों में यह रोग फैलता है। चूहे जिस घर में रहते हैं उस घर में रहने वाले मनुष्यों को भी वे मक्खियाँ काटती हैं और वहीं पुरीष भी त्याग देती है। जब वे मनुष्य खुजलाते हैं तो उस पुरीष में स्थित प्लेग के जीवाणु उस दंशक्षत के द्वारा शरीर के भीतर प्रविष्ट होकर ज्वर युक्त वंक्षण कांख और लसीका की ग्रन्थियों (गला आदि स्थित) की वृद्धि कर देते हैं।

मूषकाणामविद्यमानताऽस्यरोगस्य प्रतिषेधोपायो मुख्यतमः। एतदर्थं गृहं दृढं चिक्कणमच्छिद्रं निर्मापणीयम्। यतो मूषका विलानि कर्तुं न शक्नुयुः। यत्र च तद्विलानि स्युः तत्र प्रस्तरादिनाऽऽच्छाद्याप्रवेश्यानि कारयेयुः। तथा मूषकविनाशार्थं विविधा उपायाः कार्याः।

चूहों का वर्त्तमान न रहना इस रोग को रोकने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। इसके लिए घर मजबूत चिकना और छेद रहित बनाना चाहिये, जिससे चूहे बिल न कर सकें। जहाँ बिल हो वहां पत्थर आदि से

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

बन्दकर अप्रवेश्य कर देना चाहिये, एवं चूहों को नाश करने के लिए भाँति-भाँति के उपाय करने चाहिए ।

वासस्थानं स्वच्छं सप्रकाशं सदा स्यात् । मक्षिकानाशार्थं सोमराजिकापत्रनिम्बपत्रगन्धकश्रीवासश्रीवेष्टकैर्धूपनंकार्यम् । उपार्जितक्षमताऽपि (टीका) प्राप्तव्या जनैः ।

निवास स्थान सर्वदा स्वच्छ और प्रकाश युक्त हो । मक्खियों को नाश करने के लिए कारीजीरी की पत्ती, निम्बपत्र, गन्धक और लोबान, गन्धा-विरोजा को धूनी देनी चाहिये । उपार्जित क्षमता (टीका द्वारा) भी मनुष्यों को प्राप्त करनी चाहिये ।

मक्षिकादंशतो रक्षार्थं हस्तपादस्कन्धादिषु सदा सर्षपतैलाभ्यङ्गो लाभकरः यदि तत्र निम्बुतैलमपि संयोज्येत तर्हि अतिलाभः स्यात् ।

मक्षिका दंश से रक्षा के लिये हाथ-पैर और कन्धे आदि में सरसों के तेल की मालिश सर्वदा हितकारी है । यदि उसमें निम्बू का तैल भी मिला दिया जाय तो अधिक लाभ होगा ।

कदाचिद् ग्रन्थिकज्वराक्रान्तवसतितः कश्चिज्जनो द्वितीय वसतिं गच्छेच्चेत्तदा तत्प्राप्तिपूर्वमेव तद्वस्त्रादिकं सूर्यकरे होरैकं संशोषणीयं, पश्चात् स वसतौ गच्छेदिति ।

यदि प्लेग से आक्रान्त आवादी से कभी कोई मनुष्य दूसरी बस्ती में जाय तो बस्ती में प्रवेश करने के पूर्व ही उसके वस्त्र आदि को सूर्य की किरणों में एक घण्टा तक सुखाना चाहिये। उसके बाद वह बस्ती में घुसे ।

रोगप्रसरारम्भकाले एव स्थानं परित्यज्यान्यत्र स्वास्थ्यप्रदे विवृतस्थले पर्णकुट्यां निवास उत्तमो रक्षणोपायः ।

रोग फैलने के प्रारम्भ में ही स्थान त्याग कर दूसरे स्वास्थ्यप्रद खुले स्थान में पर्णकुटी में निवास करना रक्षा का श्रेष्ठ उपाय है ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आन्त्रिकज्वरः (Typhoid)

अस्य रोगस्य कारणमेको जीवाणुविशेषो भवति। अस्य संक्रमणं रोगिणां मलमूत्रष्ठीवनादीनां साक्षात्सम्पर्केण, दूषित जलदुग्धखाद्यद्वारा, मक्षिकाद्वारा जीवाणुवाहकमनुष्यद्वारा च भवति।

इस रोग का कारण एक विशिष्ट जीवाणु होता है। इसका संक्रमण रोगियों के मल-मूत्र-थूक आदि के प्रत्यक्ष सम्बन्ध, दूषित-जल, दुग्ध-खाद्य, मक्खी एवं जीवाणु वाहक मनुष्यों द्वारा होता है।

अस्य प्रतिषेधार्थं निम्नाङ्किता उपाया अवलम्बनीयाः—

१—रोगिणो विशिष्टचिकित्सालये रक्षणीयाः। तदभावे गृह एव पृथक्कुटीरे रक्षितव्याः।

२—तन्मलमूत्रादिकं निर्जन्तुकं कृत्वा पाटनीयम्।

३—यानि पात्राणि रोगिणोपयुक्तानि, तानि सम्यक् निर्जन्तुकीकृत्य मार्जनीयानि।

४—खाद्यपेयपदार्थेषु मक्षिका नोपवेशनीयाः।

५—क्षमता प्राप्तव्या।

इस रोग को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिये—

१—रोगियों को इसके लिए खास तौर से बने अस्पतालों में रखना चाहिये। उसके अभाव में घर में ही अलग कमरे में रखना चाहिए।

२—उसके मल-मूत्र आदि को क्रिमिरहित कर जमीन में गाड़ देना चाहिए।

३—जो पात्र रोगी के लिए प्रयुक्त हुए हों उन्हें अच्छी तरह क्रिमि रहित कर धो डालना चाहिए।

४—खाद्य और पेय पदार्थों पर मक्खियों को न बैठने देना चाहिये।

५—रोगक्षमता प्राप्त करनी चाहिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

श्लेष्मकसन्निपातः (Influenza)

अयं प्रबलसंक्रामको जनपदव्यापिरोगः। शीतकाले प्रायः सञ्जायत एषः। तदानीं पर्याप्तवस्त्राप्राप्त्या शैत्यनिवारणार्थमेक स्मिन्नेव कुटीरे वातायनकपाटानावृत्य बहवो जना मिथः संहताः सन्तः स्वपन्ति, इत्येव कारणम्।

यह प्रबल संक्रामक और देश में व्याप्त होने वाला रोग है। प्रायः यह शीतकाल में उत्पन्न होता है। उस समय पर्याप्त वस्त्र के अभाव में ठण्ढक दूर करने के लिए एक ही कमरे में खिड़कियों के पल्ले बिना खोले हुए बहुत लोग परस्पर सटकर सोते हैं। यही इसका कारण है।

एतद्रोगोत्पादकजीवाणोर्निश्चयः अद्यावधि नाऽभवत्। अस्मिन् विषये भिन्नभिन्नमतानि वर्तन्ते। केचिदेकविशेषप्रकारकजीवाणुमेव कारणं मन्यन्ते केचित्तु विषविशेषम्। रोगोऽयं वायुवाह्य इति सर्वेमन्यते। अस्य संक्रमणं रोगप्रथमावस्थायामधिक्येन भवति। अस्य विषं रोगिणो नासागलश्वासमार्गीयनिःस्रावेषु समुलभ्यते। अतस्तत्संक्रमणंरोगिणः साक्षात्सम्पर्केण तथा तस्य कासनच्छिक्कनवार्तालापकालेषु भवति। तत्कालकीटाविष्टवस्त्रपात्रादिद्वाराप्यस्य संक्रमणं दृश्यते। नास्त्येवं कश्चित्प्राणी यस्मिन्नेतद्रोगप्रतिरोधविषये स्वाभाविकक्षमता स्यात्। रोगप्रथमावस्थायां संक्रमणशीलत्वादाशुकारित्वाद् दुरवगम्यनिदानत्वाच्चास्य संक्रमणप्रसारावरोधस्य नास्ति कश्चन् विशेषोपायः। अतो विश्वव्यापिसंक्रमणकाले यदि स्वल्पज्वरोप्यनुभवगम्यः स्यात्तदानीमेव स रोगी पृथक् सुप्रकाशितवाताक्रान्तकुटीरे रक्षणीयः। रोगिणः कासनादिकाले मुखसमक्षेवस्त्रं योजनीयम्। तच्च निर्जन्तुकं कार्यम्। रोगिस्रावदूषितानि वस्त्राणि वस्त्वन्तराणि च निर्जन्तुकीकार्याणि। रोगिनिवासकुटीरोऽपि निर्जन्तुकीकार्यः। तदानीं नाट्यालयसम्मेलनादौ जनानां गमनं निषेधनीयम्। यतो जनसमुदायः एकत्र न

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्थातुं शक्नुयात्। श्लेष्मकसन्निपातावरोधार्थं पञ्चाशत्तोलकोष्ण-जलेऽर्धतोलकलवणं घोलयित्वा तस्य कवलगण्डूषद्वारा गलसंशोधनं तथा नस्यद्वारा नासागुहासंशोधनं दिवा त्रिचतुर्वारमवश्यं कार्यम्।

इस रोग को उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं का निश्चय आज तक नहीं हो सका है। इस विषय में भिन्न-भिन्न राय हैं। कुछ लोग एक प्रकार के जीवाणु को कारण मानते हैं, तो कुछ लोग एक विशिष्ट विष को! यह सभी लोग मानते हैं कि यह रोग वायु द्वारा वहन किया जाता है। इसका संक्रमण रोग की प्रारम्भिक अवस्था में अधिक होता है। इसका विष रोगी की नासिका गला एवं श्वास मार्ग से निकलने वाले स्रावों में प्राप्त होता है। इसलिए इसका संक्रमण रोगी के साक्षात् संबंध होने से एवं उसके खाँसने, छींकने और वार्तालाप के समय होता है। उसी समय क्रिमियुक्त वस्त्र और पात्र आदि के द्वारा भी इसका संक्रमण देखा जाता है। ऐसा कोई प्राणी नहीं है जिसमें इस रोग को रोकने के लिये स्वाभाविक क्षमता हो। रोग की प्रथम अवस्था में संक्रमण-शील होने, तेजी से बढ़ने और कठिनाई से निदान समझ में आने के कारण इसके संक्रमण प्रसार को रोकने का कोई विशिष्ट उपाय नहीं है। इस लिए सारे संसार में व्याप्त होने वाले संक्रमण काल में यदि थोड़ा ज्वर भी अनुभव से ज्ञात हो तो उसी समय रोगी को अलग रोशनीदार और हवादार कमरे में रखना चाहिये। रोगी के खाँसने के समय उसके मुँह के सामने वस्त्र लगाना चाहिए। उस वस्त्र को क्रिमि-रहित कर डालना चाहिये। रोगी के स्रावों से दूषित वस्त्र एवं दूसरी वस्तुओं को क्रिमि-रहित करना चाहिए। रोगी के रहनेवाले कमरे को भी क्रिमिरहित करना चाहिये। उस समय नाट्यशाला एवं सम्मेलन (मेला) आदि में मनुष्यों का जाना रोकना चाहिए। जिससे मनुष्यों का समूह इकट्ठा न हो सके। श्लेष्मक सन्निपात को रोकने के लिये पचास तोले कुछ गरम जल में

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

आधा तोला नमक घोलकर उसके गण्डूष (मुँह में धारण कर बिना हिलाये द्रव का) और कवल (मुँह में हिलाते हुए द्रव का धारण) द्वारा गले का शोधन एवं नस्य द्वारा नासा गुहा (नाक) का शोधन दिन में तीन चार बार अवश्य करना चाहिये।

शोषः * (Phthisis-Tuberculosis)

शोषो राजयक्ष्मा, यक्ष्मा, क्षय इत्यपरपर्यायः।
अयं खलु परमभयङ्करोऽतिप्राचीनः संक्रामको रोगः।
यो हि फुप्फुसयोः कीटाणुविशेषाणां स्थित्योत्पद्यते।

शोष, राजयक्ष्मा, यक्ष्मा और क्षय ये पर्याय-वाचक शब्द हैं। यह अत्यन्त भयंकर और अत्यन्त प्राचीन संक्रामक रोग हैं जो फुप्फुसों में विशिष्ट कीटाणुओं के रहने से उत्पन्न होता है।

क्षयरोगाक्रमणे मुख्यतःकारणत्रयम्

(१) जीवाणवः (२) शरीरशक्तिह्रासकारककर्माणि (३) अशुद्धवायुसेवनमिति।

शरीरं हि क्षेत्रं जीवाणवश्च बीजम्। यदा वपनयोग्यं क्षेत्रं भवति तदैव बीजवपनादंकुर उत्पद्यते। एवं यदा शरीरं वेगरोध-धातुक्षयसाहसविषमाशनैः शरीरशक्तिह्रासकारककर्मभिः क्षीणं, निर्बलं भवति जीवाणवश्चाशुद्धवाय्वादिद्वारा तत्राधिकुर्वन्ति चेत्तदा क्षयरोग उत्पद्यते।❀

क्षय रोग के आक्रमण में प्रधानतः तीन कारण हैं:—१—जीवाणु, २—शारीरिक शक्ति का ह्रास करने वाले काम, ३—अशुद्ध वायु का सेवन।

टिप्पणी—

* काशी हिन्दू विश्वविद्यालयीयशास्त्राचार्यपरीक्षासमित्या स्वीकृतस्य १९२७ ई० स्वलिखितस्य यक्ष्मनिबन्धाख्यग्रन्थस्यांशोऽयमुद्धृतोऽत्र।

❀ जीवाणुवपनयोग्यं क्षेत्रं कथं भवतीति नज्ञायते पाश्चात्यैः। तत्तु स्वहेतुतः प्रकुपितानां दोषाणां वातपित्तकफानां वैषम्याद्भवति। अतः मूल-कारणं दोषाणां वैषम्यमेवेति प्राच्याः।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शरीर ही क्षेत्र है और जीवाणु बीज हैं। जब क्षेत्र बोने योग्य होता है तभी बीज डालने से अंकुर उत्पन्न होता है। उसी प्रकार जब शरीर धारणीय वेगों को रोकने, धातुक्षय, दुस्साहस और विषम भोजन आदि शारीरिक शक्ति का ह्रास करनेवाले कर्मों से क्षीण-निर्बल हो जाता है तब यदि वहाँ अशुद्ध वायु आदि के द्वारा क्षयोत्पादक जीवाणु अधिकार कर लेते हैं तो क्षय रोग उत्पन्न हो जाता है।

शरीरे क्षयोत्पादककीटाणूनां प्रवेशप्रकाराः

(१) श्वासेन सार्धं फुप्फुसे गमनं जीवाणूनाम्।

(२) एवम्भूतस्याशनस्य भक्षणं यत्र क्षयरोगोत्पादकजीवाणवः सम्मिलिताः स्युः। यथा क्षयपीडितपशूनां मांसमथवाक्षीरमथवान्यद्भोज्यं वस्तु यत्र क्षययुक्तवस्तूनां संस्पर्शः स्यात्।

(३) व्रणद्वारा रुधिरे कीटाणुप्रवेशः।

एवंत्रिप्रकारेभ्यः शरीरे क्षयकीटाणवः प्रविशन्ति।

तत्र प्रथमः सर्वापेक्षया मुख्य इति प्रतीयते।

१—श्वास के साथ फुप्फुस में जीवाणुओं का गमन होता है।

२—ऐसे भोजन का सेवन करना, जिसमें क्षय रोग को उत्पन्न करने वाले जीवाणु सम्मिलित हों। जैसे—क्षयपीड़ित पशुओं का माँस अथवा दूध या अन्यान्य भोज्य सामग्री जिससे क्षययुक्त वस्तुओं का संस्पर्श होवे।

३—व्रण के द्वारा रक्त में कीटाणुओं का प्रवेश।

इस प्रकार तीन प्रकार से शरीर में क्षय के कीटाणु प्रवेश करते हैं। इनमें पहला (श्वास द्वारा जोवाणुगमन) सभी की अपेक्षा मुख्य ज्ञात होता है।

श्वासद्वाराकीटाणुप्रवेशः

क्षयपीड़ितजनानां मुखात् ष्ठीवनेन सहासङ्ख्याः कीटाणवो निःसरन्ति। इदं ष्ठीवनं यदेतस्ततः पतितंसत् शुष्कीभवति तदा

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

चूर्णरूपतां गच्छति। तच्चूर्णञ्च वायुनाप्रक्षिप्तं पांसुभिर्मिश्रितम्भवति। यो हि मनुष्य एवम्भूते पांसुमिश्रिते वाते श्वसिति, यदि तस्य शरीरे [कुस्वास्थ्यात्] कीटाणूनामधिकारो भवेत्तर्ह्यवश्यं स क्षयरोगाक्रान्तःस्यात्। मातृपितृदोषान्मद्यादिमादकद्रव्यसेवनाद्रोगान्तरात्कुतश्चित्स्वास्थ्यनाशकर्मतो वा यदा शरीरं निर्बलम्भवति तदैवैतेषां कीटाणूनामधिकारस्तत्तन्निमित्ताज्जायते तत्र।

क्षय पीड़ित मनुष्यों के मुख से थूक के साथ असंख्य कीटाणु निकलते हैं। वह थूक यदि जहाँ तहाँ गिर जाने पर सूख जाता है, तो चूर्ण बन जाता है। वह चूर्ण वायु द्वारा उड़कर धूलि में मिश्रित हो जाता है। जो मनुष्य इस प्रकार के धूलि मिश्रित वायु में श्वास लेता है, यदि उसके शरीर में अस्वास्थ्य के कारण कीटाणुओं का अधिकार हुआ तो निश्चित वह क्षय रोग से आक्रान्त हो जाता है।

माता-पिता के दोष, शराब आदि मादक द्रवों के सेवन, दूसरे रोग अथवा किसी स्वास्थ्य-नाशक कार्य से जब शरीर दुर्बल होता है तो उस शरीर में इसी कारण इन कीटाणुओं का अधिकार हो जाता है।

इतस्ततःप्रक्षिप्तष्ठीवनादतिरिक्तं रोगिणः कासेन उच्चैः सम्भाषणेन क्षवथुना वा साकं यःष्ठीवनांशो वहिरायाति सोऽपितत्समीपवर्तिनां मनुजानां परमहानिकरः। एवं तेऽपि क्षयरोगाक्रान्ताः भवन्तीति स्पष्टं सिद्धम्। अतो रोगिणामतिसन्निकटे चिरकालं न स्थातव्यं कैश्चित्। द्वित्रिहस्तान्तरंस्थित्या तु नास्ति भयं यतस्ते सूक्ष्माःकीटाणवो ये ष्ठीवनेन सह कासक्षवथूच्चैर्भाषणतो मुखाद्बहिरायान्ति ते हस्तद्वयान्तरादग्रे न गन्तुं शक्नुवन्ति शीघ्रञ्च भूमौ पतन्ति। परन्तु तत्सामान्यं भयमपि तत्कीटाणुयुक्तष्ठीवनस्य भूम्यापतनेनोत्पन्नं स्यादवश्यमपनेतव्यम्। ते कणा रजोयुक्ता वायौ न मिश्रिता भवेयुः। यद्धिमणेत्यवश्यं ज्ञातव्यं यत्तस्य ष्ठीवनं शुष्कं

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भूत्वा चूर्णरूपत्वं न गच्छेत्। यतश्चूर्णत्वेनैव क्षयस्य प्रसारो भवति बाहुल्येन। अत आर्द्रमेव ष्ठीवनं सावधानतया नष्टं कुर्यात्। एतदर्थं रोगिणा सर्वदा धातुनिर्मिते कस्मिंश्चित्प्रतिग्रहे [ष्ठीवनपात्रविशेषे] ष्ठीवनीयम्। एतत्पात्रंकेनचित्परिशोधकद्रव्यपदार्थेन [यथा 'चूना, पोटाशपरमेगनेट' अथवा 'कार्बोलिकघोल' इत्येतद्रूपयुक्तजलेन) अर्द्धं पूर्णं स्यात्। यतः ष्ठीवनं न शुष्येत्। तं प्रतिग्रहं भूमितलाद् द्विहस्तोच्चैः कस्मिंश्चिदाधारे स्थापयेत्। यतो मार्जारिकाश्वादयस्तत्र मुखं न प्रक्षिपेयुः। यद्द्वारा च क्षयप्रसारो न स्यात्। प्रतिग्रहञ्चाच्छादनेनाच्छादितं सदा रक्षेत्। एवंकृते मक्षिकादयोऽपि तत्र नोपविशन्ति। तद्द्वारेण च क्षयप्रसारभयं न भवति। यत इति सिद्धमेव यन्मक्षिकाकीटपतंगादयः स्वपादद्वारा ष्ठीवनकणान् नीत्वा यस्मिन् वस्तुनि तिष्ठन्ति तत्क्षययुक्तं भवति। तद्भक्षणेन च प्राणिनः क्षयरोगाक्रान्ता भवन्ति। अथवा क्षयाक्रान्तमक्षिकाकीटादयः मृत्वा शुष्काःसन्तो रजसि मिश्रिता भवन्ति। तन्मिश्रितरजो वायुना सह फुफ्फुसे श्वासद्वारा गच्छति क्षयञ्चोत्पादयति। यदा रोगी गृहाद्बहिर्गच्छेत्तदा स्वेन सहैकं जेवीयं प्रतिग्रहं नयेत्। यद्येवं न सम्भवेत्तु कस्मिंश्चिद्वस्त्रके [रूमाले] ष्ठीवेत्। अन्यत्र न ष्ठीवेत्। तद्वस्त्रं आर्द्रमेवदाहयेदथवा कस्मिंश्चित् पात्रेधृत्वा तस्मिन् जलं शोधकद्रव्यं शुक्तसोडाद्यन्यतमंच प्रक्षिप्य सम्यक् क्वाथयेदेवं संशोध्य कार्ये प्रयोजयेत्। निखिलंप्रतिग्रहस्थष्ठीवनमपि नित्यसन्निहित एकस्मिन् जलपूर्णघटे प्रक्षिप्य क्वाथयेत्। एकस्मिन्नहोरात्रेऽवश्यमेकदा क्वथेत्। ईषत्कालं क्वथनेनैव कीटाणवो म्रियन्ते। ष्ठीवनञ्चाऽहानिकरम्भवति। क्वाथ्यजलेन सह शुद्धसर्जिका (सोडा) दिकशोधकद्रव्यमवश्यं प्रक्षिपेत्। यद्वस्त्रसिंहाणकादिप्रोक्षणार्थमुपयुज्यते तत्ष्ठीवनेन न स्पृष्टं स्यात्। ष्ठीवनार्थमन्यद्वस्त्रं रक्षेत्।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

जहाँ-तहाँ फेंके हुए थूक के अतिरिक्त रोगी की खाँसी, उच्च स्वर से भाषण अथवा छींक के साथ यदि थूक का अंश बाहर आता है तो वह भी पास रहने वाले मनुष्यों के लिए अत्यन्त हानिकारक है और वे भी क्षय रोग से आक्रान्त हो जाते हैं यह भी स्पष्ट सिद्ध है। इसलिए रोगियों के अत्यन्त पास किसी को भी अधिक देर तक नहीं ठहरना चाहिये। दो तीन हाथ की दूरी पर ठहरने से भय नहीं है। क्योंकि वे सूक्ष्म कीटाणु जो थूक के साथ खाँसी छींक और उच्च-भाषण से मुँह के बाहर आते हैं, दो हाथ के आगे नहीं जा सकते। शीघ्र ही जमीन पर गिर पड़ते हैं। परन्तु वह सामान्य भय भी जो कीटाणुयुक्त थूक के जमीनपर गिरने से उत्पन्न होता है अवश्य दूर करना चाहिए। वे थूक के कण धूलि में मिलकर वायु में न मिलें। यक्ष्मा के रोगी को यह अवश्य जानना चाहिये कि उसका थूक सूखकर चूर्ण न होने पाये। क्योंकि थूक के चूर्ण होने से ही अधिकतर क्षय का प्रसार होता है। इसलिए गीले थूक को ही सावधानी से नष्ट करना चाहिये। इसलिये रोगी को सर्वदा धातु निर्मित किसी पात्र (पीकदान) में थूकना चाहिए। यह बर्तन किसी परिशोधक पदार्थ (जैसे चूना, पोटाशियम परमैंगनेट या कार्बोलिक लोशन युक्त-जल) से आधा भरा रखना चाहिए जिससे थूक न सूखे। उस पात्र को पृथ्वीतल से दो हाथ ऊँचे किसी आधार पर रखना चाहिये। जिससे बिल्ली और कुत्ते आदि उसमें मुख न डालें। उसके द्वारा क्षय का प्रसार न हो। पीकदान भी सर्वदा ढक्कन से ढका हुआ रखना चाहिये। ऐसा करने पर मक्खी आदि वहाँ नहीं बैठेगी और उसके द्वारा क्षय के प्रसार का भय नहीं होता। क्योंकि यह सिद्ध ही है कि मक्खी, कीट, पतंग आदि अपने पैरों द्वारा थूक के कणों को लेकर जिस वस्तु पर ठहरते हैं वह क्षययुक्त होती है। उस वस्तु को खाने से भी प्राणी क्षय रोग से आक्रान्त होते हैं अथवा क्षयाक्रान्त मक्खी और कीट आदि मर कर सूख जाने पर धूलि में मिल जाते हैं। वह मिश्रित धूल वायु के साथ फुफ्फुस में श्वास द्वारा जाती है

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

और क्षय उत्पन्न करती है। यदि रोगी घर से बाहर जाय तो अपने साथ एक जेबी बर्तन (थूकदानी) लेता जाय। यदि यह सम्भव न हो तो किसी वस्त्र (रूमाल) में थूके। दूसरी जगह न थूके। उस वस्त्र को गीला ही जला दे अथवा किसी पात्र में रखकर उसमें जल साबुन और सोडा आदि कोई शोधक-द्रव्य डाल कर अच्छी तरह खौला दे। चौबीस घंटे में ऐसा एक बार अवश्य करे। उस वस्त्र और पात्र आदि को अच्छी तरह शुद्ध कर काम में लाना चाहिए। पीकदान के सब थूक को भी प्रतिदिन पास के एक जलपूर्ण घड़े में डाल कर खौलाना चाहिए। एक दिन रात में एक बार अवश्य खौलाना चाहिए। खौलने से ही कुछ समय में कीटाणु मर जाते हैं और थूक भी हानिकर नहीं होता। खौलने वाले जल के साथ सज्जी सोडा आदि शोधक द्रव्य अवश्य मिला देना चाहिए। जो वस्त्र सिंहाणक (नाक का मल) आदि पोंछने के लिए प्रयुक्त होता है वह थूक से कभी न छू जाए। थूकने के लिए दूसरा वस्त्र रखना चाहिए।

कासनम्--क्षयी कासवेगं नावरुन्ध्यान्नच मुधा कासेत। कासवेगादागतं कफं न निगिलेदेवंकृते अन्त्राण्यपि रोगान्वितानि शीघ्रं भवन्ति। तथा कासावसरे स्वसम्मुखे वस्त्रं धृत्वा कासेत। यतः ष्ठीवनकणा अन्यत्र न पतेयुः।

क्षय का रोगी कास के वेग को न रोके और न व्यर्थ ही खांसे। खांसी के वेग में आए हुए कफ को न निगले। ऐसा करने से आँतें भी शीघ्र रोगयुक्त हो जाती हैं। खांसने के समय अपने मुख के सामने वस्त्र रखकर खाँसे। जिससे थूक के कण दूसरी जगह न गिरें।

मक्षिकादमनावश्यकता--यावच्छक्यं रोगिनिवासस्थाने मक्षिकाऽनागमनस्य प्रबन्धो विधेयः। यत एता एव क्षयकीटाणून् प्रसारयन्ति। अतः सजालककपाटेन रोगिद्वारमाच्छादितं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

रक्षेत् सदा । तथा रोगिनिवासस्थानसकाशेऽशुद्धदुर्गन्धिपदार्थ-राशिर्न स्यात् । सर्वतश्च स्वच्छता स्यात् ।

रोगिणोपयुज्यमानानां वस्त्रादीनां शुद्धिः सावधानतया सर्वदा कार्या । निवासस्थानस्य भूमेरुपरि जलं प्रक्षिप्य पश्चान्मार्ज्न्या शनैः शनैः मार्जयेदन्यथोड्डीयमानपांसुभी रोगी, अन्ये च तत्रवर्तिनो रोगाक्रान्ता भवितुं शक्नुवन्ति ।

जहाँ तक हो सके ऐसा प्रबन्ध किया जाय कि रोगी के कमरे में मक्खियों का आगमन न हो, क्योंकि ये ही क्षय के कीटाणुओं को फैलाती हैं । इसलिए सर्वदा जाली सहित कपाट से रोगी के घर का द्वार ढका रक्खे । तथा रोगी के निवास स्थान के पास अशुद्ध दुर्गन्धित पदार्थ का ढेर न रहे, सब जगह सफाई रहे ।

रोगी द्वारा प्रयुक्त वस्त्र आदि की शुद्धि सर्वदा सावधानी से करनी चाहिए । निवास स्थान को भूमि पर जल छिड़क कर तत्पश्चात् झाड़ू से धीरे-धीरे झाड़ना चाहिए, नहीं तो उड़ी हुई धूल से रोगी और वहाँ रहने वाले लोग रोगाक्रान्त हो सकते हैं ।

अशनद्वाराकीटाणुप्रवेशः--यदशनं क्षयजनककीटाणुयुक्तम्भवति तदशनञ्च योऽश्नाति तस्यामाशयेऽशनद्वारा कीटाणवो गच्छन्ति । प्रायःक्षयरोगाक्रान्तपशूनां क्षीरपानेनाथवा तन्मांसभक्षणेनैतत्सम्भवति । यतः पशूनामपि क्षयरोगो जायते । पशुक्षयकारकाः कीटाणवः मानवक्षयकारककीटाणुभ्यो विभिन्ना भवन्ति । पाशविकक्षयस्याक्रमणं मनुष्येषु भवतीति सिद्धमेव अतो मांसाहारिणां यद्येतन्निश्रितं न स्याद्यदिदं मांसं [परीक्षया सिद्धम्] निर्दोषं वर्तते तु तैः सम्यक् तन्मांसं क्थनीयम् । एवङ्कृते निखिला हानिकराः क्षयकीटाणवो विनष्टा भवन्ति । क्षययुक्तपशूनां तु मांसं क्षीरञ्च सर्वथा त्याज्यम् । पशूनामपि

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

परीक्षा सततं वैद्यद्वारा कार्या, रोगी पशुः पृथक् कार्यः। आभीरैरन्यपशुपालकैश्च सदाऽस्मिन् विषये ध्यानं देयम्। दुग्धदोहनोपयुज्यमानं पात्रमपि सदा उष्णोदकेन परिशोध्य स्थापनीयम्।

जो भोजन क्षयोत्पादक कीटाणुओं से युक्त होता है उस भोजन को जो खाता है उसके आमाशय में भोजन द्वारा कीटाणु जाते हैं। प्रायः क्षय रोग पीड़ित पशुओं का दूध पीने अथवा उनका माँस खाने से यह सम्भव होता है। क्योंकि पशुओं को भी क्षय-रोग उत्पन्न होता है। पशुओं को क्षय करने वाले कीटाणु मनुष्यों को क्षय करनेवाले कीटाणुओं से भिन्न होते हैं। पशुओं के क्षय का आक्रमण मनुष्यों पर होता है यह सिद्ध ही है। अतः माँसाहारियों को यदि यह निश्चय नहीं है कि यह माँस (परीक्षा द्वारा प्रमाणित) निर्दोष है तो उन्हें उस माँस को अच्छी तरह खौला देना चाहिए। ऐसा करने से हानिकारक क्षय के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। क्षययुक्त पशुओं का माँस और दूध सर्वथा त्याग देना चाहिए। वैद्यों को पशुओं की भी परीक्षा सर्वदा करनी चाहिए। रोगी पशु को अलग कर देना चाहिए। अहीर और अन्य पशुपालकों को इस विषय में सर्वदा ध्यान देना चाहिए। दूध दुहने का बर्तन भी सर्वदा गरम जल से अच्छी तरह शुद्ध कर रखना चाहिए।

क्षयान्वितपशूनां क्षीरस्य पानेन क्षयाक्रान्ता भवन्ति जनाः। अतः सन्देहे सति सम्यक् कथित्वा पिबेत्। प्रायः शिशुभ्यो परमलाभकरस्वमातृदुग्धाभावे गोक्षीरं दीयते। यतो मातृदुग्धातिरिक्तं गवामपिक्षीरं हितकरं भवति। अतो गवां परीक्षां कारयित्वा तासां क्षीरं पाययेत्। सन्देहे सति क्षीरं तावदुष्णीकुर्याद्यावत्तस्मिन् सम्यग्बुद्बुदान्युत्तिष्ठेयुः। पश्चाच्छीतीकृत्य शिशुभ्यः पाययेदिति।

क्षययुक्त पशुओं का दूध पीने से भी मनुष्य क्षयाक्रान्त हो जाते हैं। इसलिए सन्देह होने पर अच्छी तरह खौला क[illegible]रीना चाहिए। प्रायः

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

बच्चों को अत्यन्त लाभकारी माता के दूध के अभाव में गाय का दूध दिया जाता है। क्योंकि मातृ-दुग्ध के अतिरिक्त गाय का भी दूध हितकारी होता है। इसलिए गायों की परीक्षा कर उनका दूध पिलाये। सन्देह होने पर दूध तब तक गरमाये जबतक उसमें बुलबुले उठने लगें। उसके बाद ठण्डा कर बच्चों को पिलाये।

चुम्बननिषेधः—प्रायो जनाः श्वमार्जारिकाशुकसारिकादिकं पालयन्ति। सम्भवोऽस्ति ते क्षयान्विताः स्युः। अतस्तेषां चुम्बनमनुचितम्। क्षयाक्रान्तानां मनुजानामपि चुम्बनं न तत्कुटुम्बिभिमित्रैर्वा कार्यम्। यतस्तन्मुखागतष्ठीवनस्य स्वमुखप्रवेशादन्त्राणि क्षयान्वितानि भवितुं शक्नुवन्ति।

प्रायः लोग कुत्ता, बिल्ली, सुग्गा और मैना आदि पालते हैं। सम्भव है वे क्षययुक्त हों। इसलिए उनका चुम्बन अनुचित है। क्षयाक्रान्त मनुष्यों का भी चुम्बन उसके कुटुम्बी या मित्रों को नहीं करना चाहिए। क्योंकि रोगी के मुँह से आए हुए थूक के अपने (चुम्बन करने वाले के) मुँह में प्रविष्ट होने से आँतें क्षययुक्त हो सकती हैं।

धार्मिकगोष्ठीद्वारा प्रचारः—भिन्न-भिन्नधर्मावलम्बिनो भिन्नभिन्नजातीया वा यदा स्वगोष्ठीं कुर्वन्ति तदा प्राय एकस्मिन्नेव पात्रे बहवो जना जलादिकं पिबन्ति। एतन्महदनुचितं सम्भवोऽस्ति कश्चिदज्ञातः क्षयरोगी स्यात्तत्र तन्मुखादागतं पात्रलग्नं ष्ठीवनमन्यस्य स्वस्थस्य मुखाभ्यन्तरे गच्छेदेवं सोऽप्याक्रान्तः स्यात्क्षयेणेति। अतस्तत्र पृथक्-पृथङ् मृत्तिकाशरावे हस्तसम्पुटे वा पिबेत्तु वरं स्यात्।

भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी या विभिन्न जातिवाले जब अपनी गोष्ठी (पंचायत) करते है तो प्रायः एक ही पात्र में बहुत मनुष्य जल आदि पीते हैं। यह अत्यन्त अनुचित है। सम्भव है वहाँ कोई अज्ञात क्षय-

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

रोगी हो और उसके मुँह से आया हुआ जलपात्र में लगा हुआ थूक किसी अन्य स्वस्थ मनुष्य के मुँह के भीतर चला जाय तो वह भी क्षय-रोग से आक्रान्त हो जायगा। इसलिए वहाँ लोग अलग अलग मिट्टी के पात्र अथवा अञ्जलि से जल पियें तो उत्तम हो।

व्रणद्वारा रुधिरे कीटाणुप्रवेशः—यःखलु क्षयरोगिणा प्रतिग्रहं परिमार्ष्टि तस्य यदि कदाचित् धातुमृत्काचाद्यन्यतमनिर्मितप्रतिग्रहद्वारा क्षतंस्यात्तुकीटाणवस्तद्द्वारा रुधिरे प्रविष्टा भवन्ति। तथाऽन्येऽपि क्षयरोगिणां परिचारकाः सुहृदो वा यदि व्रणिताः स्युः, रोगिसन्निकटे चोपविष्टाः स्युः, तद्व्रणे रोगिष्ठीवनकणा असावधानतया वाद्यादिद्वारा कथञ्चिदपि पतेयुश्चेत्तुतेषां रुधिरे कीटाणवः प्रविष्टा भवन्ति। क्षयरोगचिकित्सकानामपि असावधानतया भयं सम्भवति यदि क्षयिसृष्टयन्त्रद्वारा तेषां क्षतं स्यात्। अतो विशेषेण चिकित्सकाः, क्षयिपरिचारकाः, मित्राणि कुटुम्बिनश्च सावधानाः स्युः।

कदाचित् रोगी यदि स्वकुटुम्बिनो बालकादेः क्षते स्वष्ठीवनं लिम्पेदथवा कस्यचिच्छिशोः क्षतांगुलिं स्वमुखे प्रवेशयेत्तत्क्षतद्वारा कीटाणवो रुधिरे प्रविष्टा भवन्ति।

जो क्षयरोगी की पीकदानी (और अन्य पात्रों) को साफ करता है उसे यदि कहीं धातु, मिट्टी और काँच आदि में किसी से बनी हुई पीकदानी (या अन्य पात्र) द्वारा क्षत हो जाय तो कीटाणु उस क्षत द्वारा रक्त में प्रविष्ट होते हैं। क्षय-रोगी के अन्यान्य परिचारक या मित्र यदि व्रण से युक्त हैं और रोगी के पास बैठे हैं, यदि रोगी के थूक के कण असावधानी से वाद्य आदि के द्वारा किसी प्रकार उनके व्रण में गिर गये, तो उनके रक्त में कीटाणु प्रविष्ट हो जाते हैं। क्षयरोग के चिकित्सकों को भी भय हो सकता है यदि असावधानी से क्षयरोगी से छुये गये यन्त्र द्वारा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

उन्हें घाव हो जाय। इसलिए विशेषतः चिकित्सक, क्षयरोगी के सेवक, मित्र और कुटुम्बी सावधान रहें।

कदाचित् रोगी यदि अपने परिवार के बच्चों आदि के क्षत में अपना थूक पोत दे अथवा किसी बच्चे की क्षतयुक्त अँगुली अपने मुँह में डाल ले तो उसके द्वारा रक्त में कीटाणु प्रविष्ट हो जाते हैं।

रोगिणैतद् ज्ञातव्यं यत्कस्यचिदपि शिश्वादेरेवं स्पर्शं न कुर्यात्। इदमपि सदा ज्ञेयं यत्क्षयिणां भोजनपानाद्ययोरुपयुज्यमानं पात्रमन्येषामुपयोगे नाऽऽयात्, यावदुष्णोदकेन सम्यक्छुद्धीकृतं न स्यात्। एवं वस्त्रादिविषयेऽपि ज्ञेयं सर्वैः।

रोगी को यह जानना चाहिए कि वह किसी भी बच्चे आदि का स्पर्श न करे। यह भी सर्वदा जानना चाहिए कि क्षयरोगी के खान-पान आदि में उपयुक्त पात्र दूसरों के उपयोग में न आये, जबतक कि वह गरम जल से अच्छी तरह शुद्ध न कर लिया जाय। इसी प्रकार सबको वस्त्र आदि के विषय में भी जानना चाहिए।

अन्ये क्षयरोगप्रचारहेतवः

[१] मातापितृभ्यामपि स्वसन्ततौ क्षयरोगः सङ्क्रामति। अर्थात् सहजोपि भवति क्षयरोगः। किन्तु सोऽसाध्य एव न ज्ञातव्यः प्रत्युत नव्यक्षयवत् साध्य एव ज्ञेयः। प्रायः एतत्यल्पं भवति। तद्वक्षः संकुचितं भवति, अंसौ चावनतौ भवतः। यदाकदा शनैः शनैः दौर्बल्यं वर्धमानं दृश्यत इति। यदा हि शिशूनां क्षयो जायतेकदाचित्तदाप्रायः सर्वदैतानि निम्नांङ्कितानि कारणान्युपलभ्यन्ते।

१—बालकःक्षयार्त्तमातुरन्यस्य कस्यचिद्यद्दिमणो वा सकाशे सुप्त आसीत्।

२—अथवा चिरकालं तत्सन्निकटे स्थित आसीत्

३—अथवा बालकस्य मुखं चुम्बितमासीद्रोगिणा

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

४–अथवा स दूषितकीटाणुयुक्तेमलिने विष्टरे स्थले वाऽक्रीडत्।

इत्यादिहेतुभिरवगम्यते यत् बाल्यावस्थात एव स्वच्छतायाः स्वास्थ्यरक्षणनियमपालनस्य च परमावश्यकता।

या माता स्वकीयायांभाविन्यां सन्ततौ यक्ष्मण आशङ्कां कुर्यात् तया स्वसुस्वास्थ्यसम्पादनार्थं सदा प्रयतनं कार्यम्। यथा सततं शुद्धवाते निवसेत्, नित्यं पुष्टिकरं भोजनं कुर्वीत। सा कदाचिदप्येवं वस्त्रं न दधीत येन तद्वक्षः सङ्कुचितं स्याच्छ्वासेऽपिबाधाऽऽसगच्छेत्। पाश्चात्यदेशीयानामिव प्रत्यङ्गनिबद्धं वस्त्रं न दधीतेति तात्पर्यम्। ईषच्छिथिलमेव धारयेद्येन प्राकृतकार्येऽपि क्षतिर्न स्याच्छ्वासादिबाधापि न भवेत्।

अत्र विचार्यं यस्सततं स्वास्थ्यरक्षाकरमतिप्राचीनं कीदृशं महर्षिप्रचारितं भारतीयं वस्त्रधारणविधानम्?

१—माता और पिता से अपनी सन्तान क्षयरोग संक्रामित होती है। अर्थात् क्षयरोग सहज (जन्म से ही उत्पन्न होने वाला) भी होता है। किन्तु उसे असाध्य नहीं जानना चाहिये। बल्कि नए क्षय के समान साध्य ही जानना चाहिए। प्रायः यह बहुत कम होता है। इसमें रोगी की छाती संकुचित होती है, कन्धे नीचे होते हैं। कभी-कभी धीरे-धीरे दुर्बलता बढ़ती हुई दिखायी देती है। जब भी कभी बच्चों में क्षय उत्पन्न होता है तभी प्रायः सर्वदा ये निम्नांकित कारण प्राप्त होते हैं।

१—बालक क्षयपीड़ित माता अथवा किसी दूसरे यक्ष्मा के रोगी के पास सोया था।

२—अथवा बहुत समय तक उसके निकट रहा था।

३—अथवा रोगी ने बालक का मुख चूमा था।

४—अथवा वह बालक दूषित कीटाणुयुक्त मैले बिछौने या स्थान में खेलता रहा।

CC-0. JangamWadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

इत्यादि कारणों से यह ज्ञात होता है कि बाल्यावस्था से ही स्वच्छता और स्वास्थ्यरक्षण के नियम पालन की परम आवश्यकता है। जो माता अपनी भावी सन्तान में यक्ष्मा की आशंका करती है, उसे अपने अच्छे स्वास्थ को प्राप्त करने के लिए सर्वदा प्रयत्न करना चाहिये। जैसे--सर्वदा शुद्ध वायु में निवास करे, नित्य पुष्टिकारक भोजन करे, वह कभी भी ऐसा वस्त्र न धारण करे जिससे उसकी छाती संकुचित हो और श्वास लेने में भी बाधा आये, तात्पर्य यह है कि पाश्चात्य देशवालों की भाँति प्रत्यङ्ग को कसने वाला वस्त्र न धारण करे, कुछ शिथिल ही धारण करे जिससे प्राकृतिक कार्य में भी हानि न हो और श्वास आदि में भी बाधा न हो।

यहाँ पर यह विचारणीय है कि सर्वदा स्वास्थ्य की रक्षा करने वाला अत्यन्त प्राचीन काल से महर्षियों द्वारा प्रचरित वस्त्रधारण का विधान कैसा उत्तम है ?

[२] मादकवस्तूनामत्यधिकसेवनम्।

[३] मैथुनाधिक्यम्, बाल्यावस्थायामेव विवाहःतथा सर्वस्मिन् कर्मणि स्वसामर्थ्यातिरिक्तपरिश्रमकरणम्।

[४] कतिपयरोगाः सन्ति यद्धेतोः शरीरं दुर्बलम्भवति यथा श्वसनकान्त्रिकज्वरविस्फोटकोपदंशप्रतिश्यायातिसारादयः।

[५] कतिपयव्यापारद्वाराण्येवम्भूतानि सन्ति यत्र विविध प्रकारेण रजांसि कार्यकर्तृणां देहे श्वासेन सह गच्छन्ति यथा पेषणकार्यालयः, पाककार्यालयः, धूमवर्तिकार्यालयः, काष्ठलौहादिधातुकार्यालयः तथा मुद्रणसीवनादिकार्यालयश्चेत्यादि।

[६] दारिद्र्यम्, अपूर्णभोजनोपलब्धिः अतो बाल्यावस्थात एव श्रमजीविता।

[७] स्वास्थ्यनाशकगृहाणि, यत्र तमसो बाहुल्येनाधिकारः, सूर्यप्रकाशो न गच्छति वायुर्न च सम्यगायाति। येषां

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

परिमार्जनं न क्रियते। यत्र च बहूनि जीर्णशीर्णवस्तूनि कुप्रबन्धेन रक्षितानि सन्ति।

[८] सार्वजनिकभोजनालयः—अत्र बहवो जना द्रव्यं दत्वा भुञ्जते। कदाचित्संक्रामकरोगिणोऽप्यागत्य भोजनं कुर्वन्ति। अत्र स्वास्थ्यरक्षायाः तादृशं प्रयोजनं न भवति यादृशं द्रव्यस्य। कदाचित्पाचकाःपरिवेषका अपि रोगिणो भवन्ति। प्रायस्तत्रैव ष्ठीवनादिकमपि प्रक्षिपन्ति धूममपि पिबन्ति जनाः। अतो यक्ष्मसंक्रमणं भवति। अतएव प्राचीनैर्निर्दोषा 'स्वयम्पाकिता' अथवा स्वजातिबन्धुसुहृन्निर्मितभोजनकर्तृता प्रचारिता।

(२) नशाली वस्तुओं का अत्यधिक सेवन।

(३) मैथुन की अधिकता। बाल्यावस्था में विवाह तथा सभी कामों में अपनी शक्ति से अधिक काम करना।

(४) कई रोग ऐसे होते हैं जिनके कारण शरीर दुर्बल होता है। जैसे—श्वसनक (न्यूमोनिया), आन्त्रिक ज्वर (टाइफाइड), विस्फोटक (शीतला), उपदंश, प्रतिश्याय (जुकाम) और अतिसार आदि।

(५) कई व्यापार के द्वार ऐसे हैं जहाँ अनेक प्रकार से धूलि कार्यकर्ताओं की देह में श्वास के साथ चली जाती है। जैसे पेषण (आटा सुर्ती आदि पीसने) का कार्यालय, पाक कार्यालय, (होटल, बैकरी आदि), सिगरेट बीड़ी का कारखाना, काष्ठ और लोह आदि धातु का कार्यालय, मुद्रण (छापाखाना) और सीने के (चमड़ा, कपड़ा आदि सीने) के कारखाने आदि।

(६) दरिद्रता—अपूर्ण भोजन की प्राप्ति। इससे बाल्यावस्था से ही श्रमजीवी हो जाना।

(७) स्वास्थ्यनाशक गृह, जहाँ पर बहुत अधिक अन्धकार का अधिकार है। सूर्य का प्रकाश नहीं जाता और वायु भी अच्छी तरह नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आता, जिनकी सफाई नहीं की जाती, जहाँ पर बहुत सी वस्तुएँ कुप्रबन्ध से रक्खी रहती हैं।

(८) सार्वजनिक भोजनालय--यहाँ पर बहुत से मनुष्य रुपया देकर भोजन करते हैं। कभी संक्रामक रोगी भी आकर भोजन करते हैं। यहाँ पर स्वास्थ्य रक्षा का वैसा प्रयोजन नहीं जैसा द्रव्य का! कभी पाचक और परिवेषक (परसने वाले) भी रोगी होते हैं। प्रायः लोग वहीं थूक आदि भी फेंकते हैं। धूम भी पीते हैं। इसी से यक्ष्मा का संक्रमण होता है। इसलिये प्राचीनों ने दोष रहित स्वयम्पाकिता (अपने पकाकर खाना) अथवा अपने सजातीय, रिश्तेदार और मित्र का बनाया ही भोजन करने का प्रचार किया जो कि जाना बूझा रहता है।

एतैः (पूर्वोक्तैः) कारणैः यक्ष्मसमावेशो भवति हतभाग्यानां मनुजानां देहे। अतो ह्येतत्परित्यागे प्रयतितव्यं सर्वैः सर्वदा। चतुर्दशवर्षवयस्तो न्यूनावस्थायां बालकैर्न किमपि कार्यं श्रमशीलं द्रव्योपार्जनार्थं करणीयम्। नानारजोमयकार्यालये कार्यकर्तृणामिदं कर्तव्यं यत्सर्वदा धूलितो रक्षार्थमुपायान् कुर्युर्यथा श्वासग्रहणार्थं मुखनासिकयोरुपरिवस्त्राच्छादनकं धारयेयुस्तथा नासिकामुखाभ्यां रजो निष्कासयेयुः दन्ताभ्यन्तरतः पिष्टरजांसि विघृष्य पृथक् कुर्युः एवंकृते लालासंयोगेनोत्पद्यमानो माधुर्य्यविशेषो (Glucose) न सम्भवति, योह्युपद्रविकीटाणुप्रसारणार्थमेक आवश्यकः पदार्थः। तथा अवकाशावसरे शुद्धवातादिसेवनस्य सम्यक् प्रबन्धं कुर्युः। मादकवस्तूनि परित्यजेयुः। स्वास्थ्य-नियमानुकूलं सदाऽऽचरेयुः।

इन उपरोक्त कारणों से अभागे मनुष्यों की देह में यक्ष्मा का समावेश होता है। इसलिए सभी को सर्वदा इन्हें त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए। १४ वर्ष तक की आयु से कम अवस्था में बालकों द्वारा धन आदि उपार्जन कराने के लिए कोई परिश्रम पूर्ण कार्य नहीं कराना चाहिए। अनेक प्रकार के धूल वाले कारखानों में कार्यकर्ताओं का यह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कर्तव्य है कि सर्वदा धूल से रक्षा के उपाय करें। जैसे श्वास ग्रहण करने के लिए मुँह और नाक के ऊपर कपड़े का ढक्कन धारण करें तथा नाक एवं मुँह से धूल निकालें। दाँत के भीतर से मिट्टी और धूल को घिसकर अलग करें। ऐसा करने से लार के संयोग से उत्पन्न माधुर्य्य विशेष (ग्लूकोज) नहीं उत्पन्न होता, जो उपद्रव करने वाले कीटाणुओं के प्रसार के लिये एक आवश्यक पदार्थ है। छुट्टी के अवसर पर शुद्ध वायु आदि के सेवन का प्रबन्ध करना चाहिये। मादक वस्तु त्याग दें। सर्वदा स्वास्थ्य के नियमानुकूल आचरण करें।

हितोपदेशाः

वेगरोधधातुक्षयसाहसविषमाशनपरित्यागविषये सदा ध्यानं देयं सुप्रकाशवातागमनशीले स्थले निवासः कार्यः।

पवित्रभोजनकरणे धर्मपरतायां च सदा प्रयतनीयम्।

वेगों को रोकना, धातुक्षय, दुस्साहस और विषम भोजन को त्यागने के विषय में सदा ध्यान रखना चाहिए। अच्छी तरह प्रकाश और वायु के आगमन वाले स्थान में निवास करना चाहिये। पवित्र भोजन और धर्मपरायणता में सर्वदा प्रयत्न करना चाहिये।

तथाहि—

ब्रह्मचर्येण दानेन तपसा देवतार्चनैः।
सत्येनाचारयोगेन रविमण्डलसेवया॥*
वैद्यविप्रार्चनाच्चैव रोगराजो निवर्तते। (यो० र०)

ब्रह्मचर्य, दान, तप, देवपूजन, सत्य, सदाचार, सूर्य की किरणों के सेवन से और वैद्य तथा ब्राह्मण की पूजा सत्कार से रोगराज (यक्ष्मा) नष्ट होता है।

---

* मङ्गलै रविहिंसया इति पाठान्तरम् (च० अ० ८)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

विसूचिका (Cholera)

अस्य रोगस्योत्पादका जीवाणुविशेषाः सन्ति। ये शरीरं प्रविश्य विसूचिकामुत्पादयन्ति। रोगोऽयं विशेषतः जलद्वारा प्रसरति। नदीकूपादीनां जलं विसूचिकारोगातुराणां मलेन दूषितं भवति। एवम्भूतेन जलेन शाकादिकं यद्यपक्वं भुज्यते तर्ह्ययं रोगः संजायते। मक्षिकाद्वाराप्ययं प्रसरति। इमा विसूचिकातुराणां मलमूत्रोपर्युपविश्य स्वमुखपादद्वारा जीवाणून् समावृत्य क्षीरजलभोजनादौ प्रक्षिपन्ति। ये जनाःतत्पदार्थं सेवन्ते ते विसूचिकाक्रान्ता भवन्ति। कदाचिदेतद्रोगजीवाणुवाहकमनुष्यद्वाराऽप्ययं संक्रामति।

इस रोग को उत्पन्न करने वाले विशिष्ट जीवाणु होते हैं। जो शरीर में प्रविष्ट होकर विसूचिका उत्पन्न करते हैं। यह रोग विशेषतः जल द्वारा फैलता है। नदी और कुएँ आदि का जल विसूचिका रोग से पीड़ित लोगों के मल से दूषित होता है। यदि इस प्रकार के जल से धोया हुआ कच्चा शाक आदि खाया जाये तो यह रोग उत्पन्न होता है। मक्खियों द्वारा भी यह रोग फैलता है। ये विसूचिका के रोगियों के मल मूत्र पर बैठकर अपने मुँह और पैरों द्वारा जीवाणुओं को लाकर दूध जल एवं भोजन आदि में डाल देती हैं। जो मनुष्य उस पदार्थ का सेवन करते हैं वे विसूचिका से पीड़ित हो जाते हैं। कभी-कभी इस रोग के जीवाणुओं के वाहक मनुष्यों द्वारा भी यह संक्रमित होता है।

विसूचिकातुराः सद्यो विशिष्टचिकित्सालये प्रेषणीयाः।

रोगिमलं सम्यग् जन्तुघ्नद्रव्यद्वारा निर्जन्तुकीकृत्य पृथिव्यां पाटनीयं, प्रज्वालनं तु ततोऽपि श्रेष्ठतरम्। यो जनपदः विसूचिकाक्रान्तः, तस्य जलप्रबन्धं प्रति विशेषध्यानं देयम्।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

कूपे जन्तुघ्नपदार्थाः (चूर्णपोटाशियमपरमेगनेटप्रभृतयः) प्रक्षेप्याः ।

जलं संक्वाथ्य वस्त्रपूतं च कृत्वा सर्वदा पेयम् ।

सर्वप्रकारकं भोजनं परिपाच्य कोष्णमेवाहरणीयम् ।

पर्युषितभोजनं न कदापि कार्यम् ।

वैपणिकं मिष्टान्नादिकं न कदापि भोज्यम् । यतोऽनावृतपात्रेषु संरक्षणान्मक्षिकाद्वारा तद् दूषितं भवति ।

सर्वे खाद्यपदार्था आच्छाद्य रक्षणीयाः ।

क्षीरमपि संक्वाथ्य पेयम् ।

भोजनपात्राणि उष्णजलेन मार्जनीयानि ।

नियतसमये हितमितभोजनं कार्यम् ।

वमनविरेचनकारकद्रव्याणां सेवनं न कार्यम् ।

उपार्जितक्षमता (टीका) प्राप्तव्या ।

अरुणमरिचेक्षुरससीधुपलाण्डूनां सेवनं, कर्पूराद्याणं विशेषलाभप्रदं भवति ।

विसूचिकारोगप्रसरणसमये निम्बपत्रशुद्धहिंगकर्पूराणां गुटिकां कृत्वा प्रातर्नित्यसेवनाद्विसूचिकाबाधा न भवति ।

विसूचिकारोगेण मृता वसतितो दूरे जलाशयसमीपे तीव्राग्नौ दहनीयाः । तदशक्तौ तु भूमौ चतुर्हस्तगभीरे गर्ते पाटनीयाः ।

विसूचिका के रोगियों को तुरन्त इसके लिये बने हुए विशिष्ट चिकित्सालय में भेजना चाहिये ।

रोगी के मल को अच्छी तरह क्रिमिनाशक द्रव द्वारा क्रिमिरहित कर पृथ्वी में गाड़ देना चाहिये । जला देना उससे भी श्रेष्ठ है । जो देश विसूचिका से पीड़ित हो उसके जलप्रबन्ध पर विशेष ध्यान देना चाहिये ।

कुएँ में क्रिमिनाशक पदार्थ (चूना, पोटाशियम परमैगनेट आदि) छोड़ना चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

जल को सर्वदा खौलाकर और कपड़े से छान कर पीना चाहिये। सभी प्रकार के भोजन को अच्छी तरह पकाकर गरम ही खाना चाहिये। बासी भोजन कभी न खाना चाहिये।

बाजार की मिठाई आदि कभी नहीं खाना चाहिये। क्योंकि बिना ढके हुए पात्रों में रखने के कारण वह मक्खियों द्वारा दूषित होता है।

सभी खाद्य पदार्थ ढँककर रखना चाहिये। दूध भी खौला कर पीना चाहिये।

भोजन के बर्तनों को गरम पानी से धोना चाहिये। वमन-विरेचन-कारक द्रव्यों का सेवन नहीं करना चाहिये। उपार्जित क्षमता (टीका) प्राप्त करनी चाहिये।

लाल मिरचा, ईख के रस का सिरका और प्याज का सेवन करना चाहिये। कपूर सूँघना विशेष लाभदायक होता है। विसूचिका के प्रसार के समय निम्ब पत्र २ भाग, शुद्ध हींग १ भाग और कपूर को आधा भाग लेकर पानी से घोटकर १ माशा की गोली बनाकर प्रतिदिन प्रातः काल सेवन करने से विसूचिका नहीं होती।

विसूचिका से मरने वालों को आबादी से दूर जलाशय के पास तेज आग पर जलाना चाहिये। असमर्थता में पृथ्वी के ४ हाथ गहरे गड्ढे में पाट देना चाहिए।

मसूरिका (शीतला) Small Pox

अस्य रोगस्याक्रमणविधिः पूर्णतयाऽद्यावधि नाऽऽवगतो विद्वद्भिः। किन्तु रोगोऽयंवायुवाह्य इति सर्वेषां विश्वासः। स च श्वासनिःश्वासद्वारा शरीरं प्रविशति। अस्य जीवाणवो नाधिगताः कैश्चित्। अस्य विषं त्वक्पिटिकासु, मुखस्रावेषु च प्राप्यते। तच्च वायुद्वारा सुदूरं परिसर्पति।

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

यदा त्वक्पिटिकाः शुष्यन्ति तदा तासां त्वग्भागा इतस्ततो वायुद्वारोत्पतन्तः संक्रामन्ति ।

रोगिविष्टराद्यन्यपदार्थद्वाराऽप्ययं संक्रामति ।

अस्य संक्रमणावरोधार्थं रोगिणः पृथगेकान्ते रक्षणीयाः ।

रोगिसम्बन्धीनि सर्वाणि वस्तूनि सम्यक् निर्जन्तुकीकार्याणि ।

एकादशनिम्बपत्राणि त्रिमरिचैः सहैकप्रसृतजले संपेष्य नित्यं प्रातःपानं अथवा तोलकद्वयमितस्य गर्दभीक्षीरस्य नित्यं प्रातःपानं मसूरिकाप्रतिषेधकम् ।

उपार्जितक्षमता (टीका) प्राप्तव्या ।

इस रोग के आक्रमण की विधि आज तक विद्वान् लोग पूर्णतः नहीं जान सके हैं । किन्तु यह रोग वायु द्वारा वाहित होने वाला है, यह सभी का विश्वास है । वह श्वास और निश्वास द्वारा शरीर में प्रविष्ट होता है । इसके जीवाणुओं को कोई नहीं जान सका है । इसका विष त्वचा पर होने वाली पिड़काओं एवं मुँह की लार में मिलता है और वह वायु द्वारा दूर तक फैल जाता है ।

जब त्वचा की पिटिकायें सूखती हैं तो उनका त्वचा वाला हिस्सा वायु द्वारा इधर-उधर संक्रमण करता है । रोगी की शय्या आदि पदार्थों से भी यह संक्रमित होता है । इसके संक्रमण को रोकने के लिये रोगी को अलग एकान्त में रखना चाहिये ।

रोग सम्बन्धी सभी वस्तुओं को अच्छी तरह क्रिमिरहित करना चाहिये ।

प्रतिदिन प्रातःकाल ११ निम्बपत्र तीन मरिच के साथ एक पसर (८ तो०) जल में पीस कर पीना, या २ तोला गर्दभी का दूध नित्य प्रातः पीना मसूरिका को रोकनेवाला है । उपार्जित क्षमता (टीका) प्राप्त करनी चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जनपदोद्ध्वंसने कारणानि

अथातो जनपदोद्ध्वंसनीयं विमानं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

इ ति ह स्माह भगवनात्रेयः ॥ २ ॥

जनपदमंडले पञ्चालक्षेत्रे द्विजातिवराध्युषितायां काम्पिल्य-राजधान्यां भगवान्पुनर्वसुरात्रेयोऽन्तेवासिगणपरिवृतः पञ्चिमे धर्ममासे गंगातीरे वनविचारमनुविचरन्शिष्यमग्निवेशम-ब्रवीत् ॥ ३ ॥

अब जनपदोध्वंसनीय विमान की व्याख्या करेंगे। ऐसा भगवान् आत्रेय ने कहा।

पञ्चाल क्षेत्र के जनपद मण्डल में श्रेष्ठ द्विजातियों (ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य) के निवासवाली काम्पिल्य राजधानी (जि० फर्रुखाबाद के कपिला गाँव) में शिष्यों से घिरे हुए भगवान् पुनर्वसु आत्रेय ने गर्मी के महीने के अन्तिम भाग में गंगा के किनारे वनविचरण करते हुए शिष्य अग्निवेश से कहा।

दृश्यन्ते हि खलु सौम्य! नक्षत्रग्रहचन्द्रसूर्यानिलानलानां दिशां च प्रकृतिभूतानामृतुवैकारिका भावाः, अचिरादितो भूरपि च न यथावद्रसवीर्यविपाकप्रभावमोषधीनां प्रतिबिधास्यति, तद्वियोगाच्चातङ्कप्रायता नियता, तस्मात्प्रागुद्ध्वंसात्प्राक्च भूमे-विरसीभावादुद्धरध्वं सौम्य! भैषज्यानि यावन्नोपहतरसवीर्य-विपाकप्रभावाणि भवन्ति, वयं चैषां रसवीर्यविपाकप्रभावानुप-योक्ष्यामहे ये चास्माननुकाङ्क्षन्ति, यांश्चवयमनुकाङ्क्षामः, नहि सम्यगुद्धृतेषु भैषज्येषु सम्यग्विहितेषु, सम्यग्विचारचारितेषु जनपदोद्ध्वंसकराणां विकाराणां किंचित्प्रतीकारगौरवं भवति ॥४॥

हे सौम्य! प्रकृति भूत नक्षत्र ग्रह चन्द्र सूर्य वायु अग्नि एवं दिशाओं के ऋतु विकार करने वाले भाव निश्चय रूप से देखे जा रहे हैं अतः पृथ्वी भी इस समय शीघ्र ही औषधियों के यथोचित रस वीर्य विपाक और प्रभाव को उत्पन्न न करेगी। रसादिकों के अभाव से रोगों का

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

बाहुल्य निश्चित है। इसलिए हे सौम्य ! जनोपदोध्वंस एवं पृथ्वी के नीरस होने के पहले ही जब तक औषधियों का रस, वीर्य, विपाक और प्रभाव उपहत नहीं होता तभी तक उन्हें उखाड़ लो, जो हमें चाहती हैं और जिन्हें हम चाहते हैं। हम इनके रस, वीर्य, विपाक एवं प्रभाव का उपयोग करेंगे। औषधियों को भली भाँति ग्रहण करके, भली भाँति उनकी कल्पना करके सोच समझकर भली भाँति उनका उपयोग व प्रचार करने से जनपदमारक रोगों के प्रतिकार में कोई कठिनाई नहीं होती है।

एवंवादिनं भगवन्तमात्रेयमग्निवेश उवाच—उद्धृतानि खलु भगवन्! भैषज्यानि विहितानि च सम्यक् सम्यग्विचारचारितानि च, अपि तु खलु जनपदोद्ध्वंसनमेकेनैव व्याधिना युगपदसमानप्रकृत्याहारदेहबलसात्म्यसत्त्ववयसां मनुष्याणां कस्माद्भवतीति ॥५॥

इस प्रकार बोलने वाले भगवान आत्रेय से अग्निवेश ने कहा :—

भगवन ! औषधियाँ उखाड़ ली गयी हैं, भली भाँति उनकी कल्पना भी कर ली है और विचारकर अच्छी प्रकार उनका उपयोग भी कर लिया है, फिर भी विभिन्न प्रकृति-आहार, देह बल-सात्म्य, सत्व तथा आयु वाले मनुष्यों के रहने पर भी एक ही व्याधि से एक ही समय जनपदोध्वंस कैसे होता है ?

तमुवाच भगवानात्रेयः—एवमसामान्यानामेभिरप्यग्निवेश ! प्रकृत्यादिभिर्भावैर्मनुष्याणां येऽन्ये भावाः सामान्यास्तद्वैगुण्यात्समानकालाः समानलिङ्गाश्च व्याधयोऽभिनिर्वर्तमाना जनपदमुद्ध्वंसयन्ति, ते तु खल्विमे भावाः सामान्या जनपदेषु भवन्ति तद्यथा वायुरुदकं देशः काल इति ॥ ६ ॥

भगवान् आत्रेय ने कहा—हे अग्निवेश ! मानवों के प्रकृति आदि भावों के असमान रहने पर भी जो अन्यान्य भाव समान होते हैं उनकी विकृति से एक ही समय एक ही लक्षण वाली व्याधियाँ उत्पन्न होकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जनपद को नाश कर डालती हैं। वे समान भाव जनपदों में ये होते हैं :—वायु, जल; देश और काल।

तत्र वातमेवविधमनारोग्यकरं विद्यात् तद्यथा—यथर्तुविपरीतमतिस्तिमितमतिचलमतिपरुषमतिशीतमत्युष्णमतिरुक्षमत्यभिष्यन्दिनमतिभैरवारावमतिप्रतिहतपरस्परगतिमतिकुण्डलिनमसात्म्यगन्धवाष्पसिकतापांशुधूमोपहतमिति ॥ ७ ॥

उनमें इस प्रकार के वायु को रोग कारक जानना चाहिए :—जैसे, ऋतु विपरीत, अत्यन्त मन्द, अत्यन्त तेज (आँधी के समान) अत्यन्त कर्कश, अत्यन्त शीतल, अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त रूक्ष, अत्यन्त अभिष्यन्दी (तर पिच्छिल), अत्यन्त भयंकर शब्द करनेवाला, परस्पर एक-दूसरे की गति में अत्यन्त टकराने वाला, अत्यन्त बवण्डर वाला, असात्म्य (अभ्यास विरुद्ध अहितकर) गन्ध वाला वाष्प, बालू, धूलि और धुएँ से युक्त।

उदकं तु खलु—अत्यर्थविकृतगन्धवर्णरसस्पर्शवत्क्लेदबहुलमपक्रान्तजलचरविहंगमुपक्षीणजलाशयमप्रीतिकरमपगतगुणं विद्यात् ॥ ८ ॥

अत्यन्त विकृत गन्ध, रंग, रस और स्पर्श वाला, अत्यन्त क्लिन्नता (चिपचिपाहट) से युक्त, जलचरों एवं पक्षियों से रहित, हीन जल वाले जलाशयों का अप्रिय तथा गुणरहित जल रोगकारक जाने।

देशं पुनः—विकृतवर्णगन्धरसस्पर्शं क्लेदबहुलमुपसृष्टं सरीसृपव्यालमशकशलभमक्षिकामूषकोलूकशमाशानिकशकुनिजम्बुकादिभिस्तृणोलूपोपवनवन्तं लताप्रतानादिबहुलमपूर्ववदवपतितशुष्कनष्टसस्यं धूम्रपवनं प्रध्मातपतत्रिगणमुत्कुष्टश्वगणमुद्भ्रान्तव्यथितविविधमृगपक्षिसंघमुत्सृष्टनष्टधर्मसत्यलज्जाचारशीलगुणजनपदं शश्वल्लुभितोदीर्णसलिलाशयं प्रततोल्कापातनिर्घातभूमिकम्पमतिभयारावरूपं रूक्षताम्रारुणसिताभ्रजालसंवृतार्कचन्द्रतारकमभीक्ष्णं ससंभ्रमोद्वेगमिव सत्रासरुदितमिव

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सतमस्कमिव गुह्यकाचरितमिवाक्रन्दितशब्दबहुलं चाहितं विद्यात् ॥ ९ ॥

विकृत वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श वाला, वलेद सड़न के आधिक्य वाला, छिपकली गिरगिट आदि साँप, मच्छर, टिड्डी, मक्खी, चूहा, उल्लू, गृद्ध, चील आदि पक्षी एवं स्यार लोमड़ी आदि जन्तुओं से युक्त, तृण और गुल्म युक्त झाड़ियों वाले उपवन से युक्त, लता-प्रतान (लतर झार-झंखार) की बहुलतामय अपूर्ववत् गिरे नष्ट और सूखे धान्यों से युक्त, धुएँ के समान वायुवाला, पेट फूले पक्षियों वाला, रोते भूँकते हुए कुत्तों से युक्त, विभिन्न प्रकार के व्याकुल और दुखी पशु-पक्षियों वाला, जिनके धर्म, सत्य, लज्जा, आचरण शील आदि गुण परित्याग एवं नष्ट हो गये हैं ऐसे मनुष्यों से युक्त जनपद (आबादी) वाला, लगातार क्षुभित और उदीर्ण जलाशय वाला, लगातार उल्कापात वज्रपात और भूकम्प से युक्त, अत्यन्त भयंकर शब्द और रूप से युक्त, रूखे, ताम्र के समान, लाल-सफेद रंग वाले बादलों के समूह से ढके हुए सूर्य, चन्द्र, तारों वाला, बार-बार भ्रान्ति और घबराहट से युक्त के समान, डर से रोते हुए के समान, अन्धकार युक्त, गुह्यकों (पिशाच प्रभृति) द्वारा आक्रांत होने के समान जान पड़ने वाला, विलाप युक्त शब्दों के आधिक्य वाला देश अहितकर जानना चाहिये।

कालं तु खलु--यथर्तुलिङ्गाद्विपरीतलिंगं हीनलिगं चाहितं व्यवस्येत् ॥१०॥

जैसा चाहिये वैसा न होकर ऋतु के विपरीत अथवा न्यून लक्षणों वाला काल अहितकर जाने।

इमानेवंदोषयुक्तांश्चतुरो भावान् जनपदोद्धवंसकरान् वदन्ति कुशलाः, अतोऽन्यथाभूतांस्तु हितानाचक्षते ॥११॥

इस प्रकार के दोषों से युक्त इन चार भावों (वायु, जल, देश व काल) को कुशल वैद्य जनपद-नाशक कहते हैं और इन दोषों के विपरीत भावों को हितकर कहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विगुणेष्वपि तु खल्वेतेषु जनपदोद्धवंसनकरेषु भावेषु भेषजे नोपपाद्यमानानामभयं भवति रोगेभ्य इति ॥ १२ ॥

जनपद का नाश करने वाले इन भावों के विकृत होने पर भी औषधियों द्वारा प्रतिकार करनेवालों को रोगों से निर्भयता होती है।

भवन्तिचात्र

वैगुण्यमुपपन्नानां देशकालानिलाम्भसाम् ।
गरीयस्त्वं विशेषेण हेतुमत्संप्रवक्ष्यते ॥ १३ ॥

विकृति प्राप्त देश काल वायु और जल में से जिसकी विशेष प्रधानता है वह कारण सहित कहा जायगा।

वाताज्जलं, जलाद्देशं, देशात्कालं स्वभावतः ।
विद्याद् दुष्परिहार्यत्वाद् गरीयस्तरमर्थवित् ॥ १४ ॥

विशेषज्ञ वैद्य वायु की अपेक्षा जल, जल से देश और देश से काल को स्वभावतः दुष्परिहार्य (कठिनाई से ठीक किये जाने योग्य) होने के कारण मुख्यतर जाने।

वाय्यादिषु यथोक्तानां दोषाणां तु विशेषवित् ।
प्रतीकारस्य सौकर्यं विद्याल्लाघवलक्षणम् ॥ १५ ॥

विशेषज्ञ वैद्य वायु आदि के यथोक्त दोषों के प्रतिकार की सरलता के लिये उनकी लघुता का लक्षण जाने। अर्थात् वही आसानी से ठीक किया जा सकता है जिसके यथोक्त लक्षण कम पाये जाते हों।

चतुर्ष्वपि तु दुष्टेषु कालान्तेषु यदा नराः ।
भेषजेनोपपाद्यन्ते न भवन्त्यातुरास्तदा ॥ १६ ॥

काल तक चारों (वायु जल देश काल) के दूषित होने पर भी जब औषधियों द्वारा मनुष्यों का उपचार किया जाता है तब वे रोगी नहीं होते।

येषां न मृत्युसामान्यं सामान्यं न च कर्मणाम् ।
कर्म पञ्चविधं तेषां भेषजं परमुच्यते ॥ १७ ॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

जिनके मृत्यु का समय नहीं आ गया है और जिनके कर्म मृत्यु-कारक नहीं हैं उनके लिए पंचकर्म (वमन विरेचन नस्य हिरूहण अनुवासन) श्रेष्ठ औषधि कही गयी है ।

रसायनानां विधिवच्चोपयोगः प्रशस्यते ।
शस्यते देववृत्तिश्च भेषजैः पूर्वमुद्धृतैः ॥ १८ ॥

उनके लिये रसायनों का विधिवत् उपयोग श्रेष्ठ है । जनपदोध्वंस से पूर्व संगृहीत औषधियों का सेवन कर शरीर में उसका संस्कार पहिले ही से करना अच्छा है ।

सत्यं भूते दया दानं बलयो देवतार्चनम् ।
सद्वृत्तस्यानुवृत्तिश्च प्रशमो गुप्तिरात्मनः ॥ १९ ॥
हितं जनपदानां च शिवानामुपसेवनम् ।
सेवनं ब्रह्मचर्यस्य तथैव ब्रह्मचारिणाम् ॥ २० ॥
संकथा धर्मशास्त्राणां महर्षीणां जितात्मनाम् ।
धार्मिकैः सात्त्विकैर्नित्यं सहास्या वृद्धसंमतैः ॥ २१ ॥
इत्येतद् भेषजं प्रोक्तमायुषः परिपालनम् ।
येषामनियतो मृत्युस्तस्मिन्काले सुदारुणे ॥ २३ ॥

उस अत्यन्त कठिन काल में जिनकी मृत्यु अनिश्चित है उनकी आयुरक्षक ये औषधियाँ हैं—

सत्य व्यवहार, प्राणियों पर दया, दान, बलि-कर्म, देवपूजन, सदाचार का पालन, शमन (शान्ति) और आत्मरक्षा ।

कल्याणकारी जनपदों का सेवन, ब्रह्मचर्य धारण, ब्रह्मचारियों के साथ निवास, धर्मशास्त्रों और जितेन्द्रिय महर्षियों की कथायें एवं वृद्ध पुरुषों द्वारा अनुमोदित धार्मिक तथा सात्विक जनों के साथ नित्य बैठना ।

इति श्रुत्वा जनपदोद्ध्वंसने कारणान्यात्रेयस्य भगवतः पुनरपि भगवन्तमात्रेयमग्निवेश उवाच—अथ खलु भगवन् ! कुतो मूलमेषां वाय्वादीनां वैगुण्यमुत्पद्यते ? येनोपपन्ना जनपदमुद्ध्वंसयन्तीति ॥ २३ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

भगवान आत्रेय से जनपदोंध्वंस के कारणों को सुन कर अग्निवेश ने पुनः भगवान आत्रेय से कहा :--इन वायु आदि की विकृति का मूल कारण क्या है ? जिससे विकृत हुए वे जनपद को उजाड़ देते हैं।

तमुवाच भगवानात्रेयः—सर्वेषामाप्यग्निवेश ! वायवादीनां यद्गुण्यमुत्पद्यते तस्य मूलमधर्मः, तन्मूलं वासत्कर्म पूर्वकृतं, तयोर्योनिः प्रज्ञापराध एव। तद्यथा—यदा देशनगरनिगमजनपदप्रधाना धर्ममुत्क्रम्याधर्मेण प्रजां वर्तयन्ति, तदाश्रितोपाश्रिताः पौरजनपदा व्यवहारोपजीविनश्च तमधर्ममभिवर्धयन्ति, ततः सोऽधर्मः प्रसभं धर्ममन्तर्धत्ते, ततस्तेऽन्तर्हितधर्माणो देवताभिरपि त्यज्यन्ते, तेषां तथाऽन्तर्हितधर्माणामधर्मप्रधानानामपक्रान्तदेवतानामृतवो व्यापद्यन्ते, तेन नापो यथाकालं देवो वर्षति न वा वर्षति विकृता वा वर्षति, वाता न सम्यगभिवान्ति, क्षितिर्व्यापद्यते, सलिलान्युपशुष्यन्ति, औषधयः स्वभावं परिहायापद्यन्ते विकृतिं, तत उद्ध्वंसन्ते जनपदाः स्पृश्याभ्यवहार्यदोषात्॥ २४॥

भगवान आत्रेय ने अग्निवेश से कहा :-हे अग्निवेश ! वायु आदि सभी की विकृति का मूल कारण अधर्म है। अथवा उस अधर्म का मूल कारण पूर्व कृत पाप कर्म है। अधर्म एवं पूर्व पाप कर्म दोनों की उत्पत्ति प्रज्ञापराध से होती है। जैसे--शहर, कस्बा और प्रान्त के प्रधान लोग धर्म त्याग कर प्रजा में अधर्म व्यवहार करते हैं, तो उनके आश्रित-उपाश्रित नगर प्रान्त निवासी तथा व्यवसायी उस अधर्म को बढ़ाते हैं। वह अधर्म धर्म को हठात् लुप्त कर देता है। धर्म के लुप्त हो जाने पर देवता भी उन अधर्मियों का त्याग कर देते हैं। उन लुप्तधर्म अथ च अधर्मप्रधान एवं देवताओं द्वारा परित्यक्त जनपदों में ऋतुएँ विकृत हो जाती हैं। जिससे इन्द्र यथासमय जल नहीं बरसाते अथवा बिल्कुल नहीं बरसाते अथवा विकृत वर्षा होती है। वायु ठीक प्रकार नहीं बहते।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

पृथ्वी विकृत हो जाती है। जल सूख जाते हैं। औषधियाँ स्वभाव का परित्याग कर विकृत को प्राप्त हो जाती हैं। तब उनके संसर्ग और आहार दोष से जनपद नष्ट हो जाते हैं।

तथा शस्त्रप्रभवस्यापि जनपदोद्ध्वंसस्याधर्म एव हेतुर्भवति। येऽतिप्रवृद्धलाभरोषमोहमानास्ते दुर्बलानवमत्यात्मस्वजनपरोपघाताय शस्त्रेण परस्परमभिक्रामन्ति, परान्वाऽभिक्रामन्ति परैर्वाऽभिक्राम्यन्ते ॥ २५ ॥

और शस्त्र से उत्पन्न जनपदोध्वंस का भी कारण अधर्म ही होता है। जिनका लोभ, क्रोध, मोह और अहंकार अधिक बढ़ गया है वे दुर्बलों की उपेक्षा कर अपने स्वजनों अथवा दूसरों का नाश करने के लिए शस्त्र द्वारा परस्पर आक्रमण करते हैं या दूसरों पर आक्रमण करते हैं या उन पर दूसरे आक्रमण करते हैं।

रक्षोगणादिभिर्वा विविधैर्भूतसंघैस्तमधर्ममन्यद्वाऽप्यपचारान्तरमुपलभ्याभिहन्यन्ते ॥ २६ ॥

उसी पूर्वोक्त अधर्म अथवा अन्य अपचार को प्राप्त कर मनुष्य रक्षोगण (भूतप्रेतादि) अनेक प्रकार के हिंसक प्राणियों अथवा रोगोत्पादक क्रिमियों द्वारा मारे जाते हैं।

तथाऽभिशापप्रभवस्याप्यधर्म एव हेतुर्भवति, ये लुप्तधर्माणो धर्मादपेतास्ते गुरुवृद्धसिद्धर्षिपूज्यानवमत्याहितान्याचरन्ति ततस्ताः प्रजा गुर्वादिभिरभिशप्ता भस्मतामुपयान्ति प्रागेवानेकपुरुषकुलविनाशाय, नियतप्रत्ययोपलम्भान्नियताः, अनियतप्रत्ययोपलम्भादनियताश्चापरे ॥ २७ ॥

अभिशाप जन्य जनपदोवंस का भी कारण अधर्म ही है। जिनका धर्म लुप्त हो गया है और जो धर्मच्युत हो गये हैं वे गुरु, वृद्ध, सिद्ध ऋषि और पूज्यों की उपेक्षा कर अहित आचरण करते हैं। तब अनेक पीढ़ियों तक कुल के विनाश के लिए गुरु, वृद्ध आदि द्वारा अभिशप्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वह प्रजा भस्म (नष्ट) हो जाती है। निश्चित कारण की उपलब्धि से निश्चित विनाश के लिए और अनिश्चित कारण की उपलब्धि से नहीं विनाश के लिये वे होते हैं। अर्थात् समूह में जिनके लिए शाप निश्चित लागू होगा वे ही मरेंगे दूसरे नहीं।

प्रागपि चाधर्मादृते नाशुभोत्पत्तिरन्यतोऽभूत्। आदिकाले ह्यदितिसुतसमौजसोऽतिविमलविपुलप्रभावाः प्रत्यक्षदेवादेवर्षि-धर्मयज्ञविधिविधानाः शैलेन्द्रसारसंहतस्थिरशरीराः प्रसन्नवर्णेन्द्रियाः पवनसमबलजवपराक्रमाश्चारुस्निग्धोऽभिरूपप्रमाणाकृति-प्रसादोपचयवन्तः सत्यार्जवानृशंस्यदानदमनियमतपउपवासब्रह्मचर्यव्रतपरा व्यपगतभयरागद्वेषमोहलोभक्रोधशोकमानरोगनिद्रातन्द्राश्रमक्लमालस्यपरिग्रहाश्च पुरुषा बभूवुरमितायुषः, तेषामुदारसत्त्वगुणकर्मणामचिन्त्यरसवीर्यविपाकप्रभावगुणसमुदितानि प्रादुर्बभूवुः सस्यानि सर्वगुणसमुदितत्वात्पृथिव्यादीनां कृतयुगस्यादौ। भ्रश्यति तु कृतयुगे केषांचिदत्यादानात्सांपन्निकानां शरीरगौरवमासीत्, शरीरगौरवात् श्रमः, श्रमादालस्यं, आलस्यात् संचयः, संचयात् परिग्रहः परिग्रहाल्लोभः प्रादुर्भूतः॥ २८॥

पूर्वकाल में भी बिना अधर्म के अन्य किसी कारण से अशुभ की उत्पत्ति नहीं हुई। आदिकाल में देवताओं के समान ओज युक्त अति बलशाली निर्मल विस्तृत प्रभाव वाले, प्रत्यक्ष हैं देव-देवर्षि जिनमें ऐसा धर्मयज्ञ और अनुष्ठान करने वाले, हिमालय के समान पुष्ट, रूपानुसार संगठित स्थिर-शरीर वाले, स्वच्छ वर्ण, इन्द्रियों वाले, वायु के समान बल वेग पराक्रमण वाले, सुन्दर नितम्बों वाले, प्रमाण आकार रसरक्तादि सम्पन्नता तथा पुष्टि वाले, सत्य-सरलता अक्रूरता-दान दम (इन्द्रियदमन) नियम (शौच-सन्तोष-तप-स्वाध्याय-ईश्वर चिन्तन) तप (शरीर शोषण नहीं अपितु पापों से निवृत्ति एवं सद्गुणों से सहयोग), उपवास और

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ब्रह्मचर्य व्रत में सदा लगे हुए भय-राग द्वेष मोह-लोभ क्रोध-शोक अहंकार-रोग-अकाल निद्रा सुस्ती थकावट आलस्य और परिग्रह (आवश्यकता से अधिक संचय की प्रवृत्ति) से रहित, अमित आयु वाले पुरुष होते थे। सत्ययुग के प्रारम्भ में उन उत्तम सत्व गुण कर्म वाले पुरुषों के लिए पृथ्वी आदि पञ्चमहाभूतों के सर्वगुण सम्पन्न होने के कारण अचित्य रस-वीर्य-विपाक, प्रभाव-गुण युक्त धान्य उत्पन्न होते थे। फिर कुछ समय बितने पर अधिक धन आदि एकत्र करने से सम्पन्न कुछ लोगों के अधिक (गुरु सन्तर्पण) भोजन के कारण उनका शरीर भारी हो गया। शरीर भारी होने से थकावट, थकावट से आलस्य, आलस्य से अधिक सञ्चय (जमा करना), सञ्चय से परिग्रह (येन केन प्रकारेण धन ग्रहण करने) और परिग्रह से लोभ उत्पन्न हुआ।

ततस्त्रेतायां, लोभादभिद्रोहः अभिद्रोहादनृतवचनं, अनृतवचनात्कामक्रोधमानद्वेषपारुष्याभिघातभयतापशोकचित्तोद्वेगादयः प्रवृत्ताः, ततस्त्रेतायां धर्मपादोऽन्तर्धानमगमत्, तस्यान्तर्धानात् (युगवर्षप्रमाणस्य पादह्रासः) पृथिव्यादीनां गुणपादप्रणाशोऽभूत्, तत्प्रणाशकृतश्च सस्यानां स्नेहवैमल्यरसवीर्यविपाकप्रभावगुणपादभ्रंशः, ततस्तानि प्रजाशरीराणि हीनगुणपादैश्चाहारविहारैरयथापूर्वमुपष्टभ्यमानान्यग्निमारुतपरीतानि प्राग्व्याधिभिर्ज्वरादिभिराक्रान्तानि अतः प्राणिनो ह्रासमवापुरायुषः क्रमश इति ॥ २९ ॥

उसके बाद त्रेतायुग में—लोभ से परद्रोह, पर द्रोह से असत्य भाषण, असत्य भाषण से काम क्रोध, अभिमान, द्वेष, कठोरता, अभिघात, भय, ताप, शोक एवं चित्त की घबराहट आदि उत्पन्न हुए। अतएव त्रेता में धर्म का एक पाद लुप्त हो गया। उसके लुप्त होने से (युगवर्षप्रमाण का पाद ह्रास, अर्थात् सत्ययुग की आयु ४८०० दिव्य वर्ष है, इसका पाद १२०० दिव्य वर्ष कम आयु त्रेता की हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गयी) पृथ्वी आदि के चतुर्थांश गुण नष्ट हो गए उनके नाश से धान्यों के स्नेह निर्मलता रस वीर्य विपाक प्रभाव और गुण में चतुर्थांश न्यूनता हो गयी। तदनन्तर चतुर्थांश हीन गुण वाले आहार विहारों के कारण प्राणियों के शरीर, पहले (सत्ययुग) के समान पुष्ट न होने तथा अग्नि-वायु से व्याप्त हो जाने के कारण सर्वप्रथम ज्वर आदि रोगों से आक्रान्त हो गए। अतः प्राणी क्रमशः आयु के ह्रास को प्राप्त हुए। अर्थात् सत्ययुग में पुरुष की आयु ४०० वर्ष थी तो त्रेता में चतुर्थांश (१०० वर्ष) कम हो गयी।

भवतश्चात्र

युगे युगे धर्मपादः क्रमेणानेन हीयते।
गुणपादश्च भूतानामेवं लोकः प्रलीयते ॥३०॥

इस क्रम से युग युग में धर्म का एक एक पाद कम होता जाता है। साथ ही महाभूतों के गुण का भी एक एक पाद कम होता जाता है। इस प्रकार अन्ततोगत्वा सारे विश्व का प्रलय हो जाता है।

संवत्सरशते* पूर्णे याति संवत्सरः क्षयम्।
देहिनामायुषः काले यत्र यन्मानमिष्यते ॥३१॥

जिस युग में प्राणियों की आयु का जो प्रमाण होता है उस युग के प्रमाण के सम्वत्सरों के सौवें भाग के पूर्ण हो जाने पर मनुष्य की आयु में एक संवत्सर (वर्ष) की कमी हो जाती है।

उदाहरण--सत्ययुग का काल ४८०० दिव्य वर्ष है। इसके सौवें अंश अर्थात् ४८ दिव्य वर्ष व्यतीत होने पर उस समय उत्पन्न मनुष्य की आयु निश्चित मान से एक वर्ष कम हो जाती है। इस प्रकार सारा

---

* 'संवत्सराणां शते शतकृत्वो विभक्तानामेकैकभागे संपूर्णे जाते तद्युगोत्पन्नानां देहिनां तत्तत्परिमितस्यायुष एकैकः संवत्सरः क्षयं याति' गङ्गाधरः।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सत्ययुग व्यतीत होने अर्थात् त्रेतायुग आजाने पर मनुष्य की आयु १०० वर्ष कम हो जायगी। अर्थात् सत्ययुग में मनुष्य की आयु ४०० वर्ष मानी गयी है जो क्रमशः घटते-घटते त्रेता के प्रारम्भ में ३०० वर्ष हो जायगी।

इति विकाराणां प्रागुत्पत्तिहेतुरुक्तो भवति ॥३२॥

इस प्रकार विकारों के प्रथमतः उत्पन्न होने का कारण कहा गया है।

एवंवादिनं भगवन्तमात्रेयमग्निवेश उवाच—किं नु खलु भगवन्! नियतकालप्रमाणमायुः सर्वं न वेति ॥३३॥

इस प्रकार बोलने वाले भगवान आत्रेय से अग्निवेश ने कहा—हे भगवन्! क्या सब आयु का कालप्रमाण निश्चित है? अथवा नहीं!

भगवानुवाच—

इहाग्निवेश! भूतानामायुर्युक्तिमपेक्षते।
दैवे पुरुषकारे च स्थितं तस्य बलाबलम् ॥३४॥

हे अग्निवेश! यहाँ (आयुर्वेद के मत में) प्राणियों की आयु युक्ति की अपेक्षा करती है। इस आयु का बलाबल दैव और पौरुष पर निर्भर है।

दैवमात्मकृतं विद्यात्कर्म यत्पौर्वदेहिकम्।
स्मृतः पुरुषकारस्तु क्रियते यदिहापरम् ॥३५॥

पूर्व जन्म में अपने द्वारा किये हुए कर्मों को दैव कहा जाता है और इस जन्म में किये हुए कर्म को पौरुष कहा गया है।

बलाबलविशेषोऽस्ति तयोरपि च कर्मणोः।
दृष्टं हि त्रिविधं कर्म हीनं मध्यममुत्तमम् ॥३६॥

इन दोनों (दैव और पौरुष) कर्मों में बलाबल की विशेषता है। क्योंकि ये दोनों कर्म हीन मध्यम और उत्तम भेद से तीन प्रकार के देखे जाते हैं।

तयोरुदारयोर्युक्तिर्दीर्घस्य च सुखस्य च ॥३७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नियतस्यायुषो हेतुर्विपरीतस्य चेतरा ।
मध्यमा मध्यमस्येष्टा,

उन दोनों प्रकार के कर्मों का उत्तम योग दीर्घ सुखयुक्त तथा निश्चित आयु का कारण होता है और निकृष्ट योग हीन और दुखद आयु का कारण होता हैं। इनका मध्यम योग मध्यम आयु और मध्यम सुख का कारण होता है।

कारणं शृणु चापरम् ॥ ३८ ॥
दैवं पुरुषकारेण दुर्बलं ह्युपहन्यते ।
दैवेन चेतरत्कर्म विशिष्टेनोपहन्यते ॥ ३९ ॥
दृष्ट्वा यदेके मन्यन्ते नियतं मानमायुषः ।*

और विभिन्न प्रकार की आयु में दूसरा कारण सुनो:—जब दैव और पुरुषकार में विरोध होता है तब दुर्बल दैव बलवान् पौरुष द्वारा दबा दिया जाता है। और बलवान दैव द्वारा दुर्बल पौरुष भी दबा दिया जाता है। इस प्रकार दैव द्वारा पौरुष कर्म का पराभूत होना देखकर कुछ लोग आयु का प्रमाण निश्चित मानते हैं।

कर्म किञ्चित्कचित्काले विपाके नियतं महत् ।
किंचित्त्वकालनियतं प्रत्ययैः†प्रतिबोध्यते ॥ ४० ॥

किसी बलवान् दैव कर्म का विपाक (परिणाम) किसी समय में निश्चित रहता है जिससे नियत समय पर मृत्यु होती है। किसी कर्म के परिणाम का काल अनिश्चित होता है। जो अन्यान्य कारण (अपथ्यादिसेवन पौरुष कर्म) से उद्रिक्त किया जाता है। जिस से अकाल में ही मृत्यु हो जाती है।

तस्मादुभयदृष्टत्वादेकान्तग्रहणमसाधु, निदर्शनमपि चात्रो दाहरिष्यामः—यदि हि नियतकालप्रमाणमायुः सर्वं स्यात्,

---

* ऽनियतं ऐसा पाठ करके "आयुका मान निश्चित नहीं" ऐसा भी अर्थ किया जाता है।

† दुष्ट कारणैरुद्रिक्तं क्रियते चक्रः ।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

तदायुष्कामाणां न मन्त्रौषधिमणिमङ्गलबल्युपहारहोमनियमप्रायश्चित्तोपवासस्वस्त्ययनप्रणिपातगमनाद्याः क्रिया इष्टयश्च प्रयुज्येरन्, नोद्भ्रान्तचण्डचपलगोगजोष्ट्रखरतुरगमहिषादयः पवनादयश्च दुष्टाः परिहार्याः स्युः, न प्रपातगिरिविषमदुर्गाम्बुवेगाः, तथा न प्रमत्तोन्मत्तोद्भ्रान्तचण्डचपलमोहलोभाकुलमतयः,नारयः, न प्रवृद्धोऽग्निः, न च विविधविषाश्रयाः सरीसृपोरगादयः, साहसं नादेशकालचर्या, न नरेन्द्रप्रकोपः, इत्येवमादयो भावा नाभावकराः स्युः, आयुषः सर्वस्य नियतकालप्रमाणत्वात् न चानभ्यस्ताकालमरणभयनिवारकाणामकालमरणभयमागच्छेत्प्राणिनां, व्यर्थाश्चारम्भकथाप्रयोगबुद्धयः स्युर्महर्षीणां रसायनाधिकारे।

इसलिए नियत और अनियत दोनों प्रकार की मृत्युयें देखी जाने के कारण केवल एक को ही मानना अनुचित है। इस विषय में युक्ति भी कह रहे हैं :—यदि सभी आयु का प्रमाण निश्चित ही तो आयु की कामना के लिये औषधि मणि मंगल बलि उपहार होम नियम प्रायश्चित्त उपवास स्वस्तिवाचन प्रणिपात (अत्यन्त नम्र होकर दण्डवत कर की गयी प्रार्थना) गमन (तीर्थयात्रा) आदि क्रियायें और इष्टियों (आयुर्वृद्धचर्थ यज्ञ) का प्रयोग न किया जाये (क्योंकि आयु प्रमाण निश्चित मान लेने पर उसके बढ़ने की सम्भावना ही नहीं) इधर-उधर दौड़ने वाले क्रुद्ध चंचल वृषभ हाथी, ऊँट, गधा, घोड़ा, भैंसे तथा दुष्ट पवन आदि से बचने की आवश्यकता ही नहीं, झरनों एवं पर्वतों, विषम और कठिन मार्गों तथा जल-वेग से भी बचने की आवश्यकता नहीं। असावधान उन्मत्त उच्छृंखल क्रुद्ध चपल मोह लोभ से व्याप्त बुद्धि वाले पुरुष, शत्रु, तीव्र अग्नि, विभिन्न प्रकार के विषवाले, रेंगकर चलने वाले साँप आदि, दुस्साहस, देश-काल-विपरीत आचरण, राजा का क्रोध आदि भाव मृत्यु के कारण न हों। क्योंकि सभी की आयु का प्रमाण निश्चित है। और निरन्तर अकाल मृत्यु से बचने का उपाय न करने से भी प्राणियों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अकाल मृत्यु से भय न हो। महर्षियों का रसायन सेवन करने के लिये आयुवर्द्धक-कर्म का उपदेश तथा औषधियों का प्रयोग और ज्ञान निष्फल हो जाय।

नापीन्द्रोनियतायुषं शत्रुं वज्रेणाभिहन्यात्, नाश्विनावार्तं भेषजेनोपपादयेतां, न महर्षयो यथेष्टमायुस्तपसा प्राप्नुयुः न च विदितवेदितव्या महर्षयः समुरेशा रसायनादीनि सम्यक् पश्येयुरुपदिशेयुराचरेयुर्वा, अपि च सर्वचक्षुषामेतत्परं—यदैन्द्रं चक्षुः इदं चास्माकं प्रत्यक्षं, यथा—पुरुषसहस्रमुत्थायोत्थायाहवं कुर्वतामकुर्वतां चातुल्यायुष्ट्वं, तथा जातमात्राणामप्रतीकारात् प्रतीकाराच्च अविषविषप्राशिनां चाप्यतुल्यायुष्ट्वं, न च तुल्यो योगश्चेभ उदपानघटानां चित्रघटानां चोत्सीदतां, तस्माद्धितोपचारमूलं जीवितमतो विपर्ययान्मृत्युः। अपि च देशकालात्मगुणविपरीतानां कर्मणामाहारविहाराणां च क्रमापयोगं सम्यक् सर्वातियोगसंधारणमुदीर्णानां च गतिमतां साहसानां च वर्जनमारोग्यानुवृत्तौ हेतुमुपलभामहे उपदिशामः सम्यक् पश्यामश्चेति ॥ ४१ ॥

इन्द्र भी निश्चित आयु वाले शत्रु को वज्र से न मार सकते। अश्विनीकुमार औषधियों से रोगी को चिकित्सा न करते। ऋषि भी तप के द्वारा यथेष्ट न प्राप्त करते। सब ज्ञेय के ज्ञाता महर्षि एवं इन्द्र रसायन आदि का ठीक-ठीक ज्ञान न प्राप्त करते, न उपदेश करते अथवा न आचरण करते। और भी—सब दृष्टि से प्रत्यक्ष प्रमाण सर्वश्रेष्ठ है। हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि प्रतिदिन उठ-उठकर युद्ध करने वाले और युद्ध न करने वाले हजारों पुरुषों की आयु असमान है। उत्पन्न होते ही रोगों की चिकित्सा न करने और चिकित्सा करने से, विष न खाने वाले और विष खानेवालों को भी आयु असमान होती है। यहाँ तक कि जलपान के लिए नित्य व्यवहृत घड़ा तथा चित्र घट (चित्र विचित्र रङ्गा हुआ विवाह आदि काल का रक्खा हुआ कलश) भी समान काल में नष्ट नहीं होते।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

इससे सिद्ध होता है कि जीवन (आयु) का मूल कारण हितसेवन है और इसके विपरीत अर्थात् अहित सेवन मृत्यु का कारण है, और भो--देश काल एवं अपने प्राकृतिक गुणों वातादियों से विपरीत कार्यों, आहारों के सम्यक क्रमपूर्वक उपयोग करने, सभी के अतियोग को रोकने, प्रवृत्त वेगों के न रोकने तथा दुस्साहसों के परित्याग को आरोग्यानुवर्तन में कारण पाते हैं, अतः उनका उपदेश करते हैं और उनका सुफल अच्छी तरह देखते भी हैं।

अतः परमग्निवेश उवाच—एवं सत्यनियतकालप्रमाणायुषां भगवन ! कथं कालमृत्युर्वा भवतीति ॥ २४ ॥

इसके बाद अग्निवेश ने कहा--भगवन् ! ऐसा होने पर जब कि आयुके काल का प्रमाण अनियत है तो प्राणियों की कालमृत्यु या अकालमृत्यु कैसे होती है ?

तमुवाच भगवानात्रेयः—श्रूयतामग्निवेश ! यथा—यानसमायुक्तोऽक्षःप्रकृत्यैवाक्षगुणैरुपेतःसर्वगुणोपपन्नो वाह्यमानो यथाकालं स्वप्रमाणक्षयादेवावसानं गच्छेत् , तथाऽऽयुः शरीरोपगतं बलवत्प्रकृत्या यथावदुपचर्यमाणं स्वप्रमाणक्षयादेवावसानं गच्छति, स मृत्युः काले।

भगवान् आत्रेय ने कहा--हे अग्निवेश सुनो। जिस प्रकार यान (गाड़ी आदि सवारियाँ) का धुरा अक्ष के स्वाभाविक गुणों (मजबूती आदि) से युक्त अन्य सम्पूर्ण गुणों (उचित भार मार्ग आदि) से सम्पन्न होने पर भी बराबर चलाये जाने पर अपने प्रमाण के क्षीण होने (घिसने) से ही अपने समय पर टूट जाता है, उसी प्रकार शरीर सम्बद्ध आयु भी श्रेष्ठ स्वास्थ्य वाले मनुष्य द्वारा स्वस्थ वृत्त के नियमानुसार परिपालित होती हुई अपने प्रमाण की क्षीणता से ही नष्ट होती है। वह मृत्यु--काल मृत्यु कही गयी है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

यथा च स एवाक्षोऽतिभाराधिष्ठितत्वाद्विषमपथादक्षचक्रभङ्गाद् बाह्यवाहकदोषादक्षिमोक्षात् पर्यग्वसनादनुपांगाच्चान्तरा व्यवसनमापद्यते, तथाऽऽयुरप्ययथाबलमारम्भादयथाग्न्यभ्यवहरणाद्विषमशरीरन्यासादतिमैथुनादसत्संश्रयादुदीर्णवेगविनिग्रहाद्विधारणवेगानांधारणाद्भूतविषवाय्वग्न्युपतापादभिघातादाहारप्रतीकारविगर्जनाच्च यावदन्तरा व्यसनमापद्यते स मृत्युरकाले, तथा ज्वरादीनप्यातङ्कान्मिथ्योपचरितानकालमृत्यून् पश्याम इति ॥ ४३ ॥

(च० वि० अ० ३)

और वही धुरा अति भार ढोने, विषम मार्ग पर चलने, अक्ष चक्र (पहिये का घेरा) टूटने, वाह्य (यान पर बैठने वाला या ढोया जाने वाला सामान) तथा बाहक (सारथी या घोड़ा बैल आदि) के दोष, लोह (धुरा) की चूड़ी निकल जाने, उलट जाने और उपाङ्ग नष्ट हो जाने से बीच में ही टूट जाता है। वैसे ही आयु भी शक्ति के बाहर काम करने (दुस्साहस), अपनी अग्नि के अनुसार भोजन न करने, शरीर को विषम रखने (विषम चेष्टा करने), अति मैथुन, दुष्टजनों की संगति, प्रवृत्त वेगों को रोकने, धारणीय वेगों (क्रोध आदि) को न रोकने, भूत (प्राणी बाघ आदि), विष, वायु, अग्नि के उपताप, चोट, आहार, (पथ्य) और चिकित्सा के त्याग से बीच में ही नष्ट हो जाती है। वह मृत्यु--अकाल मृत्यु है। एवं ज्वर आदि रोगों द्वारा उनका ठीक उपचार न करने से हुई मृत्यु को भी अकाल मृत्यु ही समझा जाता है।

तथोक्तं महर्षिणा सुश्रुतेनाऽपि--

एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षते।
तत्रैकः कालसंज्ञस्तु शेषा आगन्तवः स्मृताः॥
जलमग्निर्विषंशस्त्रं स्त्रियो राजकुलानि च।
अकालमृत्यवो ह्येते तेभ्यो विभ्यति पण्डिताः॥

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

विष्वग्वातादिभिर्यद्वद् दीपो वर्त्यादिसंयुतः ।
निर्वात्यते क्षणाद् देही तथैवागन्तुमृत्युभिः ॥

महर्षि सुश्रुत ने भी कहा है :—अथर्व वेद के ज्ञाता एक सौ एक मृत्यु मानते हैं। जिसमें एक काल मृत्यु और शेष सौ आगन्तुक (अकाल) मृत्युयें कहीं गयी हैं। जल, अग्नि, विष, शस्त्र, स्त्रियाँ और राजकुल ये अकाल मृत्युयें हैं। इनसे पण्डित जन डरते हैं (अर्थात् सदा सावधान रहते हैं)

जिस प्रकार बत्ती और तेल से युक्त दीपक चारों ओर की तेज वायु आदि (किसी वस्तु के झटके या दवाव आदि) से तत्क्षण बुझ जाता है उसी प्रकार अकाल मृत्युओं से प्राणी भी नष्ट हो जाते हैं।

रोगारम्भक्षणे जनानां कर्तव्यम्

प्राज्ञो रोगे समुत्पन्ने वाह्ये नाभ्यन्तरेण वा ।
कर्मणा लभते शर्म शस्त्रोपक्रमणेन वा ॥

रोग उत्पन्न होने पर बुद्धिमान पुरुष बाह्य चिकित्सा (लेप अवगाहन आदि), अन्तः चिकित्सा (कर्षण वृंहण आदि) अथवा शस्त्रोपचार से आरोग्य प्राप्त करता है।

बालस्तु खलु मोहाद्वा प्रमादाद्वा न बुध्यते ।
उत्पद्यमानं प्रथमं रोगं शत्रुमिवाबुधः ॥

वे समझ मूर्ख पुरुष शत्रु के समान उत्पन्न होते हुए रोग को मोह अथवा प्रमाद के कारण पहले नहीं समझता (उपेक्षा करता) है।

अणुर्हि प्रथमं भूत्वा रोगः पश्चाद्विवर्धते ।
स जातमूलो मुष्णाति बलमायुश्च दुर्मतेः ॥

वह रोग पहले रज्जमात्र होकर बाद में बढ़ने लगता है और अपनी जड़ पकड़ कर उस मूर्ख के बल एवं आयु को चुरा लेता (नष्ट कर देता) है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

न मूढो लभते संज्ञां तावद्यावन्न पीड्यते ।
पीड़ितस्तु मतिं पश्चात्कुरुते व्याधिनिग्रहे ॥

वह मूर्ख जब तक रोग से अत्यन्त पीड़ित नहीं होता तब तक होश में नहीं आता (उपाय नहीं करता) । पीड़ित होने पर व्याधि रोकनेकी चिन्ता करता है ।

अथ पुत्रांश्च दारांश्चज्ञातींश्चाहूय भाषते ।
सर्वस्वेनापि मे कश्चिद् भिषगानीयतामिति ॥

तब वह अपने पुत्रों, घर की स्त्रियों और जातिवालों को बुलाकर कहता है कि मेरे सर्वस्व (चल अचल धन) को देकर भी किसी चिकित्सक को लाकर रोग दूर करो ।

तथाविधं च कः शक्तो दुर्बलं व्याधिपीड़ितम् ।
कृशं क्षीणेन्द्रियं दीनं परित्रातुं गतायुषम् ॥

परन्तु इस प्रकार रोगपीड़ित, दुर्बल, पतले (क्षीण मांस), क्षीण इन्द्रियों वाले दीन-तथा गतायु को कौन बचा सकता है ?

गोधा लाङ्गूलबद्धेवाकृष्यमाणा बलीयसा ।
स त्रातारमनासाद्य बालस्त्यजति जीवितम् ॥

वह मूर्ख किसी रक्षक को न पाकर (प्रबल रोग से खींचा जाता हुआ) जीवन को त्याग देता है । जिस प्रकार कि पूँछ पर रस्सी आदि बँधा हुआ गोह बलवान पुरुष द्वारा खींचा जाता हुआ प्राण छोड़ देता है ।*

तस्मात्प्रागेव रोगेभ्यो रोगेषु तरुणेषु वा ।
भेषजैः प्रतिकुर्वीत य इच्छेत्सुखमात्मनः ॥

इसलियें जो अपना सुख (आरोग्य) चाहता है उसे रोगों को उत्पत्ति से पूर्व ही अथवा उनकी तरुणावस्था में (नया रहने पर) ही औषधियों द्वारा प्रतिकार करना चाहिये ।

---

* चोर लोग छत पर चढ़ने के लिये कमन्द (रस्सी से बँधे हुये गोह) का प्रयोग करते हैं। गोह दीवाल पकड़ लेनेपर कथमपि उसे नहीं छोड़ता है।

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

अन्त्येष्टिकर्म

संसारे मनुष्यजातिष्वनेकमतानि प्रचलंति। स्वस्वमतानुसारेणान्त्येष्टिकर्मणो रीतिरपि भिन्नैवास्ति। केचित् पारसीकाः जालिकामयोच्चगृहवितानोपरि शवं संरक्ष्य सूर्यप्रकाशेन संशोषयन्ति। तस्य किंचित्तत्वं वाष्पं भूत्वा निर्गच्छत्यवशिष्टमधस्तले पतति। मिश्रदेशवासिनो लवणादिपूरितमंजूषायां रक्षन्ति। यवनाः तथा ईशायिनः पृथिव्यां पाटयन्ति। हिन्दूजनाश्च शवस्य दाहकर्म्म कुर्वन्ति, जले वा प्रवाहयन्ति।

संसार में मानव जाति में अनेक मत प्रचलित हैं। अपने अपने मत के अनुसार अन्त्येष्टि कर्म की रीति भी विभिन्न प्रकार की है।

पारसी जाली मय उच्च गृह की छत पर शव रख कर सूर्य की धूप में सुखाते हैं। शव का कुछ तत्व भाप बनकर उड़ जाता है। शेष नीचे गिर जाता है। मिश्र देश वाले नमक आदि द्रव्यों से भरी सन्दूक में शव रखते हैं। मुसलमान और ईसाई शव को पृथ्वी में गाड़ देते है। हिन्दू लोग शव का दाहकर्म करते हैं अथवा उसे जल में बहा देते हैं।

यद्यपि स्वस्वमतानुसारेण सर्वं युक्तमेव परन्तु स्वास्थ्यदृष्ट्या दाहकर्मैव श्रेष्ठतम उपायः। यतः पारसीकविधौ दौर्गन्ध्यं वर्धते। मिश्रीयविधौ शवरक्षणान्न कश्चिल्लाभः प्रत्युत लवणादिव्ययाधिक्यं तथा व्यर्थं स्थानमप्यावृतं भवति। यवनेशायिविधौ तु शनैः शनैः सर्वमेव स्थानं समाधिमयं जायते। तथा तद्द्वारा वायु दूषितो भवति, तत्समीपस्थकूपादेर्जलमपि दुष्यति, येन स्वास्थ्यहानिरनेके च रोगा उत्पद्यन्ते। परन्तु हिन्दूविधौ, दाह-कर्मणा तत्क्षणमेव सर्वाणि तत्वानि स्वस्मिन् स्वस्मिन् गत्वा मिलन्ति। न कश्चिद् दोषः समुत्पद्यते। किन्तु असम्यग्दहने दुर्गन्धि-वाष्पं निर्गत्य वायुं दूषयत्यतो न्यूनातिन्यूनमष्टमणपरिमितसमिध उपयोग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

एकशवदाहार्थं कार्यः। सुगभीरजले शवनिमज्जनमपि हितकरं, परन्त्वयमुपायः सर्वत्र न कर्तुं शक्यः।

यद्यपि अपने-अपने मतानुसार सभी रीतियां उचित ही हैं। परन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से दाहकर्म ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है। क्योंकि पारसी-विधि में दुर्गन्ध बढ़ती है। मिश्र देश की विधि में शव रखने से कोई लाभ नहीं। बल्कि नमक आदि का अधिक व्यय एवं व्यर्थ स्थान भी घिर जाता है। मुसलमान और ईसाइयों की विधि में धीरे-धीरे सभी स्थान समाधि (कब्र) मय हो जाता है। एवं उसके द्वारा वायु दूषित होती है। उसके समीप में स्थित कुयें आदि का जल भी दूषित हो जाता है। जिससे स्वास्थ्य की हानि और अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। परन्तु हिन्दू विधि में दाहकर्म से उसी क्षण शव के सभी तत्व (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) अपने-अपने में जाकर मिल जाते हैं। कोई दोष उत्पन्न नहीं होता। परन्तु ठीक तरह से दाहकर्म न होने पर दुर्गन्धित भाफ निकलकर वायु को दूषित कर देती है। इसलिए न्यूनतम ८ मन लकड़ी का उपयोग एक शव जलाने के लिए करना चाहिए। अत्यन्त गहरे जल में शव को डुबाना भी हितकारी है परन्तु यह उपाय सभी जगह नहीं किया जा सकता।

समाधेः स्थानं तु वसतेः क्रोशार्धदूरे ततो निम्नस्थले कार्यम्। यतस्तद्वसतेर्जलं वायुं च दूषयितुं नशक्नुयात्। समाधयः पृथक्पृथक् किञ्चिद्दूरे दूरे स्युः। तत्र वृक्षाः अप्यारोपणीयाः शवा गभीरखाते पाटनीया यतस्तदवयवा वाष्पद्वारा निर्गत्य स्वास्थ्य-हानिकारका न भवेयुः, एकसमाधावेक एव शवः पाटनीयः। परन्तु युद्धे तु नैवं कर्तुंशक्यते स्थानकालाद्यभावात्। अतस्तत्र १०-१२ हस्तगभीरं खातं सुदीर्घं खन्यते। तत्रोभयपङ्क्तौ शवाः संरक्ष्यन्ते तदुपरि सुधां (चूना) प्रक्षिप्य क्रमशः पुनस्तथैव संरक्ष्यन्ते। यदा

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

हस्तचतुष्टयं गाम्भीर्यमुपरि रिक्तं तिष्ठति तदा तत्र मृत्तिकाः प्रक्षिप्य खातं प्रपूर्यत इति।

समाधिस्थल (कब्रगाह) बस्ती से आधा कोस दूर उससे निम्न स्थल में बनाना चाहिए। जिससे वह बस्ती के जल और वायु को दूषित न कर सके। समाधियाँ (कब्रें) अलग-अलग, कुछ-कुछ दूरी पर हों। वहाँ वृक्ष भी लगाने चाहिए। मुर्दों को गहरे गड्ढे में गाड़ना चाहिए। जिससे उनके हिस्से भाप द्वारा बाहर निकल कर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक न हों। एक कब्र में एक ही मुर्दा गाड़ना चाहिए। परन्तु युद्ध में स्थान और समय आदि की कमी के कारण ऐसा नहीं किया जा सकता। इसलिए वहां १०-१२ हाथ गहरा और काफी लम्बा गड्ढा खन दिया जाता हैं। वहीं दो लाइनों में शवों को रखते हैं। उसके ऊपर चूना डालकर फिर उसी प्रकार मुर्दों को रखते हैं। जब ऊपर गड्ढा ४ हाथ खाली रह जाता है तो मिट्टी डालकर उस गड्ढे को पाट देते हैं।

स्वस्थवृत्तानुष्ठानस्य फलम्

स्वस्थवृत्तं यथोद्दिष्टं यःसम्यगनुतिष्ठति।
स समाः शतमव्याधिरायुषा न वियुज्यते॥

जो विधिपूर्वक उपदिष्ट स्वस्थवृत्त का ठीक-ठीक पालन करता है वह नीरोग रहता हुआ १०० वर्ष (पूर्णायु) तक जीवित रहता है।

नृलोकमापूरयते यशसा साधुसम्मतः।
धर्मार्थावेति भूतानां बन्धुतामुपगच्छति॥

सज्जनों द्वारा सम्मानित वह पुरुष अपनी कीर्ति से सम्पूर्ण मनुष्य लोक में प्रसिद्ध हो जाता है! धर्म-अर्थ को प्राप्त कर प्राणियों के बन्धुत्व को प्राप्त होता है (अर्थात् सबका प्रिय हो जाता है)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

परान् सुकृतिनो लोकान् पुण्यकर्मा प्रपद्यते ।
तस्माद्वृत्तमनुष्ठेयमिदं सर्वेण सर्वदा ॥

[च० सू० अ० ८]

वह पुण्यकर्मा महापुरुष पुण्यात्माओं के श्रेष्ठ लोक (स्वर्ग) को अन्त में प्राप्त करता है । अतएव सभी प्राणियों को सर्वदा इस स्वस्थ-वृत्त का पालन करना चाहिए ।

ग्रन्थसमाप्तिकालः

रिपुवसुनिधिचन्द्रैरङ्किते वैक्रमेऽब्दे,
बुधदिनशिवरात्रौ फाल्गुने कृष्णपक्षे ।
सकलकृतिरियं मे पूर्णतां सङ्गताद्य,
बुधजनहृदयानां ह्लादकर्त्री प्रभूयात् ॥

मेरा यह समस्त ग्रन्थ आज विक्रमीय सम्वत् १९८६ के फाल्गुन कृष्ण पक्ष में बुधवार शिवरात्रि के दिन पूर्ण हुआ । यह विद्वानों के हृदयों को प्रसन्न करनेवाला हो ।

इति पण्डितप्रवर रामनाथमिश्रसूनु—काशीवास्तव्यायुर्वेदशास्त्राचार्य श्री पण्डितराजेश्वरदत्तशास्त्रिवैद्यविरचितः स्वस्थवृत्तसमुच्चयाख्यग्रन्थः समाप्तः ।

———

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

ग्रन्थकर्तुः परिचयः

गोण्डामण्डलसंस्थिता सुविदिता प्रान्तेऽवधे मञ्जुले
आटाख्या नगरी विचक्षणजनैर्लब्धास्पदा राजते ।
नानाशास्त्रविचारदक्षमतिभिः श्रौताध्वपारंगतैः
धर्मध्यानविधानयापितदिनैः सत्वप्रकर्षाश्रितैः ॥
तत्रासीद्विप्रवर्य्यः सकलबुधजनैः कीर्तनीयः सभायां
भूपेभ्यो लब्धमानो विहितपरिचयः शब्दतर्कादिशास्त्रे ।
कीर्तिश्रीभारतीभिस्तिसृभिरतिशयं वेष्टितः सानुरागं
मिश्रोपाह्वः सुधीरामफलतनुजनिःपण्डितो रामनाथः ॥

तज्ज्येष्ठपुत्रोऽनुजचन्द्रिकाख्य,
दैवज्ञवर्य्यो मगवंशजातः ।
श्रेष्ठः सदाचाररतोऽस्ति विप्रः,
शास्त्रीति राजेश्वरदत्तमिश्रः ॥
संरक्षिताखिलसुगौरवभारतीयैः,
पूज्यैर्बुधैर्मदनमोहनमालवीयैः ।
संस्थापितेऽत्र भवने निखिलागमानां,
विद्यालये प्रथमविश्वपदाभिधेये ॥

आयुर्वेदपयोनिधेर्मतिमतो विद्यालयाध्यक्षतो
नव्योद्यत्कविराजराजपदवीसम्भूषितात्सुद्गुरोः ।
विद्यावृद्धिपरोपकारनिरताच्छ्रीधर्मदासाद बुधाद्
ग्रन्थानां पठनं समाप्य निखिलं तीर्णः परीक्षोदधिः ॥

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आयुर्वेदे वरिष्ठां सकनकपदकां प्राप्य लोकप्रशस्या
माचार्यश्रेणिमुच्चां सकलजनमनोमोदहेतुं नितान्तम् ।
सद्यस्तत्रैव भागे गुरुजनहृदयानुग्रहाल्लब्धकार्यो
ग्रन्थं भद्रं न्यबध्नात् सरलविधितया बोधदं सज्जनानाम् ॥
पाठ्ये निर्धारितः सोऽस्ति स्वस्थवृत्तसमुच्चयः ।
लोकानामुपकाराय यथानामतथागुणः ॥
पुरा झाँस्यां याऽभूत् सकलभिषजां प्रान्तिकसभा
अलंचक्रे तस्यामपि खलु प्रधानं पदमिह ।
नियुक्तायाः राज्ये चिरमपि च प्राज्ये सुमतिदः
सदस्योऽसौ चासीत् सुविदतचिकित्सापरिषदः ॥
उत्तरस्य प्रदेशस्य वैद्यतिब्बी-एकेडमी
भैषज्यकल्पनायाश्च विदुषां समितिश्च या ।
अधुनापि तयोरस्ति सदस्योऽसौ सुमानितः ।
आयुर्वेदयशोभासा भासयन् विषयान् सदा ॥
काश्यां भैषज्यकार्यं सुविदितविभवः पूर्णपीयूषपाणिः,
उच्चैराकाशमार्गं रचयति रुचिरां वैद्यविद्यापताकाम् ।
आयुर्वेदीयभागे बुधजनविदिते विश्वविद्यालयीये,
अध्यक्षस्यान्वभूत्तत्पदमपिसुचिरं शोधसञ्चालकस्य ॥
प्रारब्धो यो नवीनः क्रम इह चलति स्नातकत्वोत्तरीयः
संशिक्षन् वैद्यविद्यासुविपुलविभवान् सर्वभावेन भूयः ।
अस्मिंश्चापि प्रधानं निखिलविषयगं वर्तते शोधनार्थं
तस्मिन् मान्यानुभावो भवति स कुशलः सत्परामर्शदाता ॥
विरम्येषम एवात्र गङ्गासीसङ्गमे वसन् ।
गृहे स्वनिर्मिते भव्ये शिवोमापूजने रतः ॥

आचार्यं प्रियव्रत शर्मा
काशी हिं० वि० वि०

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

). In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

jGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgac

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur